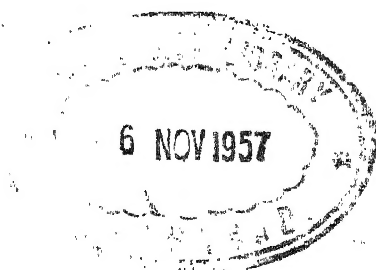
छात्रों की फुलवाड़ी

(लाल चीन के छात्र जीवन का एक चित्र)

लेखिका

मेरिया येन



नवचेतन प्रेस लिमिटेड

प्रथम संस्करण
३००० प्रतियां
मूल्य रु० २।।)

The Umbrella Garden
A picture of student life in Red China
By
Maria Yen
Adapted from the Chinese by
Maria Yen with Richard M. McCarthy
Printed by the permission and
under special arrangement with
The Macmillan Company New York
the original publishers

मुद्रक—
अर्जुन प्रेस
नया बाजार, देहली।

प्रस्तावना

इस पुस्तक का अधिकांश भाग चीनी भाषा में एक दूसरे शीर्षक से पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हो चुका है। उस प्रकाशन का अभिप्राय उन चीनी भाई बहिनों को, जो चीन से बाहर रहते हैं, एक वर्तमान चीनी विश्व विद्यालय की साम्प्रतिक अवस्थाओं से अवगत कराना था। कुछ ऐसे विदेशी मित्रों के आग्रह पर जो चीनी भाषा नहीं पढ़ सकते, यह प्रयास किया गया है। उन्हीं के आग्रह पर मुझ को मूल प्रकाशन में कुछ अभिवृद्धि करनी पडी ताकि बाहर के पाठकों को घटनाओं की पृष्ठभूमि की उपयुक्त जानकारी हो सके। मैं अपने उन सब चीनी अचीनी मित्रों को धन्यवाद देना चाहती हूं जिन्होंने सहायता और परामर्श दे कर मेरे कार्य भार में हाथ बटाया- इसके अनुवादक धन्यवाद के विशेष पात्र हैं। किन्तु मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहती हूं कि इस पुस्तक में जो विचार प्रकट किए गए हैं उनके लिए मैं ही पूर्णतः उत्तरदायी हूं।

विदेशी पाठकों के लाभ के लिए मूल प्रकाशन में जो अभिवृद्धि की गई है उसम मेरी मूलावस्था की दिशा में भा परिवर्तन आ गया है। माओत्से-तुंग के राज में विश्वविद्यालयों को जो अनुभव करना पड़ा है अब उसका यह साधारण वृतान्त न रह कर वर्तमान चीनी छात्र-जीवन का विवेचना पूर्ण विवरण बन गया है। युद्धोपरान्त चीन में छात्रों को उस नए जीवन में क्या करना पड़ता है जिसके सृजन में उनका कोई हाथ था। नए शासकों को छात्रों की आवश्यकता थी, कितनी आवश्यकता थी इसका पता छात्रों को उनके सत्तारूढ़ होने पर ही लग सका।

मैंने यथार्थ वर्णन करने का प्रयत्न किया है। सुरक्षा की दृष्टि से वास्तविक नामों का प्रयोग नहीं किया गया है। इस साधारण त्रुटि को ध्यान में न रखा जाए तो कथा शतशः सत्य है। ठीक संख्या का पता लगाना तो असम्भव था किन्तु यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि सन् १९४८ ई० में पीकिंग विश्वविद्यालय मे जो सक्रिय छात्र थे उनका बहुत बड़ा भाग कम्यु-निस्टों को पीकिंग नगर में ले आने के लिए प्रयत्न कर रहा था। उनमें से

कुछ ने तो ऐसा आदतवश किया, कुछ ने अवसरवादि[illegible] यह समझ कर कि नए प्रभुओं की पूजा करने में ही कल्याण है । कुछ [illegible] जो कम्युनिस्ट पार्टी की ओर से वहां रख छोड़ गए थे और [illegible] में दक्ष थे जिनका पता बाद में लगा । छात्रवर्ग क्यों और कैसे [illegible] का समर्थक बन गया इसकी यहां विवेचना नहीं की गई और न [illegible] पर दोषा-रोपण किया गया है । चीन में जो कुछ हुआ उसकी दूसरे किसी देश की घटनाओं से भी तुलना करने का प्रयत्न नहीं किया गया है [illegible] पर जो कुछ बीती, हमने जो कुछ देखा, उसी का यह वर्णन है । [illegible] का निर्णय मैं अपने से बड़े और अधिक समझदार लोगों को सौंपती हूं ।

—मरिया यॅन

विषय सूची

(१)

स्वतंत्रता का स्वागत

प्रियतम-मिलन के पूर्व नव-वधू क्या सोचती होगी।

१६४६ की जनवरी का अन्तिम दिन था। पीकिंग की पेता यूनिवर्सिटी के मुख्य हाल के बाहर अपनी साइकिल के पास खड़ी मैं दीवार पर लगे घोषणा पत्र को पढ़ रही थी। यद्यपि मोटी भूरी जाकेट और भद्दे पैजामे में मैं नव-वधू जैसी नहीं लगती थी परन्तु मेरा मानस नव-वधू के समान ही आशा उत्कंठा और विस्मय से ओतप्रोत था। मैं और मेरे साथी नवजीवन के द्वार पर खड़े थे। अगले दिन पीकिंग जनमुक्ति सेना का स्वागत करने के लिए तत्पर था।

हम इस दिन की बहुत समय से—कई वर्षों से—प्रतीक्षा कर रहे थे। मेरे विचार में इतने दिनों तक हमारे लिये प्रतीक्षा करते रहना सराहनीय था। क्या यह कम सराहनीय था कि, हम अपनी यूनिवर्सिटी को जीवित रखने के लिये गृहयुद्ध से उत्पन्न भूख और गरीबी का सामना कर सतत संघर्ष करते रहे; चोरी छिपे हमें भेजे हुए गैरकानूनी पैम्फ्लेटों को पढ़कर हम वर्षों अपना विश्वास बनाए रहे; प्रतीक्षा और कानाफूसी के इन वर्षों में कभी कभी अपने नेताओं के कहने पर हम उन सैनिकों का भी सामना करते रहे जो ऐसी सरकार की रक्षा कर रहे थे जिसपर हमारा विश्वास उठ चुका था। ये सैनिक जिनकी टोपियों पर कोमिंगतांग का चिह्न—नीला-आकाश और श्वेत-सूर्य—अंकित था, अभी भी पेकिंग की सड़कों पर पहरा दे रहे थे। लेकिन कल हमारी जन-मुक्ति सेना आकर उनकी बंदूकें छीन लेने वाली थी।

अहा! कल हम उन्मुक्त कंठों से जयजयकार कर सकेंगे। माओ के विजयी सैनिक रोटी और शांति के वायदे के साथ नए चीन के लिए आशा

का संदेश लाएंगे। मुक्त जनता की शक्ति के बल पर नव चीन विश्व में अपना समुचित स्थान बना सकेगा।

और हम पेता के विद्यार्थियों का क्या स्थान होगा? सदा के समान् हम सब से आगे होंगे। हम अपनी जनता के नेतृत्व में योगदान देंगे क्योंकि चीन को नेताओं की आवश्यकता होगी। पिछले वर्ष जिन संघर्षों से हम गुजरे, उन्हें देखते हुए नेता बनना कल्पना के बाहर की बात थी। परन्तु देश के नवनिर्माण का भार हमारी पीढ़ी पर था और चोरी छिपे दिए गए उन पैम्फ्लेटों के अनुसार तो हम नवयुवतियों को भी उस नेतृत्व में अपना हिस्सा अदा करना था।

मैंने उक्त घोषणापत्र में विजय प्रवेश के संवंध में विस्तार से पढ़ा। सेना की पहली टुकड़ी शहर के पश्चिमी द्वार, सी-चि मिन, से प्रवेश करेगी। जब तक जन-मुक्त सेना राष्ट्रवादी सैनिकों को निहत्था नहीं कर देती, शहर की शांति बनाये रखने का काम भी राष्ट्रवादियों का होगा। हमारे लिए ऐसी औपचारिकताएं अनपेक्षित थीं। यह ज्यादा अच्छा होता यदि उस नये दिन का साक्षात्कार हम शक्ति-प्रदर्शन—शहर पर लाल झंडे के आरोहण तथा तोपों की धांय-धांय—से करते।

"खूब! इस नोटिस को कितने बार पढ़ोगी? क्या इसे घोट ही जाओगी?"—यह मेरा सहपाठी फांग था। फांग की खुशी फूटी पड़ती थी। मैं जानती थी वह गुप्त समाचार पत्रों में लेख लिखता था तथा उसके पार्टी मेम्बर होने की भी अफवाह थी।

"लेकिन इसी महान् दिवस की तो हम प्रतीक्षा में थे?" उसने मेरी साइकिल के हैंडिल पर हाथ रखा और कहता रहा: "देखो, कामरेड, मेरे साथ चलो, हमारे सभी साथी कल के लिए झंडे तैयार करने में लगे हैं।"

"बहुत अच्छा, लेकिन राष्ट्रवादी सैनिकों के हटने से पहले आज की रात कैसी बीतेगी, इस बारे में मेरे पिता बड़े चिन्तित हैं। उनकी इच्छा है कि मैं यहां सोने की बजाय आज रात घर पर ही सोऊं।"

"कुछ भी नहीं होगा", फांग ने विश्वास दिलाया। "राष्ट्रवादी जानते हैं कि वे पराजित हो चुके हैं। अतः हमारे कल आने वाले सैनिकों के साथ उन्हें अच्छे से अच्छा बर्ताव करना पड़ेगा। इसके अलावा पुलिस को आज्ञा है कि वह अपनी जगह न छोड़े। चलो, औरतें तो फुसलाये जाने का ही इन्तजार करती रहती हैं।"

मैं अपनी साइकिल को लेकर उसके पीछे चलने लगी। मैं कृतज्ञ थी कि उसने चलने के लिए इतना अनुरोध किया था। हम उत्तेजना, हो-हल्ले के बीच युवकों के छात्रावास के एक बड़े कमरे में दाखिल हुए जहां लगभग तीस विद्यार्थी पहले से ही उपस्थित थे। हरेक काम में जुटा हुआ था—कोई पोस्टर बना रहा था, तो कोई कागज की छोटी-छोटी झंडियों पर नारे लिख रहा था या छड़ियों पर झंडों को चिपका रहा था।

"इतने बड़े दिन के लिये इतने छोटे झंडे ?" मैंने एक झंडा उठाया; जिस पर लिखा था; "जन-मुक्ति सेना—स्वागत" और मैं उसे अपनी एक परिचित लड़की की ओर चिढ़ाते हुए हिलाने लगी।

उसने उत्तर में एक झंडी हिलाई जिस पर लिखा था : "हमारे नेता माओ ज़े-तुंग हजार वर्ष के हों"। मेरे लिये उसने पास ही थोड़ी जगह खाली कर दी और एक कैंची पकड़ा दी।

जिस तरफ लड़के बैठे थे उधर की ओर गर्दन उठाते हुए वह बोली, "उस पतले दुबले चेहरे वाले लम्बे युवक को देखो वह कल की तैयारियों में सहायता देने के लिये जिंगुआ से चल कर आज दोपहर को पहरेदारों की आंख बचाकर खिसक आया है।" गत दिसम्बर मास में शहर के बाहर स्थित जिंगुआ यूनिवर्सिटी को मुक्त किया जा चुका था, और तभी से पीकिंग पर सैनिक घेरा पड़ा हुआ है। इस नवागन्तुक ने तो सचमुच ही हमारे मुक्ति-दाताओं को देखा है। हमने एक दूसरे को चुप रहने का इशारा किया ताकि हम सुन सकें।

"ठीक है, यूनिवर्सिटी के इलाके के आस-पास गोलियां चलने से हम

परेशान हो गये थे" वह अपने श्रोताओं से कह रहा था। "लेकिन स्कूल पर आंच आये बिना ही वह दिन भी आ गया। मुक्ति सेना का हमारे साथ व्यवहार भाई-चारे का रहा। उसमें ज्यादातर गांव के सीधे-साधे नौजवान हैं। आप लोग देखेंगे कि वे कितने हृष्ट-पुष्ट और साथ ही कैसे विनम्र और मित्रवत हैं। सेना की सांस्कृतिक टुकड़ी ने हमारे लिये कुछ नाटक भी दिखाये। सैनिक हमें भोजन भी देते हैं और सब तरह से हमारी मदद भी करते हैं। सचमुच ! वास्तव में कुछ समय बाद आप लोग खुद देख लेना कि उनका व्यवहार बिल्कुल भाई-चारे का है ! हां, मैं आपको कुछ चीज दिखाता हूं।" उसने अपनी मोटी जाकेट में हाथ डाला और कुछ चमकदार छपे हुये कागज निकाले।

"*जिन-मिन पियो*—पीपल्स बैंक के नोट !" नोटों के लिये हांथ उठने लगे।

"अब से इन्हीं का चलन होगा।" हम सभी जैसे उसके शब्दों में उलझ गये। जिगुआ के उस साथी ने स्वयं को शायद ही कभी इतना महत्वपूर्ण समझा होगा। "इसे देखो ! इस पर बुड्ढे भद्दे चेहरे की जगह ट्रेक्टर, रेलगाड़ी और उत्पादन के औजार अंकित हैं जो वास्तव में जनता की सम्पत्ति हैं।"

झंडियां बनाने के बाद हम उन गीतों को गाने लगे जिनके गाने पर बहुत दिनों से पाबन्दी लगी थी। वे गीत जिन्हें हम कल अपने साथी सैनिकों के के स्वागत में गाएंगे। देर हो चुकी थी और मैं नहीं चाहती थी कि व्यर्थ ही मेरे पिता चिन्तित हों इसलिए बिदा मांग अपनी साइकिल पर चढ़ सूनी गलियों से होती हुई मैं घर की ओर चल दी।

जैसे सारा शहर प्रतीक्षा कर रहा था। हम सब कल की बाट जोह रहे थे। एक साल पहले यह दिन बहुत दूर था। क्या मैं भूल सकती थी कि एक साल पहले कैसा लगता था। हम जानते थे कि हमें अभी घोर प्रतीक्षा करनी है। जब लड़ाई सिर पर ही आगई तब हमें मालूम था कि हमें और भी भूख और शीत का सामना करना पड़ेगा। शायद हम में से कुछ को बंदी

भी बना लिया जाय; शायद कुछ पर दमन का हथौड़ा टूट पड़े और कुछ मौत के मुंह में भी चले जांय। क्योंकि हम पेता के विद्यार्थी एक ऐसे शासन की छत्रछाया में थे जिसके खिलाफ बगावत करने के लिए हममें से अधिकांश लोग तत्पर थे। हमारी मधुरतम आशाएं उन लोगों से बंधी थीं जिनके खिलाफ सरकार लड़ रही थी।

"पेता" का उच्चारण करते समय एक विदेशी उसे ईसाइयों के पीता शब्द का अपभ्रंश, और पेता स्कूल को पिछड़े हुए देशों में चलाए जाने वाली किसी मिशन की यूनिवर्सिटी समझ सकता है। पर वास्तव में पेता चीन की उन चार बड़ी यूनिवर्सिटियों में से एक है जो पूरी तरह से, विशुद्ध रूप से चीनी है, और जिस पर हमें नाज है। फ्यूजिन को विदेशी कैथोलिक पादरी चलाते थे। येनचिंग विदेशों के मिशनरी फंड पर जीवित थी। जिंगुआ का अस्तित्व बोक्सर इन्डैम्निटी फंड पर था जिसे अमेरिका ने चीन को लौटा दिया था। पेता क्यूली पेकिंग-ता-स्यूह का संक्षिप्त रूप है जिसके अर्थ हैं "नेशनल पेकिंग यूनिवर्सिटी"! "पे" पेकिंग का पहला अक्षर है जो पीकिंग का वास्तविक चीनी नाम है जिसके अर्थ हैं "उत्तर"। "ता" का अर्थ है 'बड़ा' या 'महान' और इसमें 'यूह' या 'अध्ययन' जोड़ने पर इसके अर्थ होते हैं यूनिवर्सिटी। दोनों शब्दों को मिलाकर इसका उच्चारण होता है "पेता"।

हमें गर्व था कि हम विदेशी प्रभाव से अछूते थे। पेता चीन की महान् यूनिवर्सिटी थी। यह चीन की बौद्धिक परम्पराओं की उत्तराधिकारिणी थी; और उन केन्द्रों में से एक थी जहां से देश में बीसवीं शताब्दी की क्रांति की चिन्गारियां फूटी थीं। गत पचास वर्षों से पेता और अन्य कुछ स्कूलों के विद्यार्थियों ने ही चीन को राजनीतिक नेतृत्व प्रदान किया, जो अन्य देशों में वृद्धजनों से प्राप्त होता है। हम लोग अधिक न थे और यही कारण था कि हम इतना महत्व रखते थे।

जब १९३७ में पीकिंग पर जापानियों ने कब्जा कर लिया, पेता के अधिकांश विद्यार्थी और प्रोफेसर यूनिवर्सिटी छोड़ हजारों मील दूर स्वतंत्र चीन की ओर चले गए। वहाँ उन विस्थापितों ने एक विश्वविद्यालय स्थापित कर लिया। युद्धोपरान्त ये लोग पेता की पुनर्स्थापना के लिए वापिस लौट आए।

लेकिन विजय पीकिंग को—जिसके नाम का अर्थ है: "उत्तरीय शांति" शांति न दे सकी। जब जापानियों ने हथियार डाल दिए तो राष्ट्रवादी सेनाओं ने अमरीकी जहाजी बेड़े की सहायता से शहर पर अधिकार कर लिया। लेकिन आस पास का देश उन्हीं कम्युनिस्टों के हाथ में रहा जिन्होंने जापानियों के हाथ से उसकी रक्षा की थी। 'विजय दिवस' के बाद लगभग एक साल तक चीनी-अमरीकी कार्यपालक मुख्यालय पीकिंग में बना रहा, जिसके द्वारा नानकिंग स्थित राष्ट्रवादी सरकार और येनान के कम्युनिस्टों के बीच समझौते के प्रयास किए जा रहे थे। लेकिन अंत में शांति दल अपने प्रयास में विफल रहा। यह अमरीकन मध्यस्थ "दस हजार निन्द्रामग्न कर्नलों का मन्दिर" नामक अस्पताल छोड़ कर चले गए और अमरीकी जहाजी बेड़ा भी वापिस लौट गया।

जिस समय अमरीकी सैनिक गए वह शहर भद्दा, भूखा और नीरस लगने लगा था। जीवित रहने के लिए कठिन संघर्ष करना पड़ता था। लड़ाई जैसे जैसे नजदीक आने लगी खाद्य पदार्थों के दर्शन दुर्लभ होने लगे। तथा मुहर का मूल्य कानी कौड़ी भी न रहा। अधिकांश विद्यार्थियों को सरकार की ओर से अनुदान मिलता था। अब वह भी अक्सर पूरा न मिलता था। लड़कियों के छात्रावास को बिजली से गरम रखने की व्यवस्था थी; लेकिन लड़कों को इतने ही कोयले मिलते थे कि वे अपने कमरों की अंगीठियों को यदा कदा ही जला पाते।

लेकिन ये निजी कठिनाइयाँ हमारे लिए इतना महत्व नहीं रखतीं जितना कि यह प्रश्न कि हमारे देश पर क्या बीत रही है। हमने जापानियों को हरा दिया था लेकिन उस विजय ने जनता पर और दुःख लाद दिए। हमने ईमानदारी के व्यवसाय का गला घुटते देखा—लुटेरे अफसर रेशमी वस्त्र, लिपस्टिक और फाउन्टेनपैन जैसी ऐश्वर्य की वस्तुएँ खरीदने के चक्कर में थे और भूखी जनता की मदद के लिये जिन 'रोटियों' को भेजा जा रहा था उसे बेच रहे थे। हमने देखा था कि सैनिक रिक्शा वालों को पीट रहे हैं और दुकानों से चोरी कर रहे हैं। हम इन सैनिकों को अपना मुक्तिदाता समझते या विजेता ? हम उच्चपदस्थ अधिकारियों में भ्रष्टाचार फैलने की अफवाहें सुनते तो छोटे-मोटे अधिकारियों को घूस और दौलत अन्टी में करते

हुए आंखों से देखते। दूसरे शहरों की कहानियां भी हमने सुनी। मेरा चचेरा भाई नानकिंग से पिछले सप्ताह लौटा था। उसका कहना है कि राजधानी के मोटे आसामी तो यह भी नहीं जानते कि लड़ाई हो रही है। उन्हें तो बस रुपया इकट्ठा करने की चिन्ता है। हम स्वयं उनको बड़ी बड़ी अमरीकन कारों में, ऊंची एड़ी के जूते तथा विदेशी वस्त्रों से सजी अपनी रखैलों के साथ शान से सैर सपाटे करते देखते थे।"

हमसे लोगों ने कहा कि जिन्दा रहने के लिए चीन में परिवर्तन की सख्त जरूरत है। तीन वर्ष तक अपने शासकों को रोटी की समस्या और देश की स्वतन्त्रता में उलझे देखकर हमें विश्वास हो गया कि हमें उनके स्थान पर नये नेतृत्व की आवश्यकता है और पेता में हम उस नए नेतृत्व को सत्तारूढ़ कराने में मदद देने के लिए तत्पर थे।

हमें अच्छी तरह पता था कि अपना अस्तित्व ही खतरे में होने के कारण पुरानी सरकार हर संभव उपाय से परिवर्तन का विरोध करेगी। हम संगठन, अनुशासन और संघर्ष के मार्ग से ही विजय प्राप्त कर सकते थे। जिन लोगों का भविष्य में विश्वास था। उन्हें अपनी और देश की रक्षा के लिए एक होना था। हममें कौन एकता ला सकता था? जिन पुराने उदारवादियों के हम प्रशंसक थे उनके सम्बन्ध में यह भी जानते थे कि वे जितने नेतृत्व-विहीन थे उतने ही भीरु भी। उनमें अलग अलग गुट थे और अपने समान शत्रु पर झटपने की बजाय वे आपस में चालबाजी अधिक किया करते थे। हमारे कम्युनिस्ट मित्र इसके अपवाद थे। वे संगठित थे। उनमें अनुशासन था। हमें उनके कृतृत्व तथा नेतृत्व में विश्वास था। यद्यपि पेकिंग में भूमिगत कार्यकर्ताओं की संख्या का हमें कोई अनुमान नहीं था। फिर भी जो कुछ वे कर रहे थे उससे उनकी शक्ति का पता लगता था जिस समय अन्य लोग बहस में लगे थे कम्यूनिस्ट साथी काम में जुटे थे। उन्होंने गैर-कानूनी साहित्य बांटा तथा मुक्ति सेना की सफलताओं का वर्णन करने वाले पोस्टर रातोंरात पेकिंग में लगाए। उन्होंने हड़तालों और विरोध-प्रदर्शनों का आयोजन किया। और विद्यार्थियों के प्रदर्शन के बाद जब भी गुप्तचरों ने यूनिवर्सिटी के इलाके पर छापा मारा, वे कभी भी कम्यूनिस्टों को न पकड़ सके।

लेकिन उनके विचार क्या थे ? क्या वे दूसरों के विश्वासों के प्रति कठोर, यंत्रवत और असहृष्णु न थे ; जिन मित्रों के बारे में हमारी यह आशंका थी कि वे पार्टी मेम्बर हैं। वे पूछने पर जवाब देते "शायद आपने कामरेड माओ की पुस्तक आन प्रैक्टिस (On practice) नहीं पढ़ी । उसमें स्पष्ट लिखा है कि हमारा सिद्धांत वास्तविकता पर आधारित है। चीन अन्य देशों के समान नहीं है। हम अपने देश की परिस्थितियों के अनुकूल मार्ग निकालेंगे। महत्व इसका नहीं है कि हम अपने को कम्यूनिस्ट कहते हैं अथवा नहीं। जब हम सबका ध्येय एक ही है तो हमें संगठित कार्यक्रम की आवश्यकता है। आवश्यकता है शान्ति तथा स्वतन्त्रता प्रेमी हम सभी लोगों के एक संयुक्त मोर्चे की। इसके द्वारा हम चीनी जनता को मुक्त करके चीन राष्ट्र का नवनिर्माण कर सकेंगे।"

अतः पेता पुरानी सरकार के खिलाफ राजनीतिक बगावत और छद्मवेश में कार्य करने का मुख्य केन्द्र हो गया। यूनिवर्सिटी के इलाके के बाहर लोग निराश और भयभीत रहे हों पर यूनिवर्सिटी की चार दीवारी के अन्दर महान घटनाओं की चर्चा रहती। हम अफवाएं फैलाते तथा क्रांन्तिकारी राजनीति पर बहस करते। जिन पुस्तकों पर सरकार ने प्रतिबन्ध लगा दिया था उन्हें पढ़ते और उन कहानियों को दोहराते रहते थे जो कम्युनिस्टों द्वारा हस्तगत किये क्षेत्र से किसी तरह हमारे पास आ जाती थीं। अब हम उन क्षेत्रों को 'मुक्त क्षेत्र' कहने लगे थे।

१९४८ के बसन्त और गर्मियों के दिनों में खाद्य समस्या गम्भीर हो गई और पीकिंग निवासियों में असन्तोष बढ़ने लगा। राजनीतिक प्रदर्शन और हड़तालें तो रोजमर्रा की बातें हो गईं। इनके कारण हमारे साथियों की संख्या बढ़ती गई। इन आन्दोलनों को कुचलने में सरकार कितनी पाशविक और बुद्धिशून्य है यह देखकर कुछ विद्यार्थी हमारे साथ सहानुभूति रखने लगे। और कुछ लोगों को जो केवल उत्तेजना के हेतु ही हमारे साथ हो लेते थे उन्हें सरकारी गुप्तचरों ने शंकित कम्युनिस्टों की सूची में सम्मिलित कर लिया। जब एक बार उस सूची में उनका नाम आ गया तो हमारे नेताओं का अनुसरण करने के अलावा और उनके पास क्या चारा था।

हमारे विरोधी हमसे, या यों कहें कि उस छद्मवेशी कम्युनिस्ट आंदोलन से जो हमें नेतृत्व प्रदान करता था बहुत भयभीत थे। हमारे आन्दोलन और प्रचार, दीवारों पर हमारे द्वारा लिखे गए नारे, रात को भेजे गए गैर कानूनी समाचार पत्र और "बगावत के अन्य कामों" से सरकार को जितना भय होता था। उतना गुस्सा भी आता था। उन्होंने भी हमारे विरुद्ध प्रदर्शन करने का निश्चय किया। यह प्रदर्शन सरकार बी० आई० एस०—विद्यार्थियों के मामलों से सम्बन्धित गुप्त पुलिस की एक शाखा—और कोमिंगतांग के मिलेजुले नेतृत्व में कर रही थी।

इन दोनों संस्थाओं ने किराए के टट्टू गुर्गे और कुछ ऐसे विद्यार्थी, जिन्हें कुछ और निजी कारणों से पुराने शासन का समर्थन करना पड़ता था, मिलाकर बीस हजार लोगों को एकत्रित कर लिया। ये लोग तेन-अन-मिन अर्थात 'स्वर्गिक शान्ति द्वार' पर एकत्रित हुए और "कम्युनिस्ट लुटेरों" के मुख्य केन्द्र पेता की ओर चल पड़े। आग उगलते हुए भाषणों ने भीड़ को उत्तेजित कर दिया। एक लम्बी कतार में वे यूनिवर्सिटी के इलाके पर टूट पड़े। अधिक उत्तेजित और क्रुद्ध लोगों को आगे करके उन्होंने सामने से हमला किया और छात्रावास के फाटक से लाल हाल तक पहुंचने की कोशिशें कीं। लेकिन उनमें रहने वालों को इसके पहले से ही सूचना मिल चुकी थी। उन्होंने मेजें और बेंचें लगाकर दरवाज़ा रोक रखा था।

निराश हो हमलावर दूसरे दरवाजे की ओर चले और उसे तोड़ डाला। लेकिन उन्हें मालूम हुआ कि जिस गढ़ को उन्होंने जीता वह तो प्रोफेसरों का निवास स्थान था निराश हो वे वापिस लौट गये।

उस भीड़ में जिन आंदोलनकारियों को सरकार ने छोड़ रखा था वे उस भीड़ को लेकर यूनीवर्सिटी के पश्चिमी द्वार की ओर चल पड़े। लेकिन वहां उनके सामने ऐसी समस्या आ गई, जिसकी उन्हें आशा भी न थी। वहां उन्हें यूनीवर्सिटी के अधिकारियों की प्रार्थना पर, नगरपालिका द्वारा भेजे गए संगीनधारी सैनिक खड़े मिले। संभवतः नगरपालिका का एक गुट यूनीवर्सिटी पर आक्रमण करने के पक्ष में न था या जैसा कि होता ही है सरकार से खुद ही भूल हो गई, इसलिए भीड़ अध्यक्ष के चंग-नन-हई स्थित प्रशासन कार्यालय की ओर

"हड़ताल और हिंसा का नाश हो।" "हम दंगों का विरोध करते हैं।" चिल्लाती हुई बढ़ गई। अध्यक्ष के कार्यालय के सामने भीड़ के कुछ वक्ताओं ने कम्युनिस्ट विद्यार्थियों के खिलाफ सख्त कार्यवाही की मांग की।

अब योजना के अनुसार आक्रमण नारमल यूनिवर्सिटी पर होना था। लेकिन अब तक शहर की सभी यूनिवर्सिटियों को हमने सम्भावित आक्रमण के संबंध में सचेत कर दिया था। नारमल के सभी दरवाजे बंद करके रोक दिये गये थे। खतरे की सूचना देने के लिए पहरेदार दीवारों की चौकसी कर रहे थे। "दंगों का नाश हो" चिल्लाते हुए प्रदर्शनकारी फाटक पर टूट पड़े। उन्होंने पत्थरों की बौछार से संतरियों को मार भगाया और ताला तोड़ कर फाटक के अन्दर दाखिल हो गये।

लेकिन हमलावरों के पहले जत्थे का स्वागत तेल के बड़े-बड़े पीपों की मार से हुआ जिनमें पत्थर और सीमेंट भरा था। उनमें भगदड़ मच गई लेकिन वे फिर दरवाजे पर लौट आये। छात्रावास की छत से छात्रों ने इनका स्वागत दम घुटाने तथा अंधा बनाने वाले सीमेण्ट भरे कागज के थैलों की मार से किया।

इस भगदड़ में किसी हमलावर ने झंडे के पास खड़ी नारमल की एक युवती को देख कर कहा, "पकड़ो! यह भी एक कम्युनिस्ट कुत्ती है!" उन्होंने उस लड़की के घुटने तोड़ दिये और फिर उसे कुचल डालने की भी चेष्टा की। भीड़ में राष्ट्रवादी सेना के दो अधिकारियों ने उसे बचाना चाहा। "रुक जाओ! यह लड़की है। हम यहां औरतों पर हाथ उठाने नहीं आये।" लड़की घायल हो चुकी थी। वह छात्रावास में बचकर भाग निकली। उसका चेहरा खून से सना था। इस लड़की के बचकर निकल जाने के कारण कुछ कायरों का गुस्सा फूट पड़ा। वे उन दोनों अधिकारियों पर टूट पड़े। "ये भी कम्युनिस्टों के जासूस हैं!" "इन हरामजादों को जान से मार डालो।" उन अधिकारियों में से एक ने उस आदमी के पेट में लात मारी जो उसे पकड़े हुए था और दूसरे को भी आजाद करने में सहायता दी ताकि दोनों भाग सकें।

जुलाई में भयानक दंगे हुए। पीकिंग के उत्तर-पूर्व और दूसरे इलाकों से जहां कम्युनिस्टों की जीत हो रही थी, रोज विस्थापित विद्यार्थियों के झुण्ड के झुण्ड पीकिंग में आने लगे। सरकार के आग्रह पर कुछ को तेयुआन से निकाल कर लाये गये थे लेकिन पीकिंग में उनके देख भाल की कोई व्यवस्था नहीं की गई। इनमें से कुछ लोगों ने देव मंदिर और ऐसे ही अन्य स्थानों पर डेरा जमा दिया। लेकिन दीवार से लटके हुए उनके फटे पुराने बिस्तरों और आरज़ी पाखानों से उठने वाली बू से वे विदेशी यात्री असन्तुष्ट हो गये जो पीकिंग को एक बार और देखना चाहते थे। कुछ अन्य लोग खाली मकानों में घुस गए। उन्होंने फर्नीचर और खिड़कियों की चौखटों को अपने चूल्हे जलाने के लिए तोड़ डाला।

जब नगर परिषद् में इन विस्थापितों के कष्टों के संबंध में प्रश्न उठाया गया तो कुछ परिषदजनों की दलील थी कि इन विद्यार्थियों के लिए स्कूल बनवाने के वायदे के अनुसार उनके लिए धन एकत्रित करना मुश्किल काम है। इसके अलावा सरकार जन-शक्ति प्राप्त करने के लिए हमेशा ही उन्हें कष्ट देती रही है अतः उनका सुझाव था कि "इन गुण्डों को सेना में भर्ती करके उत्तरी-चीन के डाकुओं को कुचलने के मुख्यालय में क्यों न भेज दिया जाय ? पढ़ने की बजाय इनको लड़ने दिया जाय।"

यद्यपि इस प्रस्ताव पर परिषद ने अभी अपना मत नहीं दिया था लेकिन यही मौका था जिसकी छद्मवेषी बाट जोह रहे थे। पेता के नेताओं ने इस अफवाह को फैलाने में हाथ बंटाया कि कम्युनिस्टों से लड़ने के लिए विद्यार्थियों को सेना में भेजा जा रहा है। ५ जुलाई को उन्होंने तीन हजार विस्थापित विद्यार्थियों को भड़काया कि वे नगर परिषद् के सामने अपना आवेदन देने के लिए एक प्रदर्शन करें। लेकिन जब प्रदर्शनकारी वहां पहुंचे, नगर परिषद् के सभी लोग जा चुके थे। विद्यार्थियों ने तोड़ने योग्य सभी वस्तुओं को तोड़ डाला और दरवाजे पर लगे साइनबोर्ड पर काले अक्षरों में भर्त्सना पूर्ण नारों को लिख डाला। इसके बाद उन्होंने नगर परिषद् के प्रमुख ह्यू ह्वीतांग की कोठी की ओर कूच किया। अपनी सम्पत्ति की रक्षा सेना के हाथ सौंप श्री ह्यू पहले ही अपने मित्र के घर जा चुके थे। वहां युवक सेना के २०८ वें डिवीजन के सैनिकों ने इन्हें राइफल, मशीनगन और टैंकों की सहायता से आगे बढ़ने से रोक दिया।

विद्यार्थी दो घंटे तक इन सैनिक टुकड़ियों के अधिकारियों से बहस करते रहे। दोनों आपे से बाहर हो गये और हाथापाई शुरू हो गई। तब अचानक ही गोलियां चलने लगीं। विद्यार्थी भौंचक्के से लाइनों को तोड़ नौ दो ग्यारह होने लगे। मशीनगनों ने इन भगोड़ों तक पर गोलियों की मार की। इससे पहले कि कोई गोलियां चलाना बंद कराये अनेक विद्यार्थी उनका शिकार हो चुके थे। बाद में सरकार की ओर से बतलाया गया कि किसी छात्र ने एक सैनिक की पिस्तौल चुराकर पहले गोली चलाई थी। दूसरे लोगों का कहना था कि तानों से गुस्सा हो कर एक सैनिक ने गोली चला दी और दूसरों ने उसका अनुसरण किया। चाहे किसी ने भी गोली चलाई हो, तब से हम लोग उसे "खूनी पांच जुलाई' कहने लगे थे।

यह रक्तपात कम्युनिस्टों के लिए और भी हितकर सिद्ध हुआ। खूनी पांच जुलाई के खिलाफ ९ जुलाई को एक बहुत बड़ा प्रदर्शन करने और इस तरह युवक सेना द्वारा मारे गये कामरेड शहीदों को सम्मान देने में हमें कम्युनिस्टों ने काफी सहायता दी। यद्यपि पुलिस और सेना में हमारे प्रति काफी कटुता और तनाव था लेकिन उन्होंने प्रदर्शनकारियों को शांति से निकल जाने दिया पर साथ ही सतर्क दृष्टि भी रखी।

जैसे-जैसे पुराना ढांचा खंड-खंड होकर गिर रहा था यूनिवर्सिटी में पढ़ना हमारे लिए कम महत्व पूर्ण होता गया। राजनैतिक काम और प्रदर्शनों में ही सारा समय खर्च हो जाता था। पर यदि उनमें न भी होता तो भी जिस समय हमारे साथी बाहर इतिहास को बदलने में मदद कर रहे थे हम हाथ पर हाथ रखे कदापि नहीं बैठ सकते थे, और न ही अपनी किताबों में अपने को तल्लीन रख सकते थे।

"कम्युनिस्ट विद्यार्थियों" की सरकारी ब्लैक लिस्ट बढ़ती गई और पेता में आतंक और भय छा गया। लेकिन १९४८ के अन्त में यकायक ही यूनिवर्सिटी में शान्ति और स्थिरता आ गई। इसका कारण यह था कि विद्यार्थी यूनिवर्सिटी को रोजाना अधिकाधिक संख्या में छोड़ कर जा रहे थे।

क्लास की हाजिरी लेते हुए कई शिक्षक चार या पांच नाम बोलने पर

भी कोई उत्तर नहीं पाता था। वह आश्चर्य से पूछा—"सब लोग कहां हैं ? आज किस लिए हड़ताल है ?"

अनेक विद्यार्थी एक साथ बोल उठते ! "हड़ताल नहीं है, वे अपने-अपने घर चले गए।"

"घर ? सर्दियों की छुट्टियों से पहले ?"

"जी हां, घर !" विद्यार्थी एक दूसरे की ओर देख कर मुस्करा दत।

मैं जानती थी कि जो लोग "घर" चले गए थे वे कहां थे। मेरे मित्रों में एक ह्यू ह्यांग चतुर दृढ़ इच्छा शक्ति रखने वाला था। मुझे इसलिए याद है कि वह हमेशा टूटा हुआ चश्मा पहना करता क्योंकि उनके पास न तो इतना समय ही था और न इतना पैसा ही कि वह उसे ठीक करा लेता। नवम्बर में उन्हीं दिनों जब कि कम्युनिस्टों ने मुकदन नगर को जीत लिया था, वह टालस्टाय का "युद्ध और शांति" उपन्यास मुझे वापिस करने आया जिसे वह पढ़ने के लिए ले गया था।

"नहीं, मैं इसे समाप्त नहीं कर सका", उसने मुझ से कहा "अब मुझे समय न मिल सकेगा।"

"क्या बात है ?"

पहले तो वह न बोला। बाद में उसने मुझ पर विश्वास करने का निर्णय करके मुझे बतालाया कि बी० आई० एस० के गुप्तचरों को उनकी कार्यवाहियों की जानकारी हो गई थी।

"गिरफ्तारी के लिये उनके पास हम लोगों के कुछ नाम हैं, वह फुसफुसाया "मैं मुक्त-क्षेत्र में शरण लेने जा रहा हूं।"

"कहां ? कब जा रहे हो ?"

"आपको नहीं बतला सकता। लेकिन जैसे ही वे मेरा प्रबन्ध कर देंगे मैं चला जाऊंगा।"

"क्या मैं आपको छोड़ने आ सकती हूं ?"

"न आएं तो अच्छा है", वह हंसा। "यह छुट्टियों की यात्रा नहीं है। आप पीकिंग में ही रहें। मैं आपसे फिर मिलूंगा। हम आपको मुक्त करने के लिये वापिस आएंगे।"

महीने के अन्त तक एक हजार से अधिक विद्यार्थियों ने यूनिवर्सिटी छोड़ दी। उनमें से कुछ लोग पार्टी मेम्बर थे जिन्हें पुरानी सरकार द्वारा उसके अन्तिम दिनों में गिरफ्तार अथवा विनष्ट किए जाने से बचाने के लिए बुला लिया गया था। यद्यपि दूसरे लोग पार्टी के सदस्य न थे लेकिन वे हमारी मुक्ति लाने में सहायक होना चाहते थे। जन-मुक्ति सेना आने के बाद नई सरकार में काम करने के लिए उनमें से कई शिक्षा पाना चाहते थे।

एक प्रोफेसर जिसके राजनीतिक दृष्टिकोण के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता था, अपने साथियों से बोला :

"आप और कौन से स्पष्टतर संकेत चाहते हैं कि सरकार का तख्ता उलटने जा रहा है। देखिये, कितने विद्यार्थी भाग गये—वे सब सरकार के खिलाफ कम्यूनिस्टों से जा मिले हैं। हमारे पिछले पचास वर्ष के इतिहास को जरा देखिए! विद्यार्थी भविष्यत् के दिशा-दर्शक रहे हैं। उन्होंने हमेशा आने वाले समय की ओर प्रस्थान किया है। हमारे अनुमान से कहीं पहले ही सरकार का तख्ता उलट जायेगा। कम्युनिस्ट विजयी होंगे।"

केवल समाचार-पत्रों के अध्ययन के आधार पर ही वह यह सब कह सका। बसन्त तक समूचे उत्तर में कम्युनिस्टों के आक्रमण शुरू हो गये थे। इसके बाद उनकी हर विजय नंगाड़े पर डंके की चोट की तरह होती। राष्ट्रवादी सैनिक उत्तर-पश्चिम में बुरी तरह हारे। उत्तर-पूर्व (मंचूरिया) में ५८ वें डिविजन ने यिंगको का बन्दरगाह कम्युनिस्टों को सौंप दिया। यह बहुत

महत्वपूर्ण था। प्रमुख शहर तथा होये शान्तुंग और शान्सी के प्रान्तों के गढ़ एक एक करके जनमुक्ति सेना के हाथ में आते गये ।

पतझड़ ऋतु में सरकारी सेनाओं का उत्साह समाप्त हो चुका था। ९२ वीं सेना आत्म-समपर्ण कर चुकी थी। २४ सितम्बर को कम्युनिस्टों ने शान्तुंग प्रान्त की राजधानी शिनान बात की बात में जीत लिया। मंचूरिया के खास दुर्ग चिनचाउ का पतन अक्तूबर में हो गया। तब भूख से तड़फती ६० वीं सेना ने मंचूरिया की राजधानी चांगचुन में फंस कर हथियार डाल दिये। लेकिन मुकदन का पतन राष्ट्रवादियों के लिये सबसे बड़ा धक्का था। मुकदन के साथ ही सारा मंचुरिया भी कम्युनिस्टों के हाथों में चला गया। और युवक सैनिक मनीषी जनरल लिन पियो ने अपने कम्युनिस्ट सैनिकों को तेनसिन और पीकिंग की ओर मोड़ दिया।

हमारा भविष्य हमारी ओर बहुत तेजी से आ रहा था। जब जन-मुक्ति सेना मंचूरिया और उत्तरी चीन के रास्ते से पीकिंग के पास जमा हो गई तो वहां से सरकारी सेनाओं को पीछे हटना पड़ा। विदेशी धनाढ्य सौदागर और अधिकारीगण शहर छोड़कर भागने लगे। पश्चिमी हवाई अड्डा खचाखच भरा रहता। कुछ ही महीनों में स्वर्ण मुहर यांन की कीमत अपनी पहली कीमत का दशवां अंश ही रह गई। यांन को सरकार ने मुद्रा-विस्तार रोकने के अभिप्राय से आखिरी कदम के रूप में प्रचलित किया और अन्त में यांन का मूल्य नगण्य हो गया।

शहरों में गश्त लगाने वाली पुलिस और सैनिक टुकड़ियों का हमारे प्रति रुख और भी कटु हो गया। हमें चेतावनी दी गई कि शत्रुओं के ब्राडकास्ट सुनना एक अपराध है। दिसम्बर के शुरू में हमने यह अफवाह सुनी कि शहर की चारदिवारी के बाहर दोनों हवाई अड्डों के पास युद्ध हो रहा है। १४ दिसम्बर को हमने सुना कि शहर में राष्ट्रवादियों की तोपों ने आग उगलना शुरू कर दिया। पेता में बिजली की तरह खबर फैल गई कि जिंगुआ के पास कम्युनिस्टों की कुछ टुकड़ियां देखी गईं। जन-मुक्ति सेना द्वार पर पहुंच गई थी।

अगले दिन १५ दिसम्बर को कम्युनिस्ट तोप से एक गोला पुरानी दीवारों को चीरता हुआ नान चीन जे पर तेज धड़ाका करते हुए फटा। हम अपनी मुक्ति १७ दिसम्बर को चाहते थे—जिस दिन पेता की ५० वीं वर्षगांठ थी। लेकिन हमें अभी और इन्तजार की घड़ियां काटनी थीं। पीकिंग में फिर से शांति छा गई। मौन हो वह फिर बाट जोहने लगा कि पड़ाव की सेनाएं फिर से इस घेरे को तोड़ दें—पांच सौ सालों में पड़े घेरों का यह आखिरी घेरा था।

कोड़ा मारने पर जिस तरह थका मांदा गधा आखिरी दम तक भागता है, उसी तरह बोझ से दबे कुली भी रक्षकों के युद्ध रसद को लादे भाग रहे थे। उत्तरी शहर में और गोले गिरे। वहां रहने वाले लोग अपने अपने असबाब को लाद शहर के दूसरे छोर की ओर जाने लगे। विस्थापितों का एक झुंड उत्तर की ओर भी भागा क्योंकि दक्षिणी शहर में भी गोले फटे थे। शहर का कोई भी भाग सुरक्षित न था। शहर की चारदिवारी के पास से बढ़ती हुई टुकड़ियां दिखाई देने लगी थीं।

काफी रात गये जब गाड़ियों और सैनिक ट्रकों का चलन रुक जाता तो हम बिस्तर पर पड़े राष्ट्रवादियों की मशीन गनों के चलने की तड़तडाहट सुनते। वे रात को आंख मीच कर मशीन गनें दागते रहते थे। भयभीत विस्थापितों और कभी कभी थोड़ी दूर पर गोलों के फूटने के बावजूद भी पेता के छात्र उन्मादित होकर इधर-उधर घूमते थे। हमारे लिए नया प्रभात आने ही वाला था। उन दिनों मुक्ति सेना के आगे बढ़ने के समाचार की सोने के कमरों और क्लास रूम में कानाफूसी होती। हमारे पास सरकारी पत्रों की सूचनाओं से अधिक सूचनाएं होतीं लेकिन हम उन्हें थोड़ा हंसने के लिये खरीद लेते। उस आशाप्रद विज्ञप्ति से भय टपकता था। पर हमें हंसी आती। "लुटेरों को कुचलने के मुख्य केन्द्र की घोषणा है कि शहर की दक्षिणी दीवार के बाहर हमें पूर्ण विजय प्राप्त हुई और ३००० कम्युनिस्ट लुटेरों को कत्ल कर दिया है।" पाठक झल्लाता और अखबार को एक ओर फेंक कर कहता। "जितना अधिक भय उतना ही बड़ा झूठ। हमारे कामरेड किसी भी दिन आ सकते हैं।"

लेकिन शहर में अभी तक सैनिक यातायात का भारी जमाव था। लड़ाई

का सामान और भोजन की गाड़ियों को खच्चर खींच रहे थे। और सड़कों पर पैदल सैनिकों के झुण्ड आज़ादी से घूमते थे। अभी तक वे लोग पुरानी सरकार का चिन्ह श्वेत-सूर्य धारण किये थे। उनके खाकी रंग के भारी सैनिक ट्रक पेता के आस-पास की गलियों में हमारी साइकिल को एक ओर हटा देते और उनके ड्राइवर मुंह बाहर निकाल कर हमें कोसते।

"सैनिक आ गये" चीनी ने इस वाक्य से हमेशा यही समझा कि लुटेरे और डाकू आ गये। लोगों ने सुना था कि फ्यू जो यी के सैनिक बहुत अनुशासित थे लेकिन किसे विश्वास होता कि पराजित सैनिक नर्म या दयावान भी हो सकते थे। यदि वे लूट ले गए तो सांप की लकीर पीटने से क्या फायदा होगा ? समझदार लोगों ने अपने दरवाजे ही बन्द कर लिए। कुछ चतुर परिवारों ने तो अपने दरवाजों पर लाल सील लगा दी और घोषणा कर दी कि वे अमुक सैनिक टुकड़ी के परिवार के हैं। लेकिन सैनिकों का तो अपना तरीका होता है। दरवाजों पर संगीनों से आघात करते।

अन्दर से भ्रान्त व्यक्ति चिल्लाते "हम सब सैनिकों के आश्रित हैं, दया कर दूसरा द्वार देखें।"

"हरामी ! खोलो दरवाजा ! हम यहां कम्युनिस्ट लुटेरों से लड़ने आए हैं और तुम चाहते हो हम सड़कों पर सोएं। खोलो, नहीं तो किवाड़ तोड़ देंगे। जल्दी करो ! क्या इन्हें हम धक्के मारकर खोलें।

तब मकान मालिक कांपते हुए नौकर को हमलावरों से बातें करने के लिए भेज देता। "यह घर तो सुचाऊ स्थित रेजीमेंटल कमांडर का है।" हमलावरों को धोखा देने की कोशिश में नौकर चिल्लाता। "कहीं और जगह जाओ।" वह किवाड़ों में बनी एक छोटी खिड़की खोल देता। "मालिक ! इस मोड़ के आगे जाओ। वहां अच्छा और बड़ा मकान है और दो या तीन आदमी ही रहते हैं।"

"तो यह सैनिकों के आश्रितों का मकान है।" उन सैनिकों में सबसे बड़ा ताना मारते हुए कहता। "बहुत खूब आश्रित तो हमारे घरों में भी हैं।

पहले हम आएंगे और इसके बाद हमारे आश्रित।" अधिक बकवास न कर सैनिक अपनी गाड़ियों, खच्चरों और दूसरे सामान को अन्दर ले आते पर उनके पास चावल और कोयला नहीं होता था।

जहां भी हाथ पड़ जाता, सैनिक उसे ही हजम कर जाते। इसलिए हमारी खाद्य समस्या उत्तरोत्तर जटिल होती जा रही थी। जब हमारे अहार गृह में लगी आटे की चक्की टूट गई तो हमें ज्वार पर गुजर करना पड़ा जो छात्र एक रोज में एक बड़ी चीनी रोटी (लगभग आधा सेर) और तीन मुट्ठी चावल हजम कर जाया करता था, वह एक मुट्ठी मोटा अनाज नहीं खा पाता था। तीन मुट्ठी चावल के बजाय उसे आधी मुट्ठी ज्वार को निगलना मुश्किल था। भोजन के बाद हमारे जबड़ों में दर्द होता। आटे की चक्की का काम हमारे दांतों को करना पड़ता।

उस मोटे अनाज से हम रोजाना साग सब्जी खरीदने की कोशिश करते और कभी गोश्त या मछली के टुकड़े भी। एक दिन चाओ यांग मिन बाजार से लौटने पर स्कूल के कसाई ने बतलाया कि जिन साग सब्जी और गोश्त को खरीदा था उन्हें सिपाहियों ने रास्ते में चुरा लिया, इसलिए हमें भुनी हुई नमकीन तरकारी को सोयाबीन के साथ चबाकर ही संतोष कर लेना पड़ा।

शहर के एक भाग से दूसरे भाग में जाना टेढ़ी खीर थी, क्योंकि आगे पीछे सदा सैनिक मार्च करते रहते। बेगारियों के झुंड मकानों के सामने अथवा गलियों के मोड़ पर नाके बंदी तैयार करते। इसके अलावा हतामन को जाने वाले रास्तों को बंद कर दिया गया। जब शहर के बाहर दो हवाई अड्डे राष्ट्रवादियों के हाथों से निकल गये थे तो उनके स्थान पर शहर के बीच में हवाई जहाजों के उतरने के लिये जो रास्ता बनाया जा रहा था वहां मजदूरों का दल ठंड में रात दिन काम पर जुटा था। कम्युनिस्टों के जवाब में पार्कों में रखी भारी तोपों को जब दागना पड़ता तो सारा शहर कांप जाता।

लाल हाल से छात्रावास को जाने वाली सड़क पर अनेक गोले फटे। एक गोला शयनागार पर फटा और उसने हमारे एक कमरे को तहसनहस कर दिया। उनमें रहने वाले दो छात्र बाहर होने के कारण मौत के मुंह में जाने

से बच गये । चारों ओर अफवाह फैल गई कि दक्षिणी शहर के राष्ट्रवादी सैनिकों ने ही वास्तव में इन गोलों को शत्रु-विद्यार्थिओं में घबराहट पैदा करने के लिए फेंका था । प्रमाण स्वरूप हमारे नेताओं ने बताया कि गोले छोटे थे और वे एन्टी एयरक्रैफ्ट गन से आ सकते थे । इसके अलावा उनका यह भी कहना था कि जन-मुक्ती सेना पेता पर गोलाबारी नहीं करेगी क्योंकि उसका कोई सैनिक महत्व न था । सौभाग्य से सभी गोले दिन के समय ही आते । उस समय पीकिंग में रोशनी मोम बत्तियों से हुआ करती थी और कर्फ्यू ने रात को घूमना फिरना और भी दूभर बना दिया था । ऐसी भी घटनाएं सुनने में आईं कि रात में पहरा देने वाले सैनिकों ने अंधेरी गलियों में भागती हुई अपनी ही सैनिक कारों पर गोलियां चलाईं ।

बिजली और पानी कट जाने के बाद अपने स्कूल को राष्ट्रवादी सैनिकों के द्वारा लूटपाट और हिंसा से बचाने के लिए हम पूर्व योजनाबद्ध कार्यों में लीन हो गए । युवक विद्यार्थियों ने अपनी रक्षा के साधनों को दृढ़ कर लिया युवतियों ने दो में से एक दरवाजे को ईंटों से चुन कर बन्द कर दिया । सूर्यास्त के समय ही हम दूसरा दरवाजा बन्द कर लेते और उसके आगे कुर्सी डैस्क आदि लगाकर आत्म रक्षा को तत्पर रहते, क्योंकि हमें बतलाया गया था कि विशेष जासूस किसी भी समय घुसने का प्रयत्न कर सकते हैं ।

हमारे नेताओं ने हमें आत्म-रक्षक दस्तों में बांट दिया जो रोज रात के समय पहरा देते । एक दस्ते को तीन पहरे देने पड़ते थे । रात को पहला पहरा ८ बजे से १२ बजे तक, दूसरा १२ से ४ तक और तीसरा ४ बजे सुबह से ८ बजे तक । हर प्लाटून के चार भाग थे, पहला विशेष स्थानों पर पहरा देता; दूसरा दीवारों के चारों ओर घूमते हुए गश्त लगाता, तीसरा अन्दर और बाहर की खबरें देता, और चौथा दूसरी यूनिवर्सिटियों से टैलीफोन द्वारा सम्बन्ध रखता ।

पहरा देने के लिए मेरी पहली बारी, अन्धेरी रात में बारह बजे से चार बजे के पहरे में थी । पहरे पर सो जाने का मुझे इतना भय था कि मैं सूर्य डूबने से पहले से ही सोने के लिए लेट गई । लेकिन जितनी अधिक मैं चिंतित होती नींद मुझसे दूर भागती जाती । रात होते ही बड़े दरवाजे के बन्द हो

जाने की आहट सुनी। इसके बाद कुछ न सुना। कभी कभी बाहर पहरे पर लोगों के आपस में टकरा जाने पर कर्कश आवाज सुनाई पड़ती और जब वे एक दूसरे को पहचान लेते तो वह समाप्त हो जाती। मैं ऊँघती रही और ग्यारह बजे ही जाग गई। पास ही वांग मे त्यांग खुर्राटे भर रही थी। मुझे ईर्ष्या हुई। मेरा दिमाग उतना ही चुस्त और ताजा था जैसा कि वह सुबह दस बजे होता था। मैं उठ बैठी और रजाई को एक ओर डाल कर अपना कोट पहन लिया। संदेश वाहक के आने से पहले ही बारह बजने में दस मिनट पर मैंने अपने कमरे के साथी को जगाया। हम धीरे से शान्त छात्रावास से बाहर आ गये।

लाल हाल के सामने हम मूक हाजिरी के लिए लाइन बनाकर खड़े हो गए। एक टीम में दो व्यक्ति होते थे। हर टीम को एक टार्च और एक लाठी भी मिलती थी। मे तेन और मुझे एक दूसरी टीम के साथ टेलीफोन संभालने का काम मिला। जिस ग्रूप से हम चार्ज ले रहे थे उसने हमें दूसरे स्टेशनों से सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया और गुप्त-शब्द बतला दिए और शुभकामनाएं दीं।

उस छोटे से कमरे में हम चारों सट कर बैठ गए। मैंने खिड़की बन्द कर दी। लेकिन बर्फीली हवा हमारे फर्श से आ टकराई। बाहर शून्य ताप के लगभग सर्दी होगी और बहुत कुछ उतनी ही अन्दर भी। इसी समय टेलीफोन बजा और मे तेन ने उसे उठा लिया।

जब तक वह टेलीफोन अपने कानों पर लगाए रही मैं—उन लम्बे बीस सैकिंडों तक सांस रोके बैठी रही। उसने कहा सब ठीक है! कुछ नहीं हुआ।

नींद की कमी का अनुभव करते हुए मैं काफी देर सुस्ताई पर जम्भाईयां न आने देने की कोशिश करती रही। अपनी मोटी रुई की जाकेट में मैं इतनी गर्माई का अनुभव कर रही थी कि झपकी आने ही वाली थी। उसी समय लाओ मा ने दरवाजा आ खोला और मेरे शरीर पर बर्फीली हवा का एक थपेड़ा लगा। वह बाहर पहरे से आ रहा था। अपनी निद्रा से संघर्ष करते हुए मैंने उससे मेरा स्थान लेने को कहा।

मे तेन ने मुझे टार्च दे दी और मैं बाहर चली गई। दक्षिण की ओर से थोड़ी थोड़ी देर बाद एक तोप के दनदनाने की आवाज आ रही थी। जिस ओर सड़क की बत्तियां जल रही थीं, मैंने उसी ओर देखा। मैं पुनः अंदर जाने की कामना करने लगी।

मैंने मन ही मन सोचा कुछ अनहोनी नहीं होगी। अपनी आंखें फाड़-फाड़ कर देखा और कान चौकन्ने किए। मैं लाल हाल के बाएं तरफ मुड़ गई, फिर रुकी। एक काली सी आकृति इतनी बड़ी थी कि वह एक आदमी की तो हो ही नहीं सकती थी। मैं सहमे हुए कोई तीन कदम चली और रुक गई। उस लाठी को अपने साथ क्यों न ले आई जिसके सहारे लाओ मा को अन्दर कमरे में टेक लगाए मैंने देखा था। मेरे हाथ में टार्च वास्तव में एक दयनीय अस्त्र था। यकायक छाया के दो टुकड़े हो गये। मैं भयभीत थी। उसका एक हिस्सा दीवार के बाहर रह गया और दूसरा नीचे की ओर आता दिखाई पड़ा।

"पहरा देने वाला कहां गया ?" मैंने सोचा और टार्च का बटन दबाकर दीवार पर रोशनी फेंकी।

"एं ! रोशनी बंद करो ! तुम क्या करना चाहती हो ?"

मैं रोशनी फेंकती रही। अन्त में दीवार के नीचे पड़े साथी को पहचान गई। "तुमने तो मुझे अधमरा ही कर दिया।" मैं उस पर बरस पड़ी।

"और तुमने क्या किया ?" उसकी आवाज में क्रोध और संतोष दोनों थे। "हम यहां पहरे पर हैं। हर बारी पर आध घंटे की ड्यूटी। यह लाई की बारी थी। लेकिन ठंड से उसके हाथ पैर इतने अकड़ गये थे कि वह दीवार पर नहीं चढ़ सकता था। इसलिये मुझे उसे अपने कंधों का सहारा देना पड़ा।"

मैंने ऊपर देखा। मैं अब लाई को देख सकती थी। वह दीवार पर खड़ा था। "क्या बजा है ?" पहरे के काम में मेरी रुचि अब हटने लगी थी। इस

समय रात के २ बजे होंगे।

"इतनी उतावली न हो। इससे पहले जब मैंने घड़ी देखी थी तो सवा बजा था।"

ज्यादा बजा होगा, मैंने कहा।

"एँ! यह क्या; क्या कर रहे हो?" एक दूसरी प्रहरी जहां हम खड़े थे, आ धमका।

"उत्तर मांग रहे थे।" मैंने सोचा अवश्य कुछ हो गया है। मेरी इच्छा थी कि यहां हाथ में टार्च लेकर खड़े रहने की अपेक्षा कहीं और चली जाऊं।

पहरे पर रहते हुए समय गुजरने लगा। दूर तोपें दनदना रही थीं। धीरे धीरे मेरे हाथ और पैर बर्फ़ के डलों के समान बनते जा रहे थे। मन में विचार आया कि गार्ड रूम में चली जाऊं और लाओमा से ड्यूटी बदल लूं। मेरी उंगलियां इतनी ठिठुर चुकी थीं कि अन्दर जाकर मैं अपने कोट के बटन भी नहीं खोल सकी। लाओ माने उन्हें खोला और वह बाहर ठंड में फिर से लौट गया।

जब हमने दूसरी बार पहरा दिया तो इतना बुरा न लगा। दो या तीन दिन के खुले मौसम से सर्दी काफी कम हो गई थी। हमने टेलीफोन वाले कमरे में एक छोटा स्टोव रख छोड़ा था। तोपों की आवाज, बिजली का अभाव, सैनिकों की बर्बर प्रकृति, खाद्यपदार्थ, अस्त्रों और अधिकारियों के घरों के फरनीचर को ले जा रही गाड़ियों और तेज रफ़्तार से भागते हुए सैनिक ट्रकों के हम आदी हो चुके थे। बड़े-बड़े सफेद हवाई जहाज भी अब नये नहीं थे जो हातामा मार्ग पर उतरते और टारटार दीवार के निकट रुक जाते।

कभी हम चिन्तित होते और कभी आशाएं संजोते। यह हमें मिलने वाली ताजा अफवाओं पर आधारित होता। जनरल फ्यू जो यी आत्म-सम्पर्ण करना

चाहते थे। नहीं, यह झूठ था। असल में खूंसट लोग मरना चाहते थे या कम से कम अपने सैनिकों को बलिदान करना चाहते थे। हम संतोष की सांस लेते जब सुनते कि नगरपालिका परिषद दूसरे पक्ष की ओर से लड़ाई को शान्ति पूर्ण बातचीतों द्वारा समाप्त करने के लिये गुप्त रूप से कम्युनिस्टों से मिली। येनचिन और जिंगुआ यूनिवर्सिटियों के कुछ छात्र यह कहने के लिये हमारे पास चुपके से आये कि मुक्ति दाता किस प्रकार शान्ति स्थापना में सहायता कर रहे थे। उन्होंने बतलाया कि वास्तव में जन-मुक्ति सेना ने उन्हें यहां आने को प्रोत्साहित किया था। लेकिन जब वे खेतों की तरफ से आते दिख जाते तो राष्ट्रवादी उन पर गोलियाँ भी चला देते। उन्होंने आगे यह भी बतलाया कि सौभाग्य से उन प्रतिक्रियापरक सैनिकों का निशाना ही सदा के समान चूक जाता था।

इसके बाद हमने समाचारपत्रों की शीर्ष पंक्तियों में मेयर हो को कत्ल करने की साजिश के बारे में पढ़ा। मेयर हो शान्ति वार्ता के नेताओं में से एक थे। समाचार पत्रों में कहा गया था कि उनके मकान में किसी ने एक गोला रख दिया था। लेकिन हम जानते थे कि खूंसटों के आदमियों ने ही टाइम बम्ब उनकी छत पर रख दिया था। यद्यपि इस विस्फोट ने उनकी पुत्री के प्राण ले लिये और मेयर हो को भी घायल कर दिया पर मेयर हो शहर में शान्ति स्थापना कार्यों में जुटे रहे।

अब अन्तिम बार युद्ध करने के लिये राष्ट्रवादी ज़ोर शोर से तैयारी करने लगे और अधिक नाके बंदियां करने लगे। पार्कों में सैनिक रसद के सामानों का प्रदर्शन किया गया। २२ जून के पत्रों में हमने पढ़ा कि दोनों पक्षों में रक्तपात समाप्त करने की शर्तों पर समझौता हो गया। "आत्म-समर्पण" की चर्चा उसमें नहीं की गई थी लेकिन सरकारी विज्ञप्ति की भाषा से यह स्पष्ट था कि हमारे पक्ष की ही पूर्ण विजय हुई थी। हम विजयी हुए। अब धैर्य से केवल प्रतीक्षा करनी थी—जिन कामरेडों ने हमारी मुक्ति के लिए संघर्ष किया उनकी जय-जय कार करने की घड़ी की प्रतीक्षा।

जब मैंने अपने घर के सामने साइकिल रोकी तो ख्याल आया कि यह महीना कितना उत्तेजनापूर्ण था। मधुर भविष्य में यह सब याद रहेगा।

और जब मैं कल सोकर उठूंगी तो यह वह दिन होगा जब हमने वास्तव में विजय प्राप्त कर ली होगी।

किसी को पता न था कि कल पश्चिमी द्वार से जन-मुक्ति सेना के पहले सैनिक किस समय प्रवेश करेंगे। कहीं पहुंचने में देर न हो जाय इसलिए हम दोपहर पहले ही यूनिवर्सिटी के उस मैदान में इकट्ठे हो गए जिसका नामकरण "जनवादी स्कवायर" होने जा रहा था। हम लोग लाइन बनाकर खड़े हो गये ताकि हमारे नेता हमारी गिनती कर सकें तथा उन झण्डों को बांट सकें जिन्हें हमने पिछली रात बनाकर तैयार किया था। तभी पश्चिमी द्वार से एक साइकिल सवार संदेश लेकर आया कि अभी कोई टुकड़ी बढ़ती नज़र नहीं आती। हमने लाइन तोड़ दी और ऐसा स्थान खोजने लगे जहां हम अपने साथ लाया भोजन कर सकें।

डेढ़ बजे हमारे नेताओं ने "अब चलो" की आवाज़ लगा कर हमें खड़ा हो जाने को कहा। हमने यह खबर अपनी लाइन के पीछे तक पहुंचा दी कि सैनिक दो बजे आ रहे हैं। शहर के पश्चिमी भाग को जाते हुए हम गा रहे थे और जय-जयकार कर रहे थे। दुकानदार और घरों से लोग यह देखने के लिए निकल आये कि बाहर क्या हो रहा है। हमने जोर-शोर से बतलाया कि जन-मुक्ति सेना आ रही है और उनमें से कुछ लोग हमारे साथ हो लिए। द्वार से थोड़ी दूरी पर हमारे नेताओं ने हमें रोक दिया। हम वहीं खड़े होकर जन-मुक्ति सेना के आने की प्रतीक्षा करने लगे।

जन-मुक्ति सेना नहीं आई! हमने एक गीत गाया और इसके बाद कुछ और भी। तीन बजने के थोड़ी देर बाद ही तेजी से अपनी साईकिल के पैडल मारते हुए संदेश-वाहक चिल्लाया "वे आ रहे है! वे रास्ते में हैं!" पहले धीमे-धीमे और बाद में जोर-जोर से पश्चिम दिशा से गानों के स्वर कानों में पड़ने लगे। गाने की आवाज के साथ ही तालियां बजाने और जय-जयकार की ध्वनि आ रही थी। हमारे नेताओं ने फुस-फुस बन्द करने को कहा। हमारे दस्ते के आगे वाले लड़के ने अपना हाथ उठाया और गिरा दिया हम गाने लगे।

सागर को ज्योतित करने वाले
तुम हो हमारे प्रकाश स्तम्भ !
सही मार्ग के दिग्दर्शक हो
तुम्हीं हमारे आधार-स्तम्भ !
साहसी जन-मुक्ति-कटक हे !
हो तुम जनता के ही पुत्र !
अनुगमन करेंगे तेरा हम
चीन हमारा होगा स्वतंत्र ! चीन हमारा होगा स्वतंत्र !!

गर्जना के साथ हमने गाना बंद कर दिया और पश्चिम की ओर देखा। रास्ता अभी तक सूना था। अतः फिर गाने लगे। "सागर को ज्योतित करने वाले, तुम हो हमारे प्रकाश-स्तम्भ !......"

लेकिन हमारा सहगान बहुत तेज संगीत में खो गया। रास्ते पर एक ट्रक दिखलाई दिया—जिसके ऊपर दो लाउड स्पीकर लगे थे। लाउड स्पीकर से आनेवाला संगीत रुक गया। और हमने जोर से चिल्लाती हुई एक आवाज सुनी ! 'जन-मुक्ति सेना का स्वागत है। पीकिंग आगमन पर जन-मुक्ति सेना का स्वागत है !"

इसके बाद हमने अपनी जन-सेना का पहला सैनिक देखा, हृष्ट-पुष्ट और सचेष्ट जो अपनी टौमीगन सामने की ओर सीधी किये बैठा हुआ था। उसके पीछे पैदलों का दस्ता आ रहा था। वे राष्ट्रवादियों की भांति सरसों के रंग की पोशाक पहने थे। लेकिन ये सैनिक मजबूत और तन्दुरुस्त लगते थे। उनके गम्भीर और सौम्य चेहरों से कांति फूट रही थी।

पेता की एक युवती कुछ पुष्प लेकर आते हुए सैनिकों के पास पहुंची। वह जिस पहले सैनिक के पास पहुंची उसे ही उसने उपहार देने की कोशिश की। पर उस सैनिक को उसने इतना उन्मादित कर दिया कि वह पीछे हट गया मानो उसने किसी जादूगरनी को देखा हो। लड़की ने दूसरे सैनिक को पकड़ लिया और वह उसे उपहार देने में सफल हो सकी। और कुछ शर्मा कर वह मित्रों की तालियों और हंसी की गड़-गड़ाहट में वापिस दौड़ आई।

जिस सैनिक को उसने पुष्पोपहार दिया था मैंने उसे देखा। वह भी पहले सैनिक की तरह डरा हुआ मालूम पड़ता था। मैंने मन ही मन सोचा कि मेरी सहेली ने अपनी खुशी को इतने मतवालेपन से प्रकट करने से पूर्व यह तो सोचा होता कि साधारण जनता के बीच से आने वाले ये जवान क्या भद्र समाज की शहरी लड़की की इस तरह की भावनाओं को समझ सकेंगे ? बड़ी-बड़ी फर की टोपियां पहने मैंने उन सुन्दर युवकों को देखा जो बलिष्ठ और आभायुक्त थे। यदि जन-मुक्ति सेना में सभी इस तरह के सैनिक हैं तो हमें अपनी सेना पर वास्तव में गर्व होना चाहिए।

मैं जानती थी कि मेरे अन्य साथियों में भी वैसा ही जोश था। "कर्मठ" और "प्रगतिशील" कहलाने वाले उन्मत्त युवकों का व्यवहार ऐसा था कि मानो वे अपनी प्रेयसी से लम्बे विछोह के बाद मिल रहे हों। उनके जय-जयकार और हाथों को हिला-हिलाकर चिल्लाने ने सभी को द्रवित कर दिया। पेता के हम सभी विद्यार्थी उन्मुक्त-कंठ से जय-जयकार कर रहे थे।

पैदलों के बाद दो जीपें आईं। और इसके बाद कुछ नहीं आया। मेरे वेचार में यह बिल्कुल स्वयं-प्रेरित परेड थी। सम्भवतः इनके बाद आने वाले ौनिक इनका साथ न दे सके। रास्ते के दूसरी ओर मैंने जीप पर खड़े हुए ो विदेशियों को देखा जो हमारी ओर ताक रहे थे। वे परेशान और खोये ए लगते थे। मैं उन्हें देख कर खुश थी। मैंने पास खड़ी लड़की से कोहनी ारकर इशारा किया। "ओ वह विदेशी !" वह बोली, "सम्वाददाता होंगे ा साम्राज्यवादी दूतावासों से कोई होंगे। आज हम में से कोई उनके लिये ष्पहार भेंट करने या जयजयकार करने नहीं जायगा।

भीड़ से और भी जोर की जय-जयकार उठने लगीं। इस बार जिंगुवा ार येनचिन यूनिवर्सिटी के हमारे साथी आये जो झण्डे और हमारे नये नेता ओ-त्से-तुंग का विशाल चित्र लिए हुए परेड में चल रहे थे। परेड में एक ारा चित्र भी था—"जू-तेह हमारे सेना नायक" किसी ने कहा और हमने र तालियां बजाईं। हमने अपने उन दोस्तों की ओर हाथ हिलाए जिन्हें ़ महीने पहले स्वतंत्र होने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका था। प्रत्युत्तर में उन्होंने भी पुकार कर कुछ कहा तथा यह बतलाने के लिए कि उन्होंने हमें देख

लिया है वे अपने झण्डे हिलाने लगे।

बैंड बाजे के पीछे सैनिक ट्रकों में सैनिक और जिंगुआ और यनचिंग के छात्रों का जलूस आया और इसके बाद नागरिकों से भरे ट्रक आये जिनमें भिन्न भिन्न टुकड़ियों के सदस्य बैठे थे और ट्रक के एक ओर लिखा हुआ लटक रहा था : "जनता को मुक्त होने पर बधाई हो।"

हमने प्रतीक्षा में पलकें बिछा रखी थीं पर नागरिकों से भरे ट्रकों के बाद परेड समाप्त हो गई। अन्त में हम लाइन तोड़ कर सैनिकों के पीछे-पीछे चलने लगे। हमें मालूम हुआ कि सेना का एक यूनिट किसी सार्वजनिक भवन के अहाते में रात में विश्राम लेने की तैयारियां कर रहा था। उन्हें देखने के लिये हम सब एकट्ठे हो गये। हमने सैनिकों को गीत गाकर सुनाये। उन्होंने भी उन्हें निर्वाक सुना और बढ़ते हुए अंधेरे में हमारे द्वारा प्रस्तुत यांग को नृत्य भी देखा।

वहां से लौटने के बाद जब मैं घर जाने लगी तभी मुझे मालूम हुआ कि मैं कितनी थक चुकी थी। अब दुनियां में यदि मैं किसी वस्तु की सब से अधिक इच्छुक थी तो वह था : पहले थोड़ा पानी, फिर कुछ भात और फिर निद्रा। रास्ते में एक मित्र मिल गया।

उसने कहा—"बहुत लम्बा दिन था और काफी घूमना पड़ा।"

"लेकिन वह अमूल्य था," मैंने उससे कहा। "हमारे जीवन का प्रारम्भ अभी अभी हुआ है। मेरे विचार से हमने अभी तक जीवन में जो कुछ देखा है वह सब इसी क्षण की तैयारियां थीं। यह हमारी क्रांति है...हमने इसे लाने में योगदान दिया है। और आज तो उसका प्रारम्भ मात्र है।"

रात के भोजन के बाद मैं बिस्तर में जा पड़ी। मैं आज की उत्तेजना और परेड से इतना थक चुकी थी कि शायद जीवन में ऐसी कभी नहीं थकी हूंगी। इतनी कि मुझे सोने में भी तकलीफ होने लगी। जिन सभी सेनाओं को देखा था कुछ देर के लिये वे मेरे दिमाग में घूम गईं। अल्प जीवन में ही

मैंने पीकिंग में कितनी सेनाएं देखी थीं : जंगबाजों की सेनाएं; जापानियों की कठोर किन्तु कुशल और अनुशासित शाही सेना; राष्ट्रवादी सेना जिसे मैंने विजय के दिन देखा था। जो अनेक वर्षों के संघर्ष और युद्ध के बाद ढीली ढाली और निराश हो चलीं थीं, और राष्ट्रवादियों के साथ आराम तलब अमरीकी सैनिक—उनकी जैसी साजसज्जा हमने पहले कभी न देखी थी। वे इस गंदे और विचित्र देश से घर लौट जाने के लिये बड़े उतावले लगते थे। लेकिन जनमुक्ति सेना जैसी सेना मैंने पहले कभी न देखी थी—इसके सैनिक कितने गम्भीर और सहज प्रकृति, कितने विनम्र और मिलनसार थे।

लेकिन हवा और धूल भर जाने से मेरी आंखों में कितना दर्द हो रहा था और मेरे पैरों का दर्द! इन बातों के बारे में अब नहीं सोचना चाहिए। अब तो यही सोचना है कि मैं कितनी थक गई हूं और सोने के लिए उतावली हूं। नहीं मुझे उन शब्दों के बारे में भी सोचना चाहिए जिन्हें हम एक दूसरे से कहा करते थे, और वे योजनाएं जिन्हें कार्यान्वित करने में हमें सहायता करनी है और इससे देश में जो खुशहाली होगी। नई जन-सरकार हमें सच्चा प्रजातन्त्र देगी और हमारे नेता निजी महत्वाकांक्षाओं और व्यक्तिगत स्वार्थों के लिए नहीं दौड़ेंगे। हमें जनता से प्रेम होना चाहिए। हमें जनता के लिए श्रम करना चाहिए और उनका कहना है—उनका और क्या कहना है? कि हम विद्यार्थी क्रांति के अग्रदूत हैं और दूसरे लोगों की अपेक्षा जनता की समृद्धि के लिए हमें अधिकाधिक काम करना चाहिए—जनता के लिए काम करने में ही कल्याण होता है।

मैं अपनी पलकों पर अभी तक धूल के कण अनुभव कर रही थी। लेकिन मेरी आंखें अब इतना दर्द नहीं कर रहीं थीं। सारे शरीर में फैली हुई थकान मेरे विचारों पर हावी होने लगी और मैं सो गई।

(२)

कानी कौड़ी भी हराम

हम सब के मन में एक ही विचार था कि शहर पर अधिकार कर लेने के बाद सैनिकों का बर्ताव कैसा होगा ?

क्या दरवाजे पर गर्व से तने हुए अफसर के पीछे लोग धक्का-मुक्की करते हुए कोलाहल करेंगे कि हमें देशभक्त होन के नाते सैनिकों के खाने पीने का इन्तजाम करना है । क्या सैनिक अन्दर घुस कर घर के मालिक बन बैठेंगे ? चावल और कोयले चुरा लेंगे, आंगन को गंदा करेंगे और अंदर बाहर सभी चीजों को "हड़प" कर जायेंगे ।

जन-मुक्ति सेना के बारे में हमारी कल्पना इससे भिन्न थी । ३ फरवरी की उस बड़ी परेड, नौ घंटों तक सैनिकों की कतारें, टैंक और तोपों के प्रदर्शन को देखकर हम अपने मुक्तिदाताओं के अनुशासन और चुस्ती से उतने ही प्रभावित हो गये थे, जितने कि उनके जापानियों और अमरीकिनों से छीने गये हथियारों से । लेकिन संशयी व्यक्ति के मन में अभी अनेक प्रश्नों का समाधान शेष था । यह स्पष्ट था कि परेड या लड़ाई में अपने अधिकारियों की आज्ञा का पालन करना ये सैनिक भली भांति जानते थे । लेकिन 'लाओ-पे-सिंग' साधारण जनता से इनका कैसा बर्ताव होगा ? जिस तरह दूसरे सैनिक कुलियों को मारते पीटते हैं क्या ये भी वैसा ही करेंगे ? यदि ये सैनिक किसी के घर में ठहरे तो क्या उस घर की युवतियों को इस प्रकार सावधान रहना होगा जिससे उन पर सैनिकों की नजर न पड़े ? क्या वे चोरी करेंगे ? जिस गम्भीर मुद्रा से उन्होंने शहर में प्रवेश किया था उससे तो ऐसी बातों की कोई सम्भावना नहीं दिखती थी ।

सैनिक सदा ही मनचाही कर लिया करते हैं । हो सकता है कि आदर्श

आचरण की खबरें केवल मिथ्या प्रचारमात्र ही हों ? मैं कैसे विश्वास करती कि वे वास्तव में साधारण जनता की सहायता करना चाहते थे ? यह ठीक है कि हम सभी विद्यार्थियों ने इसे स्वीकार किया था । परन्तु व्यक्तिगत रूप से मुझे पूरी तरह विश्वास न हुआ कि जिस कमरे में सैनिक हों वहां मैं अपनी छोटी बहन को अकेली जाने दूं या उनके भरोसे थोड़ी देर के लिये अपनी साइकिल छोड़ दूं···बस इतनी देर के लिये ही कि मैं पोस्ट आफिस में एक चिट्ठी डाल कर लौट आऊं ।

सार्वजनिक भवनों पर जनमुक्ति सेना ने पहरा देने का काम ले लिया था और ट्रैफिक पुलिस के अलावा वे भी शहर की देख भाल कर रहे थे। ट्रैफिक पुलिस की बन्दूकें सेना ने ले ली थीं । नगरवासी बड़ी सतर्कता से इन सब परिवर्तनों को देख रहे थे । "कम्युनिस्ट लुटेरों" के नाश के पुराने नारों के स्थान पर अब स्वतंत्रता की बधाई के नये नारे लाल अक्षरों में चमक रहे थे । प्रभावी पोस्टर जनता की अजेय शक्ति की घोषणा कर रहे थे, तथा समस्त चीन को स्वतंत्र करने का विश्वास दिला रहे थे । प्रतिरक्षकों ने जिस गंदगी को शहर में जमा हो जाने दिया उसे झुंड के झुंड आदमी साफ कर रहे थे। सैनिक चौकियों को तोड़ा जा रहा था जिनमें से कई में तो तोपें रखी भी नहीं गई थीं । बेकार खाइयों को बंद करना शुरू कर दिया गया था और हातामिन स्ट्रीट के पास हवाई अड्डे को बनाने में जो खुदाई की गई थी उसे भी ठीक कर दिया गया था ।

एक नई सैनिक नियंत्रण परिषद ने शहर की व्यवस्था ठीक करने के लिये आज्ञाएं प्रसारित करना शुरू किया । उस परिषद में सभी अधिकारी कम्युनिस्ट न थे—पुरानी सरकार के कर्मचारियों को यथावत रहने का आदेश दे दिया गया था । अधिकांश पुराने समाचारपत्र उसी प्रकार निकल रहे थे । लेकिन 'लिन पियो' और जनरल नेह युग चिन को लुटेरों के स्थान पर अब यह समाचारपत्र 'जन नायक' के नाम से संबोधित करते थे । शहर को पानी फिर से मिलने लगा । और अब रात को रोशनी पहले से भी तेज थी । जापान से युद्ध के बाद पहली बार ही यह रोशनी इतनी तेज हुई थी ।

जन-मुक्ति सेना के सैनिकों को नजदीक से जानने का मुझे शीघ्र ही मौका

मिल गया। पेता के विद्यार्थियों ने शहर के आसपास के क्षेत्रों में पहरा देने वाले सैनिकों के लिये तौलिया, टुथ ब्रुश, साबुन, लिखने के लिये कागज और कुछ जरूरी आवश्यकताओं की चीजें एकट्ठा करने का आन्दोलन चलाया। मैंने भी निर्णय किया था कि अपने सहपाठियों के साथ ट्रक में जाकर इन छोटे छोटे उपहारों को बांटने में मदद दूंगी।

जिस दिन हमें जाना था, प्रातः सोकर जब उठी तो मेरा गला आया हुआ था और बुखार आने के चिन्ह प्रकट थे। क्लास रूम में जहां इकट्ठा होना निश्चित हुआ था, मेरे मित्र च्यांग ने मेरे तमतमाये चेहरे को देख लिया। उसने कहा मेरिया मुझे लगता है तुम कुछ अस्वस्थ हो ? माथा गरम तो नहीं है, देख लूं, बुरा तो न मानोगी ?

"ओह। तुम्हें बुखार मालूम होता है। गत कुछ दिन से काफी उत्तेजना रही, शायद उसी कारण हो। मैं नहीं समझता कि खुले ट्रक में इस सर्दी में तुम्हारा चलना ठीक होगा। तुम एक दो दिन की छुट्टी क्यों नहीं ले लेतीं। इस होस्टल की बजाय अपने घर जाकर एक दो रात आराम करो। इस उत्तेजना से भी छुट्टी मिल जायेगी।"

वह मेरे साथ दरवाजे तक आया और मेरे लिए रिक्शा बुला दी। "कुछ आराम करो" उसने मुझे चेतावनी के स्वर में कहा। रिक्शा वाला पैडिल मारता हुआ चलने लगा। धूप से चमकती सड़कों से मैं गुजरी; पोस्टरों और दीवारों पर बड़े बड़े लाल नारों पर मेरी निगाह पड़ी। किसी मिडिल स्कूल से यांगको नर्तकियों की मंडली को गुजर जाने देने के लिए हमें एक दफा धीरे होना पड़ा।

मेरे पिता के मकान के सामने रिक्शा वाला रुक गया। वास्तव में मैं अब अपने को अस्वस्थ अनुभव कर रही थी। मुझे चक्कर आ रहे थे। मेरे पैर रिक्शा वाले के कपड़ों के नीचे आ गए थे। वह समझ गया कि मैं बीमार थी। उसने मुझे रिक्शा में बैठा रहने दिया और स्वयं ही उसने दरवाजे की घंटी बजाई।

दरवाजा खुला। जन मुक्ति सेना का भारी चेहरे वाला एक युवक मेरे सामने खड़ा था।

"क्या आप इस परिवार के लोगों को देख रही हैं ?" उसने विनम्रता से कुछ रुकते हुए उत्तरी जबान में पूछा। वह मेरी ओर मुस्कराया और उसने कहा, "मैं जाकर उन्हें देखता हूं।"

कौतूहल के कारण मुझ में कुछ जान आ गई। मैंने रिक्शा से उतरकर किराया दिया। मेरे आने का सन्देश देने के लिए उस सैनिक से मैं मना ही करने वाली थी कि मेरी आया अन्दर से निकली। "ओह ! तो तुम हो ? उस सैनिक ने तो कहा था कि एक युवा पत्नी किन्हीं को खोज रही है।"

अविवाहित युवती को "युवा पत्नी" सम्बोधित करने से वह क्रुद्ध हो जायगी लेकिन मैं अपनी हंसी न रोक सकी। इन सीधे सादे किसानों के लड़कों में यही तो आकर्षण था। जिस आदमी का पालन पोषण गांव में हुआ हो और वह एक युवती को कुमारी की चोटी बिना देखे तो उसे "युवा पत्नी" न समझे तो और क्या समझेगा ?

दुर्भाग्य से मेरे माता और पिता बाहर गए हुए थे। मैं बिस्तर पर लेट गई और आया मेरे लिए एक गरम पानी और दो एस्प्रीन की गोली लाई। उसे अपने बिस्तर के पास बिठा कर मैं पूछने लगी कि यह सैनिक हमारे मकान में कैसे आए ? क्या यह भी पुरानी सरकार के सैनिकों की तरह बर्ताव करते हैं जो बिना आज्ञा मकान में घुस जाया करते थे ?"

"तुम्हारे पिता से एक अफसर मिला था। उस अफसर ने उन्हें बतलाया कि उसे पता लगा है कि उनके पास कुछ खाली जगह है। लेकिन उन्होंने तुम्हारे पिता के आमंत्रण की प्रतीक्षा की। कुछ भी हो, वे सब आ ही गए हैं। पर वे मुझे नचाते रहते हैं। "श्रीमती जी", क्या हमें पीने के लिए कृपया थोड़ा उबला हुआ पानी देंगी ? "श्रीमती जी, जरा मुझे दियासलाई दीजिएगा।" "ओह, मैं सच कहती हूं वे मुझे नचाते रहते हैं।"

"क्या उनके पूछे बिना ही तुम उन्हें थोड़ा उबला पानी और दियासलाई नहीं दे सकती ?"

"मैं यही तो करूंगी ।" आया के चेहरे पर असंतोष की रेखा लुप्त हो गई और मातृवत स्मित ने उसका स्थान ले लिया। "वह मुझे काम में लगाए रखते हैं। लेकिन वे बहुत अच्छे लड़के हैं, बड़े ईमानदार। मेरी काफी उम्र हो गई लेकिन मैंने अपने जीवन में मुझ जैसी मामूली औरतों से सैनिकों को इतनी विनम्रता से बोलते हुए कभी नहीं देखा। यही क्यों जब उनके पास अपना कुछ करने को नहीं होता तो आंगन साफ करने और कोयला ले जाने में वे मेरी सहायता करते हैं और...."

"श्रीमती जी" "श्रीमती जी।" वे फिर पुकारने लगे। आया लपक कर उठी और दरवाजा खोल तेजी से बाहर चली गई। उस शांत कमरे में अकेली पड़ी मैं जन मुक्ति सेना के "तीन नियमों और आठ ध्येयों" को याद करने लगी। दूसरा नियम बहुत आकर्षक था। "जनता से कानी कौड़ी भी नहीं लेनी।" मुझे उनके आठ ध्येय भी पसंद थे। इन सैनिकों का कर्तव्य था कि वे "मुंह के मीठे" और "बात के सच्चे" हों। उन्हें कहा गया था : "जो उधार लो उसे लौटा दो।" "नुकसान करने पर उसका हर्जाना चुका दो।" उन्हें चेतावनी थी, "जनता को न मारो, न झिड़को। "औरतों को न छेड़ो।" मेरे देखने में अभी तक जन-मुक्ति सेना के सैनिक इन सभी नियमों का पालन कर रहे थे। वह लड़का ठीक ही कहता था, "मैं इस सेना में कोई दोष नहीं पाता।" मुझे लगा कि सिर दर्द कम हो रहा था लेकिन मेरे पैरों में अभी तक थकान थी। मैंने अभी आंखें बंद ही की थीं कि आया फिर आ धमकी और बोली "मैं कोई निर्णय नहीं कर पाती। तुम्हीं बताओ क्या मैं उन्हें अपने चावल उधार दे दूं ?"

मैंने अनुमान लगाया कि शायद हमारे घर अधिक चावल नहीं हैं। लेकिन मुझे याद आया "जो उधार लो उसे चुका दो।"

"जितना दे सकती हो, उधार दे दो" मैंने उससे कहा।

थोड़ी देर पहले तो उस बात का फैसला करना उसने मेरे ऊपर डाल दिया था लेकिन अब वह मुझसे बहस करना चाहती थी। "अरे···यह कैसे हो सकता है।" उसने दांतों तले उंगली दबा ली। उसके चेहरे पर परेशानी झलक रही थी। फिर वह जल्दी जल्दी कहने लगी। "मालकिन ने कहा था कि घर में और पैसा नहीं है। फिर आज सुबह गृह स्वामी से ऐसी शिकायत करते मैंने उन्हें सुना भी था। यदि उन्हें ही सब चावल दे देंगे, तो हम क्या खायेंगे?"

"क्या जन-मुक्ति सेना जो लेती है उसे वापिस नहीं करती? कुछ भी हो उन्हें कुछ उधार दे दो।"

"तुम विद्यार्थी लोग हमेशा कम्युनिस्टों का पक्ष लेते हो।" माना कि, यह उसने हंसते हुए ही कहा था लेकिन उसकी आवाज में थोड़ा गुस्सा था। "आते ही इन लोगों ने जो पच्चीस केटी कोयला लिया था उसे अभी तक नहीं लौटाया है।"

वे बाहर से फिर आवाज देने लगे, "श्रीमती जी।"

"हमारी स्वतंत्रता के सामने तो पच्चीस केटी कोयले की कोई कीमत नहीं है। मैं कहती हूं जितना उधार दे सकती हो दे दो। जाओ और उनसे कह दो। कितनी ही बार उन्होंने तुम्हें पुकारा है लेकिन तुमने उनका कोई जवाब नहीं दिया। जन-मुक्ति सेना के अलावा यदि कोई दूसरे सिपाही होते तो तुम्हें झिड़कते और मारते। अब जाओ!"

मैं गिलास में बचे पानी को पी गई। रजाई को अपने चारों ओर लपेट यह दिखलाने के लिये कि वह मेरा आखिरी फैसला था मैंने दीवार की ओर मुंह फेर लिया।

मैं तीन दिन बिस्तर में पड़े रहने के बाद अपने को पुनः स्वस्थ अनुभव करने लगी थी। इसलिये गरम पानी ले जाने के बहाने मैं मकान के पश्चिमी भाग में गई जहां सैनिक रहते थे।

कमरे के अन्दर एक चौकोर मेज के अलावा दूसरा कोई फर्नीचर न था। कमरे में फर्श बिछा था। दीवार के सहारे रजाइयां, बंडलों में बंधे कपड़े, खाने पीने के बर्तन और सैनिक अस्त्र-शस्त्र रक्खे थे जिन्हें मैं पहचान भी न सकी। छ: या सात युवक सैनिक फर्श पर बैठे थे। उनमें से जिन तीन सैनिकों ने मुझे देखा वे उठ खड़े हुए। "आपको कष्ट हुआ, कामरेड," एक हकलाया, "हम खुद अपनी देख भाल करेंगे, कामरेड।" उसने मेरे हाथों से केटली को ले लिया और थरमसों में पानी भरने लगा।

दूसरे सैनिक ने मोटी रुई की जाकेट को उतार दिया। सिर झुका कर इधर उधर देखने लगा। शायद सोच रहा था विनम्रतम बात क्या हो सकती है और फिर बैठ गया। अब जो आदमी खड़ा था यह वही लड़का था जिसने मुझे "युवा पत्नी" कहा था। उसका चेहरा संकोच से लाल हो गया था। अपनी बहती हुई नाक को बांह से पोंछता हुआ वह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि बैठ जाय या खड़ा रहे।

"कृपया बैठ जाइये" मैं पहले ही बोल उठी।

कोई उत्तर दिये बिना वह टेबिल तक गया। एक बड़े प्याले को पानी से आधा भर अस्पष्ट बोला "कुछ पानी पीजिये, कामरेड।" उसने मेरी ओर प्याले को बढ़ाया फिर अपने कामरेडों के पास धम से बैठ गया जैसे किसी ने उसके नीचे से कुर्सी खींच ली हो।

मेरे अचानक ही आ जाने से वे इतने उत्तेजित हो उठे कि मैं उनसे जो कुछ कहना चाहती थी वह न कह सकी। मैं कहना चाहती थी कि उनकी सहज साधारणता और ईमानदारी से मैं वास्तव में बहुत प्रभावित थी। लेकिन मैं केवल यही विनम्र वाक्य कह सकी :

"कामरेड, हम आप से मिलकर बड़े खुश हैं। कृपाकर निसंकोच आपको जिस चीज की आवश्यकता हो मांग लें। क्या आप यहां आराम से हैं ?"

मैं उत्तर की प्रतीक्षा में खड़ी रही। लेकिन वे संकोच और भ्रम में

इतने खो गये कि किसी ने भी उत्तर देने का प्रयास नहीं किया। यकायक मुझे उस छात्रा की याद आई जो सैनिकों के शहर प्रवेश के दिन अपनी लाइन तोड़ कर फूल भेंट करने के लिए बढ़ी थी। उनके साथ बहुत देर तक बातें करने की इच्छा ठंडी पड़ चुकी थी। मैं जबरन मुस्कराई, कुछ झुकी और कमरे से भाग खड़ी हुई। मैं कुछ ही कदम चली हूंगी कि कुछ अस्पष्ट बात-चीत मेरे कानों में पड़ने लगी।

आंगन में मेरी मां की मित्र श्रीमती ली से भेंट हो गई जिन्हें आया दरवाजे तक छोड़ने जा रही थी। श्रीमती ली पुराने ढंग की और कुछ शक्की औरत थीं। उनके पति मध्य स्तर के सरकारी अफसर थे लेकिन नये अधिकारियों ने उन्हें यथावत ही रहने दिया। मुस्कराते हुए श्रीमती ली ने मुझसे पूछा कि मैं कहां से आ रही थी। मैंने ठीक-ठीक बतला दिया।

"कैसा समय आ गया! अच्छी पढ़ी लिखी लड़की गंवार सैनिकों के लिए पानी लेकर जाती है। और ऐसा वह अपनी इच्छा से करती है···" श्रीमती ली कुड़बुड़ाई और आया की ओर देखा। आया की ओर मैंने क्रुद्ध दृष्टि से देखा क्योंकि उसी ने तो भेद खोल दिया था। "ये नौ-जवान सैनिक···वास्तव में गांव से अभी आये मालूम पड़ते हैं। उन्होंने एक बड़ी मज़ेदार बात की। उन्हें बिजली को समझने में हुई कठिनाइयों के बारे में तुमने यह किस्सा सुना होगा। इन्हीं किसी घर में इनमें से कोई धूम्रपान करना चाहता था। लेकिन वहां दियासलाई न मिली और मिट्टी के तेल के लैम्प तो हैं नहीं। उनमें से एक ने अपनी सिगरेट बिजली के बल्ब पर लगा दी। जब वह नहीं जली तो वह भन्ना गया।"

फिर वह दूसरा किस्सा कहने लगी जिसे मैंने पहले ही सुन रखा था। एक सैनिक एक पश्चिमी ढंग के मकान में चावल धोने के लिये कोई जगह ढूंढ रहा था। उसे स्नानागार के अलावा किसी जगह पानी नहीं मिला। वे इस बात पर सहमत थे कि वह स्थान बिल्कुल ही अनुपयुक्त था लेकिन किसी तरह उन्होंने उसमें चावल उडेल दिये। लेकिन और पानी कैसे मिले? "ऊपर लटक रही जंजीर खींच दो।" और उनकी आश्चर्यान्वित नजरों के सामने से चावल इधर उधर उछले और गर्र गर्र करते लुप्त हो गये।

"कोई बहुत अच्छी कहानी नहीं, पर···" वह खिलखिला कर हंस पड़ीं।

"क्षमा करें, श्रीमती ली, लेकिन क्या आपने यह अपनी आंखों से देखा था ?"

"नहीं। पर तुम्हारा····· "

"या आपने उस व्यक्ति से सुना, जिसने इसे देखा था ?"

"ऐसा नहीं। लेकिन हरेक ने यह कहानी सुनी है।"

"मैं जानती हूं। लेकिन मुझे ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं मिला जिसने यह देखा हो। और मैं नहीं समझती कि किसी ने भी यह देखा है। मैं नहीं समझती कि इस तरह की छिछली कहानियों को फैलाकर आप किसी का भला कर रही हैं ?"

"ठीक है", श्रीमती ली ने मुझे मनाने की कोशिश की। "मेरी समझ में भी ये काफी अच्छे लोग हैं।"

"मैंने सुना है कि आपके मकान में भी कुछ लोग हैं। उनका कैसा बर्ताव है ?"

"ओह, बहुत ईमानदार आदमी हैं" उसने कहा, "ईमानदार आदमी ! वे हमारी बैठक में रह रहे हैं। जब वे आये तो उनके कम्पनी कमान्डर ने बैठक की सभी साज सज्जा, सभी आराम कुर्सी या और सभी पुराने सजे हुए फर्नीचर को हटा देने का अनुरोध किया ताकि किसी तरह का नुकसान न हो। हमें यह काफी परेशानी का काम लगा। लेकिन उसका काफी अनुरोध था अतः हमने बैठक की सभी चीजों को अन्त में हटा दिया। दीवारों पर केवल पुराने चित्र रहने दिये गये।"

"ए···किसने सोचा था कि तीन दिन में ही ये लड़के तांग के चित्र को

नष्ट कर देंगे। ठीक है वे नहीं जानते थे कि वह कैसी निधि थी। कम्पनी कमान्डर काफी उत्तेजित हो गया था। उसने अपने आदमियों को काफी झिड़का और चित्र का मूल्य पूछा।" श्रीमती ली न मुस्कराने की कोशिश की। "मेरे पति ने अवश्य ही उनसे परेशान न होने के लिए कहा। क्योंकि वह हर्जाना नहीं दे सकता था। यदि वह दे भी सकता था तो भी वैसा चित्र किसी कीमत पर नहीं खरीदा जा सकता था। लेकिन कम्पनी कमान्डर राजी न हुआ।" उसने हम से कहा—"हमें हर नुकसान का हर्जाना भरने की आज्ञाएं हैं। और मैं आज्ञाओं का पालन करता हूं" परिणाम स्वरूप अन्त में मक्का के बीस केटी मुआवज़े के रूप में लेना हमने स्वीकार कर लिया।

"क्या उन्होंने और किसी चीज को भी नुकसान पहुंचाया या किसी पुरानी चीज को ले लिया? उनके साथ यही दिक्कत है कि वे पुरानी चीजों की कीमत नहीं समझते" आया ने श्रीमती ली से कहा।

श्रीमती ली रुकी। "वैसे तो इन चीजों के बारे में वे सावधान हैं, पर हमारी कुछ चीजों का नुकसान हुआ है।"

"सचमुच?" मैंने संशय भाव से पूछा। "क्या उनसे यह आशा नहीं की जाती कि वे जनता की कानी कौड़ी भी न लें?"

"ठीक है उन्होंने हमारी फूटी कौड़ी भी न ली" उसने उत्तर में कहा, "लेकिन उन्होंने हमारा कोयला जलाया है।"

"कम्पनी कमांडर इस बारे में कुछ क्यों नहीं करता?"

"जब कभी वह किसी को ऐसा करता हुआ पकड़ता है तो उसे रोक देता है लेकिन वह हर समय तो नहीं देख सकता और न हम ही हर समय कम्पनी कमान्डर के पास भाग सकते हैं। कुछ भी हो, मौसम ठंडा है। यदि स्टोव को जलते हुए न रखा जाय तो बैठक बहुत ठंडी हो जायगी। मुझे लगता है कि ये सभी सैनिक अच्छे हैं। सभी समझदार जवान हैं। किसी दूसरी सेना की तुलना में वे अधिक व्यवस्थित हैं। हर रोज वे हमारे नौकरों का आंगन साफ कराने

में हाथ बटाते हैं और वे उसे कांच की तरह साफ रखते हैं । अच्छा…" हम दरवाजे पर पहुंच चुके थे । आया ने जल्दी से आगे बढ़ कर एक रिक्शे वाले को बुला लिया ।

मैं घर पर दो दिन और रही…। इसी आशा में कि जरा और तब तक ताकत आ जाये । इसी बीच एक लड़का मेरी डाक लेकर आया । उसने कहा कि स्कूल में कुछ नयी बात हो गई हैं । हमारे कुछ सहपाठी जो कि कुछ महीने पहले पुराने शासन के समय भाग गये थे, कम्युनिस्ट यूनीफार्म में पी० एल० ए० के साथ अभी लौटे थे । उनके चेहरे गर्व से चमक रहे थे वे हम से मिलने आये थे । कितने ? कम से कम एक दर्जन । और उनमें तीन स्त्रियां भी हैं । मैंनें काफी कपड़े पहने और आया को दरवाजे पर साइकिल लाने को कहा और साइकिल लेकर स्कूल लौट गई ।

रास्ते में मैंने पुलिस के साथ सैनिकों को देखा जो ईमानदार, बलिष्ट और सख्त प्रतीत होते थे । मेरा रास्ते में रुकने और चीजें खरीदने का कोई विचार न था लेकिन मेरे दिमाग में एक बात थी । मैंने साइकिल रोकी । और उसे एक खम्भे के सहारे लगा दी जहां सैनिक खड़ा था । "कामरेड ! कष्ट न हो तो क्या आप कुछ मिनिट के लिए मेरी साइकिल की ओर देखते रहें । जिससे मैं निश्चित हो सकूं कि इसे कोई चुरा न ले ? मुझे थोड़ा सामान खरीदना है पर मैं जल्दी ही आ जाऊंगी ।"

उसने मेरी स्टूडेन्ट यूनीफार्म की ओर देखा और फिर साइकिल की ओर और कहा, "अच्छा ।"

मैंने चार-पांच मिनिट तक प्रतीक्षा की । फिर मूंगफली का एक पैकेट खरीद कर जब मैं साइकिल के पास लौटी तो सुन्न खड़ी रह गई । सख्त चेहरे वाला सैनिक अपने हाथ में राइफल लिए पहरे पर खड़ा था । वह अपनी ड्यूटी पर था । पर हर आधी मिनट या इतने ही समय में वह मेरी साइकिल को देख लेता था । छः महीने पहिले यदि कोई उस ओर से गुजरता और ऐसी घटना को देखता तो वह अवश्य कह उठता "बेचारा, किसी जनरल की बेटी की साइकिल की देख-भाल कर रहा है ।"

(३)

मेहनत की दुनियां

यूनिवर्सिटी लौटने पर जब मेरे साथियों ने बतलाया कि वे क्या करते रहे थे तो मुझे लगा जैसे यहाँ से गये मुझे एक महीना हो गया था। नई सरकार ने शहर की व्यवस्था के लिए जिस नीति की घोषणा की थी उसका उन्होंने कैसे अध्ययन किया, किस तरह प्रचार दलों का संगठन करके उन्होंने जनता को स्वतंत्रता का अर्थ और नई नीति को समझाया और किस तरह यूनीफार्म में लौट रहे पुराने सहपाठियों का अभिवादन किया था, आदि सभी बातें उन्होंने मुझे बतलाईं। "अच्छा, कौन कौन लौट आए ?" मैंने पूछा। "हमारे दोस्त वांग का क्या हाल है—जानते हो, वही लड़का जो जिगुआ से हमारी इतिहास की कक्षा में पढ़ने आया था ?"

"हां! शायद वह भी लौट आया। यहीं कहीं होगा।" लेकिन लगता था, असल में किसी को भी उसके बारे में कुछ मालूम नहीं था। उसी समय यकायक एक सहपाठी ने फाटक की ओर संकेत करके कहा। "हमारे भाग्य अच्छे हैं। वह अभी लौटा है, जाओ ! और उससे पूछ लो !"

दरवाजे में घुसते हुए जन मुक्ति सेना के गणवेश में उस सहपाठी को मैं पहचान गई। वैसे वह जाना-पहचाना सा लगता था पर नाम याद नहीं आ रहा था। मुझे इतना ही याद रहा कि वह इतिहास विभाग का छात्र था, दुबला-पतला और बहस में तेज।

हम उससे मिलने गए। उसने हम सबसे हाथ मिलाया। वह अब मोटा और पहले से तन्दुरुस्त लगता था। वह बोला, "इतना इन्तजार करने के बाद आखिर हम स्वतंत्र तो हुए। अंत में ऊषा काल आया। आखिर हमारा भी समय आ ही गया।" अब तक ऐसे वाक्यांशों को सुनते सुनते हम आदी हो चुके थे और उनकी प्रेरणा भी कुन्द पड़ गई थी। उत्तर में मुस्कराते हुए मैंने

अपने पुराने साथी वांग के बारे में पूछा ।

"ओह, वांग," वह बोला, "तुम्हारा मतलब जिंगुआ से आये उस लम्बे चौड़े लड़के से है ? वही जो बहुत होशियार था । वह भी लौट आया है। आजकल सेना में है। सेना के साथ जल्दी ही वह दक्षिण चला जायेगा ।" उसने गर्दन हिलाई और फिर बोलने लगा, "वह, ओह !"

"अच्छा, उसके क्या हाल हैं ?" मुझे विश्वास नहीं होता था कि वांग जैसे योग्य व्यक्ति के साथ भी कोई दुर्घटना हो सकती थी ।

"वह—" जन मुक्ति सेना का युवक कुछ प्रसन्न दिखलाई दिया । "ओह, कुछ नहीं, कुछ नहीं । शुरू में उसे यह सब अजीब लगा, शासक वर्ग से जो युवक सेना में आते हैं उनमें कभी कभी अनेक दोष होते हैं । अपने में कठिनाई होती है और सुधार की प्रक्रिया भी तो कभी कभी बड़ी सख्त होती है ।"

वह नाक साफ करने के लिए रुका और फिर कहता रहा । "जब हमारा वह दोस्त पहली बार जन मुक्ति सेना में आया, तो कुछ भावुक था । वह अब भी है । पार्टी के पुराने सदस्यों से वह कभी असन्तुष्ट हो जाता । वाद विवादों में अजीब सवाल उठाता । समस्या को स्वयं सुलझाने या उसे सुलझाने में दूसरे लोगों को सहायता देने की बजाय उसे उलझा देता । अतः स्वाभाविक था कि वह कभी दुःखी भी हो जाता ।"

"तुम्हारा क्या हाल है ? क्या तुम सदा प्रसन्न रहते हो ?"

"अवश्य," वह बोला । "क्या हमने पिछले दो सालों में इस स्वतंत्रता दिवस के लिए संघर्ष नहीं किया ? उसके लिए काम नहीं किया ? अब नया जमाना, नया उत्साह आ गया है । हमें पीछे नहीं रहना चाहिए" उसने स्वयं अपनी छाती थपथपाई । "मुझे खुद लगता है कि मैं दिनों दिन मजबूत होता जा रहा हूं । देश हमारा है—अब समय आ गया है कि हमें काम पर जुट जाना चाहिए ? मैंने इरादा कर लिया है, मैं अब जनता का साथ दूंगा । जब तक चीन और समस्त दुनिया के मजदूर स्वतंत्र नहीं हो जाते मैं प्रतिक्रिया-वादियों के खिलाफ लडता

रहूंगा।"

उसने जोर से मेरा कंधा थपथपाया मानों मुझे भी भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित कर रहा हो। "कामरेड! कमर कस लो और काम पर जुट जाओ। नेताओं का अनुसरण करो, पार्टी का अनुसरण करो। पितृ-भूमि को तुम्हारी आवश्यकता है।"

हम पार्टी का कैसे अनुसरण करते? हमने सुना था कि हमारे सभी नए नेता पीकिंग में आ गये या आ रहे हैं। पर वे कहां थे? पार्टी हमें किस तरह नेतृत्व प्रदान करेगी?

इन प्रश्नों के उत्तर मिलने में देर न लगी। एक दिन सुबह हमने दीवार पर चिपका घोषणा-पत्र पढ़ा। उसमें लिखा था कि "जनवादी-युवक-संघ" और विद्यार्थियों के आठ या नौ दूसरे राजनीतिक गुट अब खत्म किये जा रहे थे। विद्यार्थियों के ये राजनीतिक गुट युद्ध के दिनों में विस्थापित यूनिवर्सिटियों में कम्युनिस्टों का सहयोग प्राप्त करने लगे थे। स्वतंत्रता मिलने तक इन्हें सहयोग मिलता रहा था। इनके सदस्य अब नए जनवादी युवक संघ में मिल जायंगे। यह नया संघ उन सभी पुराने गुटों को एक कर देगा जो अभी तक स्वतंत्रता लाने में योगदान दे रहे थे।

पेता यूनिवर्सिटी में स्वतंत्रता से पहले के कम्युनिस्ट पार्टी के गुप्त सदस्यों की सूची प्रकाशित हुई तो सभी को बड़ा आश्चर्य हुआ। इन सौ के लगभग गुप्त-कार्य करने वाले वीरों ने अपने आपको बखूबी छिपाये रखा। जिनके बारे में कम्युनिस्ट होना सपने में भी नहीं सोचा जा सकता था और जो हमेशा चुप रहते थे वे ही पुराने पार्टी मेम्बर निकले। हमारे कुछ साथी जो राजनीति का ढोल पीटा करते थे वास्तव में पार्टी सदस्य नहीं थे। शाओपो-नामक मेरे सहपाठी ने उस सूची को पढ़कर आश्चर्य से फुसफुसा कर कहा, "यह क्या जो लोग ज्यादा चक्कर मारा करते थे, गला फाड़ कर चिल्लाते थे और उत्साह से झंडों को फहराते थे पार्टी मेम्बर ही नहीं हैं"?

हमें मालूम हुआ कि हमारी कक्षा में चार पार्टी मेम्बर थे। मुझे याद है

एक दिन उन्होंने हमें यूनिवर्सिटी के हरी घास वाले एक सुनसान भाग में ले जाकर संक्षेप में बतलाया, किस तरह विद्यार्थी आन्दोलन पार्टी के गुप्त नेतृत्व और मार्ग दर्शन में काम करता रहा है। और बाद में गम्भीरता से पूछा "हमारे काम के बारे में आपको किसी तरह की शिकायतें हैं? हमें दुःख है कि इतना अधिक गुप्त रूप से कार्य करना पड़ा? परन्तु पार्टी को भी तो अपनी रक्षा करनी थी। हमारे भावी कार्य के बारे में आपके क्या सुझाव या विचार हैं? हमारे सदस्यों की सूची को पढ़ने के बाद आपको कैसा लगता है?"

अब एक दूसरा पार्टी मेम्बर उठा। वह भी उन्हीं बातों के बारे में बोला, "सुरक्षा के लिए पहले हम खुले में नहीं आ सकते थे। आप स्वयं ही समझ सकती हैं। आपकी स्पष्ट राय और सवालों का या आपकी कोई शंकाएं हों तो उनका हम स्वागत करते हैं। क्योंकि साफ कह कर आप हमारे प्रति सम्मान और आत्मीयता प्रकट करेंगी।"

इन साथियों ने जिस स्पष्टवादिता और ईमानदारी का परिचय दिया वह सराहनीय था। वे लोकप्रिय थे। हमने उन्हें विश्वास दिलाया कि हमें उनका नेतृत्व उन दिनों में भी पसन्द था जब हमें यह नहीं ज्ञात था कि हमारा नेता कौन है और आज भी पसन्द है? वातावरण इतना अच्छा हो गया कि इन पार्टी मेम्बरों ने सन्तोष की सांस ली। तब शाओ पो बोल उठा "आपने अभी अभी कहा था कि आप हमारी साफ साफ राय और ऐसे प्रश्नों का स्वागत करेंगे और उसे पार्टी के प्रति हमारी आत्मीयता समझेंगे। अतः मैं पूछता हूं कि जब पुराने कामिनतांग के अंग सानमिन चू के पहले युवक संघ ने विद्यार्थी आन्दोलन को तोड़ने की कोशिश की तो आप लोगों ने सबको इस बात पर राजी कर लिया था कि स्कूलों से राजनैतिक पार्टियों और लोगों को हट जाना चाहिये। विद्यार्थियों पर किसी पार्टी का नियंत्रण नहीं होना चाहिये। अब आप इसके विषय में क्या कहते हैं?"

हर एक के चेहरे पर परेशानी झलकने लगी। पर पार्टी मेम्बर शान्त रहे। ऐसे सवाल की उन्हें आशा थी। शान्ति से उन्होंने बतलाया कि उनका वह विरोध कामिनतांग के गुर्गों द्वारा छात्रों को अपने पक्ष में लेने की करतूतों के खिलाफ था। लेकिन उसका यह अर्थ कदापि नहीं था कि छात्रों को राजनीति

में भाग नहीं लेना चाहिए। और अब तो मजदूर क्रान्ति लाने के लिये इतना जी तोड़ कर परिश्रम करके हमने सिद्ध कर दिया है कि हम अपनी जनता और पितृ भूमि की प्रगति में कितनी दिलचस्पी रखते हैं।

शाओ पो अब भी सन्तुष्ट न हुआ। "आपकी बात में वज़न जरूर है, पर मुझे अभी तक विश्वास नहीं होता कि मैं उसे पूरा पूरा समझ पाया हूं। उन दिनों आप चाहते थे कि पार्टी और युवक संघ के सदस्य स्कूल छोड़ दें अब आप पेता में पार्टी और युवक संघ को बढ़ाना चाहते हैं। यह अभी तक मुझे समझ में नहीं आता।"

शाओ पो अल्पमत में था। अब युवकसंघ अपना कार्य-क्षेत्र विशेष रूप से बढ़ा रहा था। और सदस्यता आन्दोलन बड़े पैमाने पर प्रारम्भ हो चुका था पढ़ाई फिर प्रारम्भ हो गई थी। पर हम में से अधिकतर पढ़ाई से अधिक सदस्य बनाने के आन्दोलन और दूसरे प्रचार कार्यों में जुटे हुय थे। १७०० ई० में इंग्लैण्ड पर कौन शासन करता था या दो रसायन मिलाने पर क्या फल निकलता है, इसकी हमें कोई चिन्ता न थी। बहुत से छात्रों को जिन्हें इतना उत्तेजनापूर्ण जीवन देख लेने के बाद कक्षाओं में फिर से पढ़ने का विचार नीरस लगता था केवल युवकसंघ के सदस्य बनाकर ही संतोष न था। वे तो "क्रांति" में सक्रिय भाग लेना चाहते थे। कुछ छात्रों ने उत्तरी चीन की क्रांतिकारी यूनिवर्सिटी में कार्यकर्त्ता की शिक्षा लेने के लिये स्कूल छोड़ दिया। कुछ अन्य सैनिक और राजनीतिक यूनिवर्सिटी, विदेशी भाषा शिक्षालय और हारबिन स्थित रूसी भाषा अकादमी में चले गये। अनेक छात्र दक्षिण की ओर जा रहे कार्यकर्ता दलों में सम्मिलित हो गये। ये कार्यकर्ता दल दक्षिण में नानकिंग और शंघाई को मुक्ति करने के लिये यांगत्सी नदी की ओर बढ़ रही जनमुक्ति सेना के आगे जाकर राजनीतिक वातावरण तैयार करने के लिये संगठित किये गये थे।

इन दलों में नये भरती हुए लोग कुछ दिन के लिये शहर में राजनीतिक ट्रेनिंग लेते और एक महीने का सैनिक जीवन गुजारने के बाद दक्षिण की ओर बढ़ रही लिनपियो की चौथी पैदल सेना के साथ हो जाते। हमें पत्र लिखने के लिये उन्हें बहुत कम समय मिलता परन्तु जब कभी उसके पत्र

आते उनसे खुशी टपकती थी। वे लिखते कि यद्यपि उन्हें सख्त मेहनत करनी पड़ती है, सारे देश की मुक्ति में उनका विश्वास दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। जब यह पत्र हाथों ही हाथ यहां रहे सदस्यों तक पहुंचते तो इनका असर जादू की तरह होता।

नये भरती होने वालों में से कुछ इस नये वातरण को अपना न सके नई जिन्दगी के साथ कदम नहीं मिला सके। जिगुआ के एक छात्र का पत्र आया जो बास्केट बाल और बेसबाल का मशहूर खिलाड़ी रह चुका था। उसके पत्र में लिखा था : "यहां आने के पूर्व मैंने जो कल्पना की थी यहां सब उससे भिन्न है। मुझे ऐसा लगता है कि मैं बदल गया हूं। मैं एक बिगड़ी हुई मशीन की तरह हूं। खाने पीने में भी तकलीफ होती है। कुछ ही गज दौड़ने पर मैं हांफने लगता हूं। मुझे ऐसा लगता है कि मेरा मन और शरीर इस काम के योग्य नहीं है। मैं वापस स्कूल जाना चाहता हूं। मैंने सेना छोड़ने के लिये प्रार्थना पत्र भेजा है पर वह अभी वह स्वीकार नहीं किया गया है।"

ला कालेज का एक छात्र इससे अधिक भाग्यशाली था। वह शहर में एक पखवाड़े की सैनिक शिक्षा लेने के बाद लौट आया। जब वह हम लोगों से मिला तो कई प्रश्नों का उत्तर देने में वह टालमटोल करने लगा। वह ट्रेनिंग कोर्स की सीधी आलोचना नहीं करना चाहता था। जब हम उससे स्पष्ट कहने के लिये आग्रह करते रहे तो उसने अंत में स्वीकार किया, मेरे ख्याल से यदि मेरी मित्र ट्रेनिंग में न गई होती तो मैं भी न गया होता।"

हमारे हंसने पर वह झेंप गया। कहने लगा इसमें हंसने की क्या बात है। बहुत से लोग अपनी प्रेमिकाओं का साथ देने के लिये ही वहां गये हैं क्षण भर रुक कर वह फिर बोला, "अभी तक सारा काम व्यवस्थित रूप से संगठित नहीं हुआ है और नये लोग झुंड के झुंड आ रहे हैं। आप से क्या छिपाऊं मेरे पास सोने वाला आदमी चोर निकला। मुझे रात भर नींद न आती थी। मुझे डर रहता कि कहीं वह मेरे कपड़े या जूते न चुरा ले।"

"असल में यह हर तरह के आदमियों का अजीब सा जमघट है। बड़े लोग इस बात को समझते हैं पर उनका ख्याल है कि वे इन खराब आदमियों

को, जो उनके साथ आ गये हैं, सुधार सकते हैं। नये मुक्त क्षेत्रों का भार सम्भालने के लिये इन लोगों का शिक्षित करना जरा विचित्र सी बात लगती है। कम से कम मैं तो विश्वास नहीं करता कि अधिकारी इन चोरों को सुधार सकते हैं। आप जानते हैं इनमें से कुछ अधिकारियों का सांस्कृतिक स्तर कितना नीचा है। हमसे एक मामूली सी बात कहने के लिये उसे वे दस बार दुहराते हैं। संभवतः वे ऐसा सोचते हैं कि हम लोग उस बात को इसी तरीके से समझ सकते हैं। पर हम कोई बच्चे या अनपढ़ किसान तो नहीं हैं।

हम में से जो लोग इस भद्र युवक की बातें सुन रहे थे उन्होंने यही सोचा कि शायद वह अपने को थोड़ा बड़ा समझता है क्योंकि उसे सुशिक्षित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। एक प्रगतिशील छात्र बोला, "यदि उसको अब सबके साथ कदम मिला कर चलना है, तो उसे इन बातों को छोड़कर, जन-साधारण में घुल मिल कर रहना होगा। उसे यह समझना चाहिए कि शिक्षित होने का यह अर्थ नहीं कि वह मेहनत न करे।"

कुछ दिन बाद हमने सुना कि कम्युनिस्ट पार्टी के चोटी के नेताओं में से एक चाऊ एन लाई पेता के अध्यापकों से मिलने आये और उनके साथ उनकी समस्याओं पर चार घंटे तक बातें करते रहे। अध्यापकों की स्थिति के बारे में उनके दिल में सभी तरह की सहानुभूति और सम्मान था। पुरानी सरकार के समय उनकी आर्थिक कठिनाइयों की उन्होंने सराहना की और आश्वासन दिया कि पार्टी अध्यापकों की स्थिति में सुधार करेगी। यह कोरा आश्वासन ही नहीं था। शीघ्र ही घोषणा हुई कि हमारे प्राध्यापकों का उच्चतम वेतन ज्वार की १२०० केटियां मासिक हो जायगा जो लगभग १५० रुपए होता था। क्रय-शक्ति की दृष्टि से यह पहले मिलने वाले वेतन से कहीं अधिक था। (नई सरकार ने यह बुद्धिमत्ता का कार्य किया कि कागज की मुद्रा के स्थान पर वेतन को ज्वार जैसी वास्तविक वस्तु के रूप में बदल कर एक नई व्यवस्था स्थापित कर दी क्योंकि कागज की मुद्रा से मुद्रा-स्फीति का भय रहता था) पार्टी सदस्य के वेतन से यह कहीं अधिक था। नई सरकार के निम्न कोटि के कार्यकर्त्ताओं को करीब २० से ११० केटी तक मासिक वेतन मिल रहा था।

शिक्षकों का प्रारंभिक वेतन ज्वार की ८०० केटियां का था। १२०० केटियां का उच्चतम वेतन २० वर्ष की सेवा तथा १०० का ग्रेड प्राप्त करने पर ही मिल सकता था। इस ग्रेड को उनके साथी शिक्षकों के स्थान पर विद्यार्थी निश्चित करने वाले थे।

हमारे विचार से यही सही प्रजातंत्र था। जब हमें यह खबर मिली कि हमें अवसर मिल रहा है कि हम लोग अपने अध्यापकों को बतलायें कि वे कितना जानते हैं और उन्होंने कितना पढ़ाया है तो हम लोगों में उत्तेजना की लहर दौड़ गई। इस कार्य के लिए हम सभी यूनिवर्सिटी के मैदान में इकट्ठे हुए।

कागज की पर्चियें मतदान के लिए बांट दी गईं। जब नेता किसी शिक्षक का नाम बोलता हम सब शान्ति से विचार करते और फिर अपने नम्बर लिख देते। स्वयंसेवक उन पर्चियों को इक्ट्ठा कर लेते। सरगर्मी से उन्हें सबके सामने गिनकर विद्यार्थियों के प्रतिनिधि औसत नम्बरों की घोषणा कर देते। इस तरह हमने एक घंटे में नौ अध्यापकों को ग्रेड दे दिए।

वास्तव में नया युग आ गया था। और इसी का हमसे वायदा किया गया था। कुछ छात्र उदार हृदय थे। अपनी व्यक्तिगत शिकायतें भूलकर उन्होंने शिक्षकों को ठीक और ईमानदारी से नम्बर दिये। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि कुछ छात्र नम्बर देते समय भड़क उठे। यहाँ तक कि एक लड़का चिल्लाने लगा, "पिछले दिनों आपने मुझे बिना कसूर झिड़का था। आपने मेरे नम्बर काट लिए थे अब मैं आपकी ज्वार काटे लेता हूं।"

"साथियों, अब तक आप समझ चुके हैं कि स्कूल आपके हैं"—ग्रेड निश्चित करने के बाद एक वक्ता ने कहा।" "हमें अभी बहुत कुछ करना है-- अब पुनः काम शुरू करने का समय आ गया है!" हम काम करना चाहते थे और उसी की आशा कर रहे थे क्योंकि स्वतंत्रता के शुरू के दिनों जो उत्साह निर्माण हुआ था उसका प्रगटीकरण करने के लिए काम की आवश्यकता थी। हम जानते थे कि क्रान्ति अभी पूरी नहीं हुई थी बल्कि अभी उसका श्रीगणेश ही हुआ था। और चीन का हम जैसा निर्माण करना चाहते थे उसके लिए

वर्षों निर्माण और श्रम की आवश्यकता थी ।

उस समय हमें न तो अध्ययन ही पर्याप्त था, न प्रचार कार्य और न क़वायद और गान ही । यह जनता का, मजदूर का, किसान का, सैनिक का, लाओ-पे-ज़िन का या उन "सैकड़ों पुराने नामों" का जमाना था जिस नाम से चीन की मेहनती जनता युग युगों से पुकारी जाती रही थी । कम्युनिस्ट सिद्धान्तों को हम लोगों में से जिन्होंने पढ़ा था उन्होंने एंगिल्स के इस सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया था कि मेहनत के बल पर दुनियां खड़ी है । क्या हम अपने मजदूर और किसान साथियों के साथ ही इन्जीनियर, शिक्षक और लेखक होते हुए अपने आपको दिमागी काम करने वाले मजदूर होने की ट्रेनिंग नहीं दे रहे थे ? अभी तक चीनी छात्रों और विद्वानों की एकाकी, घमंडी और दुराभिमानी कह कर आलोचना की जाती थी । पर अब ऐसा कहना गलत था । हमने ऐंगिल्स के सिद्धान्त की वह व्याख्या पढ़ी जो एक पार्टी मेम्बर ने की थी : उसका कहना था "मानसिक श्रम से पहले शारीरिक श्रम का उद्‌भव हुआ । अतः शारीरिक श्रम पर ही मानसिक श्रम आधारित है और मानसिक श्रम का महत्व गौण है । शारीरिक श्रम से मानसिक श्रम श्रेष्ठ होता है, हमें इस सिद्धान्त को तिलांजलि देनी होगी और समझना होगा कि इस दुनिया में शारीरिक श्रम ही अधिक महत्व की बात है ।"

निस्संदेह हम में से अनेक लोग निरन्तर शारीरिक श्रम करने के आदी नहीं थे पर हम जापान के खिलाफ लम्बे युद्ध के दिनों में बड़े हुए थे । और हम में से अधिकांश लोग, विशेषतया वे जो विस्थापित यूनिवर्सिटियों के साथ साथ स्थानान्तरित हुए थे, कठोर और मेहनती जीवन के आदी हो चुके थे । अतः जैसे ही हमें दीवारों पर लगे समाचार पत्रों तथा लाउडस्पीकरों से ज्ञात हुआ कि फ्यूजोई की सेना द्वारा पैदा की गई अव्यवस्था को ठीक करने के लिए स्वयं सेवकों की आवश्यकता है, हमने तुरन्त श्रम का महत्व तथा किसानों और मजदूरों के अनुभवों को स्वयं अनुभव करने के लिए इस अवसर का लाभ उठाया ।

सबसे पहले पार्टी मेम्बरों ने यह काम स्वीकार किया । बाद में भर्ती हुए लोगों ने पार्टी मेम्बरों के नाम सबसे ऊपर देखे । बाद में युवतियों को भरती

करने की काफी कोशिशें हुई। हमारे भरती होने पर किसी आदमी को पीछे हटना मुश्किल हो जाता। "साथियों, युद्ध को समाप्त करो।" हमारे निवास और भोजन के कमरों में लगे लाउडस्पीकर हमें प्रोत्साहित करते। "यूनिवर्सिटी के इलाके को साफ करने में सहायता दो : श्रम के सिद्धान्त को व्यवहार से एकरूप कर दो।"

जिस दिन सुबह काम शुरू हुआ, हमने दलों में इकट्ठे होकर हाजिरी दी। नगाड़े और घड़ियाल की ध्वनि के साथ-साथ हम हाथ से बने झण्डों के पीछे-पीछे काम करने की जगहों की ओर चले जहां शहर पर घेरे के दिनों में हवाई हमलों से बचने के लिए बनाये गये गड्ढों और खाइयों के कारण गन्दगी का ढेर जमा हो गया था। प्रति रक्षा के लिए बनाए गये इन गड्ढों और खाइयों की अब हमें आवश्यकता न होने के कारण हम इन्हें बन्द कर रहे थे। खुरपा और कुदाल मिलने तक हम लाइन में खड़े रहे। और बाद में अलग-अलग दलों में बंट गए। गन्दगी के ढेर के सबसे ऊपर हमने अपने झण्डों को गाढ़ दिया। हर दल के लिए काम निश्चित होने के कारण यहां काम करने में होड़ सी लग गई। आज्ञा मिलते ही हम कटिबद्ध होकर मिट्टी के ढेर पर छा गये। हमने अपने स्वाभिमान और दल की शान की बाजी लगा रखी थी। कुछ छात्र कुदालों से सख्त मिट्टी खोदने लगे तथा कुछ अन्य उसे डलियों में भरने लगे। दूसरे लोग डलियों को गड्ढों तक ले जाकर गन्दगी उसी में डाल देते। हम एक दूसरे दलों पर फबतियां कसते। जब हमारे दल के नेता ने पसीने से लथ-पथ एक छात्र को बहुत मेहनत से काम करते देखा, वह पुकारने लगा, "ऐ, सब लोग वांग की ओर देखो ! वह वास्तव में श्रम नेता है !" जिन लड़कों के खुरच या रगड़ लग गई थी वे उन चोटों पर आयोडिन लगाने के लिए थोड़ा वक्त निकाल लेते फिर अपने औजारों को उठा अपने काम पर जुट जाते जिससे कि दूसरों से पीछे न रह जायं।

"जल्दी करो, जल्दी करो तीसरे दल ने अपना काम प्रायः समाप्त कर लिया है" हमारे नेता ने कहा। हमारे प्रयत्नों से अब गन्दगी का ढेर प्रायः समाप्त था। उसके अन्तिम अवशेषों को मिटाने के लिए हमने खुरपों से सख्त जमीन को खुरच दिया। आस-पास की दूसरी टीमों का भी काम खतम हो रहा था। अंत में पसीने से लथ-पथ और थके मांदे, किन्तु मन में प्रसन्न, हम

अपने अध्यक्ष की घोषणा सुनने के लिये लाइन में खड़े हो गए । "साथियो !" वह जोर से बोला, "हमने काम की लड़ाई जीत ली है ! हर दल ने अपने निश्चित भाग से अधिक काम किया है । इसके लिए हर कक्षा को हम एक-एक झण्डा पारितोषिक के रूप में देना चाहते हैं ।" तालियों की गड़गड़ाहट के बीच हमारे प्रतिनिधि झण्डियों को लेने गये जिनके लिए हमने सारा दिन काम किया था ।

दूसरे दिन सभी विभाग अपना-अपना श्रमनेता चुनने के लिए एकत्रित हुए । दल प्रमुखों ने उम्मीदवारों को पहले से ही मनोनीत कर रखा था परन्तु कुछ गलतियां हो गईं । कुछ छात्र जिन्होंने बड़ी सख्त मेहनत की थी नजर-अन्दाज हो गये । अधिकांशतः ऐसे लोगों को ही मतदान मिला जिन्होंने भारी उत्साह और ताकत का प्रदर्शन किया था । मतदान समाप्त होने के बाद नए श्रम-नेताओं को भाषण देने के लिए कहा गया । अपने भाषणों में उन्होंने इतने महान सम्मान प्राप्त करने पर व्यग्रता दिखलाई क्योंकि हम सभी ने समान रूप से कठिन परिश्रम किया था । उन्होंने कहा, साथियो अगली बार जीवन के महान सिद्धान्त—सच्ची मेहनत—के प्रति हम सभी को और भी अधिक शक्ति और भक्ति दिखलानी चाहिए ।"

जब हमें "कृषि उत्पादन" के लिए हो रहे एक बड़े श्रम आन्दोलन में काम करने के लिए बुलाया गया तो किसानों के जीवन को देखने का अवसर मिला । अर्थ शास्त्र विभाग के छात्रों ने सब से पहले अपनी सेवाएं अर्पित कीं । वापिस लौटने पर उन्होंने हमें बतलाया कि किसानों के जीवन के सम्बन्ध में उन्हें कितना अधिक जानने का अवसर मिला तथा खुली ताजी हवा में उन्होंने किस तरह खुशी से दिन काटे । इस से उत्साहित हो कर हम सभी ने इसके लिए अपनी सेवायें अर्पित कर दीं ।

ट्रकों में बैठकर हम खेतों की ओर चल दिये । खेतों पर पहुंचने पर ट्रकों से उतर कर हम कुदाल लेने के लिए लाइन बनाकर खड़े हो गए । फिर बसंत की धूप में घास फूस की निराई करने चल पड़े । भद्दे कपड़ों तथा धूल-धूसरित पैरों वाले कुछ गाँववासी हमारे चारों ओर खड़े होकर अपने खेतों में यूनीफार्म पहने हुये काम पर जुटे छात्रों के इस अजीब दृश्य को घूर घूर कर

देखने लगे। जब हम खेत के आखिरी सिरे तक पहुंच चुके और उबला हुआ ठंडा पानी पीने के लिए ट्रक की ओर वापिस जा रहे थे तो एक नौजवान किसान ने साहस बटोर कर विनम्रता से कुछ छात्रों से पूछा ।

"छोटे मालिक आप कहां से आये हैं ?"

"हम पीकिंग यूनिवर्सिटी से आये हैं," कुछ अभिमान के साथ हमने उत्तर दिया। "हम श्रम का महत्व समझने के लिए यहां इन ट्रकों से आये हैं।"

"ऊंह" उसने ट्रक की ओर घूर कर कहा । "मैं एसी गाड़ी में कभी नहीं चढ़ा।"

सारा दिन उत्पादन कार्यों में लगे रहना हमें अच्छा लगा। इस मेहनत के बदले हमें खूब आनन्द प्राप्त हुआ। ट्रकों में गीत गाना, काम के बाद खेलना कूदना और बसंत की धूप में पेड़ पौधों और जमीन की गंध की सुवास लेना। वास्तव में यही जनता के जीवन में घुलमिल जाना था । सारा दिन खेतों में काम करने के बाद जब हम पेता के भोजनालय के बड़े कमरे में दाखिल हुए तो लाउडस्पीकरों ने हमारे साथियों से हमारा गुणगान किया । हर ओर से खुले दिल से अभिवादन हुआ। मित्रों द्वारा तालियां बजाने और जयजयकार करने के उत्तर में हमारे श्रम नेता मुस्करा दिये।

मैं नहीं जानती कि हमारे इस काम से कितनी ज्वार की केटियां अधिक उत्पन्न हुई । शायद लाने और लेजाने में ट्रकों में जो पेट्रोल फुंका उनकी कीमत भी उससे नहीं चुकाई जा सकती थी। मुझे विश्वास है कि हम अपने उत्साह में खुरपी से काटते हुए खेतों में उगी हुई फसल और घास-फूस के बीच कोई अन्तर नहीं देख पाते थे। लेकिन इस काम से हम नये जमाने का एक अंग तथा श्रमिकों के भाई बहिन होने का अनुभव कर रहे थे । वास्तव में यह अपने स्वार्थों से ऊपर उठकर कुछ बड़ी बात के साथ एकात्मकता थी । यह सही था मेहनत हमारे लिए एक नई दुनिया बना रही थी। परन्तु भोजन के बड़े हाल में लौटते हुए जब मैं साथियों के अभिमान से तमतमाते हुए चेहरों को देखती और गांव में एक दिन काम करने के बाद अपने आपको श्रम

नेता के रूप में अभिवादन करते हुए सुनती तो मैं कभी-कभी आश्चर्य करने लगती कि इस सबसे जो दुनिया बनने जा रही थी क्या वह अभिमान की दुनिया नहीं थी ।

(४)

खाद्य तब और अब

किसे ऐसी कल्पना थी कि स्वतंत्रता के बाद भी पेट भर भोजन मिलना कठिन समस्या बनी रहेगी ? हाल ही में हांगकांग में एक विदेशी मित्र ने मुझे समझाया कि हम चीनियों की सबसे कठिन समस्या यह है कि हम बहुत ज्यादा भौतिकवादी हैं (वह पीकिंग में एक या दो साल रहा था इसलिए वह अपने आपको विशेषज्ञ समझने लगा था) "क्यों नहीं ? अच्छा देखो," वह कहता गया। "तुम्हारे कम्युनिस्ट साथियों के पीकिंग पहुंचने से पहिले जब भी मैंने आप लोगों को मार्च करते हुए या नारा लगाते हुए देखा तो आधे से अधिक समय आप लोग एक ही चीज के लिए चीख रहे थे, और वह था अपने लिए और-अधिक भोजन।"

मैं नहीं समझती कि अन्य देशों की अपेक्षा हम अधिक भौतिकवादी हैं। मैं इस विदेशी को कैसे समझाती कि भोजन का हमारे लिए कितना मूल्य है क्योंकि इसे प्राप्त करना हमारे लिए सदा कठिन रहा है। शायद हमसे ज्यादा भाग्यशाली देशों के छात्रों को भोजन की समस्या नहीं रहती होगी। परन्तु पीकिंग में हमारे लिए यह संभव न था।

इसके अलावा युद्ध के बाद संकट के दिनों में भोजन का शरीर चलाने के अलावा कुछ और भी अर्थ था। यह हमारे राजनीतिक अधिकारों का प्रतीक हो गया। याद रहे कि पश्चिम के विद्यार्थियों की अपेक्षा हमारा राजनीतिक उत्तरदायित्व कहीं अधिक है। यह ठीक है कि हमारी संख्या नगण्य है। १९५० में चीन की ४५ करोड़ जनसंख्या में से केवल १ लाख ३४ हजार यूनिवर्सिटी के छात्र थे या यों कहिए कि हर दस हजार आदमियों में से तीन यूनिवर्सिटी के छात्र थे। लेकिन ये तीन छात्र ९९९७ लोगों के वास्तविक प्रतिनिधि रहे।

जब लड़खड़ाती हुई चीनी सरकार से जापानियों ने २१ नाजायज मागें

रखीं तो उसके खिलाफ विरोध प्रदर्शन करते हुए पीकिंग के सैकड़ों छात्रों ने ४ मई १६१६ को एक राष्ट्र-व्यापी आन्दोलन खड़ाकर दिया था। उसी दिन से चीनी छात्र स्वयं को राष्ट्र की राजनीतिक जागृति का प्रतीक समझने लगे थे (यह भी कहूंगी कि १६१६ से ही जागृति की बड़ी आवश्यकता रही है)। गुलाम देश में जागृति किसी भी सरकार के लिए अच्छी नहीं होती। अतः हमारा मुंह बन्द करने की सरकारी कोशिशों के खिलाफ अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए हमें सतत् संघर्ष करना पड़ा। दमन की इन कोशिशों के बावजूद भी हम यह जागृति बनाये रहे।

यद्यपि हममें से कुछ छात्र सरकारी अनुदानों पर आश्रित थे फिर भी हमने इस चेतना को जीवित रखा। जापानी हमले के बाद १६३७ या ३८ में विस्थापित छात्रों को सहायता देने के लिए यह अनुदान दिये गए थे। विजय दिवस के बाद यद्यपि सरकार इस सहायता को बन्द करना चाहती थी पर युद्ध के बाद राष्ट्र की आर्थिक स्थिति इतनी खराब थी कि स्कूलों को चलाने के लिए इन अनुदानों को जारी रखना पड़ा।

इस अनुदान को हम लोग ऐसे विद्यार्थियों का मूलभूत अधिकार समझते थे जो स्वयं पढ़ने का खर्च भार उठाने में असमर्थ थे। इस सहायता को कम करने की किसी भी कोशिश को हमने सदा ही हमें दबाने की एक राजनैतिक चाल समझा। इस प्रकार मेरे सहपाठियों ने उसी सरकार की आलोचना अपना अधिकार समझा जो उन्हें सहायता दे रही थी। यहां तक कि मेरे सहपाठी उसका तख्ता उलटने के लिए भी काम कर रहे थे। हमारे नेता, जो कुछ भी सहायता हमें मिल रही थी उससे ज्यादा की मांग करने के लिए हमें उत्साहित करते रहते थे और न मिलने पर हमें हड़ताल करने के लिए उभारते थे।

स्वतंत्रता के पहले ५-६ सप्ताहों में हम बहुत ज्यादा उत्तेजित थे। अपनी परेडों में, अपनी मीटिंग में और श्रमदान दलों में हम इतने व्यस्त थे कि हमें भोजन क्या मिलता है इसकी अधिक चिन्ता नहीं थी। जो सहायता हमें पुराने शासन से मिला करती थी, शहर के सैनिक प्रशासन ने थोड़ा सा अन्तर करके उन्हें जारी रखा। हम अपना अनुदान अब गेहूं के आटे की जगह जिया।ओ-मी

या ज्वार के आटे के रूप में लेते थे।

पहले पहल हमने इस ओर अधिक ध्यान न दिया। तौल में अन्न अब पहले से ज्यादा मिलता था यद्यपि दामों की दृष्टि से अब अनुदान थोड़ा कम हो गया था क्योंकि गेहूं का आटा ज्वार के आटे से ज्यादा कीमती होता था। कम्युनिस्टों ने दूसरी आधारभूत वस्तुओं का मूल्यांकन करने के लिए ज्वार को ही नई इकाई बनाया था। पर हम में से ज्यादातर लोग इस नई मूल्य व्यवस्था को नहीं समझ सके थे जैसा कि एक लड़की ने कहा, "शायद यह उचित ही है कि हमें अनुदान जनसाधारण के अन्न के रूप में मिलता है।" हमें उसकी यह ध्वनि अच्छी लगी विशेषतया उस समय तक जब तक कि भोजन हमें गेहूं के रूप में दिया जाता था।

मोटे तौर पर हमें मालूम था कि यूनिवर्सिटी के इलाके के बाहर कीमतें फिर से बढ़ रही थीं। स्वतंत्रता के बाद कीमतें कुछ गिरी थीं क्योंकि घेरा खत्म होते ही गांवों से अनाज शहर में आ गया था। हमें आश्चर्य था कि राष्ट्रवादी सैनिकों द्वारा छिपा कर रखा हुआ अन्न का सारा ढेर क्या हुआ? कम्यूनिस्टों की घोषणा के अनुसार उसमें से केवल १५०००० पौंड अन्न बेरोजगार आदमियों में बांटा गया था। यह तादाद काफी लगती थी परन्तु अंकगणित में होशियार एक विद्यार्थी ने पौंड के बुशल बनाकर हमारी इस धारणा पर पानी फेर दिया। बाद में हमने ऐसी अफवाहें भी सुनीं कि ज्यादातर रसद यांगत्सी नदी की ओर शंघाई और नानकिंग को मुक्त करने के लिए दक्षिण की ओर बढ़ने वाली सेनाओं के उपयोग के लिए जहाजों द्वारा भेजी जा रही थी। यदि यह सत्य भी हो तो भी हमारे सैनिकों को उसकी हमसे ज्यादा आवश्यकता है ऐसा हम सभी सोचते थे।

पार्टी मीटिंग से लौटकर आने वाले कम्युनिस्ट छात्र हमें विश्वास दिलाते कि अन्न की कमी थोड़े दिन की है। कीमतों की बढ़ोतरी को वे किसानों पर थोप देते जिन्होंने स्वतंत्रता के बाद शहर और गांव के बीच यातायात शुरू होने पर मशीन से बनी चीजों को खरीदने के लिए शहर में काफी रुपया भर दिया था। पर अभी खरीदने के लिए चीजें ही नहीं थीं क्योंकि प्रतिक्रियावादी कुत्तों ने उत्पादन में जो तोड़-फोड़ की उसे पूरा करने में भी समय लगना

स्वाभाविक था।

आज जब मैं हांगकांग में अपनी जीविकोपार्जन की कोशिशें कर रही हूं मैं अनुभव करती हूं कि मूल्य सम्बन्धी यह सारी बातें अधिकांश विद्यार्थियों के लिए केवल शास्त्रीय थीं। भोजन और निवास का भार सरकार के ऊपर था और हमारी दूसरी जरूरतें बहुत कम थीं इसलिये उन्हें हम किसी भी तरह पूरा कर लेते थे। कीमतों में बढ़ोतरी की शिकायतें तो हमने माता-पिता, दुकानदारों, होटलों के नौकरों और रिक्शावालों से सुनीं थीं। क्यानसिन में नानकाई यूनिवर्सिटी के विद्यार्थी जो जीवन स्तर की सूची भेजते उसे अर्थ-शास्त्र विभाग के छात्र व्यावसायिक दृष्टि से जांचते रहते थे। यद्यपि ये अर्थ-शास्त्र के पंडित हम लोगों की अपेक्षा अधिक रूढ़िवादी थे फिर भी उन्होंने स्वीकार किया कि कीमतों में यह बढ़ोतरी पुराने शासन में अन्तिम मुद्रा स्फीत के दिनों में हुई वढ़ोतरी से कहीं कम थी।

इसी समय उत्तरी चीन में प्राकृतिक शत्रु—सूखा—का प्रकोप हुआ। बसन्त के दिनों होने वाली बरसात समय पर न हुई। शहर में यह अफवाह फैल गई कि पीकिंग के आस-पास के किसानों की बसन्त-ऋतु की गेहूं की अधिकतर फसल नष्ट हो रही है। यूनिवर्सिटी में एक परिचित शब्द 'संयम' सुना जाने लगा। कर्मठ छात्रों ने वास्तविक पार्टी सदस्यों की मदद करने के लिए समाचार पत्र के ऐसे सम्पादकीय पढ़कर सुनना प्रारम्भ कर दिया जिनमें जनता के व्यक्तिगत जीवन में मितव्ययता लाने की प्रार्थना होती थी। वे कहते "पार्टी कामरेडों की ओर देखो, जो सेना में वर्षों त्याग और श्रम का जीवन व्यतीत करके कारखानों, स्कूलों और सरकारी दफ्तरों में काम करने आये हुए हैं। यदि किसी को थोड़ा पैर फैलाने और विजय प्राप्ति के बाद उसके कुछ फलों को चखने का अधिकार है तो वह इन्हीं लोगों को है।" पर वास्तव में अभी भी उनके जीवन में मितव्ययता और संयम को ही स्थान प्राप्त था। जीवित रहने के लिए आवश्यक वस्तुओं से अधिक उन्होंने जनता से कभी कुछ नहीं लिया। जो कुछ भी हम देखते थे उससे भी यही सत्य सिद्ध होता था। सरकारी दफ्तरों और यूनिवर्सिटी में अधिकांश कामरेड देर तक काम करते, सबके साथ साधारण भोजनालयों में खाते, सार्वजनिक सोने के कमरों में सोते, और जो समय बचता उसे वे पार्टी के दूसरे कार्यों में लगाते थे।

इस भूमिका के आधार पर बसन्तकालीन सत्र में पेता के विभिन्न विभागों और कक्षाओं के छात्र नेता छात्रों को मिलने वाले अनुदान की समस्या पर भाषण देने लगे। स्वतंत्रता से पूर्व के छः महीनों में जो विद्यार्थी कम्युनिस्ट प्रदेशों में चले गए थे उनके सम्बन्ध में बात-चीत चलाकर इस विषय को प्रारंभ किया। और संकेत किया कि जो विद्यार्थी नहीं गये हैं उन्हें 'ली कंग' या पढ़ने लिखने में कुशलता प्राप्त करनी चाहिए। एक वक्ता नें हमें उत्साहित करते हुए कहा, "पुराने समाज में विद्यार्थी स्वभावतः प्रगतिशील तत्व थे। यह उचित ही था कि वे सरकार से मिलने वाले अनुदानों को अपना अभाज्य और जन्म सिद्ध अधिकार समझते थे।

"लेकिन हमें समझना चाहिये जब हम कोमिनतांग सरकार से अपने अनुदानों के लिये लड़े, जब हमने प्रदर्शन किये और यूनिवर्सिटी के डीन के दफ्तर को घेरा, तथा जब हमने सड़कों पर जलूस निकाले तब हमारा ध्येय यही था कि कोमिनतांग की प्रतिक्रियावादी सरकार को पतन की खाई के और पास धकेला जाय।"

वक्ता ज़रा रुका तथा मुस्कराकर कहने लगा "आज चीनी जनता उठ खड़ी हुई है। आज परिस्थिति बिल्कुल भिन्न है। हमारी जनता कष्ट उठा कर भी प्रतिक्रियावादी सरकार द्वारा हमारी आजीविका पर किये गये कुठाराघात से हुई क्षति को पूरा करने की कोशिश कर रही है। यदि वास्तव में हमें सहायता की आवश्यकता नहीं तो फिर हम जनता के पैसे लेकर, उनकी मुसीबतों को क्यों बढ़ायें ?

"साथियों, आज हम विद्यार्थियों को जनता की सेवा के लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये। उनके खून और पसीने से पैदा होने वाले गेहूं या ज्वार को बरबाद नहीं करना चाहिये। भोजन करते समय हमें उसे पैदा करने वालों का भी ध्यान रखना चाहिये। हमें उतना ही लेना चाहिये जितना कि परमावश्यक हो। छात्र होने के नाते अनुचित उपभोग हमें जनता का जानबूझ कर किया गया शोषण समझना चाहिये। यहां के और दूसरी यूनिवर्सिटियों के अनेक साथियों ने सुझाव रखा है कि हम अतीत काल के सरकारी अनुदानों की बेकार व्यवस्था को समाप्त कर दें और उनके स्थान पर जनशिक्षा सहायता

की नई और युक्ति संगत व्यवस्था को लागू करें। हमारे ख्याल से यह बहुत उचित मांग है। पेता के छात्रों ! जनशिक्षा सहायता की मांग की आवाज में हमें भी अपनी आवाज मिला देनी चाहिये। यह हम सभी की गंभीर परीक्षा--एक कठोर परीक्षा--होगी। जब तक कि आप सचमुच गरीब न हों और आपको दूसरा कोई चारा न हो आप सरकारी सहायता न मांगें। मुझे विश्वास है कि मेरे साथी छात्र इस विषय पर सम्मान और न्याय से विचार करेंगे। मेरे कामरेड साथियों मुझे विश्वास है कि आप सब लोग इस परीक्षा में अच्छी तरह उत्तीर्ण होंगे।"

हमने काफी जोर-जोर से तालियां बजाकर नेता का अभिवादन किया और यह सोचते हुये कि जनशिक्षा सहायता कैसी होगी अपने कमरों को वापिस लौट गये। तीन या चार दिन बाद हमारे विद्यार्थियों के समाचार पत्र में खबर आई कि नये वजीफों की व्यवस्था की जा रही है। ये वजीफ़े पीकिंग की सभी यूनिवर्सिटियों के छात्रों की, अनुदान की पुरानी व्यवस्था को बदलने की, दृढ़ मांगों के फलस्वरूप स्थापित किये जा रहे थे। क्योंकि पुरानी व्यवस्था से विद्यार्थियों के आत्मसम्मान पर ठेस लगती थी। समाचार में बतलाया गया था कि नई शिक्षा सहायता की तीन श्रेणियाँ होंगी। पहली श्रेणी के अन्तर्गत मिलने वाले अनुदान में एक महीने में ज्वार की ८५ केटियां या उसके बराबर मूल्य की वस्तु मिलेगी। दूसरी श्रेणी को ६५ केटियां और सबसे नीची तीसरी श्रेणी को ४५ केटियां मिलेंगी। जल्दी से हिसाब लगाने के बाद हम इस निश्चय पर पहुंचे कि पहली श्रेणी के अनुदान मोटे रूप से पुराने अनुदानों के बराबर होगा। इसमें बाल कटवाने जैसे जरूरी विविध खर्चों की भी व्यवस्था रहेगी। दूसरी श्रेणी का अनुदान केवल भोजन पर आने वाले कम से कम खर्च को पूरा करने के लिये पर्याप्त था। इसके अलावा हम उसमें से और खर्चा नहीं कर सकते थे। तीसरी श्रेणी के अनुदान में विद्यार्थी को जीवित रहने के लिये भी जेब से और पैसा मिलाना आवश्यक था।

नये अनुदानों के पक्ष में जो सार्वजनिक भाषण हुए उनके बाद होने वाले आपसी विवादों में हमने निश्चय किया कि हममें से अधिकांश लोग अपनी आर्थिक कठिनाइयों के अनुरूप दूसरी श्रेणी के अनुदान प्राप्त करने के योग्य हैं। जिनके परिवार धन भेजने में समर्थ थे उनमें से भी अधिकांश

का सम्बन्ध अपने परिवारों से छूट गया था क्योंकि उनके परिवार वाले ऐसे शहरों में रहते थे जो अभी स्वतंत्र नहीं हुए थे। अतः समाचार पत्र की घोषणा के दो तीन दिन बाद जब अनुदान के लिये आवेदन पत्रों को हमारे बीच वितरित किया गया तो हममें से लगभग सभी ने वे आवेदन पत्र ले लिये। कोरे आवेदन-पत्र को देखने मात्र से हमें विश्वास हो गया कि वक्ता नें ठीक ही कहा था कि परीक्षा काफी गंभीर होगी। उसमें हमारे परिवार का स्तर और पिछले जीवन के सम्बन्ध में प्रश्न थे जैसे आपके परिवार में कितने व्यक्ति हैं ? उनके नाम, आजकल जहां रहते हैं उसका पता और उनका व्यवसाय लिखिये। क्या वे पहले कभी कोमिनतांग या दूसरी राजनीतिक पार्टियों के सदस्य रह चुके हैं ? क्या वे कभी किसी सरकारी पद पर थे ? थे तो कहां ? आजकल उनमें से कौन कौन कमाते हैं ? और कितना ? हर महीने आपको अपने परिवार से कितना पैसा आता है ? क्या आपने कभी नौकरी की है ? यदि हां तो आप कितना पैसा कमा लेते हैं ? आप अनुदान की कौन सी श्रेणी के लिये प्रार्थना-पत्र देना चाहते हैं ?

प्रार्थनापत्र को भरने के लिये इतनी सूचना की आवश्यकता देखकर हमारे कुछ मित्रों ने प्रार्थनापत्र नहीं भरा। बाकी लोगों ने प्रार्थनापत्र भरकर अपनी कक्षा के अध्यक्ष को दे दिया। एक सप्ताह बाद हमारी कक्षा के नेता ने खड़े होकर घोषणा की कि आगे भेजने से पहले विभाग की आम सभा में हर प्रार्थना-पत्र पर विचार करने के लिये हमारी कक्षाओं में मीटिंग करना निश्चित हुआ है।

"विचार संघर्ष" का पहला परिचय हमें इन आम सभाओं में मिला। यह ठीक है कि हमने पुराने रूढ़िवादी विश्वासों में सुधार करने की नई पद्धति के बारे में सुना था जिसके अनुसार किसी व्यक्ति की जीवन धारा, व्यक्तित्व और विचार धारा का सार्वजनिक या कुछ लोगों के सामने परीक्षण होता था। पर जैसे भी हो हमारी यह धारणा बन गई थी कि हम अभियुक्त की बजाय अभियोक्ता, मानस शोधन कराने वाले के स्थान पर मानस शोधक होंगे। अतः यह एक नूतन और अनपेक्षित अनुभव था तथा शंकित हृदय लिये हम उस मीटिंग में भाग लेने गये।

जिस मीटिंग में मैं गई उसका अध्यक्ष एक कर्मठ कार्यकर्ता और युवक संघ का सदस्य था। उसने अपने भाषण के प्रारम्भ में दुरभिमान दूर करने की आवश्यकता पर जोर डाला ताकि हमारे साथी अपने आवेदन-पत्रों का सच्चा और ठीक प्रकार परीक्षण कर सकें। टेबिल पर रखे हुये आवेदन-पत्रों को ठीक करके वह उनमें से एक निकाल कर पढ़ने लगा। इस आवेदन-पत्र के प्रार्थी को मैं चांग कहूंगी। आवेदन पत्र के अनुसार चांग के पिता शंघाई में बिजली के कारखाने में एक मामूली अधिकारी थे। अमरीका से पढ़कर लौटा उसका भाई मोटर पार्ट की दुकान का हिस्सेदार था। यह साफ था कि वे बुर्जुवा थे जैसा कि एक बुर्जुवा हो सकता है।

चांग इतना चतुर था कि वह अब तक समझ चुका था कि उसे क्या करना चाहिये। वह बोला "जब से मैंने आवेदन पत्र दिया है मैं उस पर विचार कर रहा हूं। और मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि मैंने आवेदन पत्र देकर गलती की है। हमारी जनता ने बहुत कष्ट सहे हैं। मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं अपनी जनता से पैसा नहीं मांगूगा। मैं इसे वापिस लेने की घोषणा करता हूं।"

हाल के बाहर चारों ओर लोग ताली बजाकर उसकी सराहना करने लगे और हम सब भी उसमें सम्मिलित हो गये। पार्टी और युवक संघ के छात्रों की सराहनापूर्ण मुस्कानों के बीच चांग बैठ गया। अध्यक्ष तालियां बंद होने की प्रतीक्षा करता रहा और तालिया बजना बंद होने के बाद उसने घोषणा की : "चांग द्वारा अपने आवेदन-पत्र को वापिस लेना यह सभा स्वीकार करती है।" हमने फिर तालियां बजाईं। इसके बाद अध्यक्ष ने दूसरा आवेदन पत्र पढ़ा।

प्रार्थी जो बातों में हम सबसे अधिक प्रगतिशील था, खड़ा होकर कहने लगा। "मेरे विचार से सभी साथी जानते हैं कि मेरी आर्थिक हालत सचमुच खराब है, पर वे यह भी जानते हैं कि पीकिंग में मेरे कुछ रिश्तेदार भी हैं। मैं उन लोगों से इतना पैसा नहीं ले सकता कि अपना सारा खर्चा निकाल लूं। लेकिन मैं उस बाकी खर्चे को कहीं क्लर्क का काम या ट्यूशन करके पूरा कर लूंगा। इसलिए मैं भी अपना आवेदन-पत्र वापिस लेता हूं।"

और जोर से तालियां बजी और सभी ने एक मत से उसके आवेदन-पत्र की वापसी की स्वीकृति दे दी। इतने में युवक संघ का एक साथी खड़ा हो कर बोला। "अध्यक्ष महोदय, इससे पूर्व कि आप और आवेदन-पत्र पढ़ें मैं समझता हूं कि हम अपनी महत्वपूर्ण परीक्षा कितनी सफलता पूर्वक दे रहे हैं इस सम्बन्ध में कोई व्यक्ति प्रकाश डाले। साथियों द्वारा अपना आवेदन-पत्र स्वेच्छा से वापस लेना हम सबके लिए गौरव की बात है। यह आवेदन-पत्र शायद उन्होंने अपने अधिकारों तथा जनता के प्रति कर्तव्यों का विचार किये बिना ही दे दिए थे। हम में से कोई भी जो कालिज में पढ़ सकता है वास्तव में गरीब परिवार का नहीं है। साधारण मजदूर और किसान से हमारी हालत कहीं अच्छी है। व्यक्तिगत रूप से मैं शिक्षा के लिए सहायता नहीं चाहता क्योंकि मैं उन लोगों के सामने हाथ नहीं फैला सकता जो मुझ से भी ज्यादा गरीब हैं।" हमने फिर उसकी बात पर तालियां बजाईं।

तीसरा प्रार्थना-पत्र मेरे छात्रावास की कुमारी वेन का था। उसकी बात दूसरी थी। उसके बारे में हम जो कुछ भी जानते थे उसके आधार पर कह सकते थे कि उसे वास्तव में सहायता की आवश्कता थी और वह स्पष्ट रूप से से सहायता की इच्छुक भी थी। पर पहले जो दो भाषण हो चुके थे उन्होंने कुमारी वेन को संकट में डाल दिया। पहले से दो व्यक्तियों को बोलने का मौका देकर जो वजीफा नहीं चाहते थे मीटिंग के आयोजकों ने बड़ी चतुरता से जाल फेंका था ताकि उनके बाद वजीफे के लिए प्रभावोत्पादक तर्क उपस्थित करने वालों को कठिनाइयां खड़ी हो जांय। जिन लोगों ने शिक्षा-सहायता लेने का निश्चय कर लिया था वे जनता के प्रति अपना सम्मान व्यक्त कर रहे थे। क्या इसका यह अर्थ नहीं निकलता कि, जिन्होंने सहायता के लिए आवेदन-पत्र भेजा था उन्हें जनता का ध्यान नहीं था? क्या ऐसे लोगों को जिनके पिता या भाई बुर्जुवा थे, और इस तरह शोषक वर्ग के सदस्य थे, अपने आवेदन-पत्र वापिस नहीं लेने चाहिएं? क्या जिन लोगों के रिश्तेदार पीकिंग में थे उन्हें अपने रिश्तेदारों से सहायता लेने की बजाय जनता से सहायता के लिए आवेदन-पत्र भेजना चाहिए? और उन लोगों के बारे में क्या कहा जाय जो अपना खर्च निकालने के लिए छोटा-मोटा काम तलाश कर सकते थे?

कुमारी वेन अपनी वकालत हिम्मत से करते हुए बोली। "मैंने अपने आवेदन-पत्र पर, देने से पूर्व बड़े गौर से विचार किया है और अभी भी—जबकि मेरे साथी बोल रहे थे मैं विचार कर रही थी। मैं अपने सच्चे हृदय से यही समझती हूं कि जिस सहायता की मैं पात्र नहीं, वह मुझे नहीं लेनी चाहिए। पर साथियों, मुझे आशा है कि मेरी आवश्यकता स्वयं स्पष्ट है। मेरा परिवार चुंगकिंग में है और एक साल हो गया मेरा उनसे सम्बन्ध छूट गया है। मेरे पिता अब काम नहीं कर सकते और साथ ही उन्हें मेरी दो अविवाहिता बहनों का खर्च भी चलाना होता है। युद्ध के दिनों जब मेरा भाई पराजित क्षेत्रों से स्वतंत्र चीन को चला गया तभी से हमें उसका कोई पता ठिकाना नहीं मिला है हमारा खयाल है वह किसी सेना में है। पर उसकी ओर से हमें कोई समाचार नहीं मिला। उत्तरी चीन में भी मेरे कोई रिश्तेदार नहीं जो मेरी सहायता कर सकें। यद्यपि मैं यह समझ चुकी हूं कि जनता के गेहूं और ज्वार पर मेरा कोई वास्तविक दावा नहीं है, फिर भी यदि मुझे अगले साल ग्रेजुएट होना है तो मैं "जन शिक्षा सहायता योजना" की सहायता लिए बिना नहीं रह सकती।"

हमने कुमारी वेन के आवेदन-पत्र पर विचार करना प्रारम्भ किया। अनेक साथियों ने उस पर राजनीतिक उपेक्षा का अभियोग लगाया। एक आलोचक बोला "मेरा यह मतलब नहीं कि वह प्रतिक्रियावादी है। जहाँ तक मेरी जानकारी है वह ऐसी नहीं है, और मेरे विचार से हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि उसने काफी मेहनत से अध्ययन किया है। लेकिन उसके काम निजी ध्येय पूर्ति के लिए होते हैं, अपनी महत्वाकांक्षाओं—जीवन में अपने संकुचित मंतव्य पर पहुंचने की महत्वाकांक्षा के लिए होते हैं। इस तरह कुमारी वेन ने भी बड़े राजनीतिक प्रश्नों के प्रति वही उदासीनता दिखलाई है जिसे पुराने जमाने में हमारे अनेक साथी दिखलाया करते थे।"

शायद हम में से कुछ लोग कुमारी वेन की वकालत करने के लिए भी खड़े हो जाते परन्तु अभी तक हमारे आवेदन-पत्रों पर भी विचार नहीं हुआ था। अन्त में हमारे कम्युनिस्ट मित्रों में से एक कामरेड बोलने के लिए खड़ा हो गया। उसने कहा "साथियो, कुमारी वेन के मामले में मेरी राय में हमें कुछ उदारता से काम लेना चाहिए। शायद वह दूसरी श्रेणी से तीसरी श्रेणी के वजीफे के लिए तैयार हो जायगी यदि इस कमी को पूरा करने के लिए वह

यूनिवर्सिटी में किसी तरह का काम खोज सकी। लेकिन मुझे लगता है कि कुमारी वेन ने काफी स्पष्टता दिखलाई है। वह स्वीकार करती है कि वे अपने पिछले जीवन में कोई निश्चयात्मक राजनीतिक दृष्टिकोण नहीं बना सकी, जिसके आधार पर वह जनता के गेहूं और ज्वार पर कोई जायज दावा कर सकतीं लेकिन उनकी स्वीकृति ही एक तथ्य है जो प्रकट करता है कि उन्होंने अपने विचार में कुछ सीमा तक प्रगति की है। मुझे विश्वास है यदि वे परिश्रम से पढ़ें और कठोर सत्य-निष्ठा से अपनी कमियों की आलोचना करें तो जनता की सच्ची सेवा का जीवनवृत ग्रहण कर सकती हैं। अत: मैं प्रस्ताव करता हूँ कुमारी वेन के प्रार्थना-पत्र को आगे भेज दिया जावे और यह शिफारिस की जाय कि कुमारी वेन को तीसरी श्रेणी का अनुदान मिले।"

जिन छात्रों को जरा अधिक प्रगतिशील समझा जाता था या ऐसे छात्र जिनके युवक संघ अथवा पार्टी में मित्र थे, उनकी सार्वजनिक आत्मालोचना कुछ कम होती। ऐसे छात्रों में पहला छात्र वह था जिसने "माओ त्से-तुंग के चरण चिन्हों पर चलने की अपनी तत्परता को सबके सामने प्रकट किया था। उसने अपने आवेदन-पत्र के लिए क्षमायाचना की। पर इससे पहले कि कोई अन्य उसके अनुदान को कम करने का प्रस्ताव करे उसका एक कामरेड दोस्त उसकी वकालत करने के लिए खड़ा हो गया।

वह बोला "हमारा साथी अपने आवेदन-पत्र को प्रस्तुत करते हुए संकोचशील और स्वालोचनात्मक रहा है। पर मैं जानता हूं कि उसकी आर्थिक हालत वास्तव में बहुत नाजुक है। स्वतंत्रता मिलने के बाद से ही उसने अपना सारा समय जनता के लिए दिया है। उसने परिश्रम से अध्ययन किया है और विचार में तेजी से प्रगति की है। मेरे विचार से उसे अपना आवेदन-पत्र वापिस नहीं लेना चाहिए। सरकार ने जनशिक्षा सहायता को इसीलिए चालू किया है कि वह इन जैसे छात्रों को सहायता दे सके। मुझे आशा है कि वह काफी मेहनत करता रहेगा ताकि वह अपने मौजूदा काम को पूरा करने के लिए ज्ञान प्राप्त कर सके और यूनिवर्सिटी छोड़ने के बाद भी जनता की सेवा उचित ढंग से कर सके।"

इन सभी आवेदन-पत्रों पर विचार करने के लिए ऐसी अनेक मीटिंग

हुईं। पहली मीटिंग के बाद गुट का मत प्राप्त होने से पहले अपने आवेदन-पत्रों को वापिस लेना भी असम्भव हो गया चाहे आप उसे वापिस लेना ही क्यों न चाहते हों। कुछ सहपाठी तो हमारे प्रश्नों पर दो घंटों तक जमे रहते या अंत में वे गुस्से से झल्ला पड़ते "अच्छा भाई मैं हारा, मैं मानता हूं गलती मेरी थी। मैं अपने आवेदन-पत्र को वापिस लेना चाहता हूं।" यद्यपि उन्होंने अपने आवेदन-पत्र को वापिस लेना चाहा पर जब तक कि हम उनके प्रार्थना-पत्रों को अस्वीकार करने के लिए विधिवत् मतदान नहीं दे देते उनके "कुतर्क विचारों" के विरुद्ध भी "संघर्ष" करना होता था। जब हम एक दूसरे को बराबरी के हिसाब से तोलने लगे तो हमने उन बुद्धिमान सहपाठियों की बुद्धि की सराहना की जिन्होंने भविष्य में घटने वाली बातों को पहले ही समझ कर आवेदन-पत्र न देने का निश्चय कर के काफी यश प्राप्त कर लिया था।

कक्षा में हुई इन सभाओं में कर्मठ छात्रों के सुझावों पर अनेक आवेदन-पत्र को अस्वीकार कर दिया गया और बहुत से आवेदन-पत्रों को नीची श्रेणियों में डाल दिया गया। जो आवेदन-पत्र बचे उन्हें हमारी सिफारिशों के साथ अगले मोर्चे—समूचे विभाग की सभा—के सम्मुख भेज दिया गया। कुछ मामलों को जिन पर पार्टी और युवक मंडल के सदस्यों ने कटु आलोचना की उन्हें भी इस बड़ी सभा में भेज दिया गया। बाद में हमें यह ज्ञात हुआ कि उन व्यक्तियों को विभाग की ऊंचे स्तर की मीटिंग में कटु "विचार संघर्ष" का सामना करना पड़े इसी अभिप्राय से उन्हें वहां भेजा गया था।

यह विभागीय सभायें अधिक औपचारिक थीं। चेयरमैन ने पहले बतलाया कि अलग अलग कक्षाओं में हुई पहली जांच पड़ताल के बाद विभाग के किन विद्यार्थियों के आवेदन-पत्र उनके पास आये हैं और उन्होंने किन श्रेणियों के लिए प्रार्थनायें की हैं। हर बार वह प्रार्थी का और उसकी श्रेणी का नाम पढ़कर उस पर राय लेने के लिए रुक जाता। जो कोई विद्यार्थी राय देना चाहता था उसे बोलने की स्वतंत्रता थी। फिर प्रार्थी खड़ा होकर उसका उत्तर देता। जिन प्रार्थियों को विशेष रूप से "विचार संघर्ष" के लिए छांट लिया गया था चाहे उनके तर्क कितने ही सूक्ष्म और ओजस्वी होते ऐसे प्रार्थियों को सफलता की आशा तभी तक रहती जब तक वे अपने आपे में रहते और सावधानी से तथा विषय पर ही बोलते थे। इन संघर्षों के बाद अधिकांश प्रार्थियों का आवेदन रद्द

हो जाता था। यदि वे लड़कियां होतीं तो वाद-विवाद की सरगर्मी के बाद कुछ अविचल अश्रु धारा बहा कर बैठ जातीं। लड़के साधारणतः अपने सम्मान को बनाये रखते। यद्यपि बहुत गरीब लड़के अपने लाल चेहरों को लेकर बैठ जाते जिनसे हल्का गुस्सा और प्रतिरोध टपकता था। वे चाहे अपना सर पटक कर कहते कि उन्होंने अपने परिवारों को छोड़ दिया है, परिश्रम से अध्ययन किया है और अपनी शिक्षा को आगे चलाने के लिए सरकारी अनुदान या वजीफे पर ही निर्भर रहे हैं तथा अब जब कि वे काफी कठिनाईयों को पार कर अन्तिम कक्षाओं तक पहुंच गये हैं तो स्कूल में बने रहने के लियें जन-शिक्षा सहायता मिलने की बहुत कुछ आशा करते थे। उन्होंने भी अपने पूरे हृदय से और अपनी पूरी शक्ति से भविष्य में जनता की सेवा करने का वचन भी दिया पर यह वचन दुर्भाग्य से काफी देर बाद दिया गया था। यह तो उनकी जबान पर महीनों पहले ही होना चाहिए था।

यद्यपि परीक्षा में अच्छे नम्बर अन्तिम निर्णायक नहीं थे पर अधिकांश मामलों में वे उनको सहायक हो सकते थे। कुछ छात्र जो गरीब परिवारों से आये थे और जिनका यूनिवर्सिटी में अच्छा रिकार्ड था उन्हें शिक्षा सहायता दे दी गई यद्यपि उन पर भी विचार में व्यक्तिवादी और कर्म में निर्णयात्मक न होने का आरोप लगाया गया था। हमारे विचार में उन पर जो असाधारण कृपा की गई थी उसका मुख्य कारण यही था कि उनके सहपाठी उनका आदर करते थे तथा "प्रगतिशील विचारक" न होते हुए भी वे विचार या कर्म में प्रतिक्रियावादी कभी नहीं दिखाई दिये थे। इसके अलावा यह भी सम्भव था कि इन शिक्षाभिमुख विद्यार्थियों को जन-शिक्षा सहायता के मार्ग से अपना बना लिया जा सकता और उनके असाधारण मनिषित्व को जनता की भलाई के लिए काम में लाया जा सकता।

इन दो परीक्षाओं के बाद हमारे आवेदन-पत्र एक तीसरी परीक्षा के लिए भेज दिये गये। यह तीसरी परीक्षा थी, अखिल यूनिवर्सिटी जांच समिति द्वारा विचार। समिति ने यह निर्णय किया कि कुछ कक्षाओं और विभागों ने अपनी प्रारम्भिक जांच में ढिलाई की है और दोनों उच्च श्रेणियों के लिये काफी वजीफों की सिफारिश कर दी है। इसलिए आवेदन पत्रों को लौटा दिया गया और कक्षाओं और विभागों द्वारा आवेदन-पत्रों की पुनः जांच करने के लिए

मीटिंग बुलाई गई । कक्षाओं और विभागों द्वारा जिन छात्रों के लिए नए वजीफों की सिफारिश की गई थी उनके नामों की सूची यूनिवर्सिटी इलाके के विभिन्न भवनों में लगे हुए सूचनापटों पर सार्वजनिक आलोचना के लिए लगा दी गई। कोई भी छात्र किसी भी प्रार्थी के बारे में अपनी विरोधी राय को गुप्त रूप से समिति के पास अपनी सूचना के साथ भेजता था । तब अपराधी को उस पर किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा लगाये गये आरोपों का उत्तर देने के लिए बुलाया जाता । जिन मित्रों को इस कठिन परीक्षा से गुजरना पड़ा उन्होंने बतलाया कि यह जांच सबसे मुश्किल थी । पार्टी और युवक संघ के उन अधिकारियों द्वारा, जो इस समिति में बैठते थे, प्रश्नों की बौछार के बाद हर दस प्राथियों में से आठ या नौ को अपने आवेदन पत्र वापिस लेने पड़ते या नीची श्रेणी के लिये प्रार्थना करनी पड़ती ।

इन तीनों सीढ़ियों को पार करने के बाद प्रार्थना पत्रों के परिणाम अन्तिम परीक्षाओं के समान श्रेणीबद्ध करके सूचनापट पर लगा दिये गये । हममें से लगभग आधे छात्रों को किसी न किसी प्रकार की जन-शिक्षा सहायता मिली थी । अधिकतर लोगों को दूसरी श्रेणी की सहायता मिली । कुछ अनुदान तो दो व्यक्तियों के नाम थे जिन्हें सम्मिलित पारस्परिक सहायता अनुदान कहा जा सकता है । जब पहली श्रेणी के प्रार्थी और दूसरी श्रेणी के प्रार्थी में अपनी-अपनी सहायताओं को मिला देने पर समझौता हो जाता तो उन दोनों को उसका बराबर हिस्सा बांट दिया जाता । वास्तव में तीसरी श्रेणी की सहायता पाने वालों में अधिक संख्या ऐसे लोगों की थी जिन्होंने मीटिंग में यह स्वीकार किया था कि वे अपना खर्च चलाने के लिए कोई काम ढूंढ लेंगे ।

हममें से जिन छात्रों ने इन परीक्षाओं में सफल होकर शिक्षा सहायता प्राप्त कर ली थी वे सभी काफी उल्लसित थे । कुछ भी हो, पुराने अनुदानों की अपेक्षा इनका मूल्य ज्यादा था क्योंकि वे तो छात्रों को तुष्ट करने के लिये अपने आप दिये जाते थे । इन अनुदानों से हमारी – कम से कम पहली और दूसरी श्रेणी के अनुदान प्राप्त करने वालों की—भोजन की समस्या ही हल नहीं हुई थी वरन यह अनुदान हमारी राजनैतिक विश्वासपात्रता के प्रतीक और हमारे उज्ज्वल भविष्य के द्योतक थे । शिक्षा सहायता के वितरण में प्रदर्शित, इस सच्चे जनतंत्र के सम्बन्ध में हमने अपने नेताओं के

विचारों और पुरानी अनुचित व्यवस्था के मनमाने वितरण की अपेक्षा इस नई व्यवस्था की श्रेष्ठता का खूब प्रचार किया।

जिन छात्रों के आवेदन-पत्रों को अस्वीकृत कर दिया गया था या जिन्हें नीची श्रेणी के अनुदान मिले थे उनकी बड़बड़ाहट भी कानों में पड़ी। वे विशेष रूप से तिन-जिन कपड़ा मिल डाइरेक्टरों के अध्यक्ष के पुत्र को दी गई दूसरी श्रेणी की शिक्षा सहायता की आलोचना करते थे। उनका दावा था कि वह लड़का अभी भी हर महीने पीकिंग में अपने चाचा से नियमित खर्च लेता रहता है। (उसके पिता से सीधा रुपया आता तो यह बात काफी खुल जाती और ऐसा भी हो सकता था कि उसकी काफी आलोचना भी होती) जिन प्रार्थियों को सहायता नहीं मिली उनकी शिकायत थी कि इस रईस के लड़के ने किसानों से सहायता के लिए हाथ फैला कर भीख मांगी थी। पर उसने अपने पिता की भांति ही विचारों में प्रगतिशीलता और कामों में निश्चयात्मकता का प्रदर्शन किया था। उसके पिता को उन थोड़े से लोगों में समझा जाता था जो सच्चे रूप से "प्रगतिशील" बुर्जुवा मिल मालिक थे। उसके युवक संघ के समर्थकों ने यह तर्क रखा कि अपने पिता से सहायता लिए बिना उसे अपने पैरों पर खड़ा होने का अधिकार है। अतः वह भी सहायता के लिए उतना ही अधिकारी है जितना कि उसके दूसरे सहपाठी।

निस्संदेह हमें यह ज्ञान हो गया कि नई व्यवस्था में इस तरह की कुछ कटुतायें अवश्य पैदा होंगी। पर अधिकांश असन्तुष्ट छात्र इतने मुंहफट नहीं थे जैसा कि इन्जीनियरिंग का वह छात्र जिसके प्रार्थना-पत्र को इसीलिए अस्वीकृत कर दिया गया कि उसे अभी तक अराजनैतिक होने का गर्व था। घमण्ड में चूर होकर अपने एक विश्वास पात्र साथी से हमने उसे यह कहते सुना "अब से मैं इस तरह की दूसरी शिक्षा सहायता के लिए आवेदन-पत्र भेजने के पूर्व गलियों में भीख मांगना पसन्द करूंगा।"

(५)

पेट पर पत्थर

पेता में पढ़ने वाली लड़कियों ने अपने रूप पर ज्यादा ध्यान कभी नहीं दिया। हांगकांग और शंघाई जैसे शहरों में भी जहां अनेक ऐसी स्त्रियाँ हैं जिन्हें खाने, खेलने और सिनेमा जाने के अलावा कुछ नहीं करना पड़ता, वहां भी आपको चीनी लड़की में विदेशी स्त्रियों के समान मांसलता और सम्पन्नता के दर्शन कदाचित् ही मिलेंगे। और जब हमें जन-शिक्षा सहायता की प्रगति का अनुभव हुआ तो पेता की लड़कियों ने अपने शरीर को छरहरा रखने की चिन्ता और भी कम कर दी।

शिक्षा-सहायता के शुरू होते ही हम लोग दो विरोधी दलों में बंट गये। दक्षिण पक्ष में असन्तुष्ट और निराश लोग थे जो व्यक्तिगत बातचीत में कहा करते थे कि विद्यार्थियों पर अवांछित नियंत्रण लागू करने के लिए और जिन छात्रों के विचार अनियंत्रित या असंगठित थे उन पर विचार संघर्ष के नये तरीके का प्रयोग करने के लिये नई सरकार "भोजन" को एक राजनीतिक उपकरण के रूप में उपयोग कर रही है। वाम पक्ष में छात्रों ने, जिन की संख्या अधिक थी, हमारे नेताओं की व्याख्याओं को स्वीकार कर लिया था। इन लोगों का छात्रों के बारे में तर्क होता था कि कुछ भी हो जब हम अपने वास्तविक रूप पर विचार करते हैं तो यही पाते हैं कि हम "अनुत्पादक तत्व" मजदूर और किसान के बल पर खड़े हैं। अतः मजदूर और किसानों को यह अधिकार है कि वे उन नवयुवक बुद्धिजीवियों की सहायता करें जिन्हें वह समझते हैं कि अधिक लाभदायक सिद्ध होंगे।

यह ठीक है कि हमारा यह मतभेद खुल कर विवाद का रूप नहीं धारण कर पाया था। जिन लोगों को शिक्षा-सहायता नहीं मिली ऐसे छात्र अपने अन्तरंग मित्रों से ठीक जगह और ठीक समय पर शिकायत करते थे। जैसे जैसे सयम आन्दोलन जोर पकड़ने लगा और हमारे भोजन का स्वरूप बदलता गया

नय अनुदानों के प्रति विद्यार्थियों का असन्तोष बढ़ता ही गया।

गेहूं की रोटी, सूप और तीन तरह की सब्जी के हम आदी हो चुके थे। यही रोटी हमारे खाने का आधार थी। कभी-कभी एक सब्जी में अन्य चीजों के साथ गोश्त भी मिला दिया जाता था। कभी-कभी दक्षिण और मध्य चीन से आये हुए छात्रों की वजह से मन्तु की बजाय चावल मिल जाता था—क्योंकि ये छात्र उत्तरी भाग के खाने (गेहूं की रोटी) की बजाय चावल अधिक पसंद करते थे। महीने में दो तीन बार हमें अच्छा खाना मिल जाता था जिस में कुछ स्वादिष्ट तश्तरियां नित्य के खाने में जोड़ दी जाती थीं। किसी भी आदर्श मान दंड से हमारे खाने को वास्तव में पौष्टिक नहीं कहा जा सकता था, पर यह हृष्टपुष्ट व्यक्ति को जीवित रखने के लिए काफी होता था। पर हम लोग जापान के विरुद्ध संघर्षों के दिनों में बड़े हुए थे। मेरे मित्रों ने जिन कठिनाइयों को और संकटों को सहा था, जिस खानाबदोशी और भटकने के जीवन से वे गुजरे थे उसके कारण तपेदिक, पेट की बीमारियां और खून की कमी जैसे रोगों द्वारा धर दबाये जाने की आशंका रहती थी। स्वतंत्रता से पहले पेता और दूसरी यूनिवर्सिटियों में जो विदेशी छात्र और अध्यापक थे उनका ध्यान कम-से-कम इस ओर जाता था। ये लोग हमें खुराक की अहमियत बताया करते थे। "अपने खाने के सब से अच्छे हिस्से को तो आप फेंक रहे हैं"—हम पर चिल्लाते हुए उस विदेशी प्रोफेसर की मुझे याद है। उसका मत था कि हमें बिना पालिश किया चावल और छिलके लगे हुए गेहूं को ही खाना चाहिए। उनमें "कीटाणु" होते हैं— जैसा कि वह कहा करता था।

हम उसका उत्तर दे सकते थे कि अधिक साफ़ चावल या अधिक अच्छा गेहूं भी अधिक लाभदायक हो सकता है। फुलब्राइट की ओर से आए हुए एक अमेरिकन छात्र ने जो कहा वह कानों को अधिक मधुर लगा - "तुम लोग चीन की महान प्राकृतिक सम्पत्ति हो"— यूनिवर्सिटी की एक पार्टी के अवसर पर हम थोड़े लोगों के बीच उसने कहा, "और सरकार को यह समझ कर आप को उचित खुराक देनी चाहिए।" इस पर एक प्रगतिशील छात्र ने उसे बतलाया कि जो कुछ उस ने कहा वह तो ठीक था पर हम यह आशा नहीं रख सकते कि वह बात अदूरदर्शी प्रतिक्रियावादी सरकार के दिमाग में आ जायगी। "हम कम खा कर रहना सीख चुके हैं," वह आगे बोला। "हालांकि हम एक

प्रगतिशील और दूरदर्शी सरकार की प्रतीक्षा में हैं जो हमारी तन्दुरुस्ती और भोजन की ओर भी थोड़ा बहुत ध्यान देगी।" १९४८ के अन्तिम दिन थे। उस समय मंचूरिया में जनमुक्ति सेना की इतनी जीत हो रही थी कि पीकिंग के समाचार-पत्र भी उन समाचारों को पूरी तरह नहीं दबा सके थे और हम में जो अधिक मुंहफट थे वे पहले से ही सरकार का तख्ता उलटने के बारे में खुले आम बातें कर रहे थे।

हम में से बहुत से लोगों को दिन में केवल दो बार ही खाना नसीब होता था और शायद यही हमारे अपर्याप्त भोजन का एक कारण था। जबकि दोपहर और शाम का खाना ठीक समय पर भोजन के कमरों में मिल जाता था, जलपान के लिए समय निश्चित नहीं था। हर महीने हमें जलपान के लिए ३० टिकट मिल जाते थे जिन्हें देकर हम सुबह ७ और ९ के बीच जलपान कर सकते थे। ज्वार की दालिया खाने के लिए ६॥ बजे के करीब सुबह की घंटी बजती थी। हम में बहुत थोड़े लोग उस घंटी के बजने पर जग पाते थे। सुबह ७ बजे ज्वार की दालिया के लिए रोजाना तबियत नहीं होती थी यहां तक कि उस में नमक और सब्जी के टुकड़े मिलाने पर भी कोई फर्क नहीं पड़ता था। जब हम उठ जाते और हाथ मुंह धोकर अपने कंधों पर किताबों के थैले को लटकाए, दूसरे छात्रों के साथ कक्षाओं को चल पड़ते उस समय सदैव ही हमें भूख सताती थी। गली के पार दस-बारह छोटे मोटे स्टालों की एक कतार बनी हुई थी। जहां कुछ नाश्ते की चीजें बिका करती थीं जैसे शाओपिंग (गेहूं और सिमसिम की रोटियां) और सोया-बीन का शोरवा, मुलायम और कड़ी सेव का साग, तले हुए मांस की बोटियां पके हुए मीठे आलू और खजूर की केक। उस समय ८॥ बज रहे होते थे और हमें नाश्ते की आवश्यकता मालूम पड़ती थी। "क्या हम वास्तविकता का सामना" कर सकते थे? जलपान के लिए हमारे पास पैसों का अभाव था। अतः उन दिनों हमें अक्सर वास्तविकता का सामना करना पड़ता था। कई बार भूखे ही आगे बढ़ना पड़ता था। पेट की तरह हमारी जेब भी खाली होने के कारण दोपहर के भोजन मिलने तक अपनी भूख को दबाए रखने के लिए हम अपनी कक्षाओं की ओर दौड़ते थे। ठीक उस क्लब के सदस्य की तरह जिसे इधर उधर देखने सुनने की इजाजत नहीं होती।

जब हम अपनी जेब को थोड़ा गर्म पाते तो स्कूल के मुख्य द्वार के बाहर खोमचे वाले हमारे अरुचिकर भोजन को थोड़ा रुचिकर बना देते। यदि हमारे पास पैसा होता तो खोमचे वाले मूंगफली,खरबूजे के बीज,सिकी हुई रोटियां, महकदार सुअर के मांस की पकौड़ियां, सैमई का भात और बादाम की चाय आदि सभी चीजें हमारा इशारा पाते ही दे देने के लिए तत्पर रहते थे। जाड़ों में जमे हुए खजूर की अमरीकी केक, यहां तक कि मक्खन और उबले हुए मीठे आलू भी खरीद लेते थे। आलुओं को हम अपने ठंडे हाथ गर्म करने के लिए हथेलियों में रख लेते जब तक रखे-रखे वे इतने ठंडे न हो जाते कि खाये जा सकते। मीठे खरबूजे, सीकों पर जमी हुई बर्फ, सोडावाटर और ठंडी दूसरी चीजें गर्मियों में मिल जाती थीं।

स्वतंत्रता से पहले खाने के कमरों में जो अस्वादिष्ट भोजन हमें मिलता था पड़ौस के छोटे छोटे रेस्तरां उसका फायदा उठाते थे। वे सैमई और पेस्ट्री, पश्चिमी ढंग की फैन्सी केक्स, फूयानीज का चटपटा खाना, केन्टूनी डिश और इसी तरह की दूसरी चीजें तैयार करते थे जिन्हें लड़के बहुत पसन्द करते थे। सैमई की बड़ी बड़ी रकाबियां और दूसरी स्वादिष्ट चीजें उन्हें बहुत पसन्द थीं। जब हमारे उन दोस्तों के पास पैसा होता तो वे अपने कुछ दो तीन निकटतम दोस्तों को इनमें से किसी एक छोटे रेस्तरां में ले जाते। और भाव मालूम करने के बाद दो या तीन डिश मंगा लेते, साथ ही आधा केटी शराब भी और शाम बौद्धिक बातचीत में गुजार देते।

दोपहर को हम मूंगफली लेते। दोनों भोजन के बीच इससे अच्छा हमें कुछ न लगता। यह और सब चीजों से सस्ती थी और साथ ही भाग्यवश हम सबको पसन्द भी। दोपहर या शाम के खाने के बाद अक्सर हम लड़कियां दो या तीन की टोलियों में लान में चली जातीं या खरबूजे के बीज और मूंगफली खाने के लिए पेड़ के नीचे बैठ जातीं। इनसे मुंह भी चलता रहता और भोजन के बाद बची हुई भूख भी कुछ शान्त हो जाती।

उन पुराने दिनों में हममें से बहुत थोड़े छात्रों को अच्छे रेस्तरां में कभी सौभाग्य से ही खाने का अवसर मिल पाता था जहां कि हम मुर्गी का भुना हुआ गोस्त और दूसरे पीकिंग के खानों का मजा ले सकते थे। एक बात और थी।

पेकिंग के मंहगे रेस्तरां के वेटरों का यह रिवाज़ था कि किसी भी ग्राहक के जाते समय उसकी दी हुई 'बख्शीश' जोर से सबको बताते थे। यद्यपि पीकिंग के वेटर कभी अभद्र नहीं होते थे परन्तु इस बात से भी शर्म आती थी कि दूसरे लोग यह न जान ले कि आप वेटर को साधारण 'बख्शीश' भी नहीं दे सकते थे। राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में अधिकांश छात्र सम्पन्न नहीं थे। शहर में विदेशी सहायता पर चलने वाली प्राइवेट यूनिवर्सिटियों में भी जहां छात्र भोजन और कपड़ों पर विशेष ध्यान देते थे बहुत थोड़े छात्र थे जो पैसा फजूल खर्च कर सकते थे। पीकिंग शान्त और तड़क भड़क से दूर एक पुराना रुढ़िवादी शहर है और उन बातों का यहां दिखावा नहीं जो आधुनिक जगत में अधिक महत्व रखती हैं। शंघाई और केन्टन जैसे पश्चिमी रंग में रंगे व्यवसायिक शहरों की तुलना में यहां फजूल खर्ची और ठसक नहीं मिलती। यहां ऐसी जगह नहीं हैं, जहां अमीरों के लड़के लड़कियां अपना पैसा बहा सकें। इन नायक नायिकाओं को अपने सामाजिक पराक्रम के प्रदर्शन के लिए यहां कोई जगह नहीं मिलती। हार कर, उन्हें भी हमारे सीधे साधे रहन सहन को अपनाना पड़ता और वें छुट्टियों का इन्तजार करते रहते जब वे शंघाई में अपने घर वापिस जाकर मौज कर सकते।

१९४७ और १९४८ में भोजन के बारे में हमारा असंतोष होते हुए भी मैं समझती हूं कि उसकी मात्रा में थोड़ी वृद्धि करने तथा उसके गुणों और उसकी किस्मों में थोड़ा आयोजित सुधार करने पर, "जनता के लिए भोजन" और "भूख का अन्त" जैसी सरगर्म बातों के होते हुये भी मेरे अधिकांश मित्र संतुष्ट हो जाते। मैं नहीं जानती थी कि कम्युनिस्टों ने हमारे इन लक्ष्यों को पूरा करने का वास्तव में कोई आयोजन किया था या नहीं। शायद सूखा आर सेना तथा गांवों की आवश्यकता इस ओर ध्यान देने के लिये कोई मौका ही नहीं छोड़तीं थीं। पर जिन प्रगतिशील छात्रों ने १९४८ में हमसे यह कहा था कि स्वतंत्रता के बाद हमारी भोजन और स्वास्थ्य की समस्यायें हल हो जायेंगी १९४९ में वही हम से और अधिक संयमित जीवन व्यतीत करने को कह रहे थे। १९४९ के बसन्त के आगमन के साथ ही हमारे भोजनालय में भोजन की किस्म में परिवर्तन होने लगा। हमें कई तरह के खाने मिलने लगे। मैं स्वीकार करती हूं कि गेहूं के आटे और चावल की जगह, जिनके हम आदी थे, अब ज्वार और घटिया किस्म के अनाज के आटे का खाना

मिलने लगा। अलग अलग भोजनालयों में अब हमें अपनी तश्तरियों में "रेशमी केक" या ८१ नम्बर के आटे की रोटियां मिलने लगीं। यहां पर यह बतलाना उचित होगा कि ८१ नम्बर का आटा मोटे आटे की एक किस्म है जो सौ केटी गेहूं में से ८१ केटी आटा तयार होता है। जिसके अर्थ यह होते हैं कि अनाज में से साधारणतः जिन दूषित पदार्थों को निकाल देना चाहिये था उन्हें उसी में रहने दिया जाता था।

मोटे अनाज के आटे में थोड़ा सा ज्वार का आटा मिला कर भाप से सेक कर तैयार की गई रोटी को हम व्यंग में "रेशमी केक" कहते थे। जब रसोई घर से ट्रें में रखी हुई वह हमारी मेजों पर रख दी जाती तो बहुत कुछ "स्पन्ज केक" जैसी लगती थी। परन्तु हमारे मुंह में उसका "स्पन्ज केक" जैसा स्वाद कभी नहीं आया। इस मोटे आटे से मिला कर बनी हुई रोटी को खाना जिसने केक के सुन्दर नाम का अपहरण कर लिया था—दक्षिण से आये हुये सफेद, नर्म चावल खाने के आदी हमारे सहपाठियों को सज़ा भुगतने के समान था। उनमें से बहुत से लोगों ने स्पष्ट कह दिया कि इस नकली "स्पन्ज केक" को खाने की जगह वे छिलकों वाला अनाज खाना पसन्द करेंगे।

"जनता की ज्वार को बेकार खर्च न करो" की सरकारी चेतावनी हमें युवक संघ के सदस्यों द्वारा मिलने के कारण हम में से अनेक लोग सुबह का नाश्ता करने के लिये उठने लगे। सुबह के नाश्ते में हमें अभी भी सूखी नमकीन तरकारी के साथ ज्वार का दलिया मिलता था। वास्तव में ज्वार का दलिया बहुत ज्यादा प्रचलित हो गया था। जैसा मेरी एक सहपाठिन ने कहा: "रोज रोज ज्वार का दलिया मुसीबत होता जा रहा है पर यह दूसरे खानों की अपेक्षा बड़े आराम से पेट में चला जाता है।" जैसे जैसे नई सरकार जनता से अधिकाधिक संयम की मांग करती गई हमारा दोपहर और शाम का भोजन भी बराबर खराब होता गया। कम से कम यह हमारा वास्तविक त्याग था। हमारी नई सरकार की तुलना में उस काफी गई बीती पुरानी सरकार में भी समय समय पर "त्याग के लिये" आन्दोलन हुआ करते थे। एक या दो सप्ताह तक तो लोग उनका पालन करते थे और जैसे ही सरकार को परिस्थिति का ज्ञान हो जाता हम उसे शीघ्र ही भूल जाते थे। इस बार भोजन में घी का अभाव बहुत बड़ा नुकसान था क्योंकि गोश्त और प्रोटीन

युक्त अन्य पदार्थ न मिलने के कारण हम भोजन में प्रोटीन के लिये उसी पर आश्रित थे। जैसे जैसे समय निकलता गया हम उबले हुई कमरकल्ला, फूलगोभी, सेरु और शलगम अधिकाधिक खाने लगे और भुनी हुई चीजें धीरे धीरे खाने में से गायब होती गईं।

देखने में भोजन की मात्रा पहले जैसी ही थी और उसके बाद और ठोस भोजन की इच्छा बिल्कुल नहीं होती थी। लेकिन खाने में पौष्टिक तत्व की कमी के कारण स्वादिष्ट भोजन की भूख और भी बढ़ गई। गेहूं की रोटी और मूंगफली साधारण रूप से विशेष आनन्ददायक नहीं होती। फिर भी भोजन के हाल से अपने सोने के कमरे में पहुंचते ही मेरी कई सहपाठिनी अपने कागज के थैलों और जारों को जल्दी जल्दी खोल कर गेंहूं की रोटी और मूंगफली निकालतीं और बड़ी तेजी से चटपट निगल जातीं। यदि हमारे युवक मित्र जो हमारे देवी तुल्य व्यवहार के प्रशंसक थे इस हालत में खाते हुए देख लेते तो आश्चर्य में पड़ जाते। कई महीनों के त्याग और संयम के बाद हमारे मन में इस बात की आशंकाएं बढ़ने लगीं कि भोजन में घी का अभाव हमारे स्वास्थ्य को बहुत नुकसान पहुंचा रहा है। जब पैसा होता हम थोड़ी सुअर की चर्बी खरीद कर अपने कमरे में रख लेते थे। हम मक्खन या पनीर, जो पूरी तरह से विदेशी हैं, खाने के आदि नहीं थे। पर हम भोजन करने के बाद अपने स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिये गेहूं की रोटियों पर सुअर की चर्बी अच्छी तरह लगा कर खाया करते थे।

हम अपने स्वास्थ्य के बारे में चिन्तित थे। नई राजनीतिक कक्षाओं के अलावा मीटिंग और अध्ययन सम्मेलनों के कारण हमें और भी अधिक काम करना पड़ता था। इन मीटिंग और सम्मेलनों में उन लोगों को भी भाग लेना पड़ता था जो पार्टी, युवक संघ, विशेष प्रचार दल और दूसरे नये राजनीतिक संगठनों में काम नहीं करते थे। नवयुवक होने से हम काफीमेहनत कर सकते थे और भविष्य के बारे में आशा और गर्व हमें इन कामों में लगाये रखता था परन्तु इन परिस्थितियों ने उन लोगों की सहायता नहीं की जिन्हें तपेदिक या दूसरी बीमारियां हो जाना मामूली बात थी। ऐसी बीमारियां विद्यार्थियों में पहले से ही मौजूद थीं।

छमाही अवकाश के थोड़े दिन पहले जून माह में एक दिन पीकिंग में काफी गर्मी पड़ रही थी। पसीने में भीगी हुई दोपहर का भोजन करने के बाद मैं दोपहरी भर कमरे के अन्दर.आराम करने की आशा से अपने निवास "भूरे-भवन" की ओर लपक कर जा रही थी। मैंने चाइन तियन-फांग के दरवाजे के बाहर रुक कर दो बार किवाड़ों को धक्का दिया फिर खटखटाया। अपने मित्र का अन्दर से कोई जवाब न पाकर मैं धक्के से दरवाजा खोल कर अन्दर घुस गई।

चाइन तियन-फांग अपनी मेज के पास एक कुर्सी पर दो तकिये लगाय बैठी थी। उसका पसीने से भीगा हुआ माथा भीगे रुमाल से बंधा था। जब उसने यह देखने के लिये सिर उठाया कि कमरे में कौन आया है, तो वह मुरझाई और थकी हुई लगती थी।

"तुम अपने आपको क्या समझती हो, क्या कोई राजकुमारी हो जो ऐसी गर्मी में तकियों पर बैठी हो। इसी कारण, तुम्हें बहुत पसीना आ रहा है..." मजाक करते हुये मैंने उसका अभिवादन किया। उसने मेरे अभिवादन का कोई उत्तर नहीं दिया। बल्कि सहानुभूति का अभाव पाकर उसने मेरी ओर खिन्न मन से देखा।

दरवाजा फिर खुला। दरवाजा खोलने वाला गर्वीला, नीरस, इतिहास की कक्षा का मेजर एक लड़का था...वह अपनी प्रगतिशील प्रवृतियों की ओर इतना महत्त्व देता था कि तियन-फांग की कक्षा में "निवास केन्द्र" का नेता बन गया। उसने पसीने में तरबतर अपनी सहपाठिन की ओर देखा और पूछा, "कुमारी चाइन, क्या आपने राजनीतिक कक्षाओं के लिये बाहर पढ़ने को दी गई कामरेड ल्यू शाओ-नी द्वारा लिखित "वर्ग विभेद" के सम्बन्ध में पुस्तिका खत्म कर ली है ? आप जानती हैं कि दूसरे साथी भी उसे पढ़ना चाहते हैं।" हालांकि उसकी आवाज में अशिष्टता न थी पर उसके कहने का ढंग इतना मुंह फट और शुष्क था कि बिना यह समझे कि यह चिड़चिड़ाहट किसलिये है ऐसा लगता था कि वह चिढ़ा रहा है।

"यदि किसी को आवश्यकता हो तो उसे अभी वापिस ले जायें तियन-

फांग उत्तर में बोली।

"तो आपने उसे अभी तक खत्म नहीं किया है, उसे रखे हुये आपको पूरे चार दिन हो गये।" वही नीरस और शुष्क आवाज जिसमें कोई व्यक्तिगत अकड़ नहीं झलकती थी :

"लेकिन..." वह कुछ गर्म होकर बोली, "आप जानते हैं मैं चार दिन से बीमार हूं।"

"किताब कहां रखी है? उसे दूसरे साथी दो दिन पहले भी पढ़ सकते थे।"

मैंने उसकी आखों में तरलता देखी और उसकी ओर से मैंने बोलना चाहा पर वह खुद ही बोल उठी, पिछले चार दिनों मैं नित्य यही सोचती थी कि आज नहीं तो कल अच्छी हो जाऊंगी"। डबडबाते हुये नेत्रों से उसने कक्षा के नेता को देखा। "बिस्तर के ऊपर बुकशैल्फ में किताब रखी है। कृपया आप खुद ही ढूंढ लें।"

उसने कमरे मे चारों ओर घूमकर पुस्तक को ढूंढा और लेकर चला गया। जैसे ही दरवाजा बन्द हुआ कुमारी चाइन के आंसू ढुलक आये। मैंने जल्दी से हाथ मुंह धोने की जगह से एक भीगा तौलिया ले लिया और उसका मुंह पोंछने लगी ताकि वह रोना बंद कर दे।

"आखिर कौन सी बीमारी है?" मैंने पूछा।

तौलिये से धीरे धीरे अपना मुंह पोंछते हुये वह बोली, "मैं हमेशा लोगों से सुनती आई हूं कि यह बीमारी कितनी पीड़ा पहुंचाती है। चाहे वे इसका कितना भी मजाक क्यों न उड़ाते हों अब यह मुझे हो गई है। मुझे बवासीर की बीमारी है। मेरे ख्याल में यह "रेशमी केक" और दूसरे मोटे अनाज खाने से हो गई है। सच मानो, मैं कितनी लज्जा और संकोच का अनुभव करती हूं। मैं दूसरे लोगों से नहीं कहना चाहती कि मुझे

क्या हो गया है। इसलिये..." उसने तौलिये को अपने दोनों हाथों के बीच दबाकर कहा "युवक संघ और कक्षाओं के नेता सभी यह सोचते हैं कि वास्तव में मैं बीमार नहीं हूं। बल्कि में बिगड़ी हुई, नीच बुर्जुवा बहुत मतलबी और मूढ़ हूं।"

"यह लोग जो सोचते हैं उसकी चिन्ता मत करो।" मैंने बात बदलने की कोशिश की लेकिन जल्दी मे मेरी जीभ पर जो पहले आया वही निकल पड़ा। "मस्से बड़े दर्दनाक होते हैं और लज्जाजनक भी, पर मैंने सुना है कि थोड़ा अच्छी खुराक से वे जल्दी ही ठीक हो जाते हैं। अधिक चर्बी और मुलायम खाना···" जैसे ही मुझे मालूम हुआ कि मेरी सलाह तियन-फांग को मजाक जैसी लग रही है मैंने बोलना वन्द कर दिया।

"ठीक है"···वह बोली। "वह मैं भी जानती हूं परन्तु एक दो सप्ताह पहले मैं खुले बाजार से एक पौंड डिब्बे में बन्द पुराना मक्खन खरीद लाई थी जो अमेरिकन सेना छोड़ गई थी। मक्खन के डिब्बे को जब मैं अपने साथ खाने के कमरे में ले गई तो वे मेरी ओर घूरते रहे। उनकी आखों से एक विशेष प्रकार का साधुभाव टपक रहा था। मेरे गुट के एक लड़के ने तो मुझ से कह भी डाला कि उसके विचार में मैं कुछ "विशेष" थी।

दरवाजा खुला और तियन-फांग के निवास केन्द्र का नेता पुनः कमरे में आकर बोला, "कुमारी चाइन— हमारी कक्षा को इस पुस्तक की दस प्रतियां और मिल गई हैं इसलिए मैं इस पुस्तक को आपके यहां फिर छोड़े जाता हूं। आशा है आप इसे शुक्रवार को होने वाली मीटिंग तक समाप्त कर लेंगी।" उसने कुमारी चाइन की ओर आशाभरी आंखों से देखा।

मेरे लिए इतना काफी था। मैं उसे खरी खरी सुनाने के लिए भड़क उठी कि तियन-फांग बीमार है। हमें अपने नए जीवन में अपने दोस्तों को कठिनाईयां पैदा नहीं करनी चाहिए और हमें अपने साथियों के साथ इस तरह का बर्ताव भी नहीं करना चाहिए। मेरी आवाज शान्त थी पर मैंने उसे उसी जैसे मुंहफट स्वर में कहा। उसने अपना स्वर बदलते हुए कहा—

"तब आप खूब आराम करें।"

जैसे ही वह अपने महत्वपूर्ण काम के बोझ से लदा हुआ वापस जाने लगा मने तीखी आवाज में कहा—"मुझे प्रसन्नता है कि आप डाक्टर होने नहीं जा रहे।"

जो बीमारी मेरी सहेली को इतना लज्जित किए थी उससे भी बड़ी बीमारियां अपर्याप्त खुराक से हो जाती हैं। स्वतन्त्रता से पहले तपेदिक निवारक संघ ने जो परीक्षण किए उनके परिणामों ने स्कूल के अधिकारियों को आश्चर्य में डाल दिया था। हम लोगों में हर दस में से एक छात्र तपेदिक का रोगी था और उसके बाद भी रोगियों का अनुपात कम नहीं हुआ। जिन लोगों की बीमारी काफी बढ़ चुकी थी उन्हें थोड़े समय के लिए स्कूल छोड़ने को मजबूर किया गया। जिन रोगियों की हालत इतनी खराब नहीं थी उन्हें केवल कालेज में पढ़ने के लिए आने से रोक दिया गया पर उनकी थोड़ी बहुत पढ़ाई जारी थी।

साधारण छात्रों की अपेक्षा पार्टी और युवक संघ के सदस्यों में यह बीमारी अधिक थी। बहुत से लोगों ने उन कठिनाईयों को सहन किया था जिसे पार्टी ने अपनी विजय के लिए संघर्ष के दिनों में भोगा था। वास्तव में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के इतने सदस्य (जिनमें हमारे दूसरे नम्बर के राष्ट्रीय नेता "ल्यो शाओ-ची" जैसे महत्वपूर्ण नेता भी सम्मिलित थे) कठिनाईयों और संकटों को झेलते हुए तपेदिक के शिकार हो गये थे कि यह बहुत कुछ 'क्रान्तिकारी रोग" कहा जा सकता है। इन क्रान्तिकारी लोगों और क्रान्तिकारी विद्यार्थियों की कई बातों की मैं आलोचक थी पर मैं उनकी इस बात की स्तुति करती थी कि वे अपने स्वाथ्य और रहन-सहन की अवस्थाओं की अधिक चिन्ता नहीं करते थे। उनका विश्वास था कि जब एक व्यक्ति ने एक काम करना सोच लिया तो वह अधिक महत्वपूर्ण बातों के सामने अपने निजी स्वास्थ्य के बारे में ज्यादा नहीं सोच सकता। जिन नवयुवक क्रान्तिकारियों को तपेदिक हो गई थी वे उसे अपना क्रान्तिकारी चिन्ह समझते थे। अक्सर जानबूझ कर वे अपनी बीमारी के प्रति उपेक्षा का प्रदर्शन करते। उनको खांसी आ जाती और खांसते खांसते पसीने से तरबतर भी हो जाते पर हम से

यही कहते, चिन्ता की कोई बात नहीं।" वें यूनिवर्सिटी के डाक्टर के पास भी न जाते क्योंकि वे "काम पर जुटे रहना" चाहते थे।

हमारी बीमारियों की सूची में दूसरी बीमारी पेट और आंतों की तकलीफ थी। मोटा खाना, बहुत देर तक काम करना और कम सोना, इन सभी बातों ने इन बीमारियों को बढ़ावा दिया था। तपेदिक और मेदे की बीमारियों के अलावा खून की कमी और स्नायुओं की कमजोरी भी हम लोगों में साधारण बात थी। जो विद्यार्थी बीमार होने पर या दस्त लगने पर अपनी अधिक चिन्ता करते थे उन्हें नौजवान पार्टी मेम्बर तिरस्कार की निगाह से देखते थे। क्योंकि इन लोगों ने नये जमाने को लाने के लिये अपने स्वास्थ्य की स्वयं परवाह नहीं की थी। आत्मत्याग निस्संदेह एक गुण है, पर हम में से कुछ लोग कभी कभी यह भी अनुभव करते थे कि हमारे कुछ दोस्त इस आत्मत्याग को लक्ष्य प्राप्त करने का साधन न समझकर उसे ही लक्ष्य मानने लगे थे।

१९५० की गर्मियों में नई सरकार को इस स्थिति का ज्ञान हुआ और वह विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की पूछताछ करने लगी। छात्रों के रहने खाने की स्थिति के बारे में जांच-पड़ताल हुई। कक्षाओं में पढ़ने का समय कम कर दिया गया और कक्षाओं से बाहर भी पढ़ने के लिये जो काम दिया जाता था उसे भी कम किये जाने की घोषणा करदी गई। सरकार विद्यार्थियों द्वारा भेजी गई याचिका पर सचेष्ट हुई या कम्युनिस्ट विद्यार्थियों के सुझाव पर अथवा छात्रों के माता पिता द्वारा भेजी गई याचिकाओं से, मैं इसके बारे में कुछ नहीं जानती। शायद बहुत देर में सरकार को यह ध्यान आया था कि हम विद्यार्थी अनुपम "राष्ट्रीय सम्पत्ति" हैं और नई सरकार के लिये तो हम और भी आवश्यक थे क्योंकि उसे चतुर कार्यकर्ताओं, विश्वासपात्र कारीगरों और शिक्षकों की अधिक आवश्यकता थी।

कुछ भी हो पेता के प्रतिनिधियों ने सांस्कृतिक और शैक्षणिक समिति की एक विशेष सरकारी बैठक में जिन भाषणों को सुना उसका समाचार हम तक भी पहुंच गया। इस बैठक में शिक्षा उपमन्त्री श्री चाइन चुन-ज्वी ने एक प्रभावोत्पादक और हृदयस्पर्शी भाषण दिया। "मेरी लड़की मुकदन के उत्तर-

पूर्वी मेडीकल कालेज में पढ़ा करती थी। जब वह घर से गई तो पूर्ण स्वस्थ और प्रसन्नचित्त थी। वह अब हड्डी की तपेदिक को साथ लेकर घर लौट आई है। कालेज में कितनी ही मीटिंगें होतीं, कितना ही काम होता कितने ही कार्यक्रमों में वह संलग्न रहती। वहां उसे इतना व्यस्त रखा जाता कि वह परेशान थी।" जब इतने बड़े आदमियों के बच्चे ऐसा आदर्श उपस्थित कर रहे हों तो यह आश्चर्य की बात नहीं थी कि हम भी अपने स्वास्थ्य की ओर कम ध्यान देते।

भोजन और स्वास्थ्य के बारे में हम खाने की मेजों से दूर अपने कमरों में या पुस्तकालय जैसी जगहों पर अपने मित्र के साथ कानाफूसी में आलोचना किया करते थे। स्वतंत्रता से पहले शान्तान में खाने वालों के आठ गुट थे। इन गुटों को ऐसे ही बना दिया गया था। हमने स्वयं उन लोगों को चुन लिया करते जिनके साथ टेबिल पर बैठकर हम खाना चाहते थे। और इकट्ठे होकर अपने नामों की सूची भोजन समिति को दे देते थे। "सामूहिक जीवन" निर्वाह के नये सिद्धान्तों के अनुसार स्वतंत्रता के बाद हमारे नेताओं ने "वास्तविक प्रजातंत्र" को बढ़ावा देने वाली एक नई व्यवस्था स्वीकार करने के लिये आग्रह किया। इसके अनुसार खाना खाने के बड़े कमरे में बैठने के प्रबन्ध को बदल दिया गया। अब विद्यार्थी विभाग और कक्षा के अनुआर बैठते थे ताकि हम उन्हीं विद्यार्थियों के साथ बैठकर खाना खायें जिनके साथ हम दिन में पढ़ते थे। निस्संदेह यह इन्तजाम अच्छा था और समय की बचत भी होती थी। जब विद्यार्थी खाने के बड़े कमरे में होते उस समय उन्हें विभाग और कक्षा के संगठनों द्वारा, घोषणायें, आदेश, सरकारी सूचनायें एवं अन्य प्रकार की बातें वताई जा सकती थी। जब कोई ऐसी समस्या खड़ी हो जाती जिस पर वादविवाद, प्रस्ताव और मतदान लेने जरूरी हो जाते तो बेकार समय खर्च किये बिना हम लोग संगठित होकर सीधी लाइनों में खड़े हो जाते और हमारी कक्षा के नेता हमारी वोट ले लेते।

राजनीति से दूर रहने वाले विद्यार्थियों को यह प्रबन्ध पसन्द न था। इस के पूर्व ऐसे छात्र किसी भी विषय पर "निश्चयात्मक तत्वों" (कार्यकर्त्ताओं) के शिकार होने से अपने आपको अक्सर बचा लेते थे। क्लास के बाद या भोजन के समय व युवक संघ के उत्साही कार्यकर्त्ताओं से बचकर निकल जाते

थे। पर उन्हें खाना-खाने तो आना ही पड़ता था और अब उन्हें बैठकर हमारे नेताओं के आदेशों और सम्मतियों को चुपचाप सुनना पड़ता।

हमारी खाना खाने की इस नई व्यवस्था के प्रथम सप्ताह में ही मेरे एक सहपाठी ने हमारे भोजन में स्पष्ट खराबी के प्रश्न को उठा दिया। अपनी थाली में से आटे और ज्वार की रोटियों को उठाकर उसने उन्हें गौर से देखा और फिर भोजनालय प्रमुख की ओर देखकर बोलना शुरू कर दिया। "पुरानी प्रतिक्रियावादी सरकार के दिनों में अपने प्रगतिशील साथियों की बात-चीतों से मैंने यह धारणा बनाई थी कि जब हम सत्ता हस्तगत कर लेंगे तो हमें उससे अच्छा और ज्यादा खाना मिलेगा। अब मैं यह स्वीकार करता हूं कि कि यह "रेशमी केक" मेरे खून के लिए आवश्यकता से अधिक 'अच्छी' है।"

उत्तेजित हुए बिना भोजन प्रमुख ने कुछ तथ्यों की ओर हमारा ध्यान दिलाया। उसने कहा "हमारी सरकार अभी तक युद्ध में फंसी हुई है और जो खाना हमें मिलता है वही खाना सरकारी काम करने वाले ट्रेड यूनियन या दूसरे संगठनों के पार्टी कामरेडों को भी मिलता है। वे जनता के लिए तन-मन से जुटे हुए हैं और काम पूरे कर रहे हैं जब कि हम लोग अभी जनता की सेवा के लिए अपने आपको तैयार ही कर रहे हैं। फिर भी क्या हम लोगों को शिकायत करनी चाहिए?" पिछले साल जो वचन हमें दिये गये थे उनके पूरा न होने के बारे में जो विद्यार्थी नाराज थे वे भी इस उत्तर की सच्चाई को मान गये। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों को मिलने वाले भोजन की "तीन रसोई" वाली व्यवस्था से हम सभी परिचित थे। "बड़े रसोईघर" से जो खाना अधिकतर पार्टी के कार्यकर्त्ताओं को मिलता था वह हमें मिलने वाले भोजन के समान ही था। कुछ थोड़े ऐसे लोग भी थे जो अधिक उत्तर-दायित्व पूर्ण काम करते थे या जिनके काम अधिक थकावट वाले होते उन्हें "दूसरी रसोई" में से खाना मिलता था। यहां खाना बड़े रसोई घर से ज्यादा मिलता था और उसकी किस्में भी ज्यादा होती थीं। थोड़े से ऐसे लोग थे जो कमजोर थे या अति उत्तरदायी जगहों के कारण "छोटे रसोई घर" में ही खाना खाते थे। यहां खाना स्वास्थ्य और स्वाद को ध्यान में रख कर दिया जाता था। और फिर यह छात्रों के लिए वास्तव में उपहासप्रद था कि वे सरकारी नौकरियों में या पार्टी में काम करने की तैयारी करते समय उसी खाने की

शिकायत करते हों जिसे वे तीन पांच किये बिना बाद में स्वीकार कर लेंगे।

भोजन के बारे में शिकायत हमारे रोष को ठंडा करने के लिये जरूरी थी ऐसा मेरा अनुमान है। जैसी आशा थी और हमारे विचार से जो आश्वासन हमें दिये गये थे समय पर वैसा न हो सका। पर भोजन की समस्या तो पहले भी थी, क्या नहीं थी ? हम अपने आपको समझा सकते थे कि सरकार अकाल का सामना कर रही थी। उसे सेनाओं को खाना देना था और कुछ अनाज जमा करके रखना भी आवश्यक था ताकि कीमतों में ज्यादा अन्तर न हो जाये। बाद में जब अगले साल स्कूल लगा तो १९४९ की गर्मियों में आंधियों और बाढ़ों से जो नुकसान हुआ था उसके बारे में सुनने के बाद प्रकृति के प्रकोप और अकाल पीड़ित क्षेत्रों के लिए अन्न बचाने की भारी आवश्यकता हम समझ सके। इन सभी कारणों से और इस समाचार से, उत्साहित होकर कि समस्त देश के प्रसिद्ध व्यक्ति एकत्रित होकर नई राष्ट्रीय सरकार को विधिवत रूप दे रहे हैं हम में से अधिकतर अपने निजी असंतोषों को इस आशा और प्रत्याशा में विलीन कर सके कि १९४९ के पतझड़ में जब हम छमाही की छुट्टियों के बाद फिर से स्कूल लौटेंगे तो नई सरकार बन चुकेगी।

(६)

खाकी वस्त्र

"अभी भी लाली बहुत है।"

उक्त शब्द मैंने अपनी सहेली की ओर आलोचनात्मक ढंग से अपना सिर हिलाकर कहे, जब वह अपने गालों की लाली रूमाल से ठीक कर रही थी।

हम में से अधिकांश छात्रायें नित्य प्रति लिपस्टिक लगाने की आदी न थीं ..ार न ही दूसरे सौन्दर्य प्रसाधन लाली क्रीम या चेहरे का पाउडर हमें रुचि-कर थे। यद्यपि पेता के सभी आदमी और अधिकांश लड़कियां सार्वजनिक रूप से यह कहते थे कि बनाव श्रंगार से स्त्रियां अधिक सुन्दर लगती हैं, पर जो छात्रायें अक्सर सौन्दर्य प्रसाधनों का प्रयोग किया करती थीं उन्हें लगता था कि वे कुछ अनैतिक कार्य कर रही हैं। परन्तु अपराध की यह धुंधली भावना हममें से कुछ को नित नए प्रयोग करने से न रोक सकी।

मेरी एक सहेली जो यह देखने के लिए व्यग्र थी कि यदि वह साहस करके अपने चेहरे का बनाव श्रृंगार कर ले तो वह और कितनी अच्छी लगेगी, मुझे अपने कमरे में बुलाकर दरवाजा बन्द कर लेती। पहले वह थोड़ा सा पाउडर अपने चेहरे पर मलती, फिर अपने गालों पर थोड़ी लाली लगा उसे समतल रूप से फैलाने की कोशिश करती। काफी होशियारी के साथ अपनी छोटी अंगुली पर थोड़ी सी लिपस्टिक लगा उसे अपने ओठों के बीच में लगा कर दूसरी अंगुली से फैलाती। फिर वह शीशे को और पास खींचकर अपनी आकृति परखती, और शीशे को फिर दूर हटाकर अपने चेहरे का पुनः अध्ययन करते करते कह उठती—

"ओह, अब भी बिल्कुल स्पष्ट मालूम पड़ रहा है। बोलो मालूम पड़ता है न?"

"थोड़ा और पोंछो बस थोड़ा सा" मैं सलाह देती।

रूमाल से थोड़ा सा रगड़ने के बाद वह फिर पूछती। "अब कैसा लगता है ? क्या तुम कह सकती हो कि मैंने वास्तव में किसी तरह की लाली लगाई है ?"

"अभी भी गालों पर लाली थोड़ी अधिक है।"

इस पर सौन्दर्य में गुप्त रूप से मग्न रहने वाली मेरी सहेली शीशे को उठाकर अपने चेहरे को फिर देखती। वह कह उठती "पर यदि मैं इसको और हल्का कर दूं तो ऐसा लगेगा कि मैंने लाली का प्रयोग बिल्कुल ही नहीं किया।"

ऐसे निजी प्रयोगों के बावजूद जिन आदमियों को हम प्रभावित करना चाहती थीं उन्हें हमारे बनाव शृंगार को देखने का मौका बहुत कम मिलता था। यह पेता की परम्परा के भी विरुद्ध था। हमारे स्कूल में स्त्री और पुरुषों की वेशभूषा येनचिंग और जिगुवा के विद्यार्थियों से कहीं ज्यादा साधारण थी। ये यूनिवर्सिटियां शहर के बाहर स्थित थीं और अमेरिका से सहायता लेने के कारण काफी समृद्ध थीं। स्वतन्त्रता से पहले भी गर्मियों और बसन्त में लड़के जो वस्त्र पहनते थे वे लगभग समान होते थे। अंगरेजी के "टी" अक्षर की तरह सूती कमीज, खाकी पेंट, सस्ते सूती मोजे और या तो काले रंग के कपड़े के जूते या विदेशी ढंग पर चीन में बने चमड़े के जूते, यही उनकी पोशाक थी। सर्दियों में कुछ आदमी आरामदेह लटकता हुआ और गर्म नीला या भूरे रंग का सूती या ऊनी रुई भरा हुआ पुराने ढंग का चोगा तथा काले कपड़े के सूती अस्तर वाले स्लीपर और नीचे से दिखाई पड़ने वाले गर्म मोजे पहनना पसन्द करते थे। कुछ अन्य पश्चिमी ढंग के भारी पैन्ट और ऊन के ओवरकोट या अमेरिकन पैदल सेना की पुरानी जाकेट पहनते थे जो खुले बाजार में मिल जाते थे।

शुष्क उत्तरीचीन की तेज सर्दी में टोप और हाथ के मोजे की भी जरूरत पड़ती। ये चीजें पेता में अजीब किस्म और हर तरह के पुराने फैशन की

मिलती थी। इसलिए नहीं कि इनके पहनने वालों को एक नया ढंग ईजाद करने की इच्छा थी बल्कि इसलिए कि उन्हें जो कुछ मिलता उसे पहनना पड़ता था। हमारे अनेक मित्र मंचूरिया के ढंग से फर की टोपियां पहनते थे जिनके दो किनारे कानों को ढकने के लिए लटकते रहते थे। कुछ अन्य लोग नुकीली टोपियां और ऊनी मफलर के साथ हाथों में चमड़े के दस्ताने प्रयोग करते थे जिनमें फर लगी होती थी या ऊन की बनी हुई टोपियां और ऊनी दस्ताने पहनते थे। ये सब चीजें विजय दिवस के बाद चीन छोड़ते समय अमेरिकन सेना लड़ाई के अतिरिक्त स्टोर के साथ छोड़ गई थी। यदि हम सर्दी में किसी दिन दरवाजे के बाहर खड़े होकर कक्षाओं से निकलते हुए युवकों को देखते तो इनमें सैकड़ों में से एक दो ही ऐसे भाग्यवान दिखते जिनके कपड़े अच्छे और नये ढंग के सिले हुये होते। गर्मी के मौसम में पेता के आदमी ऐसे कपड़े पहनना पसन्द करते थे जो उन्हें ठंडा रखें और सर्दी में ऐसे कपड़े पहन कर ही वे खुश रहते थे जो उन्हें गर्म रख सकें। उनके पास जो थोड़ा पैसा होता वह खाने और किताबों पर खर्च हो जाता था। उनके परिवार के लोग कपड़े उनके लिए बनवाने में असमर्थ थे।

लड़कों की अपेक्षा हम लड़कियां वस्त्रों पर स्वाभाविक रूप से अधिक ध्यान देती थीं। पर जिगुवा यूनिवर्सिटी से हमसे मिलने आने वाले छात्र इस बात की ओर हमारा ध्यान दिलाने में एक विकृत आनन्द का अनुभव किया करते थे कि जिगुवा, येन चिंग और फ्यू-जिन की लड़कियों में जो आकर्षण और शालीनता झलकती है उनका हमारे अन्दर अभाव है। हमें जिगुवा से आने वाले लड़के अनेक बातों में स्थूल लगते थे। पर लड़कियों के मूल्यांकन के बारे में अवश्य ही उनकी दृष्टि तीक्ष्ण और सतर्क थी। शायद वे हमसे इसीलिए मिलना पसन्द करते थे कि हम थोड़े में संतोष कर लेती थीं। पर जिगुवा के छात्रों के लिए भी एक अच्छे रेस्तरां में दो लोगों के भोजन या जल-का प्रश्न विचारणीय होता था।

गर्मी में पेता की अधिकांश छात्रायें पुराने ढंग से बनी हुई हल्के नीले रंग की सूती पोशाक और समतल या नीची एड़ी के जूते पहनती थीं। कुछ लड़कियों के पास चीनी वस्त्र या पश्चिमी ढंग के अनेक डिजायन के स्कर्ट भी होते थे। पर उनका रंग अपेक्षाकृत सौम्य होता था जैसे नीला, हरा,

पीला और काला। लाल या सुनहले डिजायन यूनिवर्सिटी में शायद ही देखने को मिलते हों। हमारी पोशाक में शोभा बढ़ाने वाली पश्चिमी ढंग की साज सज्जा जैसे फीता या शीशे के दाने नहीं होते थे बल्कि वह पुराने ढंग से सिली होती थीं जिनके कालर काफी ऊंचे होते थे। उनकी छोटी बाहें केवल कंधों को ही ढंक सकती थी। कमर के हिसाब से कपड़ों की काट-छांट नहीं होती थी और उनकी छोटी गोट घुटनों से एक या दो इंच नीची रहती थीं। चीनी पोशाक कूल्हे के नीचे संकरी होती है और यदि पैरों के किनारे की ओर स्कर्ट खुली न हो तो घूमना भी मुश्किल हो जाता है। परन्तु शंघाई और हांगकांग के समान यह कटाव कमर के ऊपर तक न होकर केवल कुछ इंच का ही होता था। हांगकांग में एक साधारण लड़की अपनी पोशाक— जिसमें ठोढ़ी तक पहुंचने वाले ऊंचे कालर, कमर और कल्हे पर जाकर काफी तंग गहरी ऊंची दरार और स्कर्ट के अन्दर सिली हुई फीते की स्लिप होती है जितने रुपयों में बनवाती है पेता की लड़की के लिये उसी धन में से पांच या छः पोशाकें बन सकती हैं। लड़कियों के अण्डरवियर सूती होते थे और उसे वे खुद ही सीती थीं।

जब सर्दियों का मौसम आता हममें से अनेक लड़कियां कम लम्बे वस्त्र पहनतीं ताकि हम लोग भारी गद्देदार कपड़ों में आसानी से घूम फिर सकें। यद्यपि परम्परागत रुई भरा हुआ सर्दियों का चोगा अब भी प्रचलित था इसमें वह बनाव श्रृंगार नहीं था जो पहले हुआ करता था। पहले पीतल के या रंगबिरंगे बटन होते थे पर अब यह रेशम, किमखाब या बूटेदार कपड़े के बजाय सूत का बना होता था। विजय दिवस के बाद हममें से अधिकतर लड़कियां रुईदार छोटी जाकट और पश्चिमी ढंग के काले या नीले रंग के लम्बे पैजामे पहनती थीं। यद्यपि यह विशेष आकर्षक न था। पर जहां तक मेरी जानकारी है यह काम चलाऊ पहनावा पहले पहल १९४७ की सर्दियों में शंघाई में प्रचलित हुआ जहां शुरू में इस पहनावे को सैन्ट-जौन्स यूनिवर्सिटी की लड़कियों ने अपनाया। ये पैजामे घटिया गर्म ऊन के बने होते थे। कुछ लड़कियों ने तो अपने पैजामे अमरीकी सेना के कम्बलों में से बना लिये थे। मैंने किसी को यह भी टीका करते सुना था कि जाड़े के मौसम में पेता में लड़के और लड़कियों के एक दूसरे के प्रति व्यवहार व आचरण में एक विचित्र परिवर्तन आ जाया करता था। क्रूर सर्दी से बचने के लिए लड़के चोगा तो लड़कियां पैंट पहन लेती थीं। जैसा कि मैं कह चुकी हूं पीकिंग में कड़ाके की

ठंड पड़ती है। ऐसी ठंड कि मुझे अपने भेड़ की खाल के अस्तर वाले जूतों के अन्दर ऊन के मोजे क्लास रूम में पहनने पड़ते थे। और फिर क्लास रूम में तो बाहर से कुछ कम ही सर्दी होती थी।

हम फर पहनने का आनन्द ले सकते थे क्योंकि उत्तर मंचूरिया और साइबेरिया से पीकिंग आने वाली सुन्दर फर सस्ती होती थी। यद्यपि यह इतनी सस्ती नहीं थी पर मेरे उन मित्रों में जिन्हें फर का कोट पहनने का सौभाग्य प्राप्त था भेड़, बिल्ली और खरगोश की फर बहुत प्रचलित थी। पेता के अधिकांश छात्र सूती कपड़ों के अलावा और कुछ नहीं पहनते थे। वे बसन्त और गर्मियों में पतले सूत के कपड़े और शिशिर और शरद ऋतु में मोटे रुईदार सूती कपड़े पहनते थे।

छात्र छोटे बाल रखना पसन्द करते थे और पश्चिमी ढंग से उन्हें कंघा करते थे। लेकिन हजामत बनवाने के एक या दो दिन तक ही उन्हें अच्छी तरह रखते थे। कुछ लड़के अपने बालों को इतना छोटा कटवाते थे कि उनका प्रत्येक बाल खड़ा रहता था। यद्यपि बहुत से देशवासी अपने बालों को एकदम साफ कराना पसन्द करते थे और गर्मियों के दिनों में वे अपने सिर मुंड़वा लेते थे पर इस तरह के मुंडे हुए सिर पेता में इतने अस्वाभाविक थे कि यदि कोई अपना सिर मुड़ा लेता तो वह सभी के लिये आकर्षण का केन्द्र बन जाता था।

पेता के युवक श्रृंगार के लिए किसी अलंकार की आवश्यकता नहीं समझते थे। उनमें से कुछ लोग सोने की अंगूठी पहनते अवश्य थे परन्तु श्रृंगार की दृष्टि से नहीं। कोई भी लड़का अपनी सामने की जेब में सफेद रूमाल तक भी नहीं रखता था क्योंकि ऐसा करने से उसका आचरण चर्चा का विषय बन जाता था। मैंने सुना था कि कुछ स्कूलों में छात्र छिपकर क्रीम या सैन्ट का प्रयोग करते थे। परन्तु पेता में ऐसे लड़के नहीं थे। यहां इस प्रकार का व्यवहार सहपाठी टेढ़ी नजर से देखते और इसे संभाव्य यौन-विकृति का प्रदर्शक समझते।

लेकिन लड़कियां श्रृंगार किए बिना नहीं रह पाती थीं। हममें से

अधिकांश लड़कियां घुंघराले बाल रखती थीं या अपने बालों को छोटा और सीधा कटा लेती थीं। पर कुछ किशोर छात्रायें दो चोटियां रखती थीं। कुछ अपनी चोटियों में रिबन बांधती थीं या प्लास्टिक के रंगदार क्लिप बालों में लगाती थीं। घुंघराले बाल होने पर वे ऊपर फीते बांध लेती थीं। उनकी गांठ सामने होती या यदि सिर ढका होता तो पीछे गरदन पर लटकते बालों में ही फीते बांध लेतीं।

जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूं, सौंदर्य प्रसाधनों का प्रयोग किया जाय अथवा नहीं यह एक बड़ी समस्या थी। अधिकांश लड़कियां हृदय से "सौंदर्य" प्रेमी थीं और अपेक्षा करती थीं कि लोग उनके रूप की प्रशंसा और सराहना करें। हमें मालूम था कि लड़के अपने कमरों में हमारे बारे में बातें करते थे और उन लड़कियों की सराहना करते थे जो रोजाना पाउडर और लिपस्टिक लगाती थीं। पर जब कोई लड़की पाउडर और लिपस्टिक लगाकर निकलती तो पता के लड़के उसकी उपेक्षा करते। यहां तक कि उसके बनाव श्रृंगार के प्रति अपनी अरुचि उग्र रूप से व्यक्त करते थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि सादा रहने वाली लड़कियां अरुचि के इस प्रदर्शन को प्रोत्साहित करती थीं।

नैसर्गिक सौन्दर्य को तो सभी पसन्द करते थे। इसी कारण हम अपने कमरों में एक दूसरे से एकांत में कहा करतीं "लाली थोड़ी ज्यादा हो तो स्पष्ट दिखती है और थोड़ी हल्की हो तो लाली लगाना या न लगाना बराबर है।" अपनी भौहों को आकृति और स्वच्छता प्रदान करने के लिए हम उसके इधर उधर बिखरे बालों को नोच लिया करती थीं। पर भौहों को काटने के लिए समय और होशियारी की इतनी आवश्यकता होती और कटी हुई भौहें इतनी आसानी से पहचानी जा सकती थीं कि हममें से कोई इसका साहस ही नहीं करती थीं। इन्ही कारणों से हममें से किसी ने अपने नाखूनों के रंगने की भी कोशिश नहीं की।

आभूषणों की कोई समस्या ही न थी। कल्पना कीजिये कि आप फैशन की चीजें बनाने वाले हैं। क्या नकली मोतियों की माला नीले रंग की सूती गाउन पर ठीक लगेगी? या गहरे रंग की रुईदार सूती गाउन पर यह

ाचेंगी ? मोटी ऊन की रुईदार छोटी जाकिट के साथ क्या नकली हीरों के ार अच्छे लगेंगें ? क्या छोटे सीधे बाल के साथ या दो मोटी चोटियों के ाथ बालियां अच्छी लगेंगी ? इन्हीं कारण से जेवर बहुत कम पहने जाते ं । कभी कभी गहरे रंग के स्वेटर पर लेस का काम या ऊंट की हड्डियों की ढ़ाई सजावट का काम दे देती थी । अंगठी का रिवाज नहीं था । असली ीरे की अंगूठी उनके लिए आकाश कुसुम की तरह अलभ्य थी ।

स्वतंत्रता से पहले पेता-छात्रों को किसी दर्शक चित्रकार ने इसी तरह चित्रित किया होता । परन्तु अब उसे अपने ब्रुस साफ करके, तथा रंग उठा र तस्वीर को एक ओर रख देना पड़ता । दूसरा कागज निकाल कर पहले से ो नम्बर बड़ा ब्रुस लेना पड़ता । स्याही की प्याली में काफी काला रंग बना र उसे पानी डालकर पतला करके मटियाला बनाना होता । तब कहीं वह ये युग का चित्र खींच सकता था ।

स्वतंत्रता के बाद जो खास परिवर्तन दिखाई पड़ता था वह था यूनिर्वासिटी ; इलाके में खाकी रंग की वर्दियों में क्रमशः वृद्धि । हमें स्वतंत्र करने के लिए ार्टी के जो कार्यकर्ता आये उनकी खाकी वर्दी थी । जो छात्र मुक्त क्षेत्रों में ाग गये थे वे जब विजय के बाद लौटे तो उसी नई वर्दी में । उनमें से कुछ ोगों ने इस बीच में पिस्तौल भी ले ली थी जो उसके हैंडिल में लगे हुए ाल कपड़े के सहारे लटकती थी या पिस्तौल रखने के बैग में नीचे लटकती हती थी । इन वन्दूकों से लड़के हम लड़कियों से अधिक प्रभावित हुए । लौटे ए छात्रों की वर्दी जितनी अधिक गन्दी और सिलवट पड़ी होती वह अपने ापको उतना ही बड़ा वीर समझता था । लेकिन मैं नहीं समझती कि ास्तव में यह विचार कम्युनिस्ट दर्शन का एक अंग था ।

चूंकि फरवरी के महीने में भी काफी सर्दी रहती थी अतः रुईदार सूती ्री वर्दियां ही जाड़े की पोशाक थी । सरसरी निगाह से देखने पर ये तथाकथित लेनिन यूनीफोर्म रह रह कर मुझे रूढ़िवादी परिवारों के बच्चों को पहिनाई जाने वाली पोशाकों का ध्यान दिलाती थीं । फर्क इतना होता कि बच्चों की भारी ओढ़नियों के रंग अक्सर काफी चमकीले होते थे । इन वर्दियों को शरीर के अनुरूप काट छांट कर नहीं बनाया जाता था । दुबला-पतला आदमी सूट

को शरीर के चारों ओर लपेट लेता और फर्श पर अधपिचके बास्केट वाल की भांति घूमने लगता। लेकिन वह अन्दर के कपड़ों से सधा रहना और सीधा-साधा काम-काजी जैसा लगता। हममें से अनेक लोगों ने इस फैशन को अपना कर गद्देदार लेनिन सूट पहनना शुरू कर दिया था। इस पोशाक की लोकप्रियता का एक यह भी कारण था कि यह सस्ती और टिकाऊ थी। दूसरे कारण आप स्वयं कल्पना कर सकते हैं।

अनेक लोग इन पोशाकों को स्वतंत्रता के बाद प्राथमिक उत्साह में पहनने लगे थे। बाद में जब यह घोषणा हुई कि पुराने अनुदानों का स्थान अब नई जन शिक्षा सहायता ले लेगी तो जो अभी तक इस पोशाक को नहीं पहनते थे वे लड़के अपने पश्चिमी ढंग के वस्त्रों को तथा लड़कियां अपनी चमकदार पोशाकों को अलग रख कर इस पोशाक को अपनाने लगे जिससे उनके आवेदन पत्र आसानी से स्वीकर हो सकें। दूसरे लोगों को यह दिखाने के लिए कि हम "निश्चयात्मक" रूप से बदल रहे हैं कई लोग यह पोशाक पहनने लगे। "अपरिवर्तनशील" रहना बहुत कुछ उतना ही बुरा था जितना कि "प्रतिक्रियावादी" कहलाना। इसके अलावा "नई जिन्दगी" के अनुरूप अपने आपको ढालने में किसने कितनी प्रगति की है इस सम्बन्ध में आलोचना करने के लिए मीटिंग प्रारम्भ होने के बाद से अपनी ओर ध्यान आकर्षित न हो, इसलिए इस पोशाक को या साधारणतम कपड़े पहनना हमारा स्वाभाविक क्रम हो गया।

मजाक करते हुए किसी ने कह दिया "सामंतवाद की इस पूंछ को काट फेंको।" और लड़कियों ने फौरन अपनी चोटियां कटवाकर सीधे कटे हुये बाल रख लिये जो सिर्फ़ कानों तक आते थे। जिन छात्राओं के बाल स्थायी रूप से घुंघराले थे उन्होंने भी अपने बाल कटवाकर छोटे कर लिए। अब उनके बाल गरदन पर उन नटखट छोटी लड़कियों के समान उलझे रहते थे जो उन्हें न तो साफ करतीं और न कंघी करने देती हों। अपने स्वचेतन आत्म-गौरव से जब वे लड़कियां कक्षाओं में बैठतीं तो उनके गम्भीर चेहरों और सूती भारी रुईदार कपड़े पर ये बच्चों जैसे बाल बेमेल लगते।

पहले से अब चेहरों पर पाउडर और लाली बहुत कम देखने को मिलती

थी। पर जो छात्राएं अपने चेहरे के प्राकृतिक रंग पर लाली लगाने की आदी हो चुकी थीं वे छिप कर अब भी उसी प्रकार लगा लेती थीं। कम से कम वे अपनी अंतरंग सहेलियों पर इतना विश्वास तो करती ही थीं कि वे उनके सौन्दर्य प्रसाधनों के प्रयोग को किसी पर प्रकट न होने देंगी। हम में से अधिकांश लड़कियां अब भी सर्दियों में चमड़ी फटने से बचाने के लिए ठंडी क्रीम का प्रयोग करती थीं। परन्तु जहां तक होता अमरीकी क्रीम का हम प्रयोग नहीं करती थीं।

पतन के प्रतीक के रूप में सौन्दर्य प्रसाधनों के प्रयोग के विरुद्ध अघो-षित निषेध उन लड़के और लड़कियों पर से उठा लिया गया था जो परेड और आम छुट्टियों के अवसर पर 'यांग-को' नृत्य करने के लिए तत्पर रहते थे। स्टेज या नृत्यशाला में भारी बनाव श्रृंगार किए हुए अभिनेता या अभिनेता की तरह इन कलाकारों को तड़क भड़क के कपड़े पहनने और अपने चेहरों पर लाल रंग लगाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था। अपने चेहरों पर अधिक रंग लगाने में पुरुष स्त्रियों का मुकाबला करते थे। और ओठों पर लाली और आंखों में सुरमा लगा कर वे एक अव्यक्त सन्तोष पाते थे। निस्सं-देह यह कलात्मक बनने का प्रयास था लेकिन क्या इसके पहले यांग-को (लोक-नृत्य) मेहनतकश किसानों का नृत्य नहीं था! क्या इस नृत्य के लिए सज-धज उस समय 'बुर्जुआ' नहीं समझी जाती थी? या इसके यह अर्थ थे कि पाउडर लाली और भड़कीले कपड़े मेहनतकश जनता को भी प्रिय रहे होंगे? जब मैं इस रंगीन दृश्य को देखती तो मुझे कभी-कभी आश्चर्य होता कि क्या वे विद्यार्थी. जो जन-साधारण के साथ कदम मिलाने और उनसे सीखने की कोशिश कर रहे थे, अभी तक उन बुर्जुआ विचारों को लेकर नहीं चल रहे थे जिसे उन्हें बाद में अपने जीवन से निकाल देना होगा।

मेरी अभिन्न सहेलियों में से एक सहेली जिसे सुन्दर वस्तुएं बहुत पसन्द थीं गुलाबी फूलों वाला कमखाब रेशम का एक टुकड़ा खरीद लाई। यह उस दुकान से लिया गया था जो अपना व्यापार बन्द करने की तैयारी में सस्ते दामों में सब चीजें बेच रही थी। उस कपड़े को वह अपने कमरे में ले गई और अपने शरीर के चारों ओर लपेट कर उसे चारों ओर से नापने तौलने लगी इस समय वह अपने आप से बहुत प्रसन्न थी। वह मुझ से पूछ ही रही थी कि

वह उसमें से लम्बी बाहों की पोशाक बनाये या छोटी की कि उसी समय उसका युवक मित्र आ गया। वह काफी समय से युवक-संघ का सदस्य था और हम सब उसे ईमानदार, योग्य और सच्चा छात्र मानती थीं। पार्टी मेम्बर उसका विशेष सम्मान् करते थे क्योंकि उसके विचार "ठीक" थे और संगठन के प्रति उसकी भक्ति अटूट थी।

उसने उस कपड़े की ओर देखा और उसी क्षण यह भी समझ लिया कि उसकी मित्र को उस कपड़े पर अभिमान है। अपने चेहरे पर परेशानी का कोई चिन्ह प्रकट किये बिना उस लड़की ने मुस्कराते हुये अपने मित्र से पूछा—

"आपकी राय में यह कपड़ा कैसा है? क्या में इसमें अच्छी नहीं लगती?"

उसने उस कपड़े की ओर घूर कर देखा। रेशमी आभा और सुन्दर कढ़ावट युक्त वह कपड़ा मुलायम और चिकना था। फिर उसने उस लड़की की ओर निगाह उठाई और उसका सुन्दर गोल चेहरा, वृत्ताकर ठोढ़ी, सुन्दर काली काली आंखों के ऊपर सूक्ष्म भव्यता से धनुष की तरह बनी हुई उसकी लम्बी लम्बी भोहें, उसकी लालित सुघड़ नाक, तथा उसके लिपिस्टिक के बिना ही हल्के हल्के लाल होठ देखे। हममें से किसी से यह छपा न था कि वह बहुत दिनों से उस लड़की से प्रेम करता था।

अपने मित्र की खामोशी को उसने गलती से तिरस्कारपूर्ण समझा और अपने शरीर से लिपटे हुये उस कपड़े को खोलकर पटक दिया। मैं झपट कर पुनः उस कपड़े को उसके शरीर के सामने लगाकर खड़ी हो गई और उसके मित्र पर बरस पड़ी।

"यह कैसा है, बोलो, तुम्हें कैसा लगता है?"

अब तक में उसकी परेशानी समझ चुकी थी परन्तु सही उत्तर देने में उसकी आनाकानी मुझे अच्छी न लगी। मैं उसके पीछे पड़ी रही, "बोलो, तुम्हें वास्तव में कैसा लगता है?"

वह अपनी किताबों का थैला मेज पर रख कर बैठ गया और धीरे धीरे बड़बड़ाया। "इन बातों की चिन्ता करने के लिए समय किस को है। तुम लड़कियां...... ठीक है......" वह अभी तक निश्चय नहीं कर पाया था कि क्या कहे। उसने अपनी घड़ी की ओर देखा... यदि मैं उससे समय पूछ बैठती तो मुझे विश्वास है कि उसे फिर घड़ी देखनी पड़ती। फिर वह मेज पर पड़ी हुई किताब के पन्ने उलटने लगा। यह हमारा शब्द कोष था और मुझे विश्वास है कि उसने उसमें से एक शब्द भी नहीं देखा। "तुम स्त्रियों को" उसने कहा "सचमुच वस्त्रों की चिन्ता करने के लिए इतना समय कहां से मिल जाता है।" उसने अपनी मित्र की ओर देखा और फिर कमखाब रेशम की ओर आंखें फेर लीं।

असन्तोष होते हुए भी मुझे एकाएक उसके प्रति सहानुभूति हो गई। वह अपने मित्र के शरीर पर इतना अच्छा लगने वाले कपड़े की अपने हृदय से प्रशंसा करना चाहता था। पर उसी समय उसने यह भी अनुभव किया कि मित्र के बुर्जुआ विचारों को विनष्ट करना उसका तात्कालिक कर्तव्य था। यह विचार वह अपने अन्दर मंडराते अनुभव कर रहा था। उसने खड़े होकर ठंडे पानी का गिलास भर कर एक घूंट पी और फिर बैठ कर बोला "आपको यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि हम बुर्जुवा लोग हैं जिन्हें सर्वहारा क्रांति में हिस्सा लेने को कहा गया है।"

मैं यह जानती थी कि वह क्या कहने जा रहा था अतः बात को संक्षिप्त करते हुए मैंने कहा "इसलिए हमें अपने बुर्जुआ विचारों को छोड़ देना चाहिए।" मुझे भी नारे रटे हुए थे।

उसने मेरी ओर तीखी निगाह से देखा जैसे वह बहस करना चाहता हो। मैं बहस नहीं करना चाहती थी पर जल्दी से पहल करने से मैं अपने आपको न रोक सकी। "आपको मेरी ओर इस तरह नहीं देखना चाहिये। मैं वास्तव में इस संबंध में आपके सिद्धान्त से पूरी तरह सहमत नहीं हो सकती। अवश्य ही, बुर्जुआ लोग सौन्दर्य उपासक हैं और सुन्दर वस्त्र पहनना चाहते हैं पर क्या आप कह सकते हैं कि मजदूर और किसान वास्तव में सौन्दर्य की चिन्ता नहीं करते और वे अच्छे वस्त्र नहीं पहनना चाहते ? मुझे लगता है कि वास्तव में

मानवता की प्रगति में जितना योग दूसरों ने दिया है उतना ही बुर्जुआ लोगों ने भी दिया हैं। विशेषतया आध्यात्मिक और कलात्मक क्षेत्र में उन्होंने सर्वहारा वर्ग से अधिक योगदान दिया है। क्या अधिकांश वैज्ञानिक, दार्शनिक, संगीतज्ञ, कलाकार और समाजशास्त्री बुर्जुआ वर्ग से नहीं निकले ? उनकी सत्य और सुन्दर की खोज को भी क्या बुर्जुआ विचार कहा जायगा।"

"जब तक मैं अपनी बात समाप्त न कर लूं आप प्रतीक्षा करें," व्यग्रता से उसने मेरी बात काटते हुये कुछ क्रोध में कहा, "आपको मालूम होना चाहिए कि आपके विचार बुनियादी तौर पर—"

"बुनियादी तौर पर" के बाद वह मुझ पर फिकरा कसने की कोशिश करेगा या मुझे प्रतिक्रियावादी घोषित करेगा। यदि एक बार मैंने यह चुपचाप स्वीकार कर लिया तो उसका प्रतिकार करना मेरे लिये बाद में बड़ा कठिन होगा। क्योंकि मैं इस तरह उसके चक्कर में नहीं पड़ना चाहती थी इसलिए मैं जल्दी से बोल पड़ी "पर मैं आपसे बस एक बात पूछना चाहती हूं कि क्या दार्शनिकों, वैज्ञानिकों तथा कलाकारों की गवेषणा को भी बुर्जुआ विचार कहा जायगा? क्या उन्हें भी पूरी तरह से समाप्त कर देना चाहिए ?"

अब तक मेरी सहेली उस कपड़े को अपने बिस्तर पर छोड़कर खड़ी होगई थी। अपने मित्र की कुर्सी के पीछे खड़ी होकर उसने उसके कंधों को थपथपाते हुए कहा। "आप लोग तो गम्भीर विषयों पर पहुंच गये। कक्षा में जाने का समय हो गया है। यह सब बड़ी और महत्वपूर्ण बातें बाद में करेंगे, जब हमारे पास ज्यादा समय होगा, क्यों न ?" कहकर उसने अपने मित्र की ओर स्नेह भरी दृष्टि से देखा।

सहेली की स्नेहमयी मुस्कान से उत्साहित होकर मैंने पुनः कहा, "सामाजिक संघर्ष के विवाद में घसीटने के बजाय अगर आपने यह कहा होता कि हमें इस तरह के भौतिक प्रलोभनों से बचना चाहिए, तो मैं आप से बहस न करती।"

अब वह मेरी ओर मुड़कर बोली, "तुम भी इस बहस को बन्द करो, इसे फिर किसी दिन के लिए रहने दो। मैं तुम्हारे तर्क के महत्व को स्वीकार करती हूं पर इस समय हम किसी और विषय पर बातें करें।"

तब तक मैं भी समझौते के लिए तैयार थी। अगर मैं बहस करती रहती तो हम दोनों को क्रोध आ जाता और लड़ाई की नौबत भी आ सकती थी। कुछ भी हो किसी तरह के विवाद से समझौते पर पहुंचना सम्भव न था क्योंकि वह कम्युनिस्टों के हर बात के लिए पहले ही से निश्चित दृष्टिकोण को मानने वाला था।

वह रेशमी कपडे पर एक तीखी नजर डालकर उठ खड़ा हुआ। के लिए मुझे ऐसा लगा कि वह अपनी मानसिक उलझन को शान्त करने के लिए उस वस्त्र को लेकर चीर-चीर कर देगा। यदि उसने ऐसा किया होता तो उसे दु:ख हुआ होता क्योंकि बाद में उसकी मित्र उसी सुन्दर रेशम से बनी हुई पोशाक पहन कर विशेष विदेशी अतिथियों के सम्मान में आयोजित समारोह में कई बार उसके साथ गई थी।

कुछ महीनों बाद पेकिंग में विदेशों से आने वाले अतिथियों का तांता-सा लग गया। ये अतिथि अधिकांश सोवियत रूस से व थोड़े बहुत पूर्वी यूरोप के जनवादी देशों से आ रहे थे। ये सम्मानित अतिथि और सलाहकार दावतों में सम्मिलित होते, यूनिवर्सिटी में भाषण देते और फोटो खिचवाते। उनके इन कार्य-क्रमों में छात्रों को अधिक से अधिक संख्या में जाने के लिए प्रेरित किया जाता था। पहले से ही पार्टी और युवक संघ से सूचना आ जाती थी कि छात्रों को अच्छे वस्त्रों में इन लोगों के सामने आना चाहिए, विशेषतया: उन छात्र और छात्राओं को जो कैमरा के सम्भावित दायरे में आते हैं तथा जिन्हें समारोह में हिस्सा लेना होता है, पुष्प भेंट करने पड़ते हैं और झंडे उठाने पड़ते हैं। ऐसे अवसरों पर हमारे सम्मानित सोवियत अतिथि हमें देख-कर मुस्कराते। मेरे विचार से इसमें भी सामन्त युग की रुचि का आभास मिलता था।

जब विद्यार्थी जीवन का चित्र बनाने के लिए पेता में सोवियत फिल्म

उद्योग का एक दल आया, जो मुक्त चीन पर चल-चित्र बनाने में हमारे राजकीय सिनेमा स्टुडिओ की सहायता कर रहा था, तो हमारे सक्रिय सदस्यों द्वारा हमें विशेष आदेश दिये गये कि हम लोग जैसा कि अभी रहते थे उससे अधिक साफ-सुथरे रहें। ऐसा भी कहा गया कि थोड़ी अधिक प्रफुल्लता भी अनुचित न होगी। जब सोवियत दल ने हमें देखा तो वे थोड़े निराश हुए पर उनको तो हमारी "लाज" रखनी थी। जिन कैमरों को वे अपने साथ लाये थे उन्हें स्थित किया गया और विद्यार्थियों के सामूहिक जीवन के कुछ दश्य लिये गये। विशेष दृश्यों के लिए उन्होंने अच्छी से अच्छी पोशाक में सुन्दरतम लड़कियों को चुन लिया। हमारा इस तरह विशेष ध्यान रखे जाने के कारण हम कुछ गर्वित अनुभव कर रहे थे, तथा साथ ही महीनों से वन्द रखे अपने चमकीले कपड़े पहनने का पुनः अवसर मिलने के कारण विशेष प्रसन्न भी।

१९५० की गर्मियों में हमें चुन-शान पार्क में संगीत भवन के सामने विश्व-शांति के पक्ष में होने वाली आम-सभा में सम्मिलित होने के आदेश मिले। मीटिंग होने के एक दिन पहले वहां सुन्दर वस्त्रों में जाने के लिए आदेश पढ़कर सुनाया गया। इस पर मैंने एक सुपरिचित युवक मित्र से कहा "हूं! मेरा ख्याल है कि वहां पर बहुत से विदेशी अतिथि आयेंगे जो हमारे चित्रात्मक चानी वस्त्रों को देखना पसन्द करेंगे।"

उसने प्रच्छन्न व्यंग छिपे रूखेपन से उत्तर दिया और वह यह भी जानता था कि मैं उस व्यंग को समझ जाऊंगी। "क्रान्ति का लक्ष्य बुर्जुवा वर्ग को समाप्त कर जनता के जीवन स्तर को ऊंचा करना था। हमें स्वतंत्रता मिले एक वर्ष से ऊपर हो गया। हमें विश्व को दिखलाना चाहिए कि अब हम पहले से अच्छे वस्त्र पहनते हैं। इसके अलावा यह निश्चित है कि वहां चल चित्र खींचने के कैमरे भी होगें। क्या आप नहीं जानती कि इन चित्रों को जन वादी देशों में और उन देशों में दिखाया जायगा जो अभी मुक्त होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं?"

मेरे इस विनोदप्रिय और साहसी मित्र के शब्दों से मुझे कुछ और भी बोध हुआ। स्कूल में 'निर्माण-रत सोवियत यूनियन', 'सोवियत नारी,,

'ओौजेनिक' और अन्य सोवियत सचित्र पत्रिकायें बड़ी मात्रा में हमें यह दिखलाने के लिये दी जा रही थीं कि सोवियत-रूस में जन साधारण को कितना अच्छा खाने पहनने को मिलता था। अब मुझे शंका हुई कि क्या सोवियत जीवन के यह चित्र वास्तविक रूप से सर्वसाधारण के थे या उन्हें भी ऐसे ही औपचारिक अवसरों पर लिया गया था जिनके लिये हमें सुन्दर वस्त्र पहनने को कहा गया था।

सोवियत पत्रिकाओं, दर्शकों और सलाहकारों के साथ ही पीकिंग में सोवियत वस्त्र विकने के लिये आ । हमने इन सभी रूसी कामरेडों को नैवीब्लू और काले रंग का फैल्ट हैट पहने देखा था। इन लोगों ने अपने लिये हांगकांग से आने वाले ऊनी कपड़े और अपनी पत्नियों के लिये रेशमी कढ़े हुए चीनी कपड़े और किमखाब खरीदने के लिये दूकानों पर भीड़ लगा दी थी । अपने पड़ोसी रूस से आये नये माल को देखने के लिये हम स्वयं भी दुकानों पर गये। उन कपड़ों के डिजायनों के रंग इतने अच्छे नहीं थे। उदाहरण के लिये, सुनहरे रंग की बड़ी बड़ी धारियों को गहरे बैंगनी रंग की छोटी छोटी धारियों से मिलाकर उन्हें गहरे हरे रंग की पार्श्व भूमि पर छापा जा सकता था। वे हमें बिल्कुल बुर्जुवा ढंग के प्रतीत हुए जिनमें न तो गाम्भीर्य था और न प्रफुल्लता की झलक। वे सौन्दर्यरहित और कुरुचि के द्योतक थे। सड़कों पर हमने रूसी इन्जीनियरों और टैकनीकल सलाहकारों को पश्चिमी ढंग की पोशाक पहने देखा पर हमें वे भी बिल्कुल बुर्जुवा लगते थे । शायद सोवियत रूस ने पुराने के स्थान पर एक नया बुर्जुवा वर्ग ही निर्माण किया है। पर परम्परागत वस्त्रों को पहने हुए इन नये-नये बुद्धिजीवी वर्ग में विश्वास और सरलता का अभाव था। जैसे जैसे वे अपने पदों के आदी होते जायेंगे, वे इन बातों को शायद ग्रहण कर लेंगे।

कुछ लड़कियों ने नये वस्त्र अवश्य खरीदे । परन्तु हम में से अधिकांश उन्हें इसलिये नहीं खरीद सके कि एक तो उनकी कीमतें ज्यादा थीं और दूसरे वे सुरुचिपूर्ण नहीं थे । मुझे कभी कभी ऐसा लगता कि मेरी यह प्रतिक्रिया मेरी अपनी पूर्व मान्यताओं की छाया तो नहीं है । एक बार थोड़ा मजाक करने की इच्छा से मैंने अपने एक कम्युनिस्ट मित्र से पूछा कि उसके विचार में रूसी-कपड़े से बने हुए वस्त्र क्या सुन्दर लगते थे ? उसने सावधानी से सोच विचार कर कहा, "पर आपको यह तो मानना पड़ेगा कि ये टिकाऊ हैं।"

(७)

चरवाहे

अगर आप स्वतंत्रता से पूर्व जबकि मैं द्वितीय वर्ष की छात्रा थी मेरे साथ तीसरे भवन के किसी एक छात्रावास में रहने वाले किसी युवक से मिलने आते तो अवकाश होने पर हम यूनिवर्सिटी के इलाके के चारों ओर साइकिलों पर घूम सकते थे। उस समय आपको पेता में आवश्यकतानुसार नये भवन बनते नजर आते। यद्यपि यह भवन काफी अव्यवस्थित ढंग से बन रहे थे। यूनिवर्सिटी के अन्तर्गत आर्टस, ला, साइन्स इन्जीनियरिंग, मेडिकल और एग्रीकल्चर कालेजों के कक्ष पांच अहातों में फैले हुए थे। इन कालेजों के छात्रावास, यूनिवर्सिटी के इलाके में ही दूसरी जगहों पर बने थे। प्रत्येक छात्रावास की अपनी अलग विशेषता थी, यहां तक कि उनको बाहर से देखने मात्र से उनमें रहने वालों का आभास मिल सकता था। मेडिकल कालेज के छात्रों के कमरे साफ और पूतवासक थे। इंजीनियरिंग के विद्यार्थियों के आवास एक सीध में, सादे और एक जैसे बने थे। उपनगर में होने के कारण एग्रीकल्चर कालेज को हम नहीं देख सकते थे पर उसके छात्रावास काफी खुले, हवादार और शान्त थे।

ग्रेजुएट छात्र पत्थर के बने पुष्प मार्ग पर बने हुए शान्त और एकान्त छोटे से छात्रावास में रहते थे। ह्यान-वू द्वार से अन्दर चौथे और पांचवें भवनों में अधिकतर नये छात्र रहते थे। यह उचित ही था कि इन भवनों में रहने वाले छात्रों की किसी तरह की कोई विशेषता न थी। पश्चिमी क्षेत्र में साइंस के छात्र रहते थे। उनके कमरे भी छात्रों से भरे थे। दर्जनों लम्बी कतारों में बने ये कमरे अणु की रूपरेखा समझाने के लिये खींची गई लम्बी रेखाओं की तरह प्रतीत होते थे। ये कमरे मुझे साइन्स के फारमूलों की तरह नीरव तथा शुष्क लगते थे क्योंकि मैं तो विज्ञान की इन बारीकियों की सहज विरोधी आर्टस् की एक छात्रा थी।

तीसरा भवन समाजविज्ञान और कला के छात्रों का मुख्य केन्द्र है। इन्जीनियरिंग, एग्रीकल्चर और मेडिकल कालेज के जिन छात्रावासों का मैं

पहले उल्लेख कर चुकी हूँ वे सब नये ढंग से बने थे। तीसरे भवन की इमारतें पुराने यूरोपीय ढंग पर बीसियों वर्ष पूर्व बनी थीं। पुराने यूरोपीय ढंग के बने होने पर भी वे चांग-चा-तुंग की कहावत 'चीनी ज्ञान सारग्राही तथा पश्चिमी ज्ञान व्यवहारिक है' को चरितार्थ करते थे। यद्यपि तीसरा भवन बहुत बड़ा नहीं था पर वह दस हिस्सों में बँटा था : कांग भवन, यी भवन, अल भवन, ह्यू भवन, बैल भवन, पूर्वी, पश्चिमी और पीछे के बंगले, ह्याओ भवन और सभा भवन। (सभा भवन का बड़ा कमरा पहले छात्रावास के रूप में प्रयोग किया जाता था। पर मेरे दो साल के अध्ययनकाल में यह आम सभा के लिये प्रयोग किया जाने लगा) इनमें से प्रत्येक भवन अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाये हुए था और इनमें व्यक्तिवाद ही चर्चा का विषय रहता था। इनमें आर्टस के छात्र रहते थे। "आधुनिक" ढंग के इन छात्रावासों में रहन-सहन दूसरी यूनिवर्सिटियों जैसा ही था पर तीसरे भवन के रहन-सहन पर पेता का परम्परागत प्रभाव स्पष्ट था।

पुरातन परम्परा का उत्तराधिकारी तीसरा भवन स्वयं भी पुरातन था। चिंग वंश के समय यह अनुवाद का राजकीय शिक्षा केन्द्र था। मुख्य द्वार के उत्तर में दीवार के एक छोर पर एक शिला दिखाई देती थी जिस पर राजकीय शिक्षा केन्द्र के परिचायक तीन अक्षर खुदे हुए थे। फाटक के सामने एक छोटी नदी बहती थी जिसे अधिकतर छात्र घृणा से "बड़ी खाई" कहते थे। इसके किनारों पर कूड़ा करकट और मैले का ढेर जमा हो गया था। पर थोड़े से पुराने ढीठ सरई के पेड़ अब भी पानी के ऊपर अपनी लम्बी शाखायें फैलाये हुए थे। तीसरे भवन के निरीक्षक का कार्यालय, मुख्यद्वार के ऊपर बना था। इस दुर्ग जैसे ऊँचे स्थान पर बैठ कर आप "खोखली दीवार से घिरे शहर का रहस्य" नाटक की संगीत ध्वनियों को गा सकते थे। इसमें चतुर च्यु-के-त्यांग शान्ति और उदासीन भाव से बैठा अपनी बीन बजा कर शत्रु सेना के लिये निमंत्रण दे रहा था। चहार दीवारी शहर की सुरक्षा के लिये व्यर्थ थी। परन्तु इस असाधारण निमंत्रण से शत्रु को यह संशय हो गया कि चहारदीवारी के अन्दर अवश्य ही सैनिक छुपे होंगे अतः वह वापस चला गया। तीसरे भवन के निरीक्षक के कार्यालय से "पुराने सैनिकों" को जो अब यूनिवर्सिटी के पहरेदार थे आपस में मजाक करते हुए देखा जा सकता था। वहां से जमीन को साफ करते हुए या अपने पैरों को फैला कर बैठे हुए द्वारपाल सहज ही

देखे जा सकते थे । द्वारपाल इस तरह बैठ कर पीकिंग के बदमाशों के सभी गुणों को दर्शाया करते थे ।

साइकिल पर चलते हुए आप पास पास बैठे इन आलसी लोगों के बीच से होशियारी से अपनी साइकिल निकाल सकते थे पर सामने से आ रही साइकिलें तो बड़ी कुशलता से कहीं न कहीं आपके रगड़ दे ही जाती थीं । फिर इस इलाके को छोड़ कर जाने वाली खच्चर गाड़ियों का भी आपको ध्यान रखना पड़ता । इसके बाद यदि आप तीसरे भवन में ही रहते होते तो साइकिल पर बैठे बैठे अपना एक हाथ दीवार की ओर झुकाये हुए, आप द्वारपाल के कमरे पर यह देखने के लिये रुकते कि बाहर जिन नामों की सूची लगी हुई है उनमें क्या आपके नाम भी कोई रजिस्टर्ड पत्र या शायद कोई मनीआर्डर है ? कोई न होने पर भी आप निराश न होते । आप ज़ोर से पैडल मार कर, साइकिल दौड़ा ले जाते और द्वारपाल का कमरा पीछे ही रह जाता ।

कोने के पास स्थित वाचनालय में रुक कर आप समाचार पत्रों को मुफ़्त पढ़ सकते थे । साइकिल एक जगह रख कर आप साधारण डाक के डिब्बे को यह देखने के लिये खोलेंगे कि आपके नाम कोई पत्र तो नहीं था । यदि जेब में पैसे होते तो इसके बाद आप वाचनालय से मिले हुए छात्र हितकारी विभाग से मूंगफली का एक छोटा पैकेट खरीद लेते और बड़ी मेज़ों में से किसी एक पर बैठ कर आप कोई समाचार पत्र पढ़ने के लिये उठा लेते । मूंगफली खत्म होने पर, दीवार पर टंगे हुए "बिकाऊ है" और "आवश्यकता है" शीर्षक से दिये विज्ञापनों को पढ़ने के लिये जा सकते थे । शायद यह पता लग सके कि जिन वस्तुओं को आप बेच सकते थे क्या उसे कोई खरीद सकता था—कोई खरीदार न मिलने पर भी आप निराश नहीं हुए । बाहर निकल आये और अपनी जीर्ण-शीर्ण साइकिल पर अपने छात्रावास की ओर चल पड़े । थोड़ी दूर पर साइकिलों की जाँच करने के लिये एक जगह थी, यदि आप इतने फुर्तीले थे कि साइकिल को अपने कमरे में ले जा सकते थे तो आप कमरे में दाखिल हो जाते और जब एक बार अपने कमरे में आ गये तो वहां आपको क्या मिलता ? यह इस बात पर निर्भर था कि आप किस तरह के कमरे में रहते थे ।

तीसरे भवन में ६० कमरों में से कुछ कमरे बहुत छोटे थे जिनमें केवल दो छात्र रह सकते थे । कुछ इतने बड़े थे जिनमें नौ छात्र तक रह सकते थे । अधिकतर कमरों में पांच या छः छात्र ही रहते थे । हर छात्र को एक लैम्प,

एक डेस्क, एक कुर्सी, एक तखत और किताबें रखने के लिये आधी रैक मिलती थी। पर मैं ऐसे छात्रों को भी जानती थी जिन्होंने मिले हुए फर्नीचर के अतिरिक्त और भी फर्नीचर इकट्ठा कर लिया था। जब तक कमरे में जगह होती, छात्रावास के अधिकारी इन बातों पर ध्यान नहीं देते थे। इनमें से कुछ कमरों में तो ऊँचे दर्जे का फर्नीचर जैसे कपड़े टांगनें की आलमारी आदि भी मिल जाता था जो इनके रखने वालों की उपयुक्त चीज़ें ढूंढ़ने और दूसरों की चीज़ें उड़ा लाने की कुशलता के प्रमाण थे।

कल्पना करें कि आप तीसरे भवन में रहने वाले छात्र थे। अपने कमरे में लगे हुए फर्नीचर के बीच से किसी तरह कमरे में दाखिल होने के लिये चू-के-ल्यांग की प्रसिद्ध भूलभुलैया* की तरह ही अद्भुत रूप से उलझा हुआ रास्ता खोज कर आप अपने कमरे में दाखिल हो पाते। तब आप अपनी किताबों का वस्ता अपने बिस्तरों पर डाल कर, यदि गर्मियों के दिन हों तो अपने जूते, मोजे, पैण्ट और कमीज को उतार कर नहाने के बर्तन को उठा कर गुसलखाने में चले जाते। वहां ठंडे पानी की फुहार के नीचे आप दूसरे नहाने वाले साथियों को अंग्रेजी या चीनी संगीत साथ साथ गाते हुए सुनते। कभी ये प्रचलित गाने होते तो कभी शास्त्रीय संगीत की कुछ तानें आपकी सभी चिन्ताओं को अपने साथ बहा ले जातीं।

यदि सर्दी के दिन होते तो आप नहाने के बर्तन को उठाने के बजाय अपनी कुर्सी उठाते और कमरे के बीचोंबीच अंगीठी के पास बैठ जाते जहां आप शिष्ट या अशिष्ट, पुरानी या नई, दुनिया के एक छोर से दूसरे छोर की, चीन से लेकर पीरू तक की कहानियां पढ़ा करते। यदि उस दिन अंगीठी अच्छी तरह नहीं दहक रही होती या उसमें गर्मी कम होती तो आप दिल से उसे कोसते हुए जूते खोल, बिस्तर में पड़ कर "शांति युद्ध" छेड़ देते अर्थात् अपने दूसरे साथियों की तरह आप भी सर्दी में कांपते रहते। या अपने साथी की बातों

---

*चू-के-ल्यांग की प्रसिद्ध भूलभुलैया का उल्लेख "तीन राज्यों का प्रेम" नामक कहानी में आता है। यह भूल-भुलैया पांच फुट ऊंची पत्थरों की कतारों से बनी हुई थी। जैसा कि कहानी में आता है जो दर्शक रास्ता नहीं जानते थे वे उस भूलभुलैया में अटक जाते या अपना रास्ता खो बैठते। तब वहां बिजली की कड़कड़ाहट, घोड़े की हिनहिनाहट और आगे बढ़ती हुई सेना की चिल्लाहट की तरह तरह की डरावनी आवाजें सुनाई देतीं।

को टालने के लिये आप अपना सिर तकिये में छिपा लेते ताकि शाम के खाने से पहले कुछ देर के लिये आंख लगा सके। शाम के खाने के लिये घंटी बजते ही आप अपने मित्रों सहित उठ कर भोजन के कमरे की ओर चल पड़ते। यही समय होता जबकि आप तीसरे भवन के अपने अन्य साथियों के साथ इकट्ठे बैठते थे।

शाम के खाने के बाद आपका समय खाली रहता। यदि जेब में पैसे होते तो आप सिनेमा देख सकते थे या 'ताकू' सुन सकते थे या ढोल बजाते हुए किसी गवैये का संगीत सुन सकते थे। और यदि जेब में पैसे न होते तो आप 'तुग अन' बाजार में शो केसों में लगी हुई चीज़ों को देखकर दिल बहला सकते थे, अंधेरा होने तक चौक में गेंद खेल सकते थे, स्वयं स्फुरित गणगीत में हिस्सा ले सकते थे या अपने किसी धनवान मित्र के यहां फोनोग्राफ रिकार्ड सुनने के लिए जा सकते थे। अथवा आप पढ़ सकते थे, स्कूल का काम कर सकते थे, गप्प-शप कर सकते थे, झगड़ा कर सकते थे या ब्रिज खेल सकते थे। अथवा जल्दी सो सकते थे। एक ही कमरे में एक दूसरे से बिना झगड़े आपको गम्भीर विद्यार्थी अध्ययन करता हुआ पढ़ने वाला पढ़ता हुआ, झगड़ालू झगड़ा करता हुआ, तथा हर बात के खिलाफ आवाज उठाने वाला आवाज उठाता हुआ, दिख सकता था। एक ही कमरे में तुंग और ली दार्शनिक काट पर विचार करते हुए माथा पच्ची कर सकते थे, चांग कू से अर्थशास्त्री एडम स्मिथ या मार्क्स की आलोचना कर सकता था और वांग बर्नार्ड शा की पुस्तकें पढ़ सकता था। और इन सब लोगों से अलग बैठ कर चिंग अपनी चीनी बांसुरी बजा सकता था।

एक दूसरे के प्रति सहिष्णुता, क्षमाशीलता और तटस्थ भाव के कारण आपस में एक विचित्र प्रकार का आदर भाव पैदा हो गया था यद्यपि वाह्य रूप से कोई किसी का सम्मान नहीं करता था।

यह मनमानी आधी रात तक निर्बाध चलती रहती थी। उस समय तक एक एक करके सभी लोग सो जाते थे और अन्त में तीसरे भवन में शान्ति छा जाती थी। कहीं दूर शहर के बीच एक फेरी वाले की आवाज़ ही सुनाई पड़ती थी अपने पोपो या भूरे रंग की पेस्ट्री को देर तक जगने वालों में बेचने के लिए उसकी प्रशंसा किया करता था।

पेता की छात्राओं के निवास—भूरेभवन—में अपने विस्तरों पर लेटी हुई हम दूर से आने वाले इस संगीतमय सुर को सुना करती थीं। इसके कमरे छोटे और

साफ सुथरे थे जिनमें प्रत्येक में दो बिस्तर, दो छोटी मेज़ें, दो कुर्सियां, और एक एकान्त गृह था। इसके कारण भूरा भवन, अपनी सुख-सुविधाओं के लिए प्रसिद्ध था। खिड़कियों में कांच और जालियां लगी हुई थीं। यह शान शौकत लड़कों को प्राप्त न थी। यहाँ कमरों को गर्म रखने की भी व्यवस्था थी जो अधिकांश लड़कियों के घरों में नहीं थी। बाहर बर्फ पड़ने पर रेडियेटर घुमाते ही अन्दर कमरे का वायुमण्डल सुहावना हो जाता। यदि आप ग्रेजुएट हों या भाग्यशाली छात्राओं में से हों तो आपको अलग कमरा भी मिल सकता है और आप उस छोटे से निजी राज्य की स्वामिनी हो सकती हैं।

हर दस कमरों के बीच एक स्नानागार था जिसे बराबर रगड़ रगड़ कर साफ रखा जाता था। हम लोगों को नहाने के लिए अक्सर काफी गर्म पानी मिल जाया करता था। हर मंजिल के लिए एक नौकरानी होती थी जो कमरों को साफ करती और पीने के लिए पानी उबालकर तैयार करती थी। यदि आप उसे कुछ मासिक इनाम दे देतीं तो वह आपकी छोटी मोटी आवश्यकताओं का भी ख्याल रख लेती जैसे मेजों को साफ करना, कपड़े धो देना या बाजार से जलपान के लिए कुछ सामान खरीद लाना इत्यादि।

निस्सन्देह ये सुविधाएं हमारी दृष्टि में आराम थे। १९४७ में टर्की से एक विदेशी छात्रा भूरे-भवन में आयी। यूनिवर्सिटी के अधिकारियों ने उसके लिए सबसे अच्छा कमरा छांट कर दिया जो दूसरे कमरों से बड़ा और खुला भी था। पर जब उस लड़की ने उस कमरे पर एक नज़र डाली तो नाक भौं सिकोड़ते हुए अंग्रेजी में कहा :

"अरे यह तो बहुत कुछ जेल जैसा है। पेता के प्रधान डा० ह्यू शी से कह दो कि मैं अपने देश वापिस जा रही हूं।"

साथ ही उस लड़की ने नौकरों को अपना सामान उठाने के लिए कहा और स्वयं होटल में जगह देखने के लिए चली गयी।

पूर्व काल में, मेरे ख्याल में एक तरह से भूरे भवन को "जेले" भी कहा जा सकता था। उस समय छात्राओं को उसमें बन्द रखा जाता था और उन पर शाह की लौंडियों की तरह पहरा रहता था। लेकिन १९४८ के बाद छात्रों के डीन से बहुत समय तक बातचीत करने पर हमने एक महान विजय प्राप्त कर ली। बहुत दिनों के बाद अन्त में लड़कियों का छात्रावास दूसरे लोगों के आने

जाने के लिए खोल दिया गया। वैसे "खोल देना" अक्सर जेलों को या चित्रशालाओं को या संग्रहालयों को खोलने के लिए आता है। लड़कियों के छात्रावास की चित्रशाला या संग्रहालय से तुलना हास्यास्पद होगी, इसलिए टर्की की छात्रा द्वारा हमारे छात्रावासों को दिए गए तिरस्कारपूर्ण विशेषण को स्वीकार करना ज्यादा बुद्धिमानी है।

लड़कियों के छात्रावास को खोल देने का साधारणतया यही अर्थ था कि प्रतिबन्ध कम कर दिए गए और युवक छात्रों और दर्शकों को मिलने के समय अन्दर आने की आज्ञा दे दी गई। यह ठीक है कि मिलने आने का समय निश्चित था। शाम को बत्तियां बन्द होने से सुबह घंटी बजने तक रात भर के लिए हमें अन्दर रहना पड़ता था।

यह कुछ आश्चर्यजनक था कि जिंगुआ या येन-चिंग की बजाय पेता में हमें सफलता मिली। जिंगुआ और येन-चिंग के अधिकारी अपने आपको पश्चिमी और आधुनिक कहने में गर्व का अनुभव करते थे। पर हम व्यक्तिवादी थे और हमें इसका अभिमान था। बाद में हमें पता लगा कि दर्शकों के लिए हमारे छात्रावासों ने आने की अधिक स्वतन्त्रता की हमारी मांग का भूमिगत कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं ने गुप्त रूप से समर्थन किया था। ये लोग हमारे छात्रावास को शरण लेने के लिए एक सुविधाजनक स्थान बनाना चाहते थे। उनके विचार से दूसरे कामरेडों से मिलने के लिए हमारा छात्रावास एक सुरक्षित स्थान था। जब भी पुलिस या सैनिक किसी कम्युनिस्ट आन्दोलनकर्ता के पीछे पड़ते तो वह भूरे भवन में आ कर शरण लेता था जहां वह सुरक्षित था।

छात्रावास के "खुल" जाने के बाद यदाकदा आने वाला व्यक्ति बरामदे में चक्कर काटता हुआ हर कमरे में कुछ लड़के लड़कियों को बैठा पाता, पर आस पास के दो कमरों में भी बातचीत का विषय बिलकुल भिन्न होता था। किसी गुट में गुप्त राजनैतिक कार्यों की चर्चा होती या किसी बात के खिलाफ हड़ताल कराने की अथवा नगर सरकार में काम करने वाले किसी असावधान मित्र से मिलने वाली सूचनाओं को भेजने की योजना बन रही होती तो दूसरा गुट हल्की फुल्की, मामूली गपशप कर रहा हो सकता था। कभी कभी गपशप करने वाला यह गुट मिट्टी के तेल के स्टोव पर गोश्त पकाता या करमकल्ला उबालता देखा जा सकता था। अक्सर वे सूरजमुखी फूल के बीज या मूंगफली चबाते होते। कभी कभी कोई छात्र और छात्रा साथ साथ बैठे हुए

चुपचाप पढ़ते या लिखते हुए मिलते। जब कोई ऐसे समय पहुंच जाता तो वह व्यग्र होकर लापरवाही से किन्तु क्षम्य अतिक्रमण करने वाले व्यक्ति की भांति तेजी से बाहर निकल जाता।

इस सब का यह अर्थ नहीं कि भूरे-भवन में मिली हुई स्वतन्त्रता ने व्यभिचार को प्रोत्साहित किया। इस नई स्वतन्त्रता से छा और छात्राओं को एक दूसरे से मिलने के अधिक अवसर अवश्य मिले इसलिए अनुचित आचरण के लिए भी अधिक अवसर मिले होंगे, ऐसा कहा जा सकता था। लेकिन पेता की लड़कियां राजनीति में प्रगतिशील होने पर भी आचरण में रूढ़िवादी थीं। ज्यादातर लड़कियां तो स्वप्न में भी अनुचित आचरण की कल्पना नहीं कर सकती थीं। जो अपवाद रही होंगी, वे भूरे-भवन के जेल बने रहने पर भी निष्कलंक ही रहतीं ऐसा कौन कह सकता था।

स्वतंत्रता मिलने के पहले भूरा-भवन बहुत कुछ एक बड़े होटल की तरह था। अन्तर यही था कि कुछ हालतों में यहां रहने पर किराया नहीं देना पड़ता था। इन कमरों में रहने वाली छात्राओं की बहनें और सहेलियां हमेशा यहां आ सकती थीं। और जब तक वह छात्रा जगह निकाल सकती, वे यहां रह सकती थीं। ऐसा अवसर सर्दियों और गर्मियों की छुट्टियों में ही विशेष तौर पर मिल सकता था क्योंकि उस समय काफी कमरे खाली रहते थे। स्वतंत्रता के बाद नियम कठोर कर दिये गये। कोई "खुफिया दलाल" हमारे यहां शरण न ले सके इसलिए पेता की कोई छात्रा या अन्य कोई जो कुछ दिन के लिए रहना चाहतीं, उन्हें मंजिल के विभाग अधिकारी से मिल कर प्रारम्भिक व्यवस्था करनी होती थी। उसे एक फार्म भरना पड़ता था तथा पहले से ही तैयार अपने सामाजिक स्तर और पिछले जीवन संबंधी कुछ प्रश्नों का उत्तर देना पड़ता था। अपने आवेदन के समर्थन में पर्याप्त कारण देने होते थे और अन्त में छात्रावास में पहले से ही रह रही दो छात्राओं से जमानत दिलानी पड़ती कि वह सरकार की गुप्त बातों का पता लगाने की कोशिश और चोरी नहीं करेगी।

फाटक पर खाने पीने की चीजें बेचने वालों की दुकानें हटाने के अतिरिक्त स्वतंत्रता के पहले वर्ष में छात्रावास की बाहरी टीप टाप में कोई अन्तर नहीं पड़ा। (इन फेरी वालों को इसलिये हटाया गया कि यूनिवर्सिटी के अधिकारी हमें सूबह के नाश्ते के लिये जल्दी उठने के लिये प्रोत्साहित करना चाहते थे

ताकि बहुत देर तक सोने वाले छात्र मेहनत से उपजाये हुए अन्न का अनादर न करें)। पर तीसरे भवन, भूरे भवन तथा अन्य भवनों में अनेक सुधार हुए।

लड़कों की तरह ही छात्रावास में रहने वाली लड़कियां भी हमेशा अपने साथ रहने वाली सहेलियों का चुनाव स्वयं करती थीं और कमरे का निश्चय करने के लिये पर्ची डाली जाती थी। यह व्यवस्था यह निर्णय करने के लिये की गई थी कि सबसे अधिक खुले हुए कमरे अथवा गुसलखाने के पास वाले कमरे कौन लेगा ? "सामूहिक भावना" को बढ़ावा देने के लिये अब यह निश्चय किया गया कि एक ही कक्षा और एक ही विषय के विद्यार्थी एक कमरे में रहें। हमारे नये नेताओं ने हमारे रहने की नई व्यवस्था की और यह सावधानी रखी कि हर मंजिल पर कक्षा और विषय की दृष्टि से बंटे हुए कमरों में कोई न कोई पार्टी मेम्बर, युवक संघ का कामरेड या माना हुआ प्रगतिवादी अवश्य रहे। इस नई व्यवस्था से लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में अधिक क्षोभ था। क्योंकि स्त्रियों को अपने जैसे स्वभाव की साथ रहने योग्य सहेली ढूंढना कठिन होता है। एक दूसरे के कट्टर विरोधी को जब एक ही कमरा मिल जाता तो उन्हें उसी में संतोष कर साथ रहना पड़ता। ऐसा कई बार होता कि एक ही कक्षा और विषय की दो ही लड़कियां होतीं। ऐसी परिस्थिति में उन्हें एक ही कमरे में रहने के अलावा दूसरा चारा न होता जैसे भगवान ने ही उनकी जोड़ी बना दी हो।

अब हर मंजिल पर पोस्टरों में विज्ञापित "सामूहिक जीवन" का भाव हममें निर्माण करने के लिये "जीवन विधायक" नियुक्त हो गये थे। जब इन "विधायकों" ने यह भी निश्चय करना प्रारम्भ कर दिया कि हमें कब उठना है, कब सोना है, कौन सी मेज पर खाना है और कब सब लोगों के साथ मिल कर अपने स्कूल का काम करना है तो उनका स्पष्ट विरोध होने लगा। बाद में हमारे "विधायक" हमें यहां तक निर्देश करने लगे कि हमें साथ साथ कब और कहां सिनेमा देखने जाना है। पर तब तक हममें से उग्रतम व्यक्तिवादी भी अपने गुट के साथ पूरी तरह हिलमिल गये थे।

संयमित जीवन बिताने के आन्दोलन के अनुरूप स्कूल के अधिकारियों ने हमें मिलने वाले कोयले की मात्रा को कम कर दिया। मुक्ति से पूर्व लड़कों के छात्रावास में एक दिन में औसतन २५ केटियां कोयला जलता था। अब मिलने वाले कोयले की मात्रा ८ केटियां ही रह गई थी। हमारे कमरों में लगे

हुए रेडीयेटर अब भी गर्म दिखाई पड़ते थे पर अब वे बहुत कम गर्मी देते थे। इसी संयम के नाम पर ही हमारे लैम्पों में से ६० वाट के बल्ब निकाल कर २५ वाट के लगा दिये गये। छात्रावास के सामने शारीरिक व्यायाम करने के लिये हम अब सुबह जल्दी उठने लगे। इनमें भाग लेना अभी तक एच्छिक था परन्तु इस कार्यक्रम में भाग न लेना प्रगतिशील छात्रों की दृष्टि में विचार-शून्यता का द्योतक था। सुबह ७ बजे शारीरिक व्यायाम से प्रारम्भ होने वाली इस दिनचर्या से हमारा उत्साह प्रकट हो रहा था। स्नानागारों में ऊंचे स्वर में गाये जाने वाले कोरस अभी भी गाये जाते थे। परन्तु अब यह सुनाई देता था "पूरब में लाली फूटी है, सूरज निकल रहा है—चीन ने माउत्से-तुंग को जन्म दिया है...।" निस्संदेह अब राजनीतिक गतिविधियां १९४८ के षड़यन्त्र-कारी दिनों से भी अधिक सरगर्म थीं। पर अब विद्यार्थियों के राजनीतिक कार्यक्रम खुले में होते थे। सरकार के खिलाफ षड़यन्त्र रचने की जगह अब हम उसकी बात सुनते थे। कम्युनिस्ट छात्र और उनके अनुयायी दूसरे छात्रों को मार्क्स, लेनिन, स्तालिन और माओ के बारे में जानकारी प्राप्त कराने और उनको बुर्जुवा विचारपद्धति में सुधार करने के लिये काफी प्रयत्नशील थे। अगर आप पढ़ने बैठ जाते तो अक्सर कोई न कोई छात्र नेता आ धमकता और सारस की तरह अपनी गर्दन को झुका कर जितना विनम्र हो सकता था उतनी विनम्रता से देखता कि आपके हाथ में कोई प्रतिक्रियावादी किताब तो नहीं है। यदि हो तो भी आप उस किताब को आगे पढ़ने की आशा छोड़ दीजिये। आपके पढ़ने में बाधा डालते हुए मुस्कराहट के साथ वह दर्शक आप से पूछेगा, "इस अनर्थक बकवास में आपको तो कोई दिलचस्पी नहीं, क्यों? आपकी क्या राय है? निश्चय ही आप इस के विचारों से सहमत नहीं हैं। क्या सोचते हैं?" या वह इसी तरह हेरफेर करके कहेगा, राजनीति की कक्षा के लिये जो निर्देश पुस्तक है क्या आपको उसे पढ़ने का मौका मिला है?" यह इस बात का हल्का सा इशारा देने के लिये कहा गया था कि आपको अपने व्यक्तिगत आनन्द के लिये पुस्तकें नहीं पढ़ना चाहिये।

यदि आपके उत्तर की भाषा का वाक्य-विन्यास चतुराईपूर्ण नहीं है तो उन्हीं की भाषा में वे आप पर "आध्यात्मिक प्रहारों" की बौछार कर देंगे। यह सही है कि यह सब आपके भले के लिये था पर कष्टप्रद भी था। यदि सौभाग्य से उस छात्र नेता—राजनीति के ठेकेदार—के आने के समय आपके

हाथ में कोई साम्यवाद की पुस्तक हो तो वह भरसक आपके पढ़ने में बाधा नहीं डालेगा। पर यदि आप थक गये या आप पढ़ते पढ़ते खिन्नता अनुभव करने लगे और आपने पढ़ना बंद करके किताब रख दी तो वह आपसे उसी समय जिरह शुरू कर देगा। "अच्छा, बतलाइये आपके क्या विचार हैं ? क्या इस पुस्तक के पढ़ने से सर्वहारा क्रान्ति में आपका विश्वास बढ़ा है ? क्या जनतांत्रिक तानाशाही का गम्भीर बोध इस पुस्तक से हुआ ? आपने क्या नई बात पाई ?..." एक प्रश्न के बाद दूसरे प्रश्न की झड़ी लग जाती और आपके कानों में सही उत्तर गूंजने लगते । आप चुपचाप बैठे अपनी स्मरणशक्ति से स्वतः ही उनके उत्तरों को दोहराते रहते ।

धीरे-धीरे हमें सरल मार्ग पता चल गया । जो कुछ भी विचार हमें मिले थे उन्हीं को आवश्यकता पड़ने पर तोते की तरह सुना देते। स्वतंत्र विचार के चक्कर में पड़ना बुद्धिमता न थी क्योंकि भाषणों में सुने और पुस्तकों में पढ़े विचारों के अलावा दूसरे विचार रखने से अवश्य ही विवाद खड़ा हो जाता और उसमें हमारी पराजय निश्चित थी। स्वतंत्र विचारों का दृष्टिकोण रहित कहकर मजाक उड़ाया जाता। और जो प्रश्न आपसे किये जाते थे उनके उत्तर में आपको भी कुछ न कुछ कहना पड़ता था। चुप्पी साधे रखना भी उतना ही बुरा था जितना कि "बिना दृष्टिकोण" के सोचना ।

सर्दियों में मैं खिड़की के पास बैठकर बुनने में आनन्द लिया करती थी। गर्म धूप झकोरे मारती और हमारे सारे शरीर को सहला जाती। हमारे पास ड़ी मेज पर रखा भाप उठता हुआ चाय का प्याला जरा देर में इतना ठंडा हो जाता कि हम उसे पी सकती थीं। हमारी गोद में पड़ा स्वेटर जिसे हम बुन ही थीं गर्म गर्म इतना कोमल, और अच्छा लग रहा था जैसे वह बाहर चमक हे गर्म सूर्य की प्रतिमूर्ति हो। बुनते हुये हमारे हाथ मशीन की तरह चल हे थे पर हमारा मन कभी एक और कभी दूसरी भावमूर्ति बनाता स्वतंत्र ार उन्मुक्त दौड़ रहा था। हम अपने आपको गौरेया की तरह समझते जो हर सर्दी की धूप में टेलीफून के तारों पर बैठकर अपनी चोंच से पंखों को झाड़ती रहती और जब उसे काफी देर हो जाती तो वह भवन के सामने सदा-बहार पेड़ों पर उड़ जाती ।

हम बैठे बैठे कल्पना करते कि एक टहनी पर एक मोटा सा गर्मी का कीड़ा बैठा है। कीड़े का विचार आते ही भिनके का और उससे एकदम दिमाग

फूलों पर मंडराती तितलियों की ओर दौड़ जाता। तब हम कल्पना करते कि गोल पंखा लिये पुरानी वेश-भूषा में एक सुन्दर स्त्री उस तितली के पीछे दौड़ रही है। थोड़े खुले हुए उसके लाल-लाल ओठों, उसकी लम्बी हिलोरें लेती हुई कमर और हवा से खेलती हुई उसकी कमीज भी कल्पना में आ जाती लेकिन एकाएक उसी समय थपथपाहट की भारी आवाज आ गई। किसी ने हमारे दरवाजे को थपथपाया। हम जैसे जग पड़े और हमने स्वभावतः कह दिया "अन्दर आजाइये" उत्तर में हमारे कमरे में एक प्रगतिशील युवक दाखिल हुआ जो स्वतंत्रता मिलने से पहले भी हमसे मिलता रहता था।

उसने कहा "फिर बुन रही हैं ? हमेशा इस तरह कमरे में रहना क्यों पसन्द करती हैं। नीचे क्यों नहीं चलतीं ?"

और नजदीक आकर वह पुनः बोला

"नीचे कुमारी ली के कमरे में हम में से कुछ लोग ऐसे आर्थिक उपायों के बारे में विचार कर रहे हैं जिन्हें हम नये प्रजातंत्र का एक अंग मानकर अमल में लायेंगे। आप भी उसमें हिस्सा लेना चाहेंगी।"

मुझे बिस्तर में पड़े पड़े हल्की फुल्की किताबें पढ़कर आनन्द लेना पसन्द था। गरमी बहुत ज्यादा थी—पर हमने पहले ही पर्दे डाल रखे थे। और पास में पंखा चला रखा था। सच तो यह था कि मैं पहले ही अपने कपड़े उतार चुकी थी और बिस्तर पर बैठी अपने बिखरे हुये बालों से खेलती हुई किसी गीत का अंश गुनगुना रही थी। तभी किवाड़ों पर परिचित थपथपाहट हुई ! मैं जल्दी से उठी, कपड़े पहने और अपने आपको ठीकठाक करने के निष्फल प्रयास में हाथों से बालों को संभालनें लगी। वही आग्रहशील युवक फिर आ गया। उसने कमरे में चारों ओर ध्यान से देखा। और सिकुड़ी हुई चादर व तकिये को देखते समय मेज पर बन्द पड़ी हुई राजनीतिक पुस्तक पर भी निगाह पड़ गई। फिर उसने मेरे बिखरे हुए बाल और अलसाये चेहरे को बड़े ध्यान से देखा।

वह बैठ गया। उसके चेहरे से उत्सुकता झलक रही थी। वह बोला "मैं शांति से आपसे कुछ बातें करना चाहता था। कृपया बैठ जाइये।"

मैं एक कुर्सी लाकर आज्ञाकारी की तरह जहां वह बैठा हुआ था बैठ गई। उसने न्यायाधीश के समान विचार करना शुरू किया। "आप

जानती हैं कि हम आपके परिवार के इतिहास से भलीभांति परिचित हैं। आपके पिता बुद्धिजीवी बुर्जुआ हैं। परन्तु वह किसी जमींदार वंश से हैं। आपके रिस्तेदारों को "दयालु जमींदार" कहा जा सकता है। लेकिन इस वर्ग के लोगों की तरह ही उनकी शोषण की करतूतें, तथा उनके सामंतवादी विचार, बहुत गहरे पैठ गये हैं। आपकी मां अभी तक पुराने ढंग की सामंतवादी स्त्री हैं जो मुक्ति नहीं चाहतीं थी और वे सर्वहारा क्रान्ति से भयभीत थीं। आपकी बहनें भी बहुत कुछ आप जैसी ही हैं। यह सब आपने पिछली आलोचना सभा में स्वीकार किया था। आपको यह अनुभव होता होगा कि अपने परिवार के कारणों से आपको अपने सुधार में शीघ्रता करने पर विशेष ध्यान देना चाहिए। आपको चाहिये कि···" उसने उसी भाषण की झड़ी लगा दी जिसे मैंने पहले अनेक बार सुना था।

इस प्रकार की बातचीत लाइब्रेरी में अधिकाधिक समय गुजारनें के लिये एक अच्छा कारण था क्योंकि वहां अभी भी "शांत रहें" का बोर्ड शांत रहने का आदेश दे रहा था। मुझे शंका है कि कर्मठ कार्यकर्ता इस आदेश का भी उल्लंघन किया करते थे और अपने वधित शिकारों को भाषण देते रहते थे। मेरे विचार से भाषण देने की इस प्रतिभा के होने से वे इस प्रकार फुसफुसाना अपना अधिकार समझते थे।

लेकिन हमें अपना थोड़ा बहुत समय तो अपने छात्रावास में काटना ही पड़ता था। और यदि कमरे की सहेली कहीं युवकसंघ में होती तो आधे घंटे या और अधिक समय तक सोने से पहले उसके भाषण को सुनना पड़ता। इससे आप छुटकारा नहीं ले सकती थी। कोरी "हां" और "ना" से ही काम न चलता। जब वह पूरी बात कह लेती तो अक्सर वह राय जानना चाहती। यदि नींद के कारण कोई जवाब ही नहीं बन पड़ता या उसके शब्द ठीक ठीक याद नहीं रहते थे और उसे हम दुहराने में असफल रहते तो वह और अधिक देर तक राग अलापती।

इस क्रम के चलते रहने से मेरे अलावा कई औरों को भी उस टर्की की छात्रा के तिरस्कार पूर्ण शब्द याद हो आये, जिसने भूरे भवन के सबसे अच्छे कमरे को अस्वीकार करते हुए कहा था, "भई, यह तो बहुत कुछ जेल जैसा है!"

छात्रावास के बाहर लोगों का जीवन केवल राजनीतिक चर्चाओं तक ही सीमित नहीं था । चीन में पश्चिमी ढंग के बाल-रूम नृत्य का प्रचलन थोड़े ही दिनों से प्रारंभ होने के कारण यह शंघाई जैसे बड़े व्यवसायिक बन्दरगाहों तक ही सीमित था । पीकिंग के कालेज और स्कूलों के बहुत थोड़े छात्र इस नई प्रणाली से नृत्य कर सकते थे । यद्यपि युद्ध के बाद जब यूनिवर्सिटियां देश के अन्दर के भागों से वापिस अपनी जगहों पर आ गई तो सीमान्त प्रदेशों के लोकनृत्य लोकप्रिय होने लगे थे । सीमान्त देशों की जनता के साफ और बेल-बूटे और फूलदार कमीज जैसे वस्त्रों से आभूषित छात्र नृत्य की सरलता और विदेशी वातावरण से मोहित होकर गीतों को गुनगुनाते और नृत्य करते । देशी नृत्यों के लोकप्रिय होने के कारण कम्युनिस्टों का यांग-को लोक-नृत्य भी लोगों ने अपना लिया ।

पुराने शासन में पेता के दस छात्रों में से एक छात्र ही ऐसा होता था जो बालरूम नृत्य के बारे में कुछ जानता था । तब व्यक्तिगत समारोह कम हुआ करते थे और पीकिंग में विदेशी ढङ्ग के नृत्य के जो कुछ हॉल थे उनमें छात्र यदाकदा ही जाया करते थे । व्यक्तिगत समारोहों में निमंत्रण मिलने पर भाग लेने के लिए जाना छात्रों को कठिन न था क्योंकि उन्हें अपने सबसे अच्छे कपड़े केवल झाड़कर पहन लेना काफी होता था और छात्रावास में लौटने के निर्धारित समय के बाद जब भी वे आते तो दबे पांव अन्दर आ सकते थे । लड़कियों के साथ बात दूसरी थी । किसी लड़की को ऐसे समारोह में जाने से पहले अपनी सहेलियों से छुट्टी लेकर अकेले कमरे में अपने कपड़े और जूतों को चुनना पड़ता और नित्य से कहीं अधिक बनाव-शृङ्गार करना पड़ता । जैसे-जैसे अंधेरा होने लगता वह अपनी खिड़की के पास बैठी इन्तजार करती रहती जहाँ से वह दो या तीन के गुटों में अब भी अपने साथियों को नीचे देख सकती थी । वह सोचती, क्या अब वह बाहर चली जाय ? गौधूलि अंधकार में परिवर्तित होती जा रही थी पर अभी इतना अंधेरा नहीं हुआ था कि जो तड़क भड़क के कपड़े उसने पहन रखे थे वे छुपाये जा सकें । वह सोचती, क्या वह चुपचाप बैठी रहे और इन्तजार करे ? क्रमशः सैर सपाटे करते हुए लोग अदृश्य हो जाते और इतना अंधेरा हो जाता कि उसे विश्वास था कि अब कोई उसे नहीं पहिचान पायेगा । तब वह झट से दरवाजा खोलकर बाहर आती और लपक कर छात्रावास से बाहर निकल जाती ।

पर नृत्य समारोह में भी उसे विश्राम न मिलता। वह यह नहीं जानती थी कि जिस आदमी ने नृत्य के लिए उसे आमंत्रित किया है उसे कैसे स्वीकार या अस्वीकार किया जाय। और जैसा कि वह आशा करती थी उसकी बातों में हाजिरजवाबी और विनय नहीं होती थी। जब वह अपनी सहपाठियों के साथ होती तो सबसे अधिक आश्वस्त होती। अपने हाथ में हरे रंग का जो मदिरापात्र था वह उसे ही घूरती रहती अथवा कलाई में बंधी हुई घड़ी की सुइयों को देखती रहती। उसे जल्दी लौटना जो था।

उसका अङ्गरक्षक यूनिवर्सिटी के दरवाजे तक उसको पहुंचाकर वापिस लौट जाता। यूनिवर्सिटी के आंगन में उसे कुछ धुंधली बेफिक्री से घूमती हुई आकृतियां दिखाई देतीं। पर दरवाजे के पास सड़क की रोशनी बहुत तेज थी। उसे लगता था कि मानो उस रोशनी की सारी किरणें सीधी उसी के ऊपर पड़ रही हों। अपने वैग से रूमाल निकालकर चेहरे पर लगी लाली को मिटाने के लिए उसे रगड़ डालती और ज्यादा से ज्यादा अंधेरे का रास्ता चुनकर अपने सोने के कमरे में घुस जाती ठीक वैसे ही जिस तरह मुंह से धुंआ निकलता है या जिस तरह अपराध का ज्ञान होने पर अपराधी डर कर भागता है वह बिस्तर में लेट जाती पर अभी तक उसका हृदय जोर जोर से धक धक करता होता था।

यदि परिस्थितियां भिन्न होतीं तो लड़कियां अपने नृत्य की निपुणता के सम्बन्ध में इतनी भीरु न होतीं। पुरानी सरकार नृत्य समारोहों के लिए सदा नाक भौं सिकोड़ती रही। और समय समय पर सार्वजनिक नृत्यों पर "आत्म-संयम" का प्रतिबन्ध घोषित कर देती थी। यद्यपि इस प्रतिबन्ध की भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा विनीत भाव से अवज्ञा हो जाती थी, इससे भी ज्यादा महत्व की बात यह थी कि जो लड़कियां इन नृत्यों में जाती थीं उन्हें अपने सहपाठियों की आलोचना भी सहनी पड़ती थी। प्रगतिशील छात्र नृत्य प्रेमियों की भर्त्सना "मध्यवित भावना और सुखवाद में गहरी तल्लीनता" कह कर करते थे। जो गोल मोल धमकियां दी जाती थीं वे भी मुझे याद हैं। वे कहते "यदि ये अपने आपको सुधारने का संकल्प नहीं करते तो इन चंचल व्यक्तियों को एक दिन अवश्य ही इसका लेखा देना पड़ेगा। बाल रूम नृत्य, एक स्त्री और एक पुरुष दोनों साथ-साथ, जोड़े जोड़े—यह तो विशुद्ध दलवाद है। यह दुराचारी शोषक वर्ग की सही भावना प्रकट करता है।"

जब ये प्रगतिशील लोग नृत्य की निन्दा करते तो उनके दिमाग में यही खयाल होता कि बहुत दूर येनान स्थित कम्युनिस्ट शासन, नृत्य जैसी बुर्जुवा चंचलताओं को एक आंख भी नहीं देख सकता । पर बाद में उन्हें फिर से सही रास्ते पर आने के लिये एक विचित्र तरह की चटक-पटक करनी पड़ी । उसी येनान की कम्युनिस्ट पार्टी ने नृत्य का शौक पुनः प्रचलित किया । हमें पता चला कि पार्टी के लोग अक्सर नृत्य समारोह किया करते थे—और वह भी सर्वहारा "यांग-को" के लिये नहीं पर "बुर्जुवा विषयासक्त" लोगों के बाल रूम नृत्य के लिये जिसमें स्त्री और पुरुष जोड़े-जोड़े मिलकर नृत्य करते थे ।

"दीवारों पर लगाये जाने वाले समाचार पत्र" भी अब इस नये ढंग का समर्थन करने लगे। जो जल्दी सही रास्ते पर लौटने के लिये बेचैन थे वे प्रगतिशील लोग कहते कि बालरूम नृत्य स्वयं खराब नहीं है । सत्य तो यह है कि वास्तव में यह नृत्य सोवियत संघ में और पूर्वी योरुप के नये जनवादी देशों के युवक-युवतियों में काफी प्रचलित है । यदि हम नृत्य भवनों को इतने तड़क-भड़क से न रखें जैसा कि पूंजीवादी देशों में लोग करते हैं या नृत्य पर अधिक समय खर्च न करें तो यह वास्तव में एक अच्छी चीज हो सकती है ।

अब नृत्य वैध और यहां तक कि लाभप्रद घोषित हो चुका था । इस घोषणा का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि यूनिवर्सिटी के कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं ने सबसे पहले एक नृत्य समारोह का आयोजन किया। उत्तरी भवन में एक बड़ा क्लास रूम था जिसका फर्श काफी चिकना था । मेज और कुर्सियों को एक को नेमें लगाकर और फर्श पर बोरिक ऐसिड डाल कर उसे नृत्य करने योग्य मण्डप बना दिया गया ।

पर क्लासरूम तो क्लासरूम ही रहता । अतः नृत्य पार्टी को "बालरूम नृत्य का सामूहिक पाठ" उपाधि दे दी गई । जिन प्रगतिशील विद्यार्थियों को इसमें आमंत्रित किया गया था उनमें से अधिकांश पहले इसकी उपेक्षा करते थे । पर अब उनको मालूम हुआ कि कम्युनिस्ट कार्यकर्ता भी नाचते थे, यहां तक कि शिन-चुन-जू एक जरा जर्जरित "जनवादी प्राणी" नृत्य करने के पाठ पढ़ रहा था तो वे पीछे कैसे रह सकते थे । इसके अलावा दीवारों पर लगाये जाने वाले समाचार पत्रों ने भी यह साफ-साफ बतलाया था कि इसे सीखना उचित होगा । क्रान्ति की गति आशा से अधिक तेज़ थी । बुर्जुवावर्ग की

'विषयासवित' वृहद जनता की सम्पत्ति बन गई थी । कम से कम जहां तक हम विद्यार्थी 'वृहद जनता' का प्रतिनिधित्व करते थे यह बात बिल्कुल सच थी ।

अधिकारियों के आदेशों के अनुसार यूनिवर्सिटी के नृत्य समारोह के मंडपों में किसी प्रकार की साज सज्जा या कागज की झंडियां नहीं लटकाई जाती थीं । सभी विद्यार्थी अपने रोजाना के वस्त्र पहने इनमें हिस्सा लेते थे । यहां तक कि विशेष नृत्यकार भी केवल अपने जूते बदलकर मुलायम पतली ऐढ़ी के चमड़े के जूते पहन लेते थे । बहुत कम लड़कों में इतना साहस और सामाजिक अनुभव था कि वे दूसरे लोगों के सामने लड़कियों को नृत्य के लिये आमंत्रित कर सकें । अतः ऐसे समारोहों में स्त्री जाति को प्रतिकार लेने के अवसर मिलते थे । स्कूल में जब हमें लड़के राजनीति के पाठ पढ़ाते तो हमें बुद्धुओं की तरह उन्हें सुनना पड़ता था । अब हमारी वारी थी कि हम उस सुखद श्रेष्ठता का सुख भोगें जो शिक्षक अपने छात्र से अनुभव करता है । अतः अब अक्सर लड़कियां ही पसीनों में लथपथ एक आदमी को छोड़ कर दूसरे आदमी के पास जातीं और तड़ाक से पूछतीं, "नृत्य करेंगे, पिछली बार से आपने कुछ प्रगति की होगी, फिर कोशिश करें ।" अथवा "इस बार चार पग उठाकर किया जानेवाला नृत्य करेंगे । आपका तीन पग उठा कर होने वाला नृत्य पहले से अब अच्छा है ।" अथवा "ओ, आइये ना, यह बहुत आसान है, कोशिश तो करें । यदि बीच में ही उलझ जायं, या किसी के ऊपर पैर पड़ जाय तो कोई चिन्ता नहीं ।"

क्या यह असाधारण लगता है ? शायद । पर कुशल नृत्यकार अधिकांश स्त्रियां ही थीं । पेता में लड़कियों की अपेक्षा लड़के कहीं अधिक थे । अब यकायक ही उनमें से लगभग सभी नृत्य में रुचि लेने लगे थे । इसमें कोई आश्चर्य नहीं । हम सभी पसीने में तरबतर रहतीं पर हमारे लिये मार्ग भी क्या था ? यदि हम सिखाती नहीं तो वह हमारे बुर्जुवा अभिमान और स्वार्थ-परता को प्रकट करता ।

इन समारोहों में जो संगीत होता वह बहुत कुछ पुराना बुर्जुवा नृत्य गान ही होता था । लेकिन अधिकांशतया पुरुषों का ध्यान उनके कठिनाई से और बेढंगे उठने वाले पैरों की ओर ही रहता था । किसे समय था कि वह संगीत या ताल की ओर भी ध्यान देता । यदि सोवियत संघ और नये जनवादी देशों से युवक और युवतियां खिड़की से झांकते तो मुझे विश्वास है कि वे खिसिया

जाते। कोई "जनवादी" नारा क्लास रूम की पुरानी और नंगी जर्जरित दीवारों को नहीं छुपा सका था। मेज और कुर्सियों को एक कोने में अव्यवस्थित रूप से इकट्ठा कर दिया था। कमरे के बीच में नृत्यकार धक्का मुक्की करते रहते जैसे किसी लोकप्रिय चित्रगृह के टिकटघर के सामने भीड़ में धक्का मुक्की होती है। वे कोहनियां मारते, एक दूसरे के पैरों पर पैर रख देते और अजीब तरह से कंधा लड़ा देते। कालर के नीचे अपनी ठोढ़ी किये, ज्यादातर लड़के व्याकुलता से अपने उठते हुए पैरों को देखा करते। उनमें से कुछ अपने साथी को खींचते और धक्का देते हुए सुनाई दे सकने योग्य दवी आवाज में गिनते, "एक, दो, तीन, चार। एक दो तीन चार—" नृत्य के चक्करों में कोई आदमी यकायक ही रुक जाता, जिससे उसके चारों ओर नृत्य करने वाले आपस में उसी तरह टकरा जाते, जैसे व्यस्त सड़क पर ट्राम खराब हो जाने से बाकी रिक्शा, गाड़ी और बाइसिकल सभी रुक जाते हैं, और कृत्रिम मुस्कान में अपने साथी से कहता, "क्षमा कीजिये—फिर सब गलत हो गया।" उसके साथ जो लड़की नृत्य कर रही होती उसे उत्साह दिलाती मानो कि वह सहमे हुए बालक को रिझा रही हो। "कोई बात नहीं, गलतियों की चिन्ता मत करो। रुको नहीं। बस मेरा साथ देने की कोशिश करते रहो।"

क्रमशः व्यग्रता लुप्त हो गई। दो तीन महीने के घोर परिश्रम के बाद अधिकतर छात्रों ने काफी प्रगति कर ली। क्योंकि उनमें से अधिकांश नये सीखने वाले थे और सीखने की लगन बहुत अधिक थी, अतः अभ्यास करने के किसी भी अवसर को वे हाथ से नहीं जाने देना चाहते थे। स्वतन्त्रता मिलने से पूर्व नृत्य का विरोध करने वाले दो गुटों में बंट गये थे। उनमें एक गुट ऐसे विद्यार्थियों का था जिनके विचार वाममार्गी थे और दूसरे वे जो जीवन में अध्यवसायी थे, राजनीति से दूर रहते थे किन्तु नृत्य करने को समय नष्ट करना और नृत्य को चंचलता की अ-चीनी अभिव्यक्ति मानते थे। (यह वास्तव में सत्य था कि कुछ नृत्य प्रेमी पढ़ने-लिखने में पीछे और अपने व्यक्तिगत जीवन में अव्यवस्थित थे)। जो वामपक्षी विद्यार्थी पहले उनके साथ बालरूम नृत्य की आलोचना किया करते थे जब वही नृत्य के साहसी और उत्साही व्याख्या करने वाले हो गये तो अध्यवसायी विद्यार्थियों ने यही समझा कि उनके साथ किसी तरह का विश्वासघात हुआ है।

वे अपने वामपक्षी मित्रों पर प्रश्नों की झड़ी लगा देते; "नृत्य करने वालों की आप लोग आलोचना किया करते थे; करते थे न? अब उनकी तरह

आप लोग भी क्यों नृत्य करने लगे ? आपके उन सिद्धान्तों का क्या हुआ कि इस तरह नाचने में समय नष्ट करना बुर्जुवा स्वार्थपरता है ?" अपनी पिछली आलोचना को बुद्धिहीन "विमति" स्वीकार करने में झिझकने वाले, और अपनी वर्तमान स्थिति की वकालत करने में असमर्थ, प्रगतिशील छात्रों ने परेशानी में डालने वाले प्रश्नों से बचने का नूतन मार्ग ढूंढ़ निकाला। औपचारिक समारोहों में संगीत शुरू होने से पूर्व हमेशा एक पार्टी कामरेड घोषणा करने के लिये खड़ा हो जाता—उसके चेहरे पर सौहार्द और सौजन्यता की आभा होती।

वह कहता: "साथियो! आज शाम को हम यहां पर चीन सोवियत मित्रता का उत्सव मनाने के लिए एकत्रित हुए हैं"—या हेनान द्वीप की मुक्ति या विश्व शांति कांग्रेस का उद्घाटन करने या अन्तर्राष्ट्रीय युवक दिवस मनाने या हाथ लगी किसी छुट्टी मनाने के लिये इस समारोह में एकत्रित हुए हैं—"इसलिये हमें आशा है कि यहां उपस्थित हर व्यक्ति अपने शानदार उत्साह को प्रकट करेगा जो हमारे हृदय में धड़क रहा है।" पार्टी कामरेड अपने हाथों को इस तरह फैला देता मानो वह समारोह की सारी भीड़ को अपने बाजुओं में समेट लेगा। "साथियो ! हम जितना आनन्द मना सकते हैं मनायें।" वह अपने यौवन के उत्साह को प्रकट करने के लिये पंजों पर खड़ा होकर कहता, "हम हंसते हैं, खेलते हैं, आनन्द मनाते हैं। हम नवयुवक हैं। एक दो मिनट में बैंड बजेगा। अपनी खुशी प्रकट करने के लिए हम सब गाने में योग देंगे ऐसी आशा है। हम में से कोई भी अनुभवी नृत्यकार नहीं है अतः कोई किसी को देखकर न हंसे। आओ नाचें।" उसने अपने बाजुओं को फिर उठाकर कहा, "साथियो ! आओ मिलकर नाचें और आनन्द मनायें !"

नृत्य प्रेमी प्रगतिशील छात्रों के पास अपने नये आनन्द का समर्थन करने के लिये अब तर्क था और न रुकने वाले अपने जोश में "पिछड़े हुए" छात्रों को भी उन्होंने अपने साथ ले लिया। कमरे के बीचोंबीच हम सब मिलकर घूम-घूम कर नाचते। यदि यही क्रांति थी तो हम सबने उसका खूब मजा लिया। अब कोई ऐसा व्यक्ति नहीं रहा था जो हमारी आलोचना करता हो।

इन प्रगतिशील छात्रों की कल्पनाशक्ति इतनी ऊर्वर नहीं थी कि वे नृत्य की इस नई प्रणाली के लिये बहाने के रूप में "व्यायाम" शब्द का प्रयोग कर सकते। अतः हम लोगों को अक्सर प्रोत्साहित किया जाता कि अध्ययन से

समय निकाल कर खुले मैदान में हम किसी न किसी प्रकार के स्वस्थ मनो-रंजन में अवश्य थोड़ा समय गुजारें। यह बात नहीं कि हमें बहुत ज्यादा प्रोत्सा-हन की आवश्यकता थी—पेता के छात्रों के लिये घूमना हमेशा से प्रिय विश्राम रहा है। हममें से अधिकांश लोगों को भोजन के बाद या जब हम थकान मह-सूस करते या उदासीन होते तो थोड़ा घूम लेने की आदत थी। हम अकेले भी घूमते थे और किसी मित्र के साथ भी घूम सकते थे। वास्तव में युवक संघ के बहुत ज्यादा उत्साही सदस्यों में अब घूमना भी सामूहिक जीवन में सम्मिलित हो गया था। यदि हम अकेले या एक दो मित्रों के साथ जनवादी स्क्वायर या उत्तरी भवन के सामने के बगीचे में घूम रहे होते तो हमारे कम्युनिस्ट मित्रों में से कोई न कोई अवश्य मिल जाता और "दलवाद" के भय से हमको बचाने के लिए हमारा साथ देने का कोई न कोई बहाना ढूंढ़ लेता। यदि किसी अन्य काम के कारण वह हमारे साथ न रह पाता तो जाते जाते हमारे विचारों का अध्ययन करने की कोशिश करता ताकि वह अपने विभाग में दूसरे कम्यु-निस्टों के साथ हमारी मानसिक स्थिति का विश्लेषण करने को तैयार रहे और वे यह निर्णय कर सकें कि मैं अकेली क्यों घूम रही थी। इन पार्टी मीटिंग में उस विवाद की कल्पना करना आसान था जो किसी के नाम आते ही प्रारम्भ हो जाता था। "मुझे आशंका है कि अपनी सहपाठिनों की सच्ची-आलोचना से उसे कष्ट होता है। बुर्जुवा मध्यवत वर्ग की तरह उसे भी काफी अहंकार है।"

"कभी मैं सोचता हूं कि उसे अपने आपको सुधारने की कोई इच्छा नहीं है। वह हमेशा विरोधी विचारों से परेशान मालूम होती है," एक दूसरा आलो चक स्वर में स्वर मिलाता "यह अस्थिरता और भटकना तो बुर्जुवा वर्ग में होता ही है।"

"ऐसा लगता है कि वह अभी तक हठी है और अकेला रहना पसंद करती है। उसे अभी तक सामूहिक जीवन के प्रति उपेक्षा है और सर्वहारा के सिद्धांतों के बारे में उसे कोई ज्ञान नहीं है," एक तीसरा कामरेड उसके चरित्र पर टीका समाप्त करते हुए कहता। और वे किसी दूसरे की आलोचना प्रारम्भ कर देते।

यदि जिस लड़के को हमारे साथ घूमते हुए उन लोगों ने देखा हो, जिसे हाल ही में युवक-संघ की सदस्यता मिली हो तो उसकी हमसे अधिक नुक्ता-चीनी होती क्योंकि वह हमसे अधिक महत्त्वपूर्ण था। एक कहता, "मुझे शंका

है कि वह सरकार की, पार्टी की या युवक-संघ की नीति से असन्तुष्ट होकर कहीं उससे शिकायत तो नहीं कर रहा था ?"

"क्या आप सोचते हैं कि वह अपने विचारों में पक्का नहीं है, वह भटक जाने वाला व्यक्ति है ? मुझे पक्का विश्वास है कि वह उस लड़की से प्रेम नहीं कर सकता । लेकिन......"

वास्तव में वह लड़का काफी काम करने के बाद थक गया था और हमारे साथ घूमने के लिये अकेला इसलिये चला आया था कि उसके दूसरे मित्र काम में व्यस्त थे।

मैं पीकिंग की रमणीयता की प्रशंसा करने की आवश्यकता नहीं समझती । उसका पीली खपरैल का शाही महल, (जो वास्तव में अपने आप में ही समाहित एक छोटा सा नगर था) कोयले की पहाड़ी पे-हई, चुग-नान-हई, सन-यात-सेन पार्क, राजकीय मन्दिर, अन्न देवता का मन्दिर और नीली खपरैलों क सुन्दर स्वर्ण का मन्दिर जिसे प्राचीन राजवंशों ने बहुत दिनों में बनवा कर तैयार किया था, सभी सुन्दर थे । ऐसे छात्रों के लिये जो प्रारम्भ से ही पीकिंग में रहते थे और जो विदेशी यात्रियों के कन्धों पर लटके हुए कैमरों के समान, महंगे और विदेशी कैमरे नहीं खरीद सकते थे, एक सस्ता बॉक्स कैमरा लेकर चलना भी बड़ा आनन्ददायक था । वे पीकिंग की गलियों में उस कैमरे को लेकर घूमा करते और ऐसे दृश्यों की तलाश करते रहते जिन पर पहले किसी की नज़र न पड़ी हो । पर अब फोटो लेना काफी कठिन हो गया था । इससे पहले कि कैमरे से हम फोटो खींचने के लिये तैयार होते, कोई पुलिसमैन या जनसाधारण के कपड़े पहने कोई आदमी हमारे पास आ जाता और हमसे पूछताछ करता कि हम क्या कर रहे थे । यदि हम व्यवहार कुशलता और दबी जबान से उसे बतला पाते कि हमें यह मालूम न था कि इस जगह पर तस्वीरें खींचना मना है और यदि वह पुलिसमैन दयालु होता तो वह हमारे कैमरों की रील निकाल कर ही छोड़ देता । परन्तु यदि हम विरोध करते या कड़े वचन कहते और वह पुलिसमैन जनता की सेवा में इतना दीक्षित होता कि हमारा उत्तर उसे बुरा लगे तो वह हमें "चालाक छात्र" समझ कर शायद पकड़ लेता और जन सुरक्षा केन्द्र में "जनता" की ओर से शैक्षणिक भाषण दिलाने के लिये ले जाता ।

एक रविवार को मैं कुछ साथियों के साथ सुन्दर उत्तरी झील पे-हाई चली गई। यी-लान हाल के साथ लगे हुए श्वेत संगमरमर के पत्थर के जंगलों के सामने हम इस प्रकार खड़े हुए कि हमारा एक मित्र फोटो खींच सके। दूर पार्श्व भूमि में पत्थर का बांध और चुंग-नान हाई का दृश्य था। जिस समय वह मित्र अपने कैमरे पर झुका उसका फोकस ठीक करने की कोशिश कर रहा था, एक दूसरा साथी गुट से निकला, उसने चारों ओर सावधानी से देखा और कहा, "क्या यह सब ठीक है ? आपके विचार से क्या इस पार्श्व भूमि में तस्वीर खिचवाना ठीक होगा ?" उसने चुंग-नान हाई की ओर इशारा किया। हमने उसकी इशारा करती हुई अंगुली की ओर देखा और हमें ध्यान आया कि चुंग-नान हाई पार्क के अन्दर राज्य प्रशासन परिषद का कार्यालय है। हमारा मित्र श्वेत संगमरमर की जाली से पहले ही दूर आ चुका था और श्वेत मीनार की ओर इशारा करते हुए बोला, "मेरे विचार से वहां चलना ज्यादा अच्छा होगा।"

'छात्र कैमरा क्लब' पेता के छात्रों के लिये उचित कीमत पर फिल्म डेवलप करने का काम करता था और जो "अच्छे चित्र" बने थे उनका समय समय पर जनवादी-स्क्वायर में प्रदर्शन करता रहता था। ये अच्छे चित्र रमणीय दृश्यों के होते थे : जैसे चार मई के उत्सव को जाते हुए पेता के छात्रों की पंक्तियां, सोवियत अतिथियों के सम्मान में पुष्पोपहार, विद्यार्थी जीवन के रोज-मर्रा के दृश्य जैसे यांग-को का सामूहिक नृत्य, सामूहिक सहगान का अभ्यास, सामूहिक विचार-विमर्श इत्यादि। पर मेरे एक कैमराप्रेमी मित्र ने स्वीकार किया कि यह सही था कि जब उसने फिल्म को डेवलप करवा कर तस्वीर ली तो उसे यह समझना मुश्किल हो गया कि वह कौन-सी परेड थी।

उस "निषिद्ध नगर" के पीछे कोयले वाली पहाड़ी के सुन्दर दृश्य हमारे 'सातान' आंगन से सबसे निकट थे। कोमिनतांग शासन के दिनों में यूनिवर्सिटी ने शासनाधिकारियों से यह प्रबन्ध कर लिया था कि किसी भी विद्यार्थी को जो पेता-यूनिवर्सिटी का बैज दिखला सकता हो वहां पर मुफ्त जाने दिया जाय। पेड़ों से आच्छादित और मानव निर्मित कोयले वाली पहाड़ी, जहां एक मिंग बादशाह ने दुखद और रोमांचकारी परिस्थितियों में आत्म-हत्या की थी, हमारे लिये बहुत कुछ पेता का बगीचा हो गयी थी। साधारण तौर पर वहां टिकट से जाने वाले जितने लोग होते उनसे कहीं अधिक पेता के छात्र सुबह या स्कूल के बाद वहां जाया करते थे। स्वतन्त्रता के बाद बिना कारण बतलाये कुछ समय

के लिये इस पार्क में आना जाना बन्द कर दिया गया था। अब उसे जनता के लिये फिर खोल दिया गया। पर अब हर व्यक्ति को एक नाममात्र प्रवेश-शुल्क देना पड़ता था और फाटक के सामने के हाल में समाचारपत्रों और नई कम्युनिस्ट पुस्तकों का एक नया वाचनालय भी खोल दिया गया था।

१६४६ में यूनिवर्सिटी का बसन्तकालीन सत्र समाप्त होने पर हर छात्र को अपने राजनीतिक विचार एक निबन्ध में लिखने को कहे गये। इस निबन्ध में जू-जी में उसने अपने विचारों में जो सुधार किये और जो नये विचार ग्रहण किये उनका विशेष उल्लेख करना था। पहले यह निबन्ध राजनीतिक कक्षा के छात्रों को दिये गये और उसके पीछे एक सफेद कागज लगाकर उनको टीका-टिप्पणी करने के लिये भी अवसर दिया गया। फिर आलोचना और स्वालोचना के लिये लेखक को कक्षा में उसे जोर से पढ़ने की आज्ञा दी जाती थी। ऐसे ही निबन्धों में से एक में, एक नए प्रगतिवादी ने घोषणा की :—

"पुराने दिनों में कोयले की पहाड़ी मुझे हमेशा अपने शोभनीय दृश्यों और स्थापत्य सौन्दर्य से प्रभावित करती रही है। धूप में चमकती हुई स्वर्ण आभा से दीप्त उसकी खपरैलें, काल के साथ साथ उसके सिन्दूरी रंग के खम्भों की आभा क्षीण हो जाना और उसके मुंडे हुये रहस्यपूर्ण शिखर मुझे हमेशा अमर कलाकृतियों जैसे लगते थे जिनमें संगीत और चित्रकला एक हो गई थी। हर रोज मैं पहाड़ी पर उस जगह जाता जहां मिंग वंश के सम्राट जू ने आत्महत्या की थी। मेरे चारों ओर भव्य और सीधे तने हुए पुराने देवदार के पेड़ खड़े होते, जिनकी शाखाओं के ऊपरी भाग पर सुबह की ताजी ओस पड़ी रहती। जब मैं शिखर के पास उस मंडल पर पहुंचता, गौरैया के प्रातःकालीन गान में कितनी तरलता और प्रफुल्लता होती। मैं वहां कितनी प्रसन्नता, कितनी शांति का अनुभव करता था।"

उसकी आवाज में सैनिक जैसी कठोरता आने लगी। वह कहता गया "जब मैं राजनीतिक कक्षा में भर्ती हो गया तो मेरा मन अस्थिर था। मेरे आंतरिक संघर्ष बढ़ते रहे और अन्त में मैंने पुराने विचारों के बंधन से अन्तिम संघर्ष करके स्वतंत्रता प्राप्त कर ली। अब मैं जब कोयले की पहाड़ी पर घूमने जाता हूं तो मेरी आँखों के सामने पुराने सम्राटों के भ्रष्ट और दुराचारी जीवन का चित्र आ जाता है। आज मैं जब इन सब मंडपों को, बरामदों को, भवनों को और कुंजों को देखता हूँ जो शासक वर्ग के आमोद-प्रमोद के लिये

दासों के श्रम, खून और पसीने से बने थे तो दृश्य जितना अधिक सुन्दर होता मेरी घृणा को वह उतनी ही तेजी से भड़का देता। सच्चे क्रोध से उन्मत्त हो मैं इन मंडपों, वरामदों और इन हरी पहाड़ियों को तहस नहस कर देना चाहता हूँ।"

कम्युनिस्टों ने उसके इस निवन्ध की प्रशंसा के पुल बांध दिये। कथन में जैसी साहित्यकता थी उसके लिये प्रशंसा नहीं हो रही थी वरन इसलिये कि रचयिता का मन सही दिशा में जा रहा था। विचार परिवर्तन की सफलता का आनन्द मनाते हुए उन लोगों ने घोषणा की कि जो भी व्यक्ति "शोषक वर्ग की ऐसी भावनाओं" से पीड़ित है उसे इसी तरह अपने विचारों को बदल देना चाहिये क्योंकि केवल पिछड़े हुए लोगों की दृष्टि में ही शोषण पर आधारित यह भवन सुन्दर हो सकते हैं। शायद उनका कहना ठीक था। यद्यपि हम इस अफवाह को फैलाना पसन्द करते कि अध्यक्ष माओ पश्चिमी पहाड़ियों पर अपने आनन्ददायी भवन में आनन्द ले रहे हैं।

पे-हाई की यात्रा के कई सप्ताह बाद हम रमणीय उत्तरी झील के निकट स्थित श्वेत दबोबा की सीढ़ियों पर वन-भोजन के लिये गये। जब हम वहां बैठे अल्पाहार और गपशप कर रहे थे तो हममें से एक लड़की की दृष्टि हमारी ओर पीठ किये निकट ही पुराने देवदार के पेड़ के नीचे बैठे एक आदमी पर पड़ी। जिस लड़की ने पहले पहल उसे देखा उसने इस के बारे में अपने पास बैठे हुए एक लड़के से कहा। हमें पूरा विश्वास था जब हम यहां आये उस समय यहां कोई न था। हमारी समझ में नहीं आता था कि हमारी नजर पड़े बिना यह आदमी हम लोगों के इतने पास कैसे आ गया। युवक संघ का जो व्यक्ति हमारी यात्रा का संचालन कर रहा था वह भांप गया कि इस जबरदस्ती आये हुए आदमी के बारे में कुछ भेद है। जैसे ही बातचीत करना वंद हुआ वह गला फाड़ कर चिल्लाया: "पिछली बार जब हमारी कक्षा विश्व शांति की परेड में शामिल हुई थी तो आप लोग अपने झंडों को सीधे क्यों नहीं पकड़ सके थे। झंडे इतने झुके जा रहे थे कि हमारे पीछे आने वाले छात्रों ने कहा कि वह मजाक जैसा लगता था।" वहां बैठा आदमी स्थिर रहा। मैंने धीमी आवाज में पूछा, "आप क्या समझते हैं उसे कुछ हो गया है?"

कोई नहीं बोला। इसलिये मजाक में मैं फिर बोली, "यहां वह अपने प्रेम की तरंग में या और किसी काम से आया होगा।"

हमारे नेता ने सिर हिला कर मुझे चुप रहने का इशारा किया। "आज हम जल्दी ही वापिस लौट चलेंगे" उसने हम लोगों से कहा, "याद है कि आज हमारी युवक संघ की मीटिंग है।"

अपने अल्पाहार के बर्तनों को इकट्ठा करते समय हम उस अजनबी को ध्यान से देख रहे थे। जैसे ही हम उठे वह भी उठ खड़ा हुआ, बिना किसी व्यग्रता से हमारी ओर देखा और फिर मुंह फेर कर सिगरेट जला ली। हमने उसे अच्छी तरह देख लिया था। वह लगभग ३० वर्ष का था और उसकी अजीब सी हल्की भोहें, छोटी आंखें, लम्बा चेहरा और उठी हुई ठोढी थी। मैं सोच रही थी कि वह दृश्य में मग्न था और शोषक वर्ग के प्रति घृणा से ओत-प्रोत हो गया था। जब हम वहां से चले तो वह भी हमारे पीछे पीछे चल पड़ा।

परन्तु वह काफी पीछे रुक गया। अंत में युवक संघ के नेता ने पीछे मुड़ कर देखा तो वह लुप्त हो चुका था। वह चिड़चिड़ा कर बोला, "हूं, वह आदमी भी अजीब था, मेरे इस संकेत पर भी कि हम विद्यार्थी हैं। उसने कोई ध्यान न दिया। मैंने उसे फिर संकेत किया कि हम लोगों में से कुछ छात्र पहले ही युवक संघ में शामिल हो चुके हैं पर वह फिर भी न हिला।"

"अवश्य ही वह समाधिस्थ था दुनिया से बहुत दूर। निस्सन्देह उसे चिन्ता न थी कि हम क्या कर रहे थे। संघ या बेसंघ, उसे कोई चिन्ता न थी।" मैं बेवकूफी से अब भी हठ कर रही थी पर मैं समझती हूं कि जान-बूझ कर नहीं।

"ऐसी बात नहीं," युवक संघ के नेता की आवाज धीमी हो गई थी। उसने गम्भीरता से मुझसे कहा, "जानती हो, हमने अभी अपनी क्रान्ति में केवल पहली बड़ी विजय प्राप्त की है। अभी तक चारों ओर क्रांति के शत्रु हैं। हमारे शत्रुओं के दलाल अजीब जगहों पर बैठ कर मिलते हैं और योजनाओं पर विचार करते हैं इसीलिए हमें अपने दलाल ऐसी जगहों पर छोड़ने पड़ते हैं। लेकिन उसे धूर्तता करने का कोई कारण न था कि वह यह भी नहीं पहचानता कि हम विद्यार्थी हैं।"

तो यह बात थी। युवक संघ का वह लड़का वास्तव में संगठन में था और जितना हम समझते थे उससे कहीं ज्यादा वह बातों को समझता था।

मुझे वे लोग याद आये जो कई बार पार्कों में मेरे पीछे लगे थे लेकिन मैंने उन्हें हमेशा यही समझकर छोड़ दिया था कि अकेली लड़की को घूमते देख कर ऐसे कितने ही गुंडे और अवारा पीछा करने की कोशिश किया करते हैं। लेकिन इनमें से कितने ऐसे मतवाले हैं जो वास्तव में "जनता की सेवा" कर रहे थे ? अब मुझे याद आता है कि उस दिन जब मैं कोयले की पहाड़ी पर खड़ी नीचे के दृश्य पुराने शाही मकानों की सोने के रंग की खपरैलों की छतें, पीकिंग के एक मंजिले भूरे भूरे मकान जिन पर पुराने पेड़ों की पत्तियां जमा थीं, देख रही थी तो मैंने चारों ओर देखा तो एक पुलिसमैन को काली वर्दी में अपनी ओर आते पाया। उसने मुझे एड़ी से चोटी तक देखा और देखता रहा, आखिर मैं परेशान हो गई और चल पड़ी पर जल्दी चलने की कोशिश नहीं कर रही थी। आज समझी हूँ उसने मुझ पर शक किया था कि मैं "राष्ट्रवादियों की एजेन्ट" हूं और अपने पास टाइमबंब लिए उसे गाड़ने के लिए किसी अच्छे स्थान की खोज कर रही हूं।

(८)

छातों की फुलवाड़ी

स्वतन्त्रता के बाद १९४९ और ५० के बीच पेता में हमारे जीवन में जो परिवर्तन आये केवल उनके वर्णन पर सारा ध्यान केन्द्रित करने से मैं समझती हूं चित्र का एक पहलू अधिक उभर आने का भय हो सकता है। हमारे जीवन के अधिकाधिक व्यापक संगठन का किसी भी भांति यह अर्थ नहीं कि "आत्म संयम" के जीवन में कहीं छूट नहीं मिलती थी।

थोड़े दिनों बाद हमें नियमित रूप से छुट्टियां "दी जाती" थीं—"दी जाती" शब्द का ही में प्रयोग करना चाहती हूं क्योंकि यह छुट्टी हमारे विटामिन रहित अपूर्ण भावमय जीवन में ऐसे "स्नायुविक-उत्तेजक" विटामिन के समान थी जो शरीर में विचारपूर्वक पहुंचाया जाता है।

ग्रीष्म और कम्युनिस्ट वर्ष के अन्तिम दिनों में सरकारी उत्सवों का प्रारंभ लाल मई दिवस के साथ होता था। इसके बाद पहली जुलाई का उत्सव आता जो १९२१ में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अधिष्ठान का दिन है। फिर हम पहली अगस्त को जनमुक्ति सेना का जन्म-दिवस मनाते। पहली अक्तूबर एक नया राष्ट्रीय उत्सव है जब १९४९ में जन गण-राज्य की विधिवत स्थापना हुई थी। हमारे पत्रों ने बतलाया कि २१ दिसम्बर १९४९ को सारी दुनिया में स्तालिन का ७० वाँ जन्म दिन विशेष आयोजनपूर्वक मनाया जा रहा है। पीकिंग में उसका अभिवादन शहर भर में दो दिन का उत्सव मना कर हुआ जिसमें स्कूलों के लड़के और लड़कियां, यूनिवर्सिटी के छात्र तथा जनसाधारण सोवियत दूतावास की ओर परेड करते हुए गये और वहां जाकर भाषण और भेंट देकर उत्सव मनाया गया।

समस्त सरकारी भवनों से लटकते हुए बड़े-बड़े लाल झंडे, दुकानों और निवास स्थानों से लटकते हुए छोटे-छोटे झंडों के नीचे पीकिंग की जनता समस्त समाचारपत्रों में एक दो दिन पहले प्रकाशित हुए नारे लगाती और परेड करती हुई निकली। आम सभाएं समाप्त होने के बाद लोगों की भीड़ पार्कों में चक्कर काटने लगी। सुन्दर सजावट की प्रशंसा के गीत गाती रही और उसके बाद

उसने आतिशबाजी के भव्य प्रदर्शन को देखा। अपने मुहल्ले के प्रगतिवादियों द्वारा भेजा हुआ असन्तुष्ट गृहस्थ जब पुराने 'निषिद्ध नगर' को जाने वाले स्वर्गीय शांति के द्वार के सामने नये रेडस्क्वायर में लाखों की संख्या में अपने साथी नागरिकों से कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा हुआ तो मंच पर खड़े वक्ता के लाउड स्पीकर से आते हुए शब्द सुनकर उसे भी अपने चारों ओर के जन-समुदाय के साथ एकात्मता और परस्पर प्रेम का अनुभव हुआ। ऐसा सामुहिक शक्ति का अनुभव उसे पहले कभी नहीं हुआ था।

• रेड स्क्वायर के विशाल प्रांगण में जनता को इकट्ठा लाने के लिये विस्तृत आयोजन और एक परिश्रमी सावधान संगठन की आवश्यकता थी। शहर के जन-साधारण से यह अपेक्षित था कि हरएक परिवार से वह ऐसे सार्वजनिक उत्सवों में कम से कम एक-एक प्रतिनिधि भेजे। एक दिन पहले हर मकान पर पुलिस के आदमी जाते और उत्सव में हिस्सा लेने वालों के नाम लिख ले जाते। मोहल्ला संगठन द्वारा चुने हुए परेड के नेता परेड शुरू होने से कई घण्टे पहले परेड में हिस्सा लेने वालों की लाइन बना लेते और हाजिरी लेकर यह पक्का कर लेते कि हर घर का प्रतिनिधि आया है। यद्यपि प्रत्येक अधिकारिक उत्सव के लिये अच्छी खासी भीड़ एकत्र करने का यह ढंग पुरानी सरकार से लिया गया था पर अनिच्छुक मार्च करने वालों की भरती एक नई कुशलता प्रगट करती थी।

ऐसे बड़े उत्सवों पर हर दुकान और मकान से राष्ट्रीय झंडा फहराये जाने का प्रबन्ध हमेशा की भांति अब भी पुलिस ही करती थी। पुराने दिनों में उनका यह काम अक्सर अव्यवस्थित होता था। पहले "दुहरी १० तारीख" (अक्तूबर की १० तारीख जिस दिन १९११ में किवुचांग विद्रोह हुआ था, और पहली चीनी क्रान्ति का प्रारम्भ हुआ था जिसे राष्ट्रीय त्योहार के रूप में मनाया जाया करता था) जैसी पुरानी छुट्टियों के दिन मुख्य सड़कों पर भी मैं कितने ही घरों के सामने से चली जाती पर कुछ ही घरों पर राष्ट्रीय लाल झंडे फहराते मिलते जिनपर नीले आकाश में श्वेत सूर्य बना रहता था। अब इस स्थान पर लाल झंडे के कोने में पांच छोटे-छोटे सुनहरे सितारे होते थे। जब १ अक्तूबर १९४९ से कुछ पहले नये ध्वज को सरकारी तौर पर स्वीकार किया गया तो पुलिस के सिपाहियों को झंडे लेकर हर घर में एक-एक झंडा बेचने के लिये भेज दिया गया। कुछ पुलिस के सिपाहियों के बारे में ऐसी

अपेक्षित अफ़वाहें भी फैलीं कि वे सरकार द्वारा निर्धारित झंडों की कीमत से ज्यादा कीमत ले रहे थे। पर झंडों की कीमत इतनी थोड़ी थी कि मुझे विश्वास है कि अगर उन्होंने ऐसी कोशिश की भी होगी तो उन्हें अधिक लाभ नहीं हुआ होगा।

कम अनुग्रह प्राप्त लोगों के लिए इन सभाओं में जाना आवश्यक था परन्तु पेता के छात्रों पर इन परेडों और सभाओं में जाने के लिये कोई सरकारी दबाव नहीं था। परन्तु शायद ही कोई छात्र इनमें न जाता हो। शहर के जन-साधारण की अपेक्षा हम लोग अधिक संगठित थे और हमारे संयमित उत्साह और अनुशासन पर विश्वास किया जा सकता था। हर निर्धारित उत्सव के कई दिन पहले से छात्र नेता एक सभा से दूसरी सभा में जाकर हम लोगों को कार्टून खींचने, नारे लिखने, झंडे और झंडियां बनाने, 'यांग-को नृत्य' का अभ्यास करने और उत्सव में गाये जाने वाले गाने का पूर्व प्रयोग करने के लिये दौड़-धूप करते थे। जब किसी लड़की से ऐसे कामों में सहायता करने के लिये कहा जाता तो उसे 'ना' कहना मुश्किल था। यदि हमारे कमरे के निवास केन्द्र के "भवन मैनेजर" ने हमसे स्त्रियों के विशेष सहगान में सम्मिलित होने के लिये कहा और हमने कोई अच्छा सा बहाना निकाल कर उसे टरका दिया तो दूसरे दिन दोपहर को यांग-को टीम में शामिल होने के लिये आमन्त्रित करने हमारी कक्षा का नेता यह बहाना लिये आ धमकता था कि टीम के संगठन के लिये उसे अभी तक दो लड़कियों की जरूरत और है। दूसरे सहायता के इच्छुक संगठनकर्ताओं को जवाब देने से बचने के लिये पहले निमन्त्रण को स्वीकार करना श्रेयस्कर था। पहले पहल परेड के विभिन्न भागों को संगठित करने के लिये भिन्न-भिन्न गुटों, निवास केन्द्रों और कक्षाओं में काफी प्रतियोगता होती थी। परन्तु बाद में यह सब अधिक कुशलता से होने लगा क्योंकि यूनिवर्सिटी के अधिकारियों ने छात्रों के प्रत्येक गुट को विशिष्ट काम सौंप दिया था।

चूंकि जनता के अन्य वर्गों की अपेक्षा हम लोगों में अधिक उत्साह था, अतः शहर भर में होने वाली आम-सभाओं में हमें वक्ताओं के सामने एक सम्मानित जगह दी जाती थी। हमारी आम सभाओं में आयोजित आवाज की आवश्यकता होती थी और जैसा कि मैं पहले कह चुकी हूँ हम लोग दूसरे गुटों से शायद अधिक संगठित थे। स्वयं पार्टी मेम्बरों की बात छोड़िये जो

जय जयकार और तालियां बजा कर जनता को प्रोत्साहित करने के लिये जिन लोगों के बीच काम करते थे उन्हीं में इधर-उधर बैठे रहते थे। रेड-स्क्वायर को जाते और वापस आते समय होने वाली परेडों में भी हमारा आचरण शहर की जनता के एकदम विपरीत होता था जो उनके नेताओं के बार-बार प्रार्थना करने पर भी धक्का मुक्की करते चलते थे। हम व्यवस्थित ढंग से अपने नेताओं की आज्ञा पर नारे लगाते तथा गाते हुए मार्च करते थे। हमारे नेता जिनकी बाहों पर पहचान के लिये पट्टियां बंधी रहती थीं, कतार के आगे मार्च करते चलते थे। जब परेड आगे अव्यवस्थित हो जाती और परेड की एक इकाई दूसरी इकाई को धक्का देने लगती तो अक्सर शहर की जनता लाइन तोड़ कर इधर-उधर बैठ जाती या चाय और मूंगफली बेचने वाले लोगों के चारों ओर भीड़ लगा कर खड़ी हो जाती जब तक कि पुलिस बेचने वालों को भगा न देती। परन्तु ऐसे समय हम सड़क के बीच में ही रुक कर देखने वालों के लिये यांग-को नृत्य का प्रदर्शन करने लगते और हमारा विश्वास है कि वे लोग हमारे नृत्य की प्रशंसा करते थे।

निस्संदेह यांग-को लोकनृत्य परेड का सबसे सुन्दर भाग होता था। ढोल पीटने और मजीरा बजाने से निकलने वाली ध्वनि चांग-चांग ! ची-चांग-ची ! नये जन उत्सवों में गलियों से जाते हुए छात्रों की कतारों की मूल लय होती थी। मार्च में पड़ने वाले मूलभूत कदमों को कोई भी समझ सकता था...पहले जूते के तलवे को जमीन पर मारते हुए, तीन कदम आगे और एक कदम पीछे। मार्च से पैदा होने वाली लय को सही रखने के लिये हम अपने घुटनों को उठाते और अपने डगों की लम्बाई को तूल देते और पवन-चक्की के चलते हुए पंखों की तरह हम अपने हाथों को आगे और पीछे घुमाते थे। प्रचलित मुहावरा "यांग-को का छटपटाना" इसी क्रिया का द्योतक है। इसे या तो हम एक लम्बी सर्पाकार पंक्ति में, मार्ग पर बल खाते हुए धीरे-धीरे चलते हुए कर सकते थे या गोले में घूम घूम कर धीरे-धीरे, जबकि हमारे आगे और पीछे मार्च करने वाले रुक जाते।

स्वतन्त्रता के पहले नाचते समय हमने विशेष पोशाक कभी नहीं पहनी। यहां तक कि अधिक महत्त्वपूर्ण अवसरों पर भी आदमी अपने सर के चारों ओर केवल रूमाल लपेट लेते और स्त्रियां अपनी कमर में दुपट्टा बांध लेती थीं। अपनी यूनीफार्म में या पश्चिमी ढंग के पैण्टों और जाकिटों में लड़के नगाड़े

और घड़ियाल पर आगे पीछे नाचते कूदते हुए चलते थे। वे अपने भारी जूतों में उन किसानों की स्त्रियों की निष्फल नकल करने की कोशिश किया करते थे जिनके पैर बंधे रहते हैं। स्वतन्त्रता के बाद यांग-को लोकनृत्य आनन्ददायक तमाशा सा हो गया। स्त्री-पुरुष सभी एक जैसे साफे, छोटी जाकिट, लम्बे पाजामे, कमर में दुपट्टे लपेट लेते और कपड़े के स्लीपर पहन लेते थे। यह सब कपड़े चमकीले रंग के होते थे जैसे लाल, हरे, नीले और पीले। हम स्त्रियां अपने चेहरों पर खूब पाउडर और लाली भी लगा लेती थीं। अपने गालों पर इतनी लाली लगातीं कि वे ज्यादा पके हुए सेव की तरह लाल दिखलाई पड़ते तथा ओठों को लिपिस्टक लगा कर इतने भड़कीले सिन्दूरी रंग के बना लेती थीं ताकि हम पीकिंग ओपरा के उन शास्त्रीय अभिनेताओं की तरह दिखने लगें जो स्टेज से उतर कर दिन के प्रकाश में आ गये हों। रात को जब हम लकड़ी से जलती हुई आग या मशालों के आस-पास नृत्य करतीं तो किसानों की स्त्रियां जैसे दीखने के बजाय दक्षिण से आई हुई अनुरागी स्त्रियों जैसी लगती थीं। आदमी भी अपने चेहरों पर लाली पोत लेते एवं स्याही की मोटी नकली भौहें बना लेते और अपने चमकीले मुलायम स्लीपरों में बड़े कोमल ढंग से बन कर चलने की कोशिश करते।

बाद में यांग-को लोक नृत्य को सही सर्वहारा रूप देने की कोशिश की गई। नृत्य में अपने भड़कीले पाजामों और दुपट्टों के बजाय हमसे कहा गया कि हम पूरे नीले कपड़ों में आया करें ताकि फैक्टरी में काम करने वाली लड़कियों जैसी लग सकें। लड़कों से कहा गया कि वे अपने सिरों पर साफ तौलिये लपेट लिया करें ताकि वे पसीनों से भीगे हुए किसानों के साफे लग सकें जैसा कि वे खेतों में काम करते समय बांधते हैं। फिर हमने दफ्ती के नकली हथौड़े, मूसल, हांसिए, खुरपे और दूसरे औजार बना लिये। जब हम नाचते तो मेहनतकश जनता से अपनी एकरूपता दिखाने के लिए उन्हें इधर उधर घुमाते। शहर में पले हुए लड़के जो गेहूँ की बालों के ढेर में से 'काओ लांग' के डंठल भी अलग नहीं कर सकते थे अपनी दफ्ती की हंसियों से हवा में गेहूं के बड़े बड़े पुंज काट रहे थे और हम लड़कियां अपने हथौड़ों को इतनी तेजी से घुमा रहीं थीं कि वे जिस पर भी चल जाते उसका सफाया कर देते। भीड़ में जो कोई असल मजदूर और किसान हमें देख रहे थे उन्होंने हम लोगों को अपने नए और बिना दाग के कपड़ों में औजारों की भद्दी कागजी नकल करते हुए देखकर बिल्कुल नादान समझा होगा। पर हमें इसमें बडा मज़ा

आया और हम इच्छा से खूब नाचे, यद्यपि स्वतंत्रता के बाद अपने लिए बनवाये हुए भड़कीले कपड़े हम अब भी अधिक पसन्द करते ।

इस नृत्य में हमने जो नई पद्धति अपनायी वह कम्युनिस्ट दृष्टिकोण से नैतिक औचित्य के विपरीत सिद्ध हुई । १६४६ की जून में चिन-पू-जी पाओ (प्रगतिशील दैनिक) ने अपने सम्पादकीय में यांग-को लोकनृत्य में होने वाले "असंयम" के बारे में बड़ी सच्चाई से टीका टिप्पणी की । नगर-पालिका सामान्य-श्रम संघ ने अपने मजदूरों को पहले ही आज्ञा दे दी थी कि वे नृत्य समारोह में कई बातें बन्द कर दें। बौद्ध और ताओ वादी भिक्षुओं के परम्परागत चरित्रों को अब इसमें नहीं लिया जा सकता था क्योंकि वे "सामन्तवादी" और "अन्धविश्वासी" थे । नाचने वाले नृत्यकारों को आज्ञा मिली कि वे लड़कियों की तरह शृंगार न किया करें। स्त्री और पुरुष दोनों से कहा गया कि वे शृंगार प्रसाधनों का उपयोग कम करें । हमारे नेताओं ने इन नियमों की ओर हमारा ध्यान दिलाया और हमारे अभिनय अब अधिक संयत होने लगे ।

वैसे पीकिंग में यदाकदा ही वर्षा होती है पर हमारी परेडों और सभाओं के संगठन-कर्ताओं पर मौसम की असाधारण कोपदृष्टि रही । फरवरी १६४६ मे हुई पहली औपचारिक परेड में लिन-पियो के सैनिक अपने साथ ग्रामीण जीवन की एक झांकी भी ले आये थे । उनके साथ गरजती हुई हवा का तूफान आया जो धूल के पीले कणों को हमारी आंख और नाक के अन्दर डाल गया । उन दिनों बसन्त और गर्मी के मौसम में हम जिन आम-सभाओं में सम्मिलित हुए उनमें हमारे ऊपर या तो मूसलाधार वर्षा फूट पड़ी या इससे भी बुरी, बुरी तरह से तंग करने वाली, बूंदाबांदी हुई जो बिना हमें अच्छी तरह से भिगोये हमारे कपड़ों में समा गई । जो विद्यार्थी बहुत दिनों से एक अच्छा प्रदर्शन संगठित करने के लिये काम कर रहे थे वे अपने भीगे जूते पहने, बांसों पर इधर उधर चिपके तथा टपकते हुए लाल झंडों को लिये खड़े थे । जिन लालटेनों को हमने इतनी सावधानी से एक दूसरे से चिपका कर बनाया था, बरसात ने उनको बांस की आकृति का बना दिया था—जैसे चिड़ियों के अनाथ घोंसले हों—जिनकी बांस की खपच्चियों से कागज के टुकड़े चिपके हुए थे । हमारे श्रेष्ठतम लेखकों द्वारा मोटे अक्षरों में लिखे गये पोस्टर भीगने से घुलमिल गये थे । उन पर लिखे हुए हमारे नारे स्याही के फैलने और इधर

भीड़ में खड़ी हुई गांवों की जनता और अन्धविश्वासी दुकानदार वर्षा या आंधी के झोकों के कारण शोर गुल मचा रहे थे। वे शायद फुसफुसा रहे थे कि परमात्मा असन्तुष्ट हो गया है और नई सरकार को परमात्मा ने अपना आशीर्वाद नहीं दिया है। पर हम छात्रों ने अपने दृढ़ मोर्चे को बनाये रखा। मूसलाधार वर्षा के अन्दर भी हम दृढ़ता से और मनोविकार शून्य भाव से खड़े थे और उसी अनुशासन से मार्च कर रहे थे जैसा कि हम धूप में करते। हमने अन्य लोगों की अपेक्षा जोर जोर से गाना जारी रखा चाहे हम अपने उत्साह को बनाये रखने के लिये ही गा रहे हों। एक बार मूसलाधार वर्षा में हमारे बायें ओर छात्रों का एक टुकड़ी एक साथ तेजी से गा उठी, "मुक्त देशों में मौसम साफ है और जनता—जनता कितनी प्रसन्न है, जनसरकार अपनी जनता को प्रेम करती है—और कम्युनिस्ट पार्टी की हमारे ऊपर इतनी कृपा है कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।" हमारी ओर देखते हुए हमारे नेता यदि सावधानी से सुन रहे हों तो उन्होंने इस सहगान में निहित व्यंग के पुट को भी सुना होगा।

जब भी रेडस्क्वायर में वर्षा होने लगती तो मीटिंग में हमेशा खलबली मच जाती। एक बार स्क्वायर में आने पर उसे छोड़ कर कोई नहीं जा सकता था जब तक कि वह बेहोश न हो जाय या चोट न खा जाय। यद्यपि किसी में यह साहस न होता था कि मीटिंग में व्यवस्था को बिगाड़े या लाइनों को तोड़े तो भी वर्षा होने पर अनेक लोग स्वतः ही अपने छाते खोल लेते। जो लोग नेताओं के मंच पर होते थे उन्हें वर्षा के पहले स्पर्श से अद्भुत पुष्पों जैसे खिले हुए हजारों हरे और काले रंग के सुनहरी वार्निश चढ़े हुए छातों का दृश्य बड़ा ही प्रभावोत्पादक लगता होगा जैसे वर्षा से फूल खिल उठे हों।

परन्तु पेता के अधिकांश छात्र अपने उत्साह को प्रकट करने के लिये छाते नहीं लाते थे और न बारिश शुरू होने पर अपनी जाकेटों से अपने सिर को ढकते थे। इसके बजाय हम अपने सिर को ऊंचा किये खड़े रहते और अपने पीछे वालों के छातों से पीठ पर गिरते हुए ठंडे पानी को बहने देते। परिणाम यह होता कि हमारे बाल और कपड़े हमारे शरीर से चिपक जाते। हमारे लिये यह उचित न था कि हम अपने कपड़ों को उतार कर उन्हें सुखाने के लिये निचोड़ लेते पर अक्सर बरसात के बाद हवा चलती और हमें गर्मी देने के लिये धूप निकल आती। उस समय तक तियन-अन गेट की चोटी पर खड़े नेताओं ने अपने भाषण समाप्त कर लिये होते थे। हमारे शरीर से निकलने

वाली गर्मी हमारी यूनिफार्म को सुखाने के लिये पर्याप्त होती थी और जो थोड़ी बहुत नमी बाकी रहती वह वापसी की परेड के दौरान में अवश्य ही समाप्त हो जाती जब हम गाते, नारों को चिल्लाते, भागते और यांग-को नृत्य करते वापस लौटते।

बाद में हमें अपने साथियों के साथ किसी एक गली में प्रचार करने के लिये जाना पड़ता था। गांवों से आई हुई जनता के आमोद प्रमोद के लिये आग जला कर उसके चारों ओर बैठ कर गाना पड़ता था। साधारण रूप से जबतक हम अपने छात्रावास को वापिस लौटते, रात के ९ या १० बज जाते थे। सुबह ८ बजे जब हम ताजा और फुर्तीले यहां से निकलते तब से अब तक काफी समय हो जाता था। ऐसे किसी उत्सव के बाद रात को हम सब मुर्दों की तरह सो जाते और दूसरे रोज जब उठते तो सारा शरीर दुखा करता, पैर थके हुए होते और हम दो रात्रि के उत्सव से लौट कर आने वाले मुर्झाये प्राणियों की तरह एक दूसरे का अभिवादन करते थे।

निसंदेह हम सब ने जान लिया था कि छात्रावास में ठहरने के बजाय परेड में जाना आसान था। ऐसी छुट्टियों के दिनों में जो व्यक्तिवादी, आलसी और उद्धत छात्र इन समारोहों में हिस्सा लेने के निमंत्रण को ठुकरा देते और इधर उधर घूमने या पढ़ने के लिये रह जाते, वे कुल विद्यार्थियों का दशांश भी न थे। वे ऐसे विवादी या उदासीन छात्र होते थे जो हर सप्ताह होने वाली आलोचना सभाओं में और लोगों की आलोचना की चिन्ता नहीं करते थे।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की वर्षगांठ के सम्मान में हुई पहली जुलाई की सभा में बैटी-चांग नामक मेरी एक सहपाठिन नहीं गई थी। उसके बाद आलोचना सभा में जो वास्तविक तर्क हुए वैसे मैंने ऐसी सभाओं में पहले कभी नहीं सुने थे। बैटी एक सुन्दर पर घमंडी और क्षुद्रमन वाली लड़की थी जिसे अपने असली चीनी नाम से यह विदेशी नाम पसंद था। किसी प्रकार का महत्व दिये बिना हम बैटी को पसन्द करते थे। उसके आलोचकों ने उसकी आलोचना करने के लिये थोड़ा भी इन्तजार नहीं किया।

"परेड में हिस्सा न लेकर कुमारी चांग ने अपने स्वतंत्र, अनुशासन-हीन बुर्जुवा ढंग को साफ प्रकट कर दिया है..." उसके अभिनंदन में यह पहली तोप दागी गई थी।

पर बैटी हम सबको चकित करती हुई उठ कर भड़क उठी, "यह सही नहीं कि मैं हिस्सा नहीं लेना चाहती थी।" उसने बोलना शुरू किया और फिर उसकी आवाज में गर्मी आ गई, "पर मीटिंग और परेड, फिर मीटिंग और मीटिंग, इन सब में क्या रखा है ? हम-सब जाते हैं और ७ या ८ घंटे या यहां तक कि १० घंटे से भी ज्यादा खड़े-खड़े मार्च करते हुए या गाते हुए बिता देते हैं और दूसरे दिन हम इतने थक जाते हैं कि काम भी नहीं कर सकते। क्या यह समय की बर्बादी नहीं है ? हमारे वास्तविक काम के लिये एक बाधा नहीं है ?"

एक तरह से यह हास्यास्पद लगता था क्योंकि यह बैटी कह रही थी जो पढ़ने के बजाय लड़कों के साथ अधिक घूमती थी। मुझे विश्वास था कि वह चाहे किसी कारणों से न गयी हो, पर वह घर पर पढ़ नहीं रही थी। यद्यपि वह आदर्श प्रवक्ता नहीं थी पर शायद उसका भी एक दृष्टिकोण था।

"समय बरवाद करना"। युवक संघ का सदस्य जिसे बैटी ने आलोचना करते हुए रोक दिया था बैटी की इस खुली पाखंडता पर हकलाया। वह गुस्से में बोलते हुए रुक गया और उसे पीने की कोशिश करते हुए बोला, "लेकिन—इन मीटिंग का शिक्षा की दृष्टि से भारी महत्व है। आप कहती हैं कि समय बरबाद होता है ? ऐसा क्यों..."

"ठीक है ! यदि मैं उन १० घंटों को पढ़ने में लगाऊं तो उससे मुझे ज्यादा फायदा होगा बजाय इसके कि मैं उस समय को भीड़ में दूसरे लोगों से धक्का मुक्की में खर्च करूं।" मैं कल्पना नहीं कर सकती थी कि बैटी १० घंटे तक कुछ भी पढ़ती रह सके। पर हम सब इसका उत्तर सुनने के लिये आगे को झुक गये।

"यह समस्या को सुलझाने का बड़ा छिछला ढंग है।" युवक संघ का वह सदस्य अपने गुस्से को रोकने का भरसक प्रयत्न कर रहा था, यह बैटी के लिये अच्छी बात थी। "हम जानते हैं और आपको भी जानना चाहिये कि जिस मीटिंग में हम जाते हैं उसका एक विशेष महत्व होता है और मीटिंग किसी सम्बन्ध में भी हो, यह हमेशा जनता की शक्ति की दृढ़ता और उसके विकास को व्यक्त करती है। आपकी अनुपस्थिति प्रकट करती है कि आप हृदय से जनता की शक्ति का आदर नहीं करतीं। यह भी हो सकता है कि आप उसका

तिरस्कार करती हों। । कुमारी चांग ! अपने को टटोलिये। अपने विचारों को तौलिये। तब शायद आप स्वयं की ठीक-ठीक आलोचना कर सकेंगी।"

अवश्य ही जनता की शक्ति को नाराज नहीं किया जा सकता था। बैटी यह नहीं कह सकती थी कि वह जनता की शक्ति का आदर नहीं करती। यद्यपि वह कठिनाई में थी पर उसने हिम्मत न हारी। "कुछ भी हो मुझे लगता है कि इतना समय नष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं है। जरा सोचिये, हर बार लाखों आदमी आते हैं और हर आदमी अपना पूरा समय उसमें लगा देता है। इन काम करने के लाखों घंटों में अवश्य ही बहुत से बड़े बड़े काम किये जा सकते हैं।"

"मैं आपको समझाऊं कि ऐसी आम सभाओं में हमें क्यों हिस्सा लेना चाहिये।" अभी तक हमारे कम्युनिस्ट नेता ने अपने आपको इस बहस से दूर रखा था। अब वह बोला, "जैसा कि युवक संघ के हमारे कामरेड ने बतलाया है सबसे पहले तो हर आम सभा का एक विशेष और महत्वपूर्ण अर्थ होता है। जनता को यह विश्वास दिलाने के लिये आप इस विशेष सभा का समर्थन करती हैं आपको इसमें हिस्सा लेना चाहिये। दूसरे हर आम सभा से हमें मूल्यवान ज्ञान प्राप्त करना चाहिये। क्या सभी वक्ता हमारी जनता के नेता नहीं हैं, जिन्हें राजनीति का व्यापक ज्ञान और व्यवहारिक अनुभव है ? हमें अपने आपको धन्य समझना चाहिये कि हमें उनसे सीखने का अवसर, उनके ज्ञान और अनुभव के थोड़े अंश को आत्मसात करने का अवसर मिलता है। यूनिवर्सिटी में राजनीति पढ़ने से भी यह सीखने का अवसर बड़ा होता है और इसे हमें अपने हाथ से नहीं निकलने देना चाहिये।"

"तीसरे, जिस ओर हमारा नया समाज जा रहा है उस दिशा को भी हमें समझना चाहिये। हमारा नया समाज सम्पूर्ण "समूहवाद" के मार्ग पर बढ़ रहा है—सामूहिक उत्पादन और सामूहिक ज्ञान के साथ ही साथ हमें सामूहिक जीवन की ओर भी अग्रसर होना चाहिये। हजारों की आम सभा में हिस्सा लेना हमारे अन्दर सामूहिक जीवन की आदतें डालने में सहायक हो सकता है। हम सबका एक साथ खड़े होना, हमें जनता की शक्ति का अनुभव कराने में सहायक हो सकता है—आप सब लोग जो अपने समय के बारे में कुड़मुड़ाते हैं—इस पर आप विचार कीजिये। कुमारी चांग अब आप क्या सोचती हैं ?"

बैटी को उससे बड़ी शक्ति ने चुप कर दिया। कम्युनिस्ट धैर्य से उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। गतिरोध का हल करने के लिये प्रतिभावान प्रगतिवादी जुह

आगे आ गया जिसका प्रभावशाली ढंग से बात का समारोप करना हमारे नेताओं को अच्छा लगता था।

"शक्तिशाली त्यान-अन गेट के नीचे चेयरमैन माओ के सामने लाखों लोग इकट्ठे हों", वह महाकाव्य की कथा की तरह कहने लगा "पीकिंग के नागरिक हर गली, हर रास्ते, हर घर, हर दुकान, हर स्कूल और हर एक सार्वजनिक भवन से इकट्ठे हों; लाल झंडे दीवारों से, ऊंची चोटियों से और स्वयं जनता के भारी जमघट से फहरा रहे हों; हमारे गानों के साथ घड़ियाल और नगाड़े बज रहे हों; चारों ओर खुशी ही खुशी हो; तथा हमारे नेताओं की प्रशंसा हरएक के ओठों पर हो।" वह धाराप्रवाह अतुकान्त कविता की तरह बोलता रहा "उस प्रेरक दृश्य को देखने के लिये हममें से सभी जाना चाहेंगे। क्या जब आप अपनी जनता को वहां खड़े हुए पाते हैं जब उसका अनुशासन, उसका संगठन, उसका शक्ति प्रदर्शन देखते हैं तो आपका दिल खुशी से नहीं नाच उठता? साथियो, जब विचारवान स्त्री या पुरुष आम सभा को देखता है तो उसे पहले से भी ज्यादा भली प्रकार समझना चाहिये कि कम्युनिस्ट पार्टी शब्दों से और वायदों से ही सत्तारूढ़ नहीं हुई है।" जुह का धाराप्रवाह भाषण बहुत अच्छा था। यह गलत होता यदि वह किसी की आलोचना करने की कोशिश करता। मैं समझती हूं वह ऐसा नहीं कर रहा था। कम से कम दूसरे प्रगतिवादी मुस्कराये और उन्होंने तालियां बजाईं। जो पार्टी के लोग वहां उपस्थित थे वे गर्व से फूले हुए और प्रसन्न दिखलाई पड़ते थे।

ऊपर से देखने में पार्टी के आदमियों और प्रगतिवादियों ने जो कहा था वह सही था। हममें से उन लोगों के अन्दर भी जो अपने अन्दर कुछ शंकाओं को स्थान दे रहे थे इन सभाओं और परेडों ने विश्वास को पुनर्जीवित करने का अवसर दिया। भीड़ के अमूर्त शोरगुल और सरगर्मी में हमारी शंकाएं निर्मूल हो जाती थीं और जिस नये जीवन में हमने प्रवेश किया था उससे समरस होने में आ रही कठिनाइयों को हम भूल सकते थे। जबकि हम लाल झण्डे लहराते, गानों का स्वर गूंजता तथा नगाड़े और घड़ियाल बजते तो शंका करने वाले भी (जनता की शक्ति में) विश्वास करने लगते। दूसरे लोगों की अपेक्षा अधिक तनकर खड़े हम विद्यार्थियों की आंखें नेताओं की ओर लगी थीं। चाहे तूफान उठ रहा हो या ठण्डी बूंदें पड़ रही हों, उस समय के हमारे कष्ट भी हमें एक विकृत आनन्द प्रदान करते थे।

(६)

परिश्रम और धर्म

यदि पूछा जाय तो पेता हमेशा से ही खेल-कूद में पिछड़ा हुआ था। हमें उसकी चिन्ता भी न थी। हम में से अधिकांश के लिए इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता था। वास्तव में पेता में शारीरिक या भौतिक बातों से ज्यादा बौद्धिक बातों का महत्व था। हम में से बहुत से लोगों के विचार में विदेशी ढङ्ग के खेल कूद में पीछे रहना प्रायः उतना ही प्रसंशनीय था जितना कि यूनिवर्सिटी को ऐसे विभिन्न विदेशी धार्मिक प्रभावों से बचाये रखना जो अनेक प्रतिद्वन्दी यूनिवर्सिटियों में देखने को मिलते थे।

. जापान पर विजय प्राप्त करने के बाद शारीरिक शिक्षा की "आधुनिक" पश्चिमी कल्पना की ओर पेता में कुछ ध्यान अवश्य दिया गया और नवयुवकों को सप्ताह में व्यायाम के लिए दो घंटे देने को कहा गया। अगले वर्ष खेल कूद के प्रति अपनी नयी रुचि प्रकट करने के लिए स्कूल के अधिकारियों ने कालेज के द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों के लिए भी शारीरिक शिक्षण अनिवार्य कर दिया। पर ऊंची कक्षा के विद्यार्थी इससे बचे रहे।

स्कूल और कालेज के नए विद्यार्थियों के लिए शारीरिक प्रशिक्षण वर्ग में जाना कौतुक का विषय था। पहली मीटिंग में पहले शिक्षक कर्कश सीटियों को बजाकर अपने अधिकार में जो छात्र थे उन्हें इकट्ठा करते और फिर अपने चारों ओर जमा छात्रों को बतलाते कि यूनिवर्सिटियों के नियमानुसार एक सत्र में शारीरिक प्रशिक्षण में अनुपस्थिति एक तिहाई से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। वे कहते कि जो इन कक्षाओं में नहीं आना चाहता अवश्य न आये। पर उसे यह याद रखना चाहिए कि वह कक्षा में कितनी बार नहीं गया क्योंकि यदि वह सत्र में एक तिहाई बार से अधिक अनुपस्थित रहा तो उससे शिक्षक को भी कष्ट होगा। इस खबर से बुरी तरह नाराज होकर छात्रों ने होहुल्ला किया और पीछे से आवाजें कस कर विरोध प्रदर्शित किया। जब तक असन्तोष का यह सहगान समाप्त नहीं हुआ शिक्षक प्रतीक्षा करता रहा और फिर अस्पष्ट

स्वर में बोला: "अच्छा, यदि आप कुछ अधिक भी अनुपस्थित रहेंगे, तो मैं समझता हूं इससे कोई बड़ा नुकसान न होगा।" बनयान और नेकर पहने शरीर में ताकत होते हुए भी वह हतोत्साह दिखाई देता था। अधिकांश लड़के उसे वास्तविक सभ्यता से परे पर सीधा साधा अच्छा कलाबाज समझ कर निभा लेते थे।

मेरा मतलब यह नहीं है कि शारीरिक शिक्षा हमारे लिए असहनीय दण्ड के समान थी। किसी भी तरह से उसे बहुत थकाने वाला नहीं कहा जा सकता था। हाजिरी लेने के बाद लाइन को हमेशा तोड़ दिया जाता था जिससे कि छात्र बास्केट-बाल, वाली बाल, फुटबाल या बेसबाल जो खेल पसन्द हो उसके अनुसार बंट जायें। यदि कोई किसी दिन गेंद का पीछा करते हुए पसीने से लथपथ होना पसन्द न करता तो वह मैदान में पड़ी हुई बेंच के कोने पर अपने कुछ दोस्तों के साथ गपशप करने को बैठ जाता। ज्यादा से ज्यादा शिक्षक निस्सहाय अस्वीकृति से उसकी ओर घूरता रहता।

यूनिवर्सिटी के हर कार्यकाल के बाद हमें खेल-कूद में वही लेखा देना पड़ता जैसा हम अपनी कक्षाओं में पढ़ने लिखने के बारे में दिया करते थे। हमें परीक्षा देनी ही पड़ती जैसे सोवियत संघ में निर्वाचन होते ही हैं। हर छात्र की गति और शक्ति की तीन विशेष परीक्षाएं हुआ करती थीं। पहली परीक्षा बास्केट-बाल फेंकने की होती। इसमें दीवार पर एक चांग (११ फीट) व्यास का एक लक्ष्य बना दिया जाता। हर प्रतियोगी को चार या पांच चांग पीछे हट कर बेसबाल से गोल बिन्दु में निशाना लगाना पड़ता था। हर प्रतियोगी को पांच अवसर दिए जाते थे। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि मेरे कुछ मित्र हर बार असफल रहते थे।

दूसरी परीक्षा में परीक्षार्थी को कोर्ट के बीचोबीच से एक बास्केट के पास तक पटकते हुए गेंद को ले जाना पड़ता। वहां बास्केट से गेंद निकालने के निशाने की परीक्षा थी। इस सिरे पर बास्केट में गेंद डालने के बाद हमें दूसरे सिरे पर लटकी हुई बास्केट से गेंद को निकालना पड़ता। पुनः उसे प्राप्त करके पटकते हुए कोर्ट के बीच लाना पड़ता। स्टाप-वाच से यह समय नाप लिया जाता। सारी कक्षा की परीक्षा होते होते अक्सर निर्धारित समय से अधिक समय लग जाता। कुछ छात्र तो दो मिनट या इस भी से अधिक समय ले लेते और दर्शक अधीर हो उठते।

अन्तिम परीक्षा एक सौ मीटर दौड़ की होती जो सारे कार्यक्रम में सबसे अधिक आनन्ददायक होती। गर्मियों के शुरू के दिनों में खिलाड़ी सूरज की तेज़ी से इतने शिथिल हो जाते थे कि वे जीतने के बारे में चिन्ता ही न करते। सर्दियों में कोई भी समझदार आदमी खेल में पसीने से लथपथ होना नहीं चाहता था क्योंकि इससे अपने मित्रों को कार्यक्रम में भाग लेते देखते समय सर्दी लगने का डर रहता था। एक दौड़ में मेरा एक मित्र इशारा पाते ही दूसरों के साथ दौड़ा। अपने दूसरे प्रतियोगियों की तरह वह भी मोटे गद्देदार सूत का गाउन और फर की टोपी पहने हुआ था। उसका ऊनी मफलर उसके पीछे लटक रहा था। एक दूसरे दौड़ने वाले ने अपने कपड़े के ऊपर विदेशी ढङ्ग का बना हुआ टोपकोट पहन रखा था जो उसके कानों तक को ढके हुए था। एक दूसरे खिलाड़ी ने ऊनी अस्तर की खाकी जाकिट पहन रखी थी। अपने हाथों को गर्म करने के लिए बाहों को अन्दर ढके हुए गपशप और मजाक करते हुए वे दौड़ते रहे। समय देखने वाला व्यक्ति उनके दौड़ की आखिरी रेखा तक पहुंचने की प्रतिक्षा अधीर होकर किया करता और मूक निराशा से केवल अपने सर को हिला सकता था। जीतने वाले ने इस दौड़ में बीस सैकिन्ड से ऊपर लिए। वह मेरा मित्र था। जब मेरा मित्र मुझे लेने आया तो उसने बतलाया कि यह दुनिया में एक प्रकार का दौड़ने का रिकार्ड था।

याद रहे, पेता उस पुरानी "राजधानी की विद्वत्परिषद" से बनी थी जिसके छात्रों को राष्ट्रीय परीक्षा पास करके राष्ट्र का शासन चलाने के लिए सम्मानित जगहों पर उम्मीदवारों के रूप में चुना जाता था। पहले जमाने के उच्च पदों के लिए ट्रेनिंग लेने वाले उम्मीदवारों की तरह ही हमारे जमाने के पेता के छात्र महान् बौद्धिक परम्परा के पोषक थे। उनका विश्वास था कि बच्चों की तरह पतंगों का पीछा करते हुए दौड़ धूप करना उनके विद्वत् परिषद के गौरव को कम करने वाली बात थी।

अवश्य ही पेता के कुछ छात्र अपने आत्म सम्मान की उतनी चिन्ता नहीं करते थे जितनी कि उच्च पदों के लिए नवयुवक उम्मीदवारों को थी। दोपहर के बाद खुले मौसम में नित्य ही बास्केट बाल और वाली बाल के मैदानों में लोग खेलते ही रहते थे यद्यपि ऐसे खेलने वाले छात्रों की संख्या बहुत थोड़ी थी जिन्हें नियमित व्यायाम से किसी प्रकार का लाभ मिल पाता। यह भी कहना सही नहीं कि स्कूल और कालेज के सभी नये छात्र शारीरिक शिक्षा की

कक्षाओं में सम्मलित हो गए थे। यूनिवर्सिटी का डाक्टर छात्रों को यह प्रमाण पत्र देने में उदार था कि वह अधिक परिश्रम के लिए अयोग्य हैं इसलिए उन्हें अपने आप ही खेलने से छुट्टी मिल जाती।

यदि किसी को "विदेशी राक्षसों" द्वारा लाए गए गेंद के खेलों में दिलचस्पी नहीं होती तो वह "चीनी मुक्केबाजी" के खेल में कभी भी हिस्सा ले सकता था। यूनिवर्सिटी ने मुक्केबाजी के खेल में प्रवीण लोगों को. शाउलिन और ताइची ढङ्ग की मुक्केबाजी सिखाने के लिए नियुक्त कर रखा था। चीनी मुक्केबाजी बहुत कुछ नकली मुक्केबाजी की तरह होती है जब कि पश्चिमी ढङ्ग की मुक्केबाजी में प्रतिपक्षी के शरीर पर वार किया जाता है। यद्यपि चीनी मुक्केबाची फुर्तीली होती है पर इसमें शिष्टता और अदा अधिक है, वास्तविक प्रहार कम। सर्दी के मौसम में दुपहरियों में छात्रों के छोटे छोटे गुट, चीनी मुक्केबाजी की सुन्दर और जानबूझ कर बनायी जाने वाली भंगिमाओं का अभ्यास करने के लिए मुक्केबाजी के प्रवीणों के रक्षत्व में, उन्हें सीखने के लिए आ जाया करते थे। ये भंगिमायें पानी से मछली पकड़ते समय पकड़ी जाने वाली मछली की भंगिमाओं की तरह होती थीं।

पेता को अपनी बहुत-सी व्यायाम संस्थाओं पर भी गर्व था जो नियमित रूप से दूसरे स्कूलों की टीमों को बास्केट बाल और वालीबाल खेलने का आमंत्रण दिया करती थीं। "तीतान व्यायाम क्लब", जो उस कठिनाइयों के काल की अवशेष थी, जब कि पेता दूसरी विस्थापित यूनिवर्सिटियों के साथ दक्षिण पश्चिमी यूनियन यूनिवर्सिटी बनाने में सम्मलित हो गई थी, समय समय पर जिगुआ की टीम से वालीबाल का मैच खेला करती थी। परन्तु हमारे उत्साहित करने पर भी वह अक्सर हार ही जाया करती थी। "ध्रुव व्यायाम क्लब" इससे बड़ी एसोसियेशन थी परन्तु उसके थोड़े से ही सदस्य अच्छे खिलाड़ी थे। राष्ट्रवादी सरकार के दिनों मे इस गुट का वास्तविक उद्देश्य खेल-कूद के बजाय भूमिगत राजनीतिक कार्यवाहियों के लिए ओट का काम देना था। स्वतन्त्रता मिलने के कुछ महीने बाद जब कम्युनिस्ट और प्रगतिशील लोग काफी संख्या में यूनिवर्सिटी छोड़कर कम्युनिस्ट क्षेत्रों में जाने लगे तो "ध्रुव क्लब" के प्रत्येक पांच सदस्यों में से चार क्लब को छोड़कर चले गये थे। अत: इस गुट का स्वाभाविक अन्त हो गया जो उचित भी था क्योंकि गुट का उद्देश्य पूरा हो चुका था। कुछ समय के लिए हमारी ति-चुन बास्केट बाल की

टीम भी थी जिसमें सभी खिलाड़ी उत्तर के लम्बे लम्बे लोग थे जो खेल में काफी दक्ष थे। पर बाद में "ध्रुव क्लब" ने इसमें "छद्म प्रवेश" करके इस टीम को आत्मसात कर लिया और उसे अपनी टीम कहने लगे।

स्वतंत्रता के साथ ही स्वास्थ्य-वर्धक व्यायाम हमारे जीवन में तेजी से एक महत्वपूर्ण स्थान लेने लगे। सार्वजनिक व्यायाम से शरीर हृष्ट-पुष्ट बनाने के लिये हमारे नये नेताओं ने अपनी रुचि दिखलायी। स्वतंत्र-व्यवसाय या मे-यो फात्से के पुराने दिनों में स्कूल के अधिकारी इस की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। वे केवल इतना ही कहते कि हम कुछ नहीं कर सकते। शायद शारीरिक स्वास्थ्य की ओर रुचि पैदा करने पर जोर देना हमारी नियंत्रित खुराक से उत्पन्न कमी को आंशिक रूप से पूरा करने के लिये था और वास्तव में अधिकांश छात्रों ने इसे पसंद नहीं किया। पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उच्च पदों की शिक्षा पाने वाले हम नवयुवकों के लिये जनसाधारण की तरह पसीना बहाना भी अच्छी बात थी।

सभी चीजों के व्यवस्थित रूप से संगठित होने से पहले व्यायाम का सर्वाधिक प्रिय स्वरूप नगाड़ा-नृत्य था। नगाड़ा-नृत्य से यांग-को या वृक्षारोपण लोकनृत्यों का भ्रम नहीं होना चाहिये। नगाड़ा नृत्य करने के लिये छात्र और छात्राओं की दो कतारें बनानी पड़ती थीं। ऊंचे-ऊंचे कपड़े पहने लड़के और लड़कियां पेता के ड्रिल करने के मैदान में लाइन बना कर खड़े हो जाते। हमारी कमर से लटके हुए लाल लाल नगाड़े बजाने के लिये हम सिद्ध रहते। हम नगाड़े बजाते, चारों ओर नाचते और फिर अपने व्यायाम शिक्षक की नकल करते हुए घूम पड़ते। एक साल की ट्रेनिंग के बाद हम में से बहुत थोड़े ही सफलता पूर्वक नगाड़ा नृत्य कर सकते थे। अधिकांश छात्र सादा प्रारम्भिक नृत्य ही जानते थे। "थप-थप, थप, थप, थप।" इसके बाद कूदकर दूसरी ओर मुंह करके "ती-ती थप"! इसके बाद अपनी टांग फेंकते और अपने पैर पर खड़े हो जाते या जैसे एक अतिरिक्त ताल देते हैं अपनी टांग ऊपर की ओर फेंकते और जांघ तक ऊंचे उठे हुए पैर को जब तक नीचे लाते नगाड़े पर एक जोर का थपका देते। यह नृत्य कठिन कम था पर था फुर्तीला। उत्साह में हमारे एक नेता ने मुझ से कहा "साथ साथ चीजों को करना सिखाने के लिये यह एक अच्छा अनुशासन है, आप जानती हैं लय एक सामूहिक क्रिया है, ऐसी जो हमें परस्पर जोड़ देती है।" यही मौका था जब मैंने नगाड़-नृत्य के बारे में किसी को प्रशंसात्मक कविता करते सुना था।

बाद में पीकिंग के सभी स्कूलों को सरकारी तौर पर कहा गया कि वे स्वयं व्यायाम की शिक्षा देने के विधिवत उपायों को लागू करें जिससे छात्रों के शरीर सुदृढ़ हो सकें और सरकार में सक्रिय कार्य करने के लिये उनके शरीर में शक्ति का संचार हो सके। व्यायाम द्वारा शारीरिक सौन्दर्य प्राप्त करने के लिये सामूहिक भुजा व्यायाम की यह भूमिका थी जिसे हम अपने ड्रिल लीडर की जोर जोर से दी जाने वाली आज्ञाओं पर करते थे। इस नई पद्धति के बारे में सबसे अधिक अप्रिय बात हमारी ड्रिल के लिये निश्चित किया गया समय था। सुबह सात बजे ही हमें अपने छात्रावास के सामने भुजा व्यायाम के लिये आना पड़ता जब कि हम में से बहुत से लोग उस समय तक जग भी न पाते थे। अतः जब हम पहले दिन व्यायाम के लिये गये तो हमारे कपड़ों के अन्दर सूखे हुए पसीने की चिपचिपाहट आ रही थी।

हमारे नेताओं की आज्ञाओं पर हाथ पैर फैलाना, उन्हें हिलाना, आगे की ओर फेकना, कूदना, झुक जाना और निहुर जाना इन क्रियाओं को "नयी सोवियत ढंग की शारीरिक शिक्षा" कहा जाता था। जब कि अंगों के मरोड़ की ये क्रियायें वाह्य रूप से दूसरी सेनाओं में किये जाने वाले व्यायाम से मिलती थीं, हमें बतलाया गया कि सोवियत वैज्ञानिकों ने नयी "प्रगतिशील क्रियाओं" को व्यायाम में और सम्मिलित किया है। इन्हीं के कारण लाल सेना के सिपाहियों की शारीरिक सुन्दरता पिछड़े हुए राष्ट्रों की सेना से कहीं अधिक थी। हमारे लिये यह दुनिया का सबसे अच्छा प्रचार नहीं था, यह बहुत कुछ अस्पष्ट था। पर हम तो अभी तक सेना में नहीं थे।

हमारे छोटे भाइयों के लिये मिडिल स्कूलों में शारीरिक शिक्षा का फिर से संगठन किया गया ताकि जब वे पढ़ लिख कर बड़े हों तो राष्ट्र की बढ़ती हुई सैनिक शक्ति के लिये उनकी आवश्यकता पड़ने पर वे सेना के लिये अधिक उपयुक्त हो सकें। बेसबाल के खेल को नई सरकार ने अमेरिकन खेल होने की वजह से थोड़े दिन के लिये नजरअन्दाज कर दिया यद्यपि वालीबाल और फुट बाल के बाद सर्वाधिक प्रिय यही था। लेकिन जब सरकार ने इस खेल में कुछ "सैनिक महत्व" पाया तो इसे फिर चालू कर दिया। बेसबाल फेंकने पर अधिक ध्यान दिया गया। पुरानी मुलायम गेंद की जगह बारूद के गोले की शक्ल जैसा हाथ से फेंकने का गोला आ गया। खुले मैदान के खेलों में उत्साह की दृष्टि से घुड़दौड़ को महत्व मिलने लगा और फुर्ती लाने के लिये हाईजम्प

और लौन्गजम्प को। रस्सी से चढ़ने और नसैनी लगाने की, भविष्य में सैनिक दृष्टि से उपयोगी होनेवाली परीक्षाएं होने लगी। पर परिश्रम के यह काम लड़कों के लिये ही थे। लड़कियां नगाड़ा-नृत्य और शारीरिक सौन्दर्य वर्धक व्यायाम में ही हिस्सा लेती थीं परन्तु सैनिक ढंग के इन कार्यक्रमों से वे मुक्त थीं। पर पेता में हम लड़कियों ने परेडों के लिये मार्चिंग का अभ्यास किया। फलस्वरूप हमारी परेड ऐसा सैनिक दृश्य उपस्थित करतीं कि उनके चित्र विदेशों मे उपयोग के लिये भेजे जाते थे।

कभी कभी सेना के और भी कौतुकपूर्ण खेल कूदों का वर्णन हम सुनते। जैसे मोटर-साइकिल दौड़, संगीनों के साथ दोड़, ऊंची जगहों से कूदना, पैराशूट से कूदना आदि। हांगको के रहने वाले एक साथी ने हमारे छात्रावास में अपने भाई से प्राप्त पत्र हमें पढ़कर सुनाया जिसमें उस शहर के डाकियों के खेलों के प्रदर्शन का वर्णन था। डाकियों का साइकिलों का एक बड़ा दल था। उन्होंने जो कमाल दिखाये उसका अभ्यास कई दिन पहले से किया होगा। वे अपनी साइकिलों के हैन्डिलों से झंडियां फहराते हुए चारों ओर चक्कर लगा रहे थे। उन्होंने अपने हाथ सर्पाकार जंजीर बनाते हुए इस प्रकार पकड़ रखे थे कि उनसे "कुंग-चान-तांग वान-शू" के अक्षर बन जाते थे जिसके अर्थ होते हैं "चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दस हजार बर्ष जिये" अर्थात् "अमर रहे"।

शारीरिक आमोद प्रमोद की तरह धर्म का पेता के छात्रों के जीवन में कोई महत्वपूर्ण स्थान न था। जिस तरह कुछ अति उत्साही लोग टेनिस कोर्ट में गेंद के चारों ओर चक्कर लगाते हैं वैसे ही कुछ झक्की अपनी आत्मा के कल्याण के लिये भटकते थे। अन्य सभी उसके प्रति उदासीन थे। वास्तव में राजनीतिक प्रश्नों में उलझे हुए स्वतन्त्र विचार वाले छात्र धर्म को "भीरुता, सुधारवाद और पलायनवाद का मिश्रण" कह कर मन से अलग कर देते थे। धर्म के के सम्बन्ध में यह एक लम्बा वाक्यांश था पर उत्साही नौजवान क्रांतिकारी के लिये यह एक सांस की बात थी।

हम में से अधिकांश लोग अपेक्षाकृत सहिष्णु थे, यद्यपि यूनिवर्सिटी में विभिन्न धार्मिक विश्वासों के अनुयायियों से हम अपने आपको बौद्धिक रूप से ऊंचा मानते थे। हमारे अपने धर्मों में ताओवाद को हम अशिक्षित किसानों के योग्य अन्ध विश्वास का अवशेष समझते थे क्योंकि वह अपनी महानता छोड़

यह स्वीकार करना कि "मैं भगवान बुद्ध में विश्वास करता हूं" उतना ही अविश्वसनीय लगता जैसा कि यह कहना कि "मैं जरस्थू धर्म में विश्वास करता हूं" और विनोदपूर्ण मुस्कराहट का कारण बनता ।

हमारे अन्दर थोड़े बहुत मुसलमान भी थे जो अब भी अपना खाना हमसे अलग बनाने और खाने की आदत नहीं छोड़ पाये थे । छुट्टियों के दिन जब हमें विशेष खाद्य मिलते तो वे सुवासित, सुअर के गोश्त की ओर देखते तक नहीं थे जबकि मेरे विचार में हम लोग सुअर का गोश्त सबसे स्वादिष्ट ढंग से बनाते थे । मैंने सुन रखा था कि मोहम्मद साहब के अनुयायियों के अपने अलग सिद्धान्त, आदेश और संस्थायें हैं । पर यूनिवर्सिटी में ये न तो कोई संगठित धार्मिक कार्यवाही करते थे, न किसी को अपने धर्म में मिलाने की कोशिश ही करते थे और न जिज्ञासु को अपना धर्म ही समझाते थे । यदि हम बार-बार यह पूछते कि मोहम्मद के आदेशों का पालन क्यों करते हैं तो उनका एक ही जवाब होता था कि "हमारे पूर्वज मुसलमान थे और शताब्दियों से हम इस धर्म में विश्वास करते आ रहे हैं ।"

प्रतिस्पर्धी ईसाई सम्प्रदायों में कैथोलिक सम्प्रदाय के लोग भी वही जवाव दे सकते थे जो मुसलमान दिया करते थे क्योंकि उनका धर्म भी पुश्त दर पुश्त से चला आता था । पर वे हमारे प्रश्नों के उत्तर जानते थे और तत्काल जवाब देने को तत्पर रहते थे । हर इतवार को प्रातः वे पे-हाई पैदल या साइकिल से जाने के निमंत्रण को ठुकरा कर और प्रिय विषयों का अध्ययन रोक कर गिरजाघर जाते थे । वे भक्त थे पर उनमें से अधिकांश धर्म को अपनी आत्मा तक ही केन्द्रित रखते थे ।

प्रोटेस्टैण्ट मत के अनुयायी यूनिवर्सिटी के मामलों में अधिक सक्रिय थे पर उनकी संख्या इतनी थोड़ी थी कि हमारे ऊपर किसी तरह का प्रभाव डालने की वे आशा ही नहीं कर सकते थे । उनके अनुयायी थे पर गैर ईसाइयों का ध्यान अपनी ओर खींचने में वे असफल रहे । मेरे विचार में ईसाई व्यक्तिवादी थे अतः अपने अन्तःकरण में उठने वाली भावनायें वे हम पर व्यक्त नहीं कर पाते थे ।

पेता में धर्म का यह स्थान था । पर जब हम अन्य युनिवर्सिटियों मित्रों से मिलने गये तो हमें मालूम हुआ कि वहां परिस्थिति विदेशी नरियों के प्रभाव में होने के कारण बिलकुल भिन्न थी । धार्मिक दि

अलावा इन युनिर्वासिटियों में दूसरे विषयों पर भी धार्मिक छाप स्पष्ट होती थी और कुछ कक्षाओं को तो निर्दिष्ट पादरी या पुजारी पढ़ाते थे। यद्यपि अध्ययन में धर्म के प्रभाव के विरोधी छात्रों को दंडित नहीं किया जाता था पर स्कूल के अधिकारियों ने धर्म परिवर्तन के शांत प्रयासों को नहीं छोड़ा। अतः जो छात्र धर्म में विश्वास नहीं करते थे उन्होंने धीरे-धीरे विरोध छोड़ दिया। वास्तव में ऐसा कहा जा सकता था कि इनमें से कुछ लोग धर्म परिवर्तन करके ईसाई होना स्वीकार कर लेते। यद्यपि छात्रों के खाली समय का उपयोग करने के लिये कोई कार्यक्रम नहीं था पर कोई भी दर्शक वहां व्याप्त धार्मिक वातावरण को देख सकता था। कहीं प्रतीक्षालय की दीवारों पर ईसामसीह का चित्र धार्मिक उपदेश लिखकर लटका होता था तो कैथोलिक स्कूलों के कमरों में मैरी का चित्र या क्रास से लगी हुई ईसामसीह की प्रतिमा दिखाई पड़ती थी। फ्यूजिन यूनिवर्सिटी के छात्रावास में नीचे जो मेरा परिचित पुराना नौकर था वह विनम्र, साहसी और अनुग्रही था। उसके गले में क्रास लटका रहता था। झाड़ू देते वक्त वह हमें बताया करता कि उसे ईसाई होने से पहले कितने कष्ट सहने पड़े थे, किस तरह ईसामसीह ने उसे बचाया और अब वह कितना सुखी है। क्रिसमस और ईस्टर के दिनों के उत्सव इन स्कूलों में काफी धूमधाम से मनाये जाते थे। यद्यपि हमें अपने इन मित्रों के धर्म में विश्वास नहीं था पर हमने उन्हें अपने धर्म पर चलने का अधिकार दिया था। और उनके धार्मिक त्यौहारों के मनाने में उनकी सच्ची प्रसन्नता को भी हम स्वीकार करते थे।

मुक्ति के बाद मेरे इन ईसाई मित्रों में अधिकतर हमारी तरह ही अपने विकसित राजनीतिक विचारों को व्यक्त करने के लिये व्यग्र रहते थे। यद्यपि माओ त्से-तुंग के सम्मिलित प्रोग्राम में "धार्मिक स्वतंत्रता" के उपबंध का इन्होंने हार्दिक स्वागत किया। इन पुण्यात्माओं में कुछ ने चैयरमैन माओ की पुस्तक "नवीन प्रजातंत्र" के इस भाग को पढ़ा था— "हम कम्युनिस्ट अपने मान्य राजनीतिक कार्यों के लिये कुछ आदर्शवादियों या धर्म के अनुयायियों के साथ संयुक्त मोर्चा बना सकते हैं। पर यह निश्चित है कि उनके आदर्शवाद या उनके धार्मिक सिद्धान्तों का अनुमोदन नहीं कर सकते।" उन्होंने अनुभव किया कि अपने इस विश्वास के साथ नई सरकार का समर्थन न्याय संगत है क्योंकि नई सरकार ने उसके लिये कितना बड़ा आश्वासन दिया था। विशेष रूप से इसलिये भी कि चर्च के प्रमुख प्रगतिशील नेताओं ने नई सरकार का प्रांजल्य

भाषा में स्वागत किया था। अतः हमारे नये नेताओं को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये वे पहले आम सभाओं और परेडों में जाते और उसके बाद तेजी से इतवार के दिन गिरजाघर जाते।

छः महीने निश्चिन्त होकर अपने धर्म का पालन करने के बाद उन्हें उसकी रक्षा के लिये सन्नद्ध होना पड़ा। क्योंकि ६ माह बाद पेता में "धार्मिक समस्याओं" का अध्ययन करने के लिये जब विशेष बैठकें संगठित की गईं तो पहली बार इन्हें ज्ञात हुआ कि उनके धर्म को ही आक्रमण का निशाना बनाया गया है।

धर्म का बहिष्कार करते हुए लेनिन के कहे गये प्रसिद्ध वाक्यों को उदधृत किया जाता, "धर्म जनता के लिये अफीम की तरह है। धर्म एक आध्यात्मिक मदिरा की भांति है जिसमें पूंजीवाद के गुलामों ने अपनी मानवता और अच्छे जीवन के अधिकार को डुबो दिया है।"

इस उद्धरण की विस्तार से व्याख्या करने और अन्य उद्धरणों को प्रस्तुत करने के बाद पार्टी कामरेड ने निर्णय किया कि "धर्म अवैज्ञानिक है, अन्ध विश्वास है, सुधारवाद है, अयथार्थवादी है, जनता को गुमराह करता है और क्लीवता है।"

दूसरी विचार सभा में एक छात्र ने लेनिन के सूत्र की सत्यता प्रमाणित करने के लिये बतलाया कि सोवियत संघ में कौन-कौन सी धार्मिक कार्यवाहियां सहन की जाती हैं।"

उसने कहा "यद्यपि आज भी सोवियत संघ में मैं यह स्वीकार करूंगा कि कुछ गिरजाघर हैं और थोड़े से लोग वहां पूजा के लिये भी जाते हैं पर ये सभी भक्त बुड्ढे और अबोध हैं।" वह इन शब्दों की गूंज के खत्म हो जाने तक रुका और फिर बोला "इससे यही प्रकट होता है कि पुराने लोग पुराने समाज के प्रभाव को नहीं छोड़ पाये हैं तथा उनके धार्मिक और प्रतिक्रियावादी विचार उनके मन से अभी पूरी तरह नहीं निकले हैं। पर नयी पीढ़ी भिन्न है। उसने नये जमाने की मार्क्सवादी शिक्षा पाई है और अब यह निश्चित है कि वे किसी धर्म में विश्वास नहीं रखेंगे। अतः—" अब चरमसीमा आ चुकी थी। "अतः जब पुराने आदमियों का यह गुट खत्म हो जायेगा तो सोवियत संघ से धर्म हमेशा के लिये उठ जायेगा।"

हाल में इधर उधर बैठे हुए पार्टी और युवक संघ के लोगों ने जयजयकार किया।

उसी दिन शाम को फ्यूजिन यूनिवर्सिटी से मेरी एक सहेली मुझे साथ घूमने के लिये ले गई ताकि जो हमसे कहा जा रहा था उस पर हम बातचीत कर सकें (यह १६४६ की बातचीत थी। एक साल बाद तो वह मुझ पर या और किसी पर विश्वास करने या अपनी निजी शंकाओं और प्रश्नों को सामने रखने से डरती) उसने मुझे बतलाया कि उसने एक धार्मिक पत्रिका में पढ़ा था कि १६२४ में किस तरह सोवियत रूस में धर्म को खत्म करने, गिरजाघर बन्द करने और धार्मिक पुस्तकों को जला देने के प्रयास का किसानों ने डटकर विरोध किया और सोवियत संघ की सरकार धार्मिक पूजा को खत्म नहीं कर सकी। लेख में यह भी दावा किया गया था कि दूसरे महा-युद्ध के दिनों में स्तालिन को मजबूर होकर बहुत दिनों से बन्द गिरजाघरों को खोलना पड़ा ताकि जनता की राजभक्ति बनी रहे और नौजवान सैनिकों और मजदूरों ने बुड्ढे लोगों के साथ इन गिरजाघरों में पूजा की। उसने पूछा, "स्तालिन ने इन गिरजाघरों को क्यों खोला" और "पूंजीवाद के गुलामों" को इस आध्यात्मिक मदिरा को फिर से क्यों पान करने दिया ? तीस साल पहले जब रूसी कम्युनिस्ट पार्टी सत्तारूढ़ हुई तब सभी स्कूलों में कम्युनिस्ट प्रणाली की शिक्षा लागू कर दी गई उस समय "आज के बुड्ढे आदमी" इतने बुड्ढे तो नहीं थे। फिर क्यों "नये समाज" में तीस साल तक रहने के बाद वे अभी तक अपने प्रिय नेता की इच्छा का पालन नहीं करते और अब भी अपने धर्म पर डटे हैं। इतना शक्तिशाली होने पर भी स्तालिन इन्हें दबा क्यों न सका अथवा धर्म को समूल नष्ट क्यों न कर सका ?"

मैंने कहा, "मैं नहीं जानती। शायद कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्हें अपने से अधिक प्रभावशाली किसी चीज़ में विश्वास करना पड़ता है चाहे वह बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, माओ त्से-तुंग या स्तालिन ही हो।" मुझे केवल यही उत्तर सूझ पड़ा कि यह एक टेढ़ा सवाल है—जितना उसकी धार्मिक पत्रिकायें स्वीकार करतीं हैं यह प्रश्न उससे भी कहीं अधिक टेढ़ा है।" "अच्छा", वह दृढ़ता से बोली, "यदि धर्म सचमुच में जनता के लिये अफीम है और यदि स्तालिन को उन स्थानों को खोलना पड़ा जहां राज्य की देखरेख में जनता अफीम को पी सके तो मुझे लगता है कि रूस की हालत उतनी अच्छी नहीं जैसी कि बतलाई जाती है।"

जितना स्पष्ट वह बोल रही थी, उसके लिये मैं तैयार न थी। मैंने कहा: "मैं कभी रूस नहीं गई। जो कुछ मैं जानती हूं वह पत्र पत्रिकाओं और स्कूल में सुना है।"

"यदि धर्म जिसे वे पलायनवाद कहते हैं—पलायनवाद ही है तो इसके यही अर्थ होते हैं कि वह कुछ ऐसी बात है जिससे धार्मिक लोग दूर भागना चाहते हैं", वह किसी तरह का उत्तर पाने के लिये डटी हुई थी। "मैं जानना चाहती हूं कि सोवियत संघ में वे अब किस चीज से दूर भागना चाहते हैं ?"

घूमते हुए मैंने उसे फिर बतलाया कि मैं सोवियत संघ के बारे में इतना नहीं जानती कि अपनी कोई वैज्ञानिक राय दे सकूं। "पर शायद विश्वास करने की इच्छा कुछ ऐसी है जिसे हम मिटा नहीं सकते। हम केवल उसे ठीक दिशा दे सकते हैं और पलायन की इच्छा के लिये भी हम केवल पलायन का कोई आकर्षक ढंग निकाल सकते हैं।" एक खोमचे वाले की दुकान पर हम रुक गये और अखबार के कागज में लिपटी हुई मुट्ठी भर मूंगफलियां खरीद लीं। इस तरह हमारा विवाद समाप्त हो गया।

मेरी निजी राय यह थी कि तीस वर्ष तक कोशिश करने के बाद सोवियत नेताओं ने यह समझ लिया है कि रूसी जनता में धार्मिक भावना कुछ ऐसी है जिसे पूरी तरह खत्म नहीं किया जा सकता और इस पर चारों ओर से प्रहार करने पर यह शायद गुप्त रूप से काम करने लगे। लेकिन हमारे यहां के नेता तो अभी तक १६२४ के युग में थे।

इस प्रकार धर्म के पंथों को समाप्त करने का इशारा मिल चुका था। सहयोग का जमाना चला गया था। अब पंथों का संगठन राज्य के प्रतिस्पर्द्धी के रूप में माना जाता था अतः इसको समाप्त करके पुनर्संगठन का निश्चय हो चुका था। हमारे परम्परागत धर्मों से निकले गुप्त धार्मिक चीनी मत मतान्तरों का दोष विदेशी साम्राज्यवाद पर नहीं थोपा जा सकता। अब इनका जिस हिंसात्मक ढंग से मूलोच्छेदन किया जा रहा था उसने हमें आश्चर्य में डाल दिया। समाचार पत्रों की सूचनाओं से हमें ज्ञात हुआ कि हमारे नेताओं ने कैसे कैसे गैर कानूनी काम किये, नेताओं ने सीधे साधे अनुयायिओं के अंधविश्वास के साथ कौन कौन से खेल खेले। उन्होंने कैसे कैसे बलात्कार और अपहरण के काम किये और किस तरह जनता की मांग ने

सरकार को कठोर कदम उठाने पर मजबूर कर दिया। (हमने यह भी अन्दाज लगाया कि शायद देहातों में ये धार्मिक समाज सरकार की कुछ नीतियों का विरोध कर रहे थे।)

बुद्ध और ताओ धर्मों पर अंधविश्वास का पोषक और जनता के शोषण का साधन कह कर हमले पहले ही शुरू हो चुके थे। मंदिरों को जप्त करने और भिक्षुओं और भिक्षुणियों को धर्मनिरपेक्ष जीवन स्वीकार कर लेने के लिये मजबूर किये जाने के समाचार हमें मिलने लगे थे। समाचारों में ऐसी कहानियां भी निकलने लगीं कि भिक्षुणियां स्वतः एकान्त जीवन त्याग कर अपने आपको जनता की ओर से उत्पादन में लगा रही थीं, जैसे वेश्याओं के बारे में सुना गया था कि रचनात्मक श्रम के द्वारा वे अपना सुधार कर रही थीं। वेश्याओं और भिक्षुणियों को एक ही कोटि में लाना कुछ अनुचित लगता है। लेकिन शायद कम्युनिस्टों का यही विचार था कि ऐसे सभी गुटों को एक ही कोटि में ले लिया जाय जो "अनुत्पादक कार्य" करते थे।

विदेशी धर्मों को भी इन दोषारोपणों का भागीदार होना पड़ा। कैथोलिक धर्म सबसे बड़ा संगठित गुट होने के कारण इसका खास शिकार हुआ। पादरियों और तपस्विनियों पर अविश्वसनीय अभियोग लगाये गये। उनमें जो विदेशी थे उन्हें फांसी लगा दी गई या निर्वासित कर दिया गया और जो चीनी थे उन्हें जेल में भेज दिया गया। जनता के नाम पर अनेक मिशनरी स्कूलों को सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। फ्यूजिन यूनिवर्सिटी का शासन कैथोलिक अधिकारियों के हाथों से छीन लिया गया। देहातों में हमने सुना कि गिरजाघर मिशन के हाथों से निकलते जा रहे थे। सरकार ने अपने शस्त्रागार से एक नया हथियार निकाला—वह था धर्म-विरोधी होने की स्वतंत्रता। यदि आप यह कहते कि जनता को धर्म और विश्वास की स्वतंत्रता का अधिकार मिलना चाहिये तो ठीक है—उन्हें धर्म विरोधी होने का अधिकार भी मिलना चाहिये। जब भीड़ को गांवों के गिरजाघरों पर हमला करने, लूटने और उनमें आग लगाने के लिये भड़काया जाता तो उस स्थान की सैनिक सरकार हस्तक्षेप करने से इन्कार कर देती। अधिकारियों को भी इन हमलों के प्रति सहानुभूति स्वाभाविक थी क्योंकि वे भी तो जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। यदि वे धर्म के विरोध करने की स्वतंत्रता देना चाहते थे तो उन्हें हिंसा का अधिकार भी तो देना था।

इस आन्दोलन के कारण वे थोड़े से धार्मिक गुट भी ठंडे हो गये जिनमें पेता में कभी जीवन था। जो लोग अधिक साहसी और धर्मात्मा थे वे गिरजा घर जाते रहे और अपना धर्म निबाहते रहे। पर अब धार्मिक कर्म टिमटिमाते हुए दीपक की तरह रह गया था और वही लोग गिरजाघरों में जाते थे जो धर्म के प्रति वास्तव में श्रद्धालु थे। यूनिवर्सिटी के इलाके से कैथोलिक पादरियों और तपस्विनियों को निकल जाने पर मजबूर किया गया। गाने वाली मंडलियों को भंग कर दिया गया। कुछ भी हो यदि ये लोग गाना चाहते तो उन्हें और दूसरे अवसर दिये जायेंगे। कुछ ईसाई छात्र अपने पहले के विचार और कर्मों की उग्रता से भर्तस्ना करने लगे जिससे वे फिर से सरकार की कृपा दृष्टि प्राप्त कर सकें। उन्होंने जनता से सीखने के निश्चय की घोषणा की। उन्होंने यह भी निश्चय किया कि वे साम्राज्यवादियों और उनके सांस्कृतिक आक्रमणों की चाकरी करना बन्द कर देंगे। पर ऐसे लोगों का अभिवादन उत्साह से नहीं हुआ क्योंकि हम जानते थे कि वे लोग अपने बन्द कमरों में अभी तक ईसा के सामने माथा टेकते और प्रार्थना करते थे। जहां तक हमारा सम्बन्ध था हम उन्हें वास्तव में "चावल वाले ईसाई" समझते थे जो जिसका खाते उसी के भक्त थे। उन्होंने समझ लिया कि उनके लिये भी राज्य में स्थान मिल जायगा, जब यह प्रतीत होने लगा कि राज्य धर्म कर्म को दिखावे के लिये चलने देगा—कम से कम उस समय तक राज्य को कोई आपत्ति न होगी जब तक धर्म कर्म राजनीतिक कक्षाओं के रूप में चलाये जायें और धर्म "जनता की सेवा" से नीचे समझा जाय।

जो लोग ईसाई नहीं थे उनकी इस आन्दोलन के बारे में मिश्रित भावनाएं थीं। हमें कई विदेशी मिशन पसन्द नहीं थे। हम उन्हें अवसरवादी समझते थे क्योंकि वे अपने घर की अपेक्षा मिशन में रहकर ज्यादा आराम की जिन्दगी गुजारते थे और अपने आपको हमारी संस्कृति और हमसे अधिक श्रेष्ठ समझते थे। इनके अलावा दूसरे लोग निस्संदेह अच्छे शिक्षक और डाक्टर थे। इन लोगों का बर्ताव उन लोगों के साथ भी अच्छा था जो इनके धर्म को ग्रहण न करके केवल इनकी सेवायें ग्रहण किया करते थे। बिना भेदभाव इन लोगों को भी दूसरों के साथ इकट्ठा कर दिया गया और मुझे शक है कि कुछ ऐसी घटनायें भी हुईं जिनमें इन लोगों पर ज्यादा अत्याचार हुए क्योंकि हमारे बीच उनका यश बहुत था। हमें तपस्विनियों के बारे में उन कहानियों पर विश्वास करना कठिन था कि उन्होंने हजारों बच्चों को मार दिया। हम अच्छी तरह

जानते थे कि अपने कमज़ोर और अनपेक्षित बच्चों के लिये माताएं अनाथालयों को बड़ा सुविधाजनक स्थान समझती थीं। यदि वे चाहतीं तो तपस्विनियों को ऐसे बच्चों की हत्या करने में जरा भी झंझट न होती क्योंकि उनमें से बहुत से अनाथालय में लाये जाने के समय मरणावस्था में होते थे। फिर भी हम जानते थे कि ये कहानियां हमारे लिये नहीं वरन् उन निर्बुद्धि लोगों के लिये थीं जो दूसरे देशों के निर्बुद्ध लोगों के समान विदेशों से राक्षस और राक्षिनियों की बूढ़ी नानी की कहानियों पर आसानी से विश्वास कर लेते हैं।

इस निर्लिप्त त्रास के अलावा धर्म के विरुद्ध आन्दोलन से हमारा सम्बन्ध समाचार-पत्रों की कहानियों और पत्र-पत्रिकाओं के चित्रों के रूप में ही था। पर शारीरिक पुष्टता का नया कार्यक्रम इससे भिन्न था। इसमें सभी लोग सम्मिलित होते यद्यपि ये उन लोगों के सिवाय किसी को पसन्द न थे जो शारीरिक कष्ट भोगने में गर्व अनुभव करते थे। पर जनता के एक गुट को तो इससे प्रसन्नता अवश्य हुई होगी। इससे उन व्यायाम शिक्षकों को तो असीम आनन्द हुआ होगा जिन्हें हम अनेक वर्षों से तंग करते आ रहे थे। उन्हें यह देख कर बड़ा आनन्द आता कि जो भद्र युवक २० सैकिंड में १०० मीटर की दौड़ लगाकर शान दिखाया करते थे वे ही उनके सामने ड्रिल नायकों के आदेश से परिश्रम के कारण पसीने से भीग रहे हैं, उनका चेहरा लाल हो रहा है तथा हाथ हिलाते हुए वे ऊपर नीचे कूद रहे हैं।

(१०)

हमारा शिक्षण

"क्या हम पेता को मनोरंजन भवन बना दें ? या इसे कुछ सांस्कृतिक व्यक्तियों का समागम स्थान अथवा क्रांतिकारी कार्यकर्ताओं के लिये प्रशिक्षण केन्द्र बना दें ?" यह प्रश्न हो कान ची ने रखा, जो मार्क्सवाद पर कम्युनिस्टों के प्रिय पंडितों में से एक था। यह एक अलंकारिक प्रश्न है और इसका उत्तर प्रश्न में ही निहित है।

हमारे दैनिक जीवन में इतने सब परिवर्तन होने पर भी हमें यह समझने में थोड़ा समय लगा कि जन शिक्षा सहायताएं, स्वालोचना सभाएं, राजनीतिक कक्षाएं और हमारे नित्यप्रति के जीवन का उत्तरोत्तर सैन्यकरण हमारी यूनविर्सिटी को किस दिशा में ले जाना चाहते थे। हम में बहुत से लोग यह न समझ सके कि कम्युनिस्टों के शासन में पहला सत्र केवल अन्वेषणात्मक महत्त्व रखता था जिसमें हमारे नेताओं को हमारे बारे में और अधिक जानने का अवसर मिला था।

परन्तु १६४६ के अन्त में जब स्कूल का नया वर्ष शुरू हुआ तो स्थिति अधिक स्पष्ट होने लगी। पेता में जिन कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को भेजा गया था उन्हें छः महीने तक छात्रों का निरीक्षण करके ऐसे लोगों को छांटने का अवसर दिया गया जिनसे उन्हें सहायता मिलने की सम्भावना थी। निवास गुटों, स्वालोचना सभाओं और दूसरी परीक्षाओं से प्राप्त अनुभव के आधार पर वे छात्रों की स्वाभाविक स्वाधीन भावना का सामना करने के लिये अपनी प्रभावोत्पादक कार्यप्रणाली लागू करने के लिये तैयार थे।

हमारे लिये बनाई गई अपनी योजनाओं को लागू करने के लिये इन कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को हमारे जीवन के तीन अंगों पर नियंत्रण पाना था : हम अपनी अध्ययन कक्षाओं में क्या करते हैं; नई राजनीतिक कक्षाओं में हम क्या करते हैं और कक्षा के बाहर हम क्या करते हैं। मैं पहले ही बतला चुकी हूं कि किस प्रकार छात्रावास में रहने वाले विद्यार्थियों को पहले ही उनके

निकटवर्त्ती कमरों में से पांच से लेकर दस छात्रों के "निवास केन्द्र" के सुपुर्द कर दिया गया था। बाद में इस प्रकार के केन्द्रों को मिला कर "मंजिल गुट" बना दिये गये। सारे मंजिल गुटों को मिला कर छात्रावास की यूनियन बन जाती थी। इन अलग अलग छात्रावास यूनियनों को फिर सर्व छात्रावास परिषद में संगठित किया गया जो सभी "निवास केन्द्रों" को नियन्त्रित करती थी।

नियमित कक्षाओं के घंटों के समय हम पर नियंत्रण रखने के लिये हमें पांच से लेकर दस छात्रों के "पारस्परिक सहायता केन्द्रों" में बांट दिया गया था। इन केन्द्रों के ऊपर कक्षा का संगठन था जो एक ही वर्ष के और एक ही विषय के सभी छात्रों के लिये उत्तरदायी होता था। हर एक कक्षा संगठन का अपना अधिकारी-मंडल होता था जिसमें प्रशासन मैनेजर, उसका सहायक, अध्ययन मैनेजर, हितकारी मैनेजर और व्यवसाय मैनेजर होते थे। इन अधिकारियों को विभागों की परिषदों से आज्ञाएं मिलती थीं जो एक ही विषय या विभाग की चार कक्षाओं को मिला कर बनती थीं। अवश्य ही इस परिषद के अपने अलग अधिकारी होते थे।

जब सरकार ने नई राजनीतिक कक्षाओं का संगठन किया तो इस व्यवस्था में अनेक सुधार सामने आये। क्योंकि राजनीतिक कक्षाओं के विषय "सार्वजनीन" (अर्थात् सभी के लिये अनिवार्य) थे, अतः ये कक्षाएं बहुत बड़ी हुआ करती थीं। अक्सर उनमें अनेक विभागों से आये हुए लगभग दो सौ विद्यार्थी होते थे। कक्षाएं विभागों में बंटी होती थीं और विभाग छोटे समुदायों में, जो प्रत्येक एक अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के अधीक्षण में होते थे। और सबसे छोटी इकाई की दृष्टि से हर समुदाय को पारस्परिक सहायता केन्द्रों में बांट दिया गया था।

पारस्परिक सहायता केन्द्र बहुत कुछ "पार्टी सैल" की तरह होते थे। फर्क इतना ही था कि इनमें अक्सर पार्टी या युवक संघ का एक ही सदस्य होता था। वास्तव में मैं यह कहना पसंद करूंगी कि यह समुदाय ६ या ८ सैनिक और उनके ऊपर एक कठोर अधिकारी के समान था क्योंकि पार्टी या युवक संघ का सदस्य ही स्वाभाविक तौर पर सबका नियंत्रण करता था। वह सभाएं बुलाता और विवाद के दौरान में जो प्रश्न उपस्थित होते उनके उत्तर देने की भरपूर चेष्टा करता था। वह यह निश्चय करने के लिये हमारी परीक्षा भी लेता कि हम कक्षाओं के बाहर आवश्यक अध्ययन में पूरा समय लगाते थे या

नहीं। पर उसका सबसे महत्वपूर्ण काम अपने केन्द्र के हर सदस्य के व्यक्तिगत जीवन पर निगाह रखना और उसके विचारों के विकास का सतर्कता से अध्ययन करना था। उसे अपने आधीन छात्रों की दैनिक कार्यवाहियों की लिखित विस्तृत रिपोर्ट देनी पड़ती थी। यह एक ऐसा उत्तरदायित्व था जिसमें वह ढिलाई नहीं कर सकता था।

छात्रों के ये नये संगठन किसी भी रूप में पुरानी क्लबों और कक्षाओं की यूनियन जैसे न थे क्यों कि वे तो केवल महत्वाकांक्षी और लोक-प्रिय छात्रों को चुनाव में जिता कर सम्मानित करने के मंत्र मात्र थे। इसके बजाय ये नये संगठन उस व्यवस्था के अंग थे जो पेता के छात्रों को ऐसे कठोर अनुशासित गुट के रूप में निर्माण कर रही थी जो जनवादी तानाशाही में किसी भी काम को करने के लिये तैयार हो सकें। हमारे सभी अधिकारियों को लोक सम्मत मतदान द्वारा निर्वाचन के पुराने तरीके के बजाय 'प्रजातांत्रिक केन्द्रवाद' की नई व्यवस्था के अनुसार चुना जाता था। सिद्धान्त रूप में 'प्रजातांत्रिक केन्द्र-वाद' से यह आपेक्षित था कि वह सब से नीचे स्थित व्यक्तियों की इच्छा बड़े और अच्छे संगठनों के माध्यम से सत्ता के अधोमुख पैरामिड की चोटी तक पहुंचा कर उसे कार्यान्वित करा सके। परन्तु नेताशाही के हर महत्वपूर्ण स्थानों पर पार्टी या युवक संघ के सदस्य होने से इसका व्यवहारिक रूप ऊपर से आदेशों को बड़ी कुशलता से नीचे पहुंचाने तक सीमित था।

इस व्यवस्था को पक्का करने में परिश्रम और समय आवश्यक था। पर व्यवस्था पक्की हो जाने पर कोई भी छात्र नये चीन के नागरिक के रूप में अपने दायित्वों से छुटकारा नहीं पा सकता था। मान लिया आप पश्चिमी भाषा और साहित्य विभाग मेंतीसरे वर्ष के छात्र हैं और पुरुषों के एक छात्रा-वास में रहते हैं। प्रारम्भ में आप अपनी कक्षा के अन्दर पारस्परिक सहायता केन्द्र के सदस्य होंगे, फिर आप अपनी कक्षा के संगठन के एक सदस्य होंगे, और सर्व-विभागीय यूनियन के सदस्य भी होंगे ही। वह आपके नियमित शास्त्रीय अध्ययन की देखभाल करती है। अपनी राजनैतिक कक्षा में आप एक अन्य पारस्परिक सहायता केन्द्र के सदस्य होंगे और तीन पारस्परिक सहायता केन्द्रों से बने समुदाय की मीटिंग में भी आपको जाना होगा। और किसी महत्वपूर्ण विषय पर विचार करने के लिये आपका समुदाय दूसरे चार या पांच समुदायों के साथ मिलकर विभाग की सभा में भी सम्मिलित होगा।

जब शाम को आप अपने छात्रावास लौटेंगे तो वहां आपको अपने आस-पास के पड़ोसियों के साथ अपने 'निवास केन्द्रों' की मीटिंग में भी हिस्सा लेना पड़ेगा। फिर आप अपने 'मंजिल-गुट' और 'छात्रावास यूनियन' के भी सदस्य होंगे। पेता के अन्य सभी छात्रों की तरह आपको भी छात्र-संघ में सम्मिलित होना पड़ेगा। यदि आप "एकान्तवाद" के अपराधी नहीं होना चाहते तो विभाग के सहगान में हिस्सा लेना भी अच्छी बात होगी। यदि आप युवक संघ के सदस्य हैं तो आपको अपने सैल, शाखा कार्यालय (यूनिवर्सिटी के हरएक कालेज में एक ऐसा कार्यालय है) और प्रधान कार्यालय से भी सम्बन्ध रखना होगा। यदि इन्हें गिनें तो आप तेरह विभिन्न गुटों के सदस्य बन चुके होंगे। यदि आप थोड़े भी कर्मठ हैं तो अवश्य ही लाइब्रेरी क्लब, राजनीतिक विचार-विमर्श के एक विशेष गुट या किसी ऐसे ही अन्य गुट के भी सदस्य हो सकते हैं।

पुराने पाठ्यक्रम में कोई वास्तविक सुधार करने से पहले ही कम्युनिस्टों ने नई राजनीतिक कक्षाएं शुरू कर दी थीं। शायद विचार यह था कि जब हम मार्क्सवाद का काफी रसास्वादन कर लेंगे तो सुधारों को लागू करने में हमारा सहयोग प्राप्त करना काफी सरल हो जायेगा। पहले पहल हम सप्ताह में नौ घंटे राजनीतिक अध्ययन, तीन घंटे कक्षाओं में अध्ययन, तीन घंटे सामूहिक वादविवाद और तीन घंटे घर पर पढ़ाई लिखाई में लगाते थे। इसके अलावा शनिवार को प्रातः हमें बड़े राजनीतिज्ञों द्वारा दिये जाने वाले विशेष भाषणों को सुनने के लिये बुलाया जाता था। जो हम यूनिवर्सिटी में पढ़ते ये लोग उसकी व्याख्या करने आया करते थे।

हमसे यह आशा की जाती थी कि हरेक राजनीतिक शिक्षक जो कुछ हमें बतलाये उसे हम सावधानी से संक्षेप में लिख लें और उन पर विचार विमर्श करने के लिये हम उन नोटों को पारस्परिक सहायता केन्द्रों में ले जायं। मुझे लगता था कि हमारे कुछ शिक्षक "द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद" (जो कि मार्क्सवादी सिद्धान्त की आत्मा है) की अपेक्षा "ऐतिहासिक भौतिकवाद" (जो कि उनका अपना क्रान्तिकारी अनुभव था) पर विवाद करने में अधिक समय लगाया करते थे। जब तक उनके लिये सिद्धान्त की स्पष्ट व्याख्या न कर दी जाय वे शायद उस पर विचार करने में भी भीरुता का अनुभव करते थे। पर मैं आपको विश्वास दिला सकती हूं कि वे क्रान्तिकारी संघर्ष में अपने योगदान को बतलाने में काफी ओजस्वी होते थे।

शनिवार को सुबह होने वाले प्रमुख अभ्यागतों के भाषण हमेशा जनवादी स्क्वायर में हुआ करते थे क्योंकि वही एक मात्र ऐसा स्थान था जहां काफी लोगों के बैठने के लिये जगह थी। हम नीचे जमीन पर बैठ जाते और अपने नेताओं की सतर्क दृष्टि के सामने अधिक नोट लेने में लग जाते थे। सच तो यह है कि सभी भाषणों के लिए एक ही नोट्स पर्याप्त हो सकते थे, क्योंकि जो जनवाद हमें सौभाग्य से प्राप्त हुआ था हर अभ्यागत उसके आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर एक ही तरह की मानवीकृत टीका किया करता था। जिस समय ए जू-ची जो कम्युनिस्ट सिद्धान्त के प्रमुख अधिकारिक पंडित माने जाते हैं "हमारे नये जनवाद का भविष्य" विषय पर बोले, उनके भाषण को सुनने वाले अधिकांश श्रोता पिछले भाषण में लिए गए नोट्स को पढ़कर उनके हर वाक्य का अनुसरण कर सकते थे।

फिर हम रेडियो पर प्रसारित होने वाले भाषण सुनने लगे। हर लेक्चर हाल में दो रेडियो सेट थे। राजनीतिक शिक्षा कमेटी द्वारा भेजे गए छात्रों के प्रश्नों के उत्तर रेडियो-भाषण में प्रसारित होते थे।

कभी कभी हमारे प्रश्नों के उत्तर इतने विस्तार से और सूचनापूर्ण नहीं होते थे जितनी आशा की जा सकती थी। उदाहरण के लिए एक सुप्रसिद्ध वक्ता ने बताया : "कुछ छात्रों ने लिखा है कि यह उनकी समझ में नहीं आता कि इंग्लैंड और अमेरिका जैसे साम्राज्यवादी राष्ट्रों ने चीन के विरुद्ध सांस्कृतिक आक्रमण कैसे किया ? क्या मिशनरी स्कूल इसके उदाहरण नहीं हैं ? बिना अधिक चिन्ता किए उसने दूसरे सवाल को ले लिया।

एक दूसरे वक्ता ने हमें बताया : "किसी ने पूछा है कि क्या पार्टी का बुर्जुवा और मध्यवित्त लोगों के साथ मिलकर काम करने का यह अर्थ नहीं कि पार्टी बुर्जुवा के धन और मध्यवित्त के ज्ञान का शोषण कर रही है। इसका उत्तर है : नहीं।"

दूसरे सप्ताह के भाषण में हम मन में बहुत आशा लगाए थे कि शायद किसी में इतना साहस हो और वह यह पूछ ले कि उत्तर "नहीं" क्यों था।

कक्षाओं में और रेडियो पर जो कुछ सुनते उस पर हमें पारस्परिक सहायता केन्द्रों में विवाद करना पड़ता था। अपने नेता की नजरों के सामने हम विवाद में एक दूसरे पर अपने लिए गये नोट्स के उद्धरणों की बौछार करते

और हमारे नेता को यह देखकर संतोष होता था कि हम सब स्वर में स्वर मिलाकर बोल रहे थे। थोड़ी देर बाद हम प्रायः आंख मीचकर वाक्यांशों को दुहरा सकते थे।

फिर वह समय भी आ गया जब हमारे नए जनवाद के महन्तों ने सोच लिया कि हम शिक्षा के पाठ्यक्रम का यथाक्रम परिमार्जन करने में सहायता देने के लिए काफी दीक्षित हो चुके थे। मेरा अनुमान है कि शुरू से ही हमारे नेताओं ने यह समझ लिया था कि सर्वांगीण सुधार करना इतना सरल न होगा। एक बात थी जिसके प्रति हमारे नेताओं को छात्रों की ओर से कोई उत्साह नहीं दिखलाई पड़ रहा था। प्रत्येक छात्र के विचार में दूसरों के पाठ्यक्रम में परिवर्तन करना अच्छा था पर जब तक वह स्वयं बेरोक टोक ग्रेजुएट न हो जाय उसके अपने विभाग के पाठ्यक्रम को बदलना उसे सहन न था। और साथ ही पाठ्यक्रमों में किसी तरह का सुधार प्रोफेसरों में भी असन्तोष पैदा करता क्योंकि जो कुछ वे पढ़ा रहे थे उसमें उनका अपना स्वार्थ निहित था। दस पंद्रह या बीस वर्षों से जिन विषयों को वे अपनी कक्षाओं में पढ़ा रहे थे उन विषयों को छोड़ने में यदि वे नहीं तो और कौन हिचकिचाता?

अतः सुधारकों ने जरा सावधानी से काम प्रारंभ किया। वे जानते थे कि वे तीन ओर से वार कर सकते थे। पहला, वे इच्छानुकूल एकदम नये पाठ्यक्रम को लागू कर सकते थे। दूसरे वे पुराने पाठ्यक्रम को "प्रतिक्रियावादी" कह कर रद्द या समाप्त कर सकते थे। तीसरे वे पुराने पाठ्यक्रम के शीर्षक को ज्यों का त्यों रखकर उसके विषय और दृष्टिकोण को पूरा बदल सकते थे। मैंने इन तीनों तरीकों को कार्य में परिणत होते हुए देखा।

स्वतंत्रता के बाद पहले सत्र, यूनिवर्सिटी के १९४९ के बसन्तकालीन कार्यकाल में, सभी छात्रों के लिए केवल एक नया पाठ्यक्रम "समाज विकास का इतिहास" लागू किया गया। पाठ्यक्रम में मान्य "राजनीतिक अध्ययन" की तरह यह पाठ्यक्रम "सार्वजनिक" या अनिवार्य नहीं था। पर यह हमारे मित्र हो कान-ची पढ़ाते थे जो स्वयं मार्क्सवाद के पंडित थे और जिन्हें उत्तरी चीन की जन क्रान्तिकारी यूनिवर्सिटी में एक महत्वपूर्ण अधिकारी बना दिया गया था। और क्योंकि हम में से अधिकांश लोगों का यह अनुमान था कि इससे हमें ग्रेजुएट बनने में मदद मिलेगी बहुत अधिक लोगों ने इस कोर्स को ले लिया। परन्तु पाठ्यक्रम बहुत कुछ निराशाजनक था। समाज विकास की सम्पूर्ण

प्रक्रिया के नाम से इसका विज्ञापन किया गया था लेकिन "प्रोफेसर" लोग पुरानी सरकार की निन्दा और कम्युनिस्ट पार्टी के गुण गाने में ही अपना अधिकांश समय निकाल देते थे।

यूनिवर्सिटी के पहले सत्र में पुराने पाठ्यक्रमों में से कई समाप्त कर दिये गये। समाज-विज्ञान विभाग और कानून के स्कूल को इससे विशेष क्षति हुई। वस्तुतः कानून के सभी पाठ्यक्रमों को प्रतिक्रियावादी कहकर बिना वाद-विवाद उन्हें समाप्त कर दिया गया। अवश्य ही यह हमारे कानून पढ़ने वाले छात्रों के लिये दुर्भाग्य की बात थी जिन्हें इस सत्र में पढ़ने के लिये कुछ भी न था और जिनका भविष्य भी अन्धकार में था। क्योंकि भविष्य में "पुराने तरीके" के कानून अध्ययन करने वालों का स्थान अनिश्चित था।

पाठ्यक्रमों में उनके पुराने शीर्षक तो यथावत् रहे पर उनके विषय "नये मत" और "नये दृष्टिकोण" के अनुसार बदल दिये गये जो चक्करदार होने के साथ ही साथ गम्भीर प्रभाव डालने वाले थे। साइंस और टेक्नीकल विषयों के कुछ पाठ्यक्रम इस पहले वार से बच निकले। लेकिन अर्थशास्त्र समाज विज्ञान, दर्शन और पश्चिमी भाषा एवं साहित्य के विभागों में काफी परिवर्तन हुए। वास्तव में पश्चिमी भाषा और साहित्य के विभाग में यह आवश्यक समझा गया कि अंग्रेजी गद्य की कक्षाओं में हैराल्ड लास्की के लम्बे लेख "स्वतंत्रता खतरे में" और पश्चिम के दूसरे उदारवादियों की रचनाओं के स्थान पर जल्दी में छपे हुए माओ त्से-तुंग के विचारों का अंग्रेजी अनुवाद पढ़ाया जाय। समाज विज्ञान की कक्षा में जो परिवर्तन हुए वे और भी अधिक चौंका देने वाले थे। जो प्रोफेसर अभी तक पश्चिम की राजनीति और समाज के उन्नत विचारों पर वर्षों से लेक्चर देते आ रहे थे अब इन्हीं को बात बदल कर पश्चिमी राष्ट्रों के "झूठे प्रजातन्त्र", "सुधारवाद" और "हड़प जाने वाले पूंजी-वाद" की निन्दा करनी पड़ती थी। हम में से और उच्च कक्षा के कुछ विद्यार्थी पूछने की इच्छा करते थे कि आपने हमें इतना आगे बढ़ने के पहले ही यह क्यों नहीं बतलाया ?

१६४६ के दूसरे सत्र में जो परिवर्तन होने वाले थे वे अधिक क्रमबद्ध और गम्भीर प्रभाव डालने वाले थे। काफी दिनों तक हवाई किले और प्रारम्भिक योजनाएं बनाने के बाद समस्त पाठ्य-क्रमों के बुनियादी सिद्धांतों पर विचार करने के लिये पेता के सभी शिक्षकों और विद्यार्थियों के तथाकथित

प्रतिनिधियों का एक अभूतपूर्व सम्मेलन बुलाया गया। वक्ताओं ने हमें बतलाया कि मीटिंग ऐतिहासिक थी और स्मरण कराया कि चीन में और सभी यूनीवर्सिटियों के लिये पेता एक आदर्श रही है। "इस मीटिंग में आप लोग," वह तेज स्वर से बोला, "हमारी नई जनवादी संस्कृति के अधिष्ठान में गौरवमय और नया पृष्ठ लिखने जा रहे हैं।"

उन गौरवमय और नये पृष्ठों में से एक में एकमत से स्वीकृत आठ प्रस्ताव थे जिनमें पाठ्य-क्रम की भविष्य की रूपरेखा की व्याख्या थी। एक प्रस्ताव में घोषणा की गई थी कि जो पाठ्य-क्रम सिद्धांत और व्यवहार की सन्धि के आसपास नहीं हैं उन्हें समाप्त कर देना चाहिए या उनका महत्व कम कर देना चाहिए। प्रस्ताव में आगे लिखा था कि "पढ़ाने की पद्धति" विद्यार्थियों और शिक्षकों के वीच पारस्परिक सहयोग और उपयोगिता की भावना पर आधारित होनी चाहिए।"

"पारस्परिक सहयोग" के सिद्धांत की यह मांग थी कि शिक्षकों को पाठ्यक्रम में सुधार करते समय छात्रों से सलाह लेनी चाहिए। इस पारस्परिक सहयोग के सिद्धांत ने प्रत्यक्ष रूप से हमें यह निश्चय करने का अधिकार दे दिया कि हमें क्या पढ़ाया जाय। पर अब तक पार्टी और युवक संघ द्वारा चुने गये हमारे नेताओं का हम पर प्रभावपूर्ण अधिकार हो चुका था। जिसका तात्पर्य यह था कि पार्टी हमारे ऊपर उन परिवर्तनों को लादने के लिये हमें ही अपना हथियार बनाने जा रही थी, जो वह शिक्षकों द्वारा लागू कराना चाहती थी।

ऐसी परिस्थिति में हमारे प्रोफेसरों को बड़ी सावधानी से काम करना पड़ता था। ऐसा कहा जाता था कि मिडिल स्कूलों में जो शिक्षक हमारे छोटे भाई बहिनों को पढ़ाते थे उन्हें यह जानने के लिये कि क्या कहें या करें अपनी कक्षा के प्रगतिशील छात्रों के भावों का अध्ययन करना पड़ता था। पेता के प्रोफेसरों को भी अपने अभिमान को छोड़ कर हमारे साथ "सहयोग" स्थापित करना पड़ा। हमारे शिक्षक अपनी कक्षाओं से परामर्श लेने के लिये निम्न तीन में से एक तरीके का उपयोग करते थे। जिस मात्रा तक वे सुरक्षा का अनुभव करते थे उसी के अनुरूप तरीका प्रयोग में लाते थे।

(क) अत्यन्त आत्मविश्वासी अध्यापक, पहले उन्हें जो पढ़ाना था और जिस ढंग से वे पढ़ना चाहते थे इस सम्बन्ध में एक छोटा सा भाषण देते और

फिर बिना हमारे विचार पूछे ही वे अपने पुराने तरीके से पढ़ाना शुरू कर देते। पर कक्षा से जाने से पहले वे कहते "यदि आपके पास इस सम्बन्ध में किसी तरह के सुझाव हैं तो आप मुझे अवश्य बतलायें।" इस ढंग के परिणाम स्वरूप वे जिस भावी संकट का निर्माण कर रहे थे उसका अनुमान वे नहीं लगा सके।

(ख) जिन अध्यापकों में आत्मविश्वास कम था वे पहले सत्र के पूरे प्रोग्राम की घोषणा करते। फिर आशापूर्ण मुस्कराहट के साथ छात्रों से पूछते कि क्या वे सहमत थे ? यदि नहीं तो वे छात्रों को या तो उसी समय बोलने के लिये या उन्हें हस्ताक्षर सहित या बिना हस्ताक्षर किये सुझाव भेजने का निमंत्रण देते।

(ग) जो अध्यापक वास्तव में भयभीत थे वे पढ़ाने के मंच से नीचे उतर आते और छात्रों से पूछते कि उन्हें क्या पढ़ाया जाय, इस सम्बन्ध में वे अपने विचारों को साफ साफ और बेरोकटोक प्रकट करें। ये अध्यापक वादविवाद के दौरान में चुप रहते। छात्रों की टीका टिप्पणियों पर वे समय-समय पर केवल यही शब्द जोड़ते, "हां, हां, बिल्कुल ठीक है", विचार सुन्दर हैं। अन्त में कक्षा के सामान्य दृष्टिकोण को संक्षेप में कहकर पढ़ाने की ऐसी योजना वनाने की कोशिश करते जो उन लड़कों को संतुष्ट कर सके जो नेता समझे जाते थे।

पेता के पाठ्यक्रम में जो बेढंगापन था उसे निकाल फेंकना शायद एक अच्छा विचार था। पर अब तो उसके यही अर्थ लगाये जा रहे प्रतीत होते थे कि हम लोग अपने नियमित शिक्षा के विषयों को कम करके मार्क्सवाद-लेनिन-वाद के लिये और अधिक समय दें। कुछ विभागों ने तो अब भी विरोध किया। इंजीनियरिंग कालेज में जो प्रोफेसर थे उन्होंने यह स्पष्ट कह दिया कि उनके पाठ्यक्रमों में कोई काट छांट हुई तो उसका यह अर्थ होगा कि ग्रेजुएट होने वाले नवयुवक योग्य इंजीनियर नहीं होंगे। मेडीकल कालेज के प्रोफेसर भी इस मत के थे कि पाठ्यक्रम में हेरफेर का अर्थ अति निम्नतम स्तर के डाक्टर निर्माण करना होगा। इन विषयों के सदस्यों का जो टेकनीकल ज्ञान था उसने पार्टी के कार्यकर्ताओं के आत्म विश्वास को हिला दिया क्योंकि पार्टी के कार्यकर्ता अभी तक प्राकृतिक और उपयोगी विज्ञान पर अपनी दक्षता के बारे में संशयशील थे।

शेष कालेजों पर दूसरी ही गुजरी क्योंकि उनके पाठ्यक्रमों को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के बुनियादी सिद्धान्तों की कसौटी पर तत्काल परखा जा सकता था और पार्टी के कार्यकर्ता इन सिद्धान्तों की अधिकारिक कसौटी थे। अतः ऐसे पाठ्यक्रमों की विषय-वस्तु को शीघ्र ही बदलकर उस नये पाठ्यक्रम के लिये स्थान बना दिया गया जो प्रोफेसरों को पढ़ाने की आज्ञा दी गई थी। कभी कभी कठिनाई खड़ी हो जाती थी क्योंकि मार्क्सवादी दृष्टिकोण से जो पाठ्य-पुस्तकें लिखी गई थीं, वे अभी तक बहुत कम थीं। इसलिये यह निश्चय किया गया कि छात्र नई पुस्तकें तैयार होने तक पुरानी किताबों को ही नये दृष्टि-कोण से उपयोग में लें।

चीनी और विदेशी भाषाओं के विभाग ने एक दूसरी समस्या खड़ी कर दी। इनके अधिकांश पाठ्यक्रम न तो इतने प्रगतिशील ही थे और न इतने प्रतिक्रियावादी ही। अतः कोई जल्दी निश्चय न कर सका कि उन विभागों से किन पाठ्यक्रमों को निकाल दिया जाय। छात्रों को यहां अवसर मिल गया। उन्होंने कहा कि क्योंकि वे काफी व्यस्त रहते थे इसलिये कुछ अधिक कठिन विषय जैसे चीनी भाषा के विभाग में विनजिन-त्यों-लंग और अंग्रेजी भाषा के विभाग से शेक्सपीयर साहित्य को निकाल दिया जाय। कुछ तर्क-वितर्क होने के बाद उन्हें ऐच्छिक विषय बना दिया गया। जिन पाठ्यक्रमों को समाप्त कर दिया गया था उनके स्थान पर "लोक साहित्य" जैसे नये और फैशनेबल पाठ्य-क्रमों को लागू कर दिया गया।

इन पाठ्यक्रमों में सुधार करने का काम जिन पार्टी के अधिकारियों को सौंपा गया था उन्हें उन महान् ग्रंथों का कोई वास्तविक परिचय नहीं था जिनका उन्होंने परीक्षण किया था और प्रोफेसरों की व्यक्तिगत राय में तो उन लोगों को साहित्य के सच्चे मूल्यों के बारे में कोई जानकारी ही नहीं थी। "क्या वे अच्छे पढ़े लिखे लोग चाहते हैं या वे बस पार्टी के ऐसे कार्यकर्ता निर्माण करना चाहते हैं जो पढ़ लिख सकते हों, दफ्तर चला सकते हों और विदेशी भाषा से अपना काम निकाल सकते हों ?" एक प्रोफेसर बड़बड़ाया। फिर और भी कटौती की आज्ञा हुई। चीनी और विदेशी भाषा के विभाग में चालीस प्रतिशत पाठ्यक्रम भी ऐसा नहीं रह गया जिसे "साहित्य" कहा जा सकता। उसी समय दर्शन के पुराने विभाग को समाप्त करने की आज्ञा हुई। शिक्षा मंत्रालय के अनुसार यह आज्ञा उनके यहां से नहीं निकली थी क्योंकि यह तो स्वयं शिक्षकों और छात्रों की माँगों के अनुसार किया गया था।

विद्यार्थियों में सावधानी से स्वीकृति लेने के बाद सुधार-आन्दोलन के संगठनकर्ता अब उस सीमा तक आ पहुँचे थे कि उन्हें इन परिवर्तनों को नियम-बद्ध करने के लिए हमारी सार्वजनिक स्वीकृति प्राप्त करने का विचार अच्छा लगा। एक आम सभा बुलाई गई और हमारे यूनिवर्सिटी के एक नेता ने प्रारम्भ में कहा :

"साथियो, अब हमें अपने अध्ययन में सुधार करने के इस अवसर से लाभ उठाना चाहिए। हम आपसे मांग करते हैं—आप अपनी राय दें।" वह रुका। युवक संघ के दूसरे सदस्य भी चुप रहे ताकि जो विद्यार्थी उनसे सम्बन्धित नहीं थे वे बोल सकें।

पर जो लड़का बोलने को खड़ा हुआ वह उनकी आशाओं के विपरीत निकला। "वास्तव में मैं यह नहीं समझता कि पाठ्यक्रमों में परिवर्तन इतनी तेजी से होने चाहिए जैसा कि उनके परिवर्तनों के बारे में सरकार की पिछली दो आज्ञाएं आई हैं। आखिर क्या यूनिवर्सिटी ऐसा स्थान नहीं जिसे शास्त्रीय अध्ययन और अनुसंधान का स्थान समझा जाये ? क्या पेता ही ऐसे विषयों के प्रयोग के लिए उचित स्थान है जो केवल अल्पकालीन ठोस शिक्षण के लिए उपयुक्त रहेंगे ?"

"मैं सहमत हूँ"—उसके मित्र ने हां में हां मिलाते हुए कहा। "मैं नहीं सोचता कि ये अन्तिम परिवर्तन उतने अच्छे हैं। शिक्षा के स्तर को ऊंचा रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि नए विषयों को लागू करना। मेरी राय में यूनिवर्सिटी "ऊंचे गुणों के प्रशिक्षण" का स्थान होना चाहिए।"

"ये आखिरी परिवर्तन तो बस हद है।" तीसरा वक्ता उससे भी ज्यादा साहसी था। "यदि आप सबकी यही इच्छा है कि केवल राजनीतिक प्रशिक्षण को बढ़ाया जाय तो सभी यूनिवर्सिटियों को समाप्त क्यों नहीं कर देते ?"

इन तीन आलोचकों का साथ देने के लिये दूसरे छात्र तत्पर प्रतीत होते थे। वादविवाद के नेता ने इस संकट को भांप लिया। उसने सोचा यदि इस विषय पर आगे विवाद का परिणाम पुराने पाठ्यक्रम को फिर से लागू करने के लिये प्रार्थना पत्र देना हुआ तो यह बहुत बुरा होगा। जबकि आशा यह थी कि शिक्षा-मन्त्रालय द्वारा जो सुधार लागू किये गये थे उनके समर्थन के लिये वोट मिल जायें। अतः नेता ने जल्दी से एक पार्टी मेम्बर को बोलने की अनुमति दे दी।

"साथियो, मेरे विचार से आप लोग इस बुर्जुवा बकवास से इतना अधिक लगाव रखने की अक्षम्य भूल कर रहे हैं। विद्यार्थी होने के नाते यह हमारा अधिकार और साथ ही कर्तव्य भी है कि जो पाठ्यक्रम जनता के लिये हानिकारक हों उन्हें समाप्त कर दिया जाय। यदि आपके दृष्टिकोण बदल गये हैं और आपने सर्वहारा के साथ अपने दृष्टिकोण बना लिये हैं तो आपको इन सुधारों को आज के व्यक्त विचारों से ज्यादा अच्छी तरह समझना चाहिये। वास्तव में अभी की कुछ बातों को सुनकर मेरे मन में एक गम्भीर शंका पैदा हो गई है कि अगर हम इसी तरह बहस करते रहे तो क्या हम किसी नतीजे पर पहुंच सकेंगे ? जब तक हम अपनी इन शंकाओं को अपने छोटे-छोटे गुटों में मिटा नहीं लेते, क्या इस मीटिंग को तब तक के लिये स्थगित नहीं कर सकते ?" इस तरह नेता ने वह तमाशा खत्म कर दिया।

सुधारों के प्रति इस आत्म-प्रेरित विरोध की आंतरिक धारायें इतनी प्रबल हो गईं कि पीकिंग के दो प्रमुख जनवादी व्यक्ति, एक तो पेता के समाज विज्ञान विभाग के प्रोफेसर चांग-जीजो और दूसरे येनचिंग में दर्शन विभाग के प्रोफेसर चांग तुन शन, चेयरमैन माओ-त्से तुंग से मिलने गये और इन अति-वामवादी परिवर्तनों के प्रति अपनी अस्वीकृति का संकेत किया। प्रधानमन्त्री चाऊ एन-लाई से, जो इन सुधारों को करवा रहे थे, चेयरमैन माओ अधिक बुद्धिमान थे। चेयरमैन माओ ने अपना एक व्यक्तिगत सन्देश यकायक ही भेज कर शिक्षा मंत्रालय को आश्चर्य में डाल दिया। उन्होंने आदेश दिया कि प्रस्तावित परिवर्तनों को एक साल के लिये टाल दिया जाय।

शिक्षा मन्त्रालय में अतिवादियों ने पाठ्यक्रमों में हुए उन परिवर्तनों से ही फिलहाल संतोष कर लिया जिन्हें वे पहले ही लागू कर चुके थे। कम से कम अत्यन्त प्रतिक्रियावादी पाठ्यक्रमों पर तो प्रतिबंध लग ही गया था और जो विषय शेष रहे थे उनमें भी जहां कहीं सम्भव था पार्टी के सिद्धान्तों को प्रविष्ट किया जा चुका था।

सुधार आन्दोलन शुरू होने के पहले हुई उस "ऐतिहासिक मीटिंग" में हमारे प्रतिनिधियों ने एक अन्य प्रस्ताव द्वारा जू-जी के और भी तेजी से किये जाने की मांग की। इन जू जी कक्षाओं ने तो हमारी नाक में दम कर दिया, विशेष तौर पर उस समय जब विद्यार्थी-संघ ने एक अन्य प्रस्ताव पास करके हमें कक्षाओं के काम और अध्ययन में एक सप्ताह में ५४ से ६२ घंटे लगाने को

कहा। हमारे नये कार्यक्रम के अनुसार हमें अध्ययन अथवा कक्षाओं में पढ़ने के लिये प्रातः ८ बजे से दोपहर के १२ बजे तक फिर दोपहर को २ बजे से शाम को ३ बजे तक और रात को ७ बजे से १० बजे तक जाना पड़ता था। हमारे सुबह के शारीरिक व्यायाम ७ बजे शुरू होते थे और हम रात को साढ़े दस बजे सो पाते थे।

"सामूहिक अध्ययन" पर और भी अधिक जोर डाला जाने लगा। यह उस सतत् प्रगति का एक अंग था जिसके द्वारा हम अपने अंतिम लक्ष्य "सामूहिक जीवन" की ओर बढ़ रहे थे। "बुर्जुवा व्यक्तिवाद" का दोष अपने ऊपर लगने के भय से बहुत थोड़े छात्र उसमें हिस्सा न लेने का कोई वहाना खोज पाते थे। सामूहिक अध्ययन का ढंग यह होता कि लान में या खाली क्लासरूम के अन्दर एक गुट के लोग इकट्ठे हो जाते। वहां एकत्रित सभी लोग जोर जोर से पुस्तक के एक ही अंश को पढ़ते। अध्याय के प्रत्येक अनुच्छेद के पढ़े जाने के बाद नेता उस पर विवाद करने के लिये पढ़ना रोक देता। जो लोग प्रश्न करने में या दूसरे के प्रश्नों का उत्तर देने में असफल रहते उनकी यह कह कर आलोचना की जाती कि उन्होंने "अपने साथियों की ओर गैर-जिम्मेदारी का रुख" अपनाया है। यह आलोचना प्रारम्भ में नर्मी के साथ की जाती थी।

जो विद्यार्थी पढ़ने में मन्द थे उनके लिये यह तरीका अच्छा था। कम से कम इससे यह निश्चय हो गया कि जो विषय उन्हें पढ़ने के लिये दिया गया उसे वे पढ़ते हैं। पर होशियार छात्र इस तरह जोर जोर से पढ़ने और नेता द्वारा बहुत ही साधारण प्रश्न पूछे जाने पर कभी कभी चिढ़ जाते। यद्यपि नेता का काम ही यह निश्चय करना था कि हर एक छात्र अपने पाठ को अच्छी तरह समझ गया है। उन्हें इस बात पर भी असन्तोष था कि इस योजना के द्वारा उन्हें मन्द बुद्धि वाले छात्रों की सहायता करने के लिये मजबूर होना पड़ा था और उन्हें कक्षाओं के अलावा अपनी पढ़ाई करने के लिये समय नहीं मिलता था। पर यह कौन कह सकता है कि नई पद्धति ठीक थी या गलत ? कम से कम इससे कुछ अंश में तो जनवादी समानता आती ही थी। थोड़े से "बुद्धिजीवी कुलीनों" की प्रगति कुछ कम करके मन्द बुद्धि विद्यार्थियों के लिये ज्ञान का एक निम्नतम स्तर तो निर्धारित हो सका।

रूसी भाषा के विभाग में सामूहिक अध्ययन पर बहुत जोर डाला जाता था। रूसी भाषा की कक्षा के छात्र जो सभी पार्टी के आज्ञाकारी अनुयायी थे

'सर्वहारा की महान् पितृभूमि" की भाषा तेजी से ग्रहण करने की कोशिश किया करते थे। लान में बैठे हुये ऐसे लोगों के समूह को आप देख सकते थे जो रूसी वर्णमाला और सीखे हुये साधारण वाक्यों को जोर जोर से दोहरा रहे थे। वे ऐसे मालूम पड़ते थे जैसे किंडरगार्टन स्कूल के बच्चे पढ़ना लिखना सीख रहे हों।

स्वतंत्रता के वाद मेरे कुछ मित्रों को आशा थी कि अब सुख और शांति का युग आ गया है तथा अन्तिम परीक्षाओं का परम्परागत संकट समाप्त हो ही जायेगा। पर उस "ऐतिहासिक मीटिंग" में जो प्रस्ताव पास हुआ था, उससे इस आशा पर तुषारपात हो गया। प्रस्ताव में कहा गया था: "परीक्षाएं समाप्त नहीं की जा सकतीं, परन्तु, इनकी प्रकृति में तो पहले ही परिवर्तन किया जा चुका है। अब तो यह जू-जी का सारांश और उसकी जांच-मात्र है।"

पहले पहल तो इससे हम बहुत खिन्न हुए। क्या पहले अन्तिम परीक्षाएं सत्र के काम का सारांश और जांच नहीं थीं? पर जब हमने सत्र के पुनर्निरीक्षण के सम्बन्ध में सूचनाएं पढ़ीं तो हमें मालूम हुआ कि वास्तव में परीक्षाओं का स्वरूप बदल गया था। उस घोषणा में हमने पढ़ा, "पुनर्निरीक्षण के सम्बन्ध में शिक्षक पहले उसकी रूप रेखा बता दें और बाद में उसकी महत्वपूर्ण बातों को बतला दें।" "अध्यापकों को हमेशा पारस्परिक सहायता केन्द्रों के सम्पर्क में रहना चाहिए उनकी गलतियों को ढूंढ़ना चाहिए और उनकी समस्याओं का समाधान करना चाहिए ..."

अब हम समझ गये। नई पद्धति से पार्टी की अपने लोगों के प्रति उत्कंठा व्यक्त होती थी। ये छात्र बाहर के राजनीतिक काम में इतने सक्रिय थे कि उन्हें स्वतन्त्र अध्ययन के लिए बहुत कम समय या रुझान था। वे अपनी इस कमी को हमेशा "सिद्धांत और व्यवहार" के समन्वय के बारे में जोर जोर से बातें करके पूरा कर देते थे। पुरानी व्यवस्था में छात्र के व्यक्तिगत अध्ययन और किसी भी विषय पर उसके स्वतन्त्र विचारों को महत्व दिये जाने के कारण इन कामरेडों के नम्बर अवश्य ही कम आते। यही कारण था कि उन्होंने इतने जोश के साथ मीटिंग में इस प्रस्ताव को पास कर दिया। पारस्परिक सहायता केन्द्रों में विचार विमर्श करने, जू-जी में अच्छे छात्रों से सहायता लेने और "अपनी समस्याओं को हल करने में" अध्यापकों को विवश

करने के बाद उनके लिये परीक्षा फल के लिये चिन्ता करने का कोई कारण न था।

इस प्रकार जब परीक्षाएं पास करना आसान और अच्छे नम्बर लाना मुश्किल हो गया तो अधिकांश अच्छे छात्रों को परीक्षाओं में अच्छे नम्बर प्राप्त करने में दिलचस्पी नहीं रही। "जब वे सब चीजों की इस तरह व्यवस्था करते हैं तो यूनिवर्सिटी के अधिकारी हमारे छात्रों से अध्यवसायी होने की कैसे आशा कर सकते हैं", यह एक बुड्ढे प्रोफेसर की शिकायत थी। लेकिन अधिकारियों पर दोष मढ़ने की बजाय इस आदरणीय संत को अपने अज्ञान को दोष देना चाहिए था। अधिकारी तो चाहते ही थे कि हम परिश्रम करें और हमसे परिश्रम करा लेने के साधन भी अब उनके पास थे—पर वे हमारी सारी शक्तियां पुराने तरीके की परीक्षाएं पास करने में ही केन्द्रित कराना नहीं चाहते थे। आखिर हम एक ऐसे "श्रेष्ठ जन" के रूप में प्रशिक्षित किये जा रहे थे जो नये जनवाद के प्रशासन में कुछ उत्तरदायी जगह लेंगे। पर जिस प्रशिक्षण की हमें आवश्यकता थी, उसके बारे में हमारे नये नेताओं के स्वभावतः नये विचार थे। अपनी कितावों पर समय नष्ट करने के बजाय हमें अवसर मिला था कि हम अपने वाद-विवाद गुटों, स्वालोचना सम्मेलनों, अपनी परेडों और यूनिवर्सिटी के बाहर जो हमें प्रचार करना पड़ता था उसमें विरोध-प्रहार करने का अभ्यास करें। जो छात्र विशेषतौर पर ऐसा नहीं करना चाहते थे वे भी शीघ्र ही संभवतः जनता की सेवा के लिये और नई सरकार की सेवा के लिये तो निश्चित रूप से निपुण कार्यकर्ता बना दिये गये।

पेता एक शोधशाला भी थी और दूसरी यूनिवर्सिटियों में सुधार लागू करने के लिये एक आदर्श भी। हमारी यूनिवर्सिटी के बाहर भी हमारी उन "ऐतिहासिक मीटिंगों" ने जल्दी ही असर दिखाया। हमें यह सुन कर बड़ा मजा आया कि पीकिंग की नार्मल यूनिवर्सिटी के एक प्रोफेसर ने छात्रों द्वारा हमारे प्रस्ताव के अनुरूप अपने लाभ के लिये पाठ्य-क्रमों की महत्वपूर्ण बातों के बारे में अनेक बार पूछने पर, गुस्से से अपनी मूछें फैलाते और हांफते हुए कहा :

"क्या ये बेवकूफ स्वयं यह भी नहीं समझ पाते कि उनके लिये कौन सी बातें महत्वपूर्ण हैं। मैंने पहले ही दो बार उन महत्वपूर्ण बातों को दोहरा दिया है पर वे अभी तक बहाना बनाते हैं कि ये बातें उनकी समझ में नहीं आयीं, इसलिये हमें बार बार अपने लेक्चरों को संक्षिप्त करना पड़ता है। असल में ये

मुझसे यह चाहते हैं कि मैं जिन सवालों को परीक्षा में देना चाहता हूं उन्हें ज्यों का त्यों बतला दूं और साथ ही उनके उत्तर भी।"

हम में से कुछ लोग इन परिस्थितियों में कष्ट का अनुभव कर रहे थे। पर मुझे भय है कि हमें प्रोफेसरों की परेशानियों को देख कर एक कुत्सित आनन्द भी मिलता था क्योंकि विगत काल में ये प्रोफेसर हमेशा ही ज्ञान की प्रतिष्ठा का झूठा आवरण अपने चारों ओर लपेटे रहते थे। वास्तव में अब तक हम समझने लगे थे कि शिक्षकों से हमें समय पर जो नेतृत्व मिलना चाहिए था और जिस समय हमें उसकी अत्यन्त आवश्कता थी उस समय वे उस नेतृत्व को देने में असफल रहे थे।

(११)

शिक्षक कौन ?

हमारे अधिकांश अध्यापक अमोय यूनिवर्सिटी के उस विख्यात प्रोफेसर की तरह नहीं थे जिसका छात्रों पर आदर्श नियंत्रण था। उसकी कक्षाओं के हरएक छात्र को जो भी काम दिया जाता था वह उन्हें इतनी अच्छी तरह करना पड़ता था कि प्रोफेसर को पूरा पूरा सन्तोष हो, नहीं तो वह उत्तीर्ण नहीं हो सकता था। उसे कभी कक्षा में शान्त कहने की जरूरत नहीं पड़ी। जब क्लास हो रही हो तो छात्रों में इतनी हिम्मत न होती कि वे एक दूसरे को अपने नोट भी दे दें। कक्षा के बाहर भी वह उतना ही उग्र था। जब छात्र उसके घर जाते तो किवाड़ खट-खटाने से पहले वे दरवाजे के सामने थोड़ी देर टहलते रहते।

मुझे विश्वास है कि यह घटना चीन में सभी जानते थे कि एक दिन वह अपनी कक्षा में टहलते हुए आया। उसने रूखेपन से गर्दन हिलाकर छात्रों को बैठ जाने का इशारा किया क्योंकि उसके आते ही छात्र हमेशा ही चटाक से खड़े हो जाते थे। फिर वह खुद बैठ गया पर कुर्सी की एक टांग झटके के साथ टूट गई और धमाके से वह जमीन पर आ रहा। अपनी दोनों हथेलियों को फर्श पर टेके हुए वह कुछ क्षण वहीं बैठा लड़कों की ओर देखता रहा। उस निस्तब्ध शान्ति में कोई दबी हंसी न सुनाई दी। वह उठा और रास्ते में पड़े हुए कुर्सी के टुकड़े को उसने ठोकर मारकर हटा दिया और अपना लेक्चर प्रारंभ कर दिया।

आज पेता के छात्र ऐसे अनुशासन को काल्पनिक ही समझेंगे जब तक कि अध्यापक गणमान्य सरकारी नेता या "समाजवाद की पितृ-भूमि" से आया कोई सम्मानित अतिथि न हो। चीन में शिक्षकों और विद्वानों का हमेशा से आदर रहा है। पर गुरु-शिष्य के सम्बन्धों में क्रांति से पहले ही आमूल परिवर्तन आ गया था। यहां तक कि १९११ में, अन्तिम राज-वंश का नाश होने से पहले, नवयुवक नये विदेशी विचारों की गर्मी में उन शिक्षकों के प्रति अधीर हो

उठे थे जो शास्त्रीय ज्ञान के अतिरिक्त और कुछ नहीं पढ़ा सकते थे। इनमें से कुछ छात्र स्नातक बनने के बाद स्वयं भी शिक्षक हो गए। लेकिन उनमें से बहुत थोड़े लोगों ने अपने में, जिस युग के वे उत्तराधिकारी थे उस युग में पढ़ाये जाने वाले पुराने और अपरिवर्तनशील विचारों के अतिरिक्त कोई अन्य विचार दृढ़ जमा पाये।

जापान के विरुद्ध संघर्ष के दिनों में जब सारी यूनिवर्सिटियां बन्द होकर दूर देश के अन्दर के भागों मे गयीं, ुरु और शिष्य के बीच का सम्बन्ध और भी अनौपचारिक हो गया। विजय दिवस के बाद जब पीकिंग में यूनिवर्सिटियां फिर से आईं, तब भी वह औपचारिकता नहीं आई। आखिर पुरानी सरकार के उन विगत वर्षों में प्रगतिशील छात्र पढ़ने-लिखने की अपेक्षा राजनीति में अधिक दिलचस्पी रखने लगे और बहुत से छात्र उनके पद-चिन्हों पर चलने लगे थे। संगठित विद्यार्थियों के दबाव को झेलना अध्यापकों के लिये उन हालातों में भी कठिन था जब कि वे उनकी गति विधियों से पूरी तरह सहमत नहीं थे। मीटिंग में हिस्सा लेने, परेडों में मार्च करने और दूसरे राजनीतिक काम करने के लिये सभी छात्र एक साथ अनुपस्थित हो जाते थे और बाद में ऐसे छात्रों के विषय में बात करने के लिये जो समयाभाव के कारण अपना अध्ययन पूरा नहीं कर पाते, वे प्रतिनिधि मंडल बना कर अध्यापकों के पास पहुंच जाते।

कुछ अध्यापक स्वयं ही क्रांति लाने के लिये तन मन धन से काम कर रहे थे। बहुत से सक्रिय रूप से हिस्सा न ले सके यद्यपि वे क्रांति से सहानुभूति रखने वाले समझे जाते थे। कुछ थोड़ों ने तटस्थ रहने की चेष्टा की और बिना राजनीति में पड़े, जिसे वें घृणा करते थे, अपने विषयों को पढ़ाते रहे। प्रगतिशील विद्यार्थी ऐसे लोगों का तिरस्कार करते थे। जब अपर्याप्त तनख्वाहें हों, महंगाई हो, भ्रष्टाचार हो और विद्वानों को एक वर्ग के रूप में समाप्त किये जाने का भय हो तब भला विद्वान् किस तरह से तटस्थ रह सकते थे ?

मुझे याद है कि जब स्वतन्त्रता आई कि किस तरह से अधिकांश प्रोफेसरों ने हमारे साथ परेड में सम्मिलित होकर जय जयकार से जन-मुक्ति सेना का स्वागत किया था। स्वतन्त्रता के बाद शीघ्र ही उनको कम से कम मूलभूत वस्तु—ज्वार की केटी के रूप में ऊंचे वेतन मिलने लगे। यहां तक कि उन प्रोफ़ेसरों को भी जिन्हें उनके शिष्यों ने कम नंबर दिये थे, और जिनकी

तनख्वाहें कम हो गई थीं पहले से ज्यादा वेतन मिलता था। स्वतन्त्रता के उत्सव के बाद हमारे शिक्षक नई पत्र-पत्रिकाओं और समाचार-पत्रों को पढ़ कर एक दूसरे से विचार-विमर्श करते कि वे जो कुछ कक्षाओं में पढ़ाते थे उसे सामयिक स्वरूप देने के लिये क्या करना चाहिये ? बाद में जोश ठंडा पड़ गया और पढ़ाई प्रारम्भ हुई। हमारी तरह ही हमारे अध्यापक भी हमारे नेताओं के पास जो "ज्ञान और अनुभव" का भण्डार था उसे अध्ययन करने के लिये जू-जी करने लगे।

स्वतन्त्रता के प्रारम्भिक सप्ताहों में ही जब नये अधिकारियों ने हमें अपने अध्यापकों के ग्रेड और वेतन निश्चित करने का विशेष अधिकार दे दिया था तो मेरे कुछ मित्र, जिनके अन्दर अभी भी अपने शिक्षकों के प्रति विशेष द्वेष मौजूद था, किसी से भी कहते रहते कि स्वतन्त्रता ने वास्तव में छात्रों को प्रोफ़ेसरों से मुक्त कर दिया है। लेकिन घटनाओं ने यह सिद्ध कर दिया कि इस कथन में कितनी सत्यता थी ? गुरु और शिष्यों के बीच सम्बन्ध ठीक करके उनका नया वर्गीकरण हुआ जिससे प्रगतिशील छात्रों का प्रगतिशील अध्यापकों और पिछड़े हुए छात्रों का पिछड़े हुए अध्यापकों के साथ वर्गीकरण हो सके। अब प्रगतिशील छात्रों को पिछड़े हुए शिक्षकों को पढ़ाने का और प्रगतिशील शिक्षकों को पिछड़े हुए छात्रों के अन्दर मार्क्सवाद-लेनिनवाद का प्रकाश पहुंचाने का अवसर मिल गया।

पेता में प्रगतिशील अध्यापकों की अपेक्षा प्रगतिशील छात्र अधिक थे। आखिर हम नवयुवक थे और हमारे अध्यापक युवक न थे। अगर सभी गैर-मार्क्सवादी सिद्धांतों को विष समझा जाय तो जितने समय हम उसे आत्मसात करते रहे उससे बीस या तीस साल ज्यादा हमारे अध्यापक कर चुके थे। अत: शुरू में थोड़े समय के लिये हमने स्वयं को स्वतन्त्र और मुक्त अनुभव कर आनन्द लिया। अपने अध्यापकों से यह कहने का हमें पहली बार विशेष अधिकार मिला था कि हमें क्या और किस तरह से पढ़ाया जाय ? अब अप्रिय अध्यापकों को चुपचाप बैठ कर सुनना पड़ता और हम उनके पढ़ाने के तरीकों, कक्षा में उनके स्वभाव और उनके राजनीतिक विचारों की आलोचना आम सभाओं में करते रहते। पहले पहल कुछ अध्यापकों ने बहस करने की कोशिश की और ज्ञान और तर्क में हमसे अधिक होने के कारण वे बाजी भी मार ले जाते। पर बाद में इस तरह के खण्डन व्यर्थ सिद्ध हुए।

जनमुक्ति सेना के साथ पेता में जो छात्र आये, स्वाभाविक रूप से उन्होंने हमारे अध्यापकों को उनके पढ़ाने के ढंग और विचारों को सामयिक बनाने में सहायता देने के आन्दोलन संगठित किये। हमारे पारस्परिक सहायता केन्द्रों में उन्होंने अपने भाषणों में हमें बतलाया कि हमें अपने अध्यापकों की सहायता करना कितना आवश्यक था। "हमारे अधिकांश अध्यापक सज्जन पुरुष हैं, उनमें बहुत से कुशल शिक्षक हैं और कुछ वास्तव में प्रगतिशील हैं। जब हम क्रान्ति की ओर बढ़ रहे थे तो भी वे हमारे साथ कंधे से कंधा भिड़ा कर चले।"

"ये प्रगतिशील अध्यापक वास्तव में सच्चे कामरेड हैं लेकिन इन दूसरे अध्यापकों के बारे में हम क्या कहें ?" हम सब लोगों से इस वक्ता की आयु अधिक थी। वह दुबला पतला लम्बा होनानवासी ३० वर्ष का होगा जो जापानी युद्ध के पहले से ही यहां पढ़ रहा था। मेरे खयाल में उसके आलोचक उसे 'पेशेवर छात्र' कहेंगे। १६४६ के पतझड़ काल में वह पेता से भाग गया था और स्वतन्त्रता के बाद यूनिफार्म में यूनिवर्सिटी लौटा था। "साथियो ! हाँ, और लोगों का क्या करना है ? हम सब उनके बारे में व्यक्तिगत आलोचनायें करते हैं यह मैं जानता हूं। पर उनके प्रति हमारी अच्छी या बुरी निजी भावनायें इतनी महत्वपूर्ण नहीं जितना कि यह बुनियादी सवाल है कि वे किस वर्ग से सहानुभूति रखते हैं।

"हम सभी जानते हैं कि जब से वे पढ़ा रहे हैं तभी से उनमें से बहुत से लोग बुर्जुवा विचारों के जहर का शिकार रहे हैं। उनमें से अधिकांश मध्यवित वर्ग के लोग हैं और उन्होंने अपनी बुर्जुवा स्थिति से चिपके रहने की कोशिश की है। कुछ अध्यापकों के जीवन में रहन सहन के बुर्जुवा तरीकों का विष रग रग में समा गया है।" आज मैं लज्जा का अनुभव करती हूँ कि उस समय यह सुनकर हम सबने तालियाँ बजाकर हर्ष प्रकट किया था। यह स्वतन्त्रता के शुरू के दिनों की बात थी जब इस तरह की अलंकारिक भाषा से हम सब जल्दी प्रभावित हो जाते थे।

वह कहता गया "साथियो। इस जहर को निकाल फेंकना इतना आसान नहीं। और हमारे शिक्षक उसे खुद निकाल भी नहीं सकेंगे। सचमुच, उन्होंने अपनी जू-जी कक्षाओं में उसे निकालने की भरसक कोशिशें की हैं पर हम जानते हैं कि इतना ही पर्याप्त नहीं हैं। अपने विचारों में लाने के लिए, अपने

जीवन धर्म को बदलने में उन्हें हमारी सहायता की जरूरत पड़ेगी । इसके लिए मुझे स्मरण कराने की जरूरत नहीं कि हमें उनके ज्ञान और उनकी योग्यता का आदर करना चाहिए—पर यदि हमें उनकी सहायता करनी है, वास्तव में सहायता करनी है, तो हमें उनके बुर्जुवा या सुधारवादी विचारों को, उनके और साथ ही हमारे देश के भले के लिए सहन नहीं करना चाहिए ।"

परिणामस्वरूप हम सब अपने सभी प्रोफेसरों को अपनी राजनैतिक मीटिंगों और सामूहिक वादविवाद में हिस्सा लेने के लिये विनम्र आमंत्रण देने के लिये सहमत हो गये । छात्रों के प्रतिनिधि अध्यापकों से उनके कार्यालय में मिले । जब हम उनके पास हमारे साथ सीखने के लिये कहने गये तो हमें ठीक नहीं मालूम कि इन "विचार विषाक्त अध्यापकों" की निजी प्रतिक्रिया क्या थी पर वे सब मुस्काराये और उन्होंने नम्रता से हमें धन्यवाद दिया ।

"आपके सौहार्दपूर्ण निमंत्रण के लिये धन्यवाद । स्वाभाविक तौर पर जू-जी के लिये मिलने वाले किसी भी अवसर को मैं छोड़ना नहीं चाहता ।"

"यह आपकी अनुकम्पा है। आपके साथ मिलकर आपके निष्कपट सुझावों से अपने को सुधार कर मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी ।"

"हां, मैं अनुभव करता हूं कि यह प्रगतिशील युग है । आप लोग तो हमसे आगे निकल गये । हमें आप लोगों तक पहुंचने की कोशिश करनी है ।"

साफ था कि प्रोफेसरों के लिये सीखने को हमारे पास जो था उसकी अफ-वाह हमारे विभाग में भी पहुंच गई । जब हम उस आफिस से बाहर आये जहां हमारे साथ कठोरता या क्रोधपूर्ण व्यवहार करने वाले प्रोफेसर बैठा करते थे तो हमारे चेहरों पर विजय की मुस्कान बिखरी हुई थी । "हमें ध्यान रहे," हमारे नेताओं ने हम से कहा, "कि इन अधिकांश अध्यापकों के लिये जू-जी का वास्तविक आरम्भ यही है । हां ! मैं जानता हूं वे सब आपस में जू-जी कक्षायें लगाया करते हैं । पर हमने समझ लिया है कि उन लोगों को हमारे उत्साह से प्रेरणा लेना भी आवश्यक है । हमें उन्हें उत्साहित करने में कोई कसर नहीं उठा रखनी चाहिये । उनकी सहायता करने के लिए जहां आलोचना आवश्यक है हमें आलोचना करनी होगी और जब प्रशंसा वांछनीय हो हमें उनकी प्रशंसा करनी होगी ।"

अध्यापक और छात्रों की पहली सम्मिलित सभा शुरू होने को थी और हम सभी आंखें द्वार की ओर लगाये अपने प्रोफेसरों के आने की बाट जोह रहे

थे। पर घंटी बजने के पांच मिनिट बाद तक हमारे अध्यापकों में से केवल दो आये और वे धीरे से अन्दर आ कर पीछे की सीटों पर बैठ गये थे। मीटिंग थोड़ी देर हुई। अध्यक्ष जिस स्वागत भाषण को तैयार करके लाया था उसे उपयोग में न ला सका। किसी तरह भी वह निश्चय न कर सका कि उसे दोनों प्रोफ़ेसरों की उपस्थिति पर ध्यान देना चाहिए या नहीं। अन्त में उसने एक प्रश्न पर उनमें से एक से टीका करने के लिये पूछकर समझौता कर लिया। पर अध्यापक ने धीरे से किन्तु दृढ़ता के साथ कहा, "मैं यहां सुनने और सीखने के लिये ही आया हूं।" वादविवाद समाप्त हो गया और जैसे ही मीटिंग हाल से निकले हम उन दोनों प्रोफेसरों की ओर देखकर मुस्काराये मानों वे दोनों हठी बालक थे जिन्हें स्कूल आने के लिये फुसलाया जा रहा था। जो अध्यापक मीटिंग में नहीं आये उन्हें शिक्षित करने के लिये भी हमें कुछ तो करना ही था।

"जब छोटे छोटे गुटों की मीटिंग होंगी तब तक ठहर कर देखें तो वहां क्या होता है", हम एक दूसरे को परामर्श देते। "शायद उनके विचार से "बड़ा वर्ग" बहुत बड़ा है। उन्हें एक अवसर और देना चाहिये।" किसी ने सरकार की ओर से अध्यापकों पर शायद डांट-डपट की होगी क्योंकि अनौपचारिक विवादों में अधिकाधिक अध्यापक हिस्सा लेने लगे। लेकिन जो वास्तविक वाद-विवाद होते उनके साथ स्वर में स्वर मिलाने के लिये वे उत्साहित न थे। जब गुट का नेता विवाद में लेने के लिये अपने प्रयास उनपर केन्द्रित कर देता तो वे कुछ व्यंग के साथ ही उत्तर दिया करते। "ओह, आप नवयुवकों की हमसे अधिक स्पष्ट और गहरी सूझ-समझ है।" या वे छत की ओर देखते हुए इन शब्दों को दुहरा देते जिन्हें हमने पहले दिन की मीटिंग में सुना था; "मैं तो यहां सुनने के लिये आया हूँ।"

कई सप्ताह बाद, जब प्रोफसरों की छोटे छोटे गुटों की मीटिंग में भी उपस्थिति गिरने लगी, हमारे नेताओं ने हम सबको इकट्ठा किया और हमारे निमंत्रणों का सिंहावलोकन करने और परिस्थिति में सुधार लाने के बारे में बातें कीं। मेरा सहपाठी ह्वागं जो स्वतंत्रता से पूर्व प्रोफेसरों को अपनी ओर लाने के लिये गया था और उन्हें अपनी ओर ले भी आया था, उसने युवक संघ की भावनाओं को संक्षेप में बताया। "जब हम उन्हें आमंत्रित करने गये तो उन सबने कहा कि आयेंगे। पर किसे मालूम था कि वे अपनी बात के धनी

नहीं हैं ? ऊंह—ये पुराने ढंग के बुद्धिजीवी ।" उनने अपनी गर्दन हिलाई । "शायद उनका मर्ज इतना बढ़ चुका है कि अब इलाज होना मुश्किल है ।"

"शायद धीरे-धीरे सुधार उचित होगा" एक दूसरा सहपाठी बोला । "विचारों में सुधार एक दिन में नहीं हो सकता, तीन महीनों में भी नहीं हो सकता । शुरू में विचारों में सुधार के प्रति बुर्जुवा का प्रतिकार अवश्यम्भावी है और हमें इसकी आशा करनी चाहिए ।" उसने पार्टी और युवक संघ के सदस्यों के चेहरों पर नाराजगी के चिन्ह देखे और जल्दी ही आगे बोला, "अर्थात् तब तक हम अपनी कोशिशों में ढीले नहीं पड़ें और कोशिशें करते रहें । यदि हमारी मीटिंग में हिस्सा लेने के लिये हम अपने अध्यापकों के पीछे पड़े रहे और सुधारने के लिए जो संघर्ष वे कर रहे हैं उसमें हम धैर्य से उनकी सहायता करें तो मेरे विचार में हम सब दिन पर दिन प्रगति कर सकते हैं ।"

जब हमारे नेताओं ने इस विचार का अनुमोदन किया तो मुझे बहुत कुछ आश्चर्य सा हुआ "हमें धीरे बढ़ना चाहिए, हमें न जल्दीबाजी और न गुस्सा ही करना चाहिए कृपया सभी याद रखें कि अगली बार निमंत्रण देते समय पहले से अधिक विनम्र हों ।"

यह मेरा सौभाग्य था कि ह्वांग के नेतृत्व में प्रोफेसर चेन को दुबारा निमंत्रण देने के लिए एक प्रतिनिधि-मंडल के साथ मैं भी गई । हमारे खटखटाने पर श्रीमती चेन ने दरवाजा खोला और हमें अन्दर बुला लिया । सम्मानित अतिथियों की तरह हमारे साथ बर्ताव करते हुए उसने हमें बैठ जाने को कहा। फिर वे हमारे लिये चाय लाईं और मुरब्बे का डिब्बा खोल दिया । व्यग्रता से हमने पूछा: "क्या प्रोफ़ेसर चैन घर पर हैं ?"

"खेद है, कुछ मिनिट पहले ही वे चले गये । उनके शाम से पहले लौटने की मुझे कोई आशा नहीं है क्या आप उन्हें कोई सन्देश छोड़ जाना चाहते हैं ?"

श्रीमती चेन सुन्दर, मधुर-भाषिणी नवयुवती थीं । उनके पति उन्हें बहुत प्रेम करते होंगे । उनकी सभी इच्छाओं की ओर ध्यान देते होंगे । उनकी ओर कमरे में देखते हुये मुझे एक बात सूझी । हम इनसे क्यों न कहें कि हमारी जू-जी की मीटिंग में आने के लिए वे प्रोफेसर चेन से अनुग्रह करें ? प्रोफेसर चेन से फिर दुबारा कहने के बजाय श्रीमती चेन से कहने में परेशानी न होगी और यह अच्छा भी रहेगा । अतः मैंने कहना शुरू किया ।

"सत्र के प्रारंभ में हमने प्रोफेसर चेन से हमारी जू-जी की मीटिंग में आने के लिये कहा था पर किन्हीं कारणों से वे पिछली दो मीटिंग में न आ सके। हम प्रोफेसर चैन के प्रशंसक हैं और मुझे आशा है…" पर यहां मेरी जोर से हंसी फूट पड़ी। भौंचकी श्रीमती चेन ने दूसरे छात्रों की गोल मोल आँखों की ओर देखा। इतने में ही जहां मैं रुक गई थी उससे आगे हमारे एक कामरेड ने बोलना शुरू कर दिया।

"हमें आशा है कि भविष्य में प्रोफेसर चेन हमारे साथ-साथ जू-जी की मीटिंग में हिस्सा लेंगे। यह प्रोफेसर के लिए ठीक होगा इतना ही नहीं तो यह हमें भी सहायक होगा। आखिर, एक अध्यापक को हमें पढ़ाने की पूरी-पूरी जिम्मेदारी है।"

"हमारी दूसरी मीटिंग शुरू होने से दस पंद्रह मिनिट पहले क्या हमें यहां फिर आना चाहिए ?" ह्वांग आगे बोला। "जू-जी विवाद का यह टाइमटेबिल है।" उसने श्रीमती चेन को उसकी एक प्रति दे दी। "जब आपके पति को हमने पहले आमंत्रित किया था तो कार्यक्रम की एक प्रति दी थी पर वह कहीं खो गई होगी या किन्हीं को पहले ही समय दे दिया होगा या कुछ और हो गया होगा।"

"धन्यवाद" जब वे लौटेंगे मैं कह दूंगी। आप लोग वास्तव में उनके शुभ-चिन्तक हैं।" श्रीमती चेन हमारी ओर मुस्कराईं।

दरवाजे के बाहर जाते ही ह्वांग मुझ पर झल्लाया : "एक अध्यापक से मीटिंग में आने के लिये कहने में हंसने की क्या बात थी ? तुम्हें क्या हो गया है ? तुम क्या करने जा रही थीं ?"

"एकदम मेरे मन में आया कि हम कितने छिछले लगे होंगे ? वह एक प्रोफेसर है; एक पूरा आदमी और हम उसके साथ इस तरह बर्ताव कर रहे थे मानो वह स्कूल से बिना छुट्टी लिये अनुपस्थित रहने वाला छात्र हो जो स्कूल नहीं जाना चाहता। जहां सम्मान देना वांछनीय है वहां हमें अपने अध्यापकों को सम्मान् देना ही चाहिए। मुझे विश्वास है उनमें धीरे-धीरे सुधार हो जायगा।"

"तुम्हारे विचार से उनमें सुधार हो सकता है ? अच्छा, और देखते हैं," ह्वांग के स्वर में अविश्वास था। "ऊंह...लगता है। जू-जी मीटिंग शुरू होनें से दस मिनिट पहले उन्हें बुलाने के लिए जब तक न जाया जायगा वे नहीं आयेंगे। मीटिंग में अध्यापकों की संख्या दिन पर दिन घटती जा रही है।

यहां तक कि पहली दो या तीन मीटिंग में आने के बाद श्री चेन भी नहीं आये और फिर भी लोग प्रगतिशील होने का दावा करते हैं।"

हमारे नेताओं ने आन्दोलन के प्रति हमारी मिली-जुली भावनाओं की रिपोर्ट उनसे बड़े नेताओं को अवश्य दी होगी। क्योंकि फिलहाल आन्दोलन ढीला पड़ गया था। बाद में हमने सुना कि यूनविर्सिटी की लेबर यूनियन ने शिक्षकों को सुधारने के काम का बहुत बड़ा हिस्सा अपने हाथ में ले लिया था।

स्वतंत्रता के कई महीनों बाद पेता के प्रारम्भिक पुनर्गठन के समय दर्शन विभाग के प्रधान और कला और विज्ञान के स्कूलों के भूतपूर्व डीन प्रोफेसर तांग हमारी युनिवर्सिटी के प्रशासनिक मामलों की देख-भाल करने के लिये बनाई कार्यकारिणी कमेटी के पहले अध्यक्ष हुए। इस लब्ध-ख्याति शिक्षक के प्रति यह सम्मान- सूचना पग था। पर इसका यही अर्थ था कि प्रोफेसर को हर बात में प्रगतिशील होना पड़ता ताकि वे सारे स्कूल के लिये आदर्श हो सकें।

पेता में जब एक "सर्वहारा दार्शनिक" को द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद पर भाषण देने के लिये बुलाया गया तो बुर्जुवा दार्शनिक प्रोफेसर तांग को उससे सीखने के लिये भाषण सुनने आना पड़ा। भाषण तीन घंटे तक चलता रहा। फिर भी उसके समाप्त होने के कोई चिन्ह नहीं दिखलाई देते थे। डा० तांग जो मोटे और हृदय-रोग से पीड़ित थे, इतने अधीर हो गये कि वे इस तरह उठ खड़े हुये कि किसी का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट न हो और सुस्ताने के लिये एक कमरे में चले गयें। हमने उड़ते हुए सुना कि डा० तांग ने अपने साथियों से यह स्वीकार किया कि भाषण का एक शब्द भी उनके पल्ले नहीं पड़ा। यह अफवाह थी उन्होंने कहा है "मैं अधिक समय तक वहां बैठा नहीं रह सका—यदि मैं क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को पढ़ता रहा तो एक क्रान्तिकारी शहीद के रूप में मेरा अन्त हो जायगा।"

बहुत से प्रोफेसरों ने भी विद्यार्थी जीवन में और अधिक रुचि लेने की हमारी मांग की ओर ध्यान दिया, हमारे नेताओं ने "सामूहिक जीवन" में हिस्सा लेने के लिए शिक्षकों को प्रोत्साहित करने के बहुत कम मौके अपने हाथों से निकलने दिये होंगे। जब भी हम सैर के लिये शहर के बाहर जाने लगते तो हमेशा शिक्षक भी हमारे साथ उन्हीं ट्रकों में बैठकर जाते। पिकनिक

में वह कालेज के दूसरी-तीसरी वर्षों के छात्रों के साथ गोला बना कर बैठते और गपशप, हंसने, घूमने, खाने पीने, तस्वीर उतराने और दृश्यों के देखने के लिये अलग होने के पहले वे हमारे साथ अपने दृष्टिकोणों का आदान-प्रदान किया करते। अपने युवक सुलभ आनन्द में उन्हें भी सम्मिलित करने का विचार हमें सुखद लगा।

हम खेल भी खेलते थे। यहां तक कि गांठ बंधे हुये रूमाल को चुपके से दूसरे को सरका देने के बच्चों जैसे खेल में भी हम अपने शिक्षकों से हिस्सा लेने के लिए आग्रह किया करते और उन्हें हमारी विनम्र प्रार्थना और हर्ष-ध्वनि के बीच गोले में बैठना पड़ता। कुछ छात्र अत्यन्त सम्मानित और वैभव-शील प्रोफेसरों के पास विशेष तौर पर रूमाल डाल देते और उनके न देख पाने पर उन्हें उसका दंड और हमारी हंसी का भागी होना पड़ता।

नृत्य समारोह भी अध्यापकों और छात्रों के बीच मित्रता बढ़ाने का एक रास्ता था। पहले पहल अधिकांश अध्यापक नहीं नाच सके। पर राजनीति और आत्मसम्मान के दबाव के कारण वे व्यग्र और झिझकते हुए मंच पर आकर "नवयुवकों के साथ कदम मिलाते" हुए नाचने लगते।

कुछ पुराने प्रोफेसरों के लिये तो यह फिर से स्कूल जाने के समान था, और शायद उनमें से कुछ के लिये जो प्रचलित विचारों के साथ-साथ न रह सके थे यह अच्छा भी था। १९४८ के अन्त में हमारे शिक्षकों के सुधार के लिये जो यथाक्रम आन्दोलन हुआ उसके बाद भी हम अपने अध्यापकों पर सफलता प्राप्त नहीं कर सके। प्रगति की दौड़ में एक दूसरे को पकड़ने की प्रक्रिया अबाध होती थी। जब उन्होंने नये विषयों को पढ़ाना शुरू किया तो हमारे पहले सुझावों में जो कमी रह गई थी या जिनको हम सोच नहीं सकते थे, वे बातें बराबर सामने आने लगीं। अतः अपने विद्यार्थी नेताओं के अनुग्रह पर हम समय-समय पर अपने नये सुझाव देते और आलोचनाएं करते और प्रोफेसर अपने लेक्चरों में उन्हें समावेश करने की चेष्टा करते।

यूनिवर्सिटी के एक विभाग ने एक विदेशी अध्यापक के तारीफ के पुल बांध दिये जो हमारे विचारों से विशेष रूप से सहमत था। मुझे वह अच्छा लगता था इसलिये मैं उसका नाम नहीं लूंगी पर मेरे विचार से कुछ विदेशी पाठक उसे पहचान जायेंगे। वह अपने क्षेत्र में विशेष स्थान रखता है। कक्षा में वह कभी अस्पष्ट होता तो कभी अनिश्चित जान पड़ता था और कभी इतना प्रसन्न

और सौहार्द्रपूर्ण जैसा कि अधिकांश विदेशी नहीं होते । हम उसे अपना परामर्श देते रहे जिन्हें उसने धैर्य से स्वीकार किया और अपने पढ़ाने में उनका समावेश करने का प्रयास किया । उसकी तत्परता और बिना असन्तोष हमारी बातों को मानने की वृत्ति हमारे बीच बहुत कुछ मजाक बन गया । वह राजनीतिक के बारे में बहुत सरल था और हमसे कहा करता कि शायद यह एक अच्छी बात थी कि हम खुल गये ।

इस विद्वान पर हम ने जो दबाव डाले वे जितना हम समझते हैं उससे कहीं अधिक थे । विशेषतौर पर जब उलझे हुए बहुत से सुझाव एक साथ उस पर लाद दिये गये तो उसकी अत्यन्त प्रगतिशील पत्नी हमारे पास आयी और बोली, "क्या और कोई सुझाव नहीं देने ? आप क्या चाहते हैं ? वह कहीं दूर चला जाय और अपने आपको फांसी लगा ले ?" उससे लज्जित होकर हमने यह सब बन्द कर दिया जिसे हम खिलवाड़ समझते थे ।

यद्यपि सुधार की ओर अधिकांश प्रोफेसरों ने तेजी से प्रगति की, पर हमारे नेताओं ने हमारे प्रयासों को जारी रखने का आग्रह किया कि हम उन की बुर्जुवा चेतना को समाप्त करने में उनकी सहायता करें । "नये समाजवाद के सिद्धान्तों को भली भांति समझने पर भी ह्वांग ने मुझे चेतावनी दी कि हमें ध्यान रखना चाहिये कि कहीं वे फिसल न जायं । आप यह न समझें कि बीस या तीस वर्षों से उनके दिलों में बैठे हुए विचार इतनी जल्दी भुलाये जा सकते हैं, ऐसा सम्भव नहीं ।"

एक दिन मैं दर्शन विभाग के एक प्रोफेसर से मिलने गयी जिसने मुझे पहले सहायता की थी । दरवाजे पर मिलने आये दो छात्रों को देखकर वह कुछ घबड़ाया सा लगता था । "जब आपका मिजाज अच्छा होगा, हम फिर आयेंगे ।" दर्शकों में से एक ने कहा और वे चले गये ।

जब प्रोफेसर ह्यू अपनी बैठक में मुझसे मिलने आये वह सोफे पर बैठ गये । वह थके हुए और कुछ व्याकुल दिखाई देते थे ।

मैं अपनी एक निजी समस्या लेकर गयी थी जिससे मैं छुटकारा पाना चाहती थी । पर उनकी शक्ल सूरत को देखकर मैं अपनी बात न कह सकी । "प्रोफेसर क्षमा करेंगे आप काफी थके हुए लगते हैं," मैं बोली, "शायद आप

बहुत ज्यादा पढ़ा करते हैं। थोड़ा आराम क्यों नहीं करते ?" यह धृष्टता थी पर मेरा व्यवहार मित्रवत था।

"मैं बिल्कुल ठीक हूं", उनके स्वर में कुछ चिड़चिड़ाहट थी। "ठीक है, मैं अध्ययन में—राजनीति के ग्रन्थों को बड़ी सावधानी से पढ़ने में—संलग्न हूं।"

"वे आवश्यक हैं," मैं बोली। "आपकी क्या राय है ?"

"अवश्य," उन्होंने जवाब दिया। "जो लेनिन ने कहा है उन सब बातों को मैं सही पाता हूं।"

हमने एक दूसरे की ओर घूर कर देखा। "प्रोफेसर, आपने कोई दूसरी किताब पढ़ी है। क्या मुझे भी कोई पढ़ने को बतलायेंगे ?"

"अच्छा, युवकों के सम्बन्ध में स्तालिन की पुस्तक पठनीय हैं। उसे पढ़ने से पहले मेरे विचार काफी उलझे हुए थे। उसकी रचना को पढ़ने के बाद मुझे लगता है कि वह कितना महान् है।"

मैं समझ गई कि अपनी समस्या के समाधान के लिये मैं ठीक जगह नहीं आई।

"जब तुम आयीं उस समय जिन छात्रों को मैं बाहर पहुंचाने गया था क्या तुम उन्हें जानती हो ?" उन्होंने मुझसे पूछा।

"मैं जानती तो हूं पर इस समय मुझे उनके नाम याद नहीं।"

"मुझे याद है कि वे दोनों युवक संघ में हैं। ठीक है न ?"

"वे बहुत कर्मठ कार्यकर्ता हैं," मैंने कहा। "उनमें से एक किसी विभाग या उसी तरह की किसी संस्था का अध्यक्ष है।"

प्रोफेसर ह्यू शान्त थे मैंने अन्त में उनसे पूछा, "उन्होंने क्या कहा ?"

"उन्होंने मुझसे कहा था कि बहुत सी ऐसी बातें हैं जो देश के स्वतंत्र हो जाने के बाद कक्षाओं में नहीं समझायी जा सकीं। उन्होंने बतलाया कि आज कल जो वे कक्षाओं में पढ़ रहे हैं वह उनकी ज्ञान की भूख मिटाने के लिये पर्याप्त नहीं है। उन्हें ऐसी आशा थी कि मैं कक्षा के बाहर कभी उन बातों को बतलाऊंगा जो मैं पुराने दिनों में पढ़ाया करता था।"

"प्रोफेसर ! आपने उन्हें उन पुरानी बातों को अभी तक नहीं बतलाया अथवा बतला दिया ?" मुझे आशा थी कि वह यह जानने में इतना चतुर

था कि समझ गया कि उसके दर्शकों की यह प्रार्थना एक परीक्षा है जिसे पार्टी ने उसके सुधार की प्रगति को देखने के लिये व्यवस्थित की थी। यदि वह सावधान नहीं होता तो उसके "प्रतिक्रियावादी" घोषित किये जाने की संभावना थी।

"स्वाभाविक ही है," उन्होंने कहा "मैं सरकार की इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नही करूंगा। मैं बुर्जुवा के विष को जनता के पीठ पीछे नहीं फैलाऊंगा। मैं कम्युनिस्ट पार्टी और पितृभूमि के साथ ऐसी बातें कैसे कर सकता हूं ? हम पुरानी पीढ़ी के लोग वक्त के बहाव में डूब नहीं सकते, इसका म वचन देता हूं। हम जानते हैं कि हमें अपने अन्दर सुधार करना है और अपने दिमाग से उस विष को निकाल देना है। हम जानते हैं कि अपने जीवन धर्म को कैसे बदला जाये, जनता के नजदीक कैसे आया जाय विशेष कर सर्वहारा और मेहनतकश मजदूर के साथ...।"

मुझे लगा प्रोफेसर ह्यू परीक्षा को पास कर लेंगे और साफ बच निकलेंगे। पर मैं और कुछ नहीं सुनना चाहती थी। मैंने जाने के लिये क्षमा मांगी और जल्दी से दरवाजे के बाहर हो गई। मेरी समस्या अभी तक वैसी ही बनी थी और केवल मुझ तक ही सीमित थी।

जब प्रोफेसर ह्यू और उसके साथी यूनिवर्सिटी या विभागों की मीटिंगों में बैठते होंगे तो वे क्या सोचते होंगे ? कोई कभी नहीं जान सका कि वे क्या सोचते थे। कुछ अध्यापकों ने उन दबावों का खुला विरोध किया और इन परिवर्तनों के बारे में अपना क्रोध सबके सामने व्यक्त किया जैसे 'छात्र उन्हें बतायें कि कैसे पढ़ाया जाय।' पर कुछ अन्य अध्यापक सबके सामने खड़े होकर अपने पिछड़ेपन को कोसते और एक प्रकार के विकृत और पीड़ाजनक सन्तोष का अनुभव करते। मेरे विचार में शायद कुछ अध्यापक अचेतन रूप से पातक अनुभव करते होंगे कि उन्होंने अवसर होते हुए हमें अच्छी तरह से नहीं पढ़ाया लिखाया और हमे उस तरह का नेतृत्व और प्रेरणा न दी जो हमारी आशाओं और शक्तियों को और अच्छा रूप दे सकती।

पर पेता से दूर आज जो मेरा दृष्टिकोण है उसके अनुसार मैं उन्हें अधिक दोष नहीं दे सकती। वे ऐसी पीढ़ी के लोग थे जो पुराने और नयें के बीच फंसी हुई थी। उन्होंने पढ़ाने का काम उन दिनों शुरू किया था जब क्रान्ति मृतप्राय थी, जनता हतोत्साह हो चुकी थी और किसी तरह जीवित रहने

के लिये दुनिया से दूर ज्ञानोपार्जन और स्वार्थपूर्ण अवसरवादिता की ओर चल पड़ी थीं। उन्होंने जापान के खिलाफ लम्बी लड़ाई के दिनों में हमारे स्कूलों को बनाये रखने के लिये बहादुरी से संघर्ष किया। उनमें से कुछ हजारों मील पैदल चले और जब भी जापानी सैनिक पास आ जाते वे दूसरी जगह चल पड़ते। विजय दिवस के बाद वे पीकिंग में छात्रों के साथ वापिस आये। पर एक ओर मुद्रा-स्फीति और मंहगाई उनकी तनख्वाहों को चट कर रही थी और दूसरी ओर निराशा उनकी उमंगों को नष्ट कर रही थी इसलिये विजय का उनके लिये कोई बड़ा अर्थ नहीं निकला। बहुत से इतने थके और निराश हो चुके थे कि अन्त में आज्ञा पालन के लिये तैयार थे। अब मैं उन्हें ज्यादा संघर्ष न करने के लिये अधिक दोष नहीं दे सकती।

(१२)

हृदय-परिवर्तन ?

गत पच्चीस वर्षों के बीच, जिसमें सरकारें बदलीं और जापानियों का आतंकपूर्ण कब्जा रहा, मेरे माता पिता मेरी दादी मां की लाल चमकदार चमड़े की संदूक अपने पास बसाये रहे। उस वृद्धा के स्मृति-चिन्हों में से यही शष रही थी। यह शायद मेरे माता पिता को वही काम देती थी जो कि रूढ़िवादी परिवार में पूर्वजों की एक छोटी मेज देती है। इसमें विशेष अवसर पर पहनने योग्य चोगे के समान एक छोटी पोशाक थी। जब मैं बच्ची थी तो उसे निकाल लिया करती थी और जब कभी अवसर मिल पाता मैं उसकी प्रशंसा किया करती थी। इसकी कढ़ाई अमूल्य थी। नीले रेशमी कपड़े पर चांदी के तारों से बनाये गये अनगिनती इन्द्र धनुष शोभा देते थे। इस प्रकार के औपचारिक वस्त्र सम्मानित महिलाएं गणराज्य बनने से पूर्व चिंग वंश के अन्तिम दिनों तक पहना करती थीं।

चांदी के तारों से कढ़ाई तो सजावट का केवल आधार थी। इस छोटे से वस्त्र के बटनों से चांदी की लड़ियों के गुच्छे लटकते रहते थे। इन लड़ियों से सभी तरह की चीजें लटकती रहती थीं—कारनेल की लघु मत्स्य, चन्द्रकान्त के शीशे और स्वेत ेड पर गुदे हुए अमरत्व के देवता की सूक्ष्म प्रतिमाएं। सबसे नीचे चांदी की बनी हुई दंतखुदनी और कान कुरेदनियां लटकी रहती थीं। जिनमें मूल अंग की हर वातों की विस्तार से नक़ल होती थी। ये पुराने दिनों के स्मृति चिन्ह थे जब भद्र लोग स्वास्थ्य के लिये उपयोगी ऐसे सामान को हाथी के दांत के बने हुए केसों मे अपने साथ लेकर चला करते थे।

मेरी दादी मां के पुराने फैशन के वस्त्रों में लगी हुई इन सूक्ष्म वस्तुओं को स्पर्श करना मुझे बड़ा अच्छा लगता था। जिन खिलौनों से मैं खेलती थी उनसे ये कहीं अधिक विस्मयोत्पादक थे। लेकिन चांदी की कान कुरेदनी को बटनों के नीचे किसलिये लटकाया जाता था? शृंगार के लिये अथवा जब आपका कान दर्द करता हो तो उसके मल को निकालने के लिये, एक उपयोगी वस्तु के रूप में। शायद जब तक मेरी दादी मां जीवित थीं इसके दोनों

उपयोग थे लेकिन मैं यहां यह कहना चाहूंगी कि यह कान कुरेदनी आभूषण की दृष्टि से श्वेत जेड के अमरत्व के देवता की मूर्ति की भांति सुन्दर न थी और उपयोगता की दृष्टि से दंत खुदनी के सामने कान कुरेदनी का कोई मूल्य नहीं हो सकता।

यह समझने में मुझे डेढ़ वर्ष लग गया कि कम्युनिस्ट पार्टी के लिये यूनीवर्सिटी बहुत कुछ कान कुरेदनी की भांति थी।

जब कम्युनिस्टों को चीनी यूनीवर्सिटी का सामना करना पड़ा तो उनके सामने जो समस्यायें आयीं उन्हें आज मैं हांगकांग में बैठी अधिक वस्तुगत रूप से समझ सकती हूं। अधिकांश विदेशों के विपरीत, यहां यूनिवर्सिटी के अध्यापक और छात्र हमेशा से सम्मान के पात्र रहे थे। उनका विचार करने तथा पढ़ाने का ढंग भी निराला था। कम्युनिस्टों को सत्तारूढ़ कराने में इनमें से कई प्रोफेसर और छात्रों का हाथ रहा था जिन्हें ऐसा करने में कभी-कभी अपने जीवन की बाजी भी लगानी पड़ी। चूंकि कम्युनिस्टों ने प्रचार करते समय इन यूनिवर्सिटी के लोगों को राष्ट्रीय जीवन में महत्वपूर्ण स्थान देने के आश्वासन दिये थे अतः स्वतंत्रता के बाद यूनिवर्सिटियों के तरीकों में किसी तरह का एक साथ या भारी परिवर्तन करना अकृतज्ञता प्रदर्शित करता और १९४९ में दिखावों का महत्वपूर्ण स्थान था क्योंकि अभी तक चीन पर कम्युनिस्ट सत्ता की स्थिति नाजुक थी।

पर कठिनाई यह थी कि नये समाज में पुराने ढंग की यूनिवर्सिटी के लिये वास्तव में कोई आवश्यकता न थी। क्रान्ति में सहायता देने और बुर्जुवा बुद्धिजीवियों को प्रशिक्षित करने का ऐतिहासिक काम वे अब तक सम्पादित कर चुकी थीं। पर अब कोई और क्रान्ति नहीं होनी थी, केवल प्रस्तुत क्रान्ति को ही मजबूत बनाना था। परम्परागत विद्रोही "उदारवाद" में दीक्षित पुराने बुद्धजीवियों के स्थान पर अब ऐसे कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी जो भली प्रकार टैक्नीकल ज्ञान रखते हों।

यूनिवर्सिटियों के सम्बन्ध में क्या किया जाय इस समस्या का कम्युनिस्टों ने द्विमुखी समाधान खोज निकाला। पहला : मौजूदा स्कूल और यूनिवर्सिटियों के साथ साथ नई क्रान्तिकारी यूनिवर्सिटियां निर्माण की जायं जो "विशुद्ध सांस्कृतिक" विषयों के आडम्बर को समाप्त कर सकें। विद्यार्थियों में से जिन

पार्टी और युवक संघ के कार्यकर्ताओं को लिया जा रहा था वे लोग पहले ही उचित ऐतिहासिक और राजनीतिक ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। इस प्रकार नयी सरकार में उत्तरदायी स्थानों पर काम करने के लिये परखे हुए और विश्वास-पात्र कार्यकर्ता निर्माण करने के लिये आवश्यक "उपयोगी" विषयों पर ये नये शिक्षण केन्द्र अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते थे।

दूसरा : इन पुरानी यूनिवर्सिटियों को "दर्शनीय स्थान" के रूप में जीवित रखा जाय, अथवा बुर्जुवा बुद्धजीवियों को दीक्षित करने या सुधारने के लिये आभूषण स्वरूप रखा जाय। * चीन में शिक्षित लोगों की भारी कमी है। यद्यपि प्रोफेसरों और छात्रों को कभी भी पार्टी के ऐसे कार्यकर्ताओं की भांति विश्वासपात्र नहीं समझा जा सकता था, जो अपने युवाकाल से ही पार्टी के अन्दर आ गये थे और जो पार्टी के अतिरिक्त किसी दूसरे के प्रति भक्ति रखने के लिये अबोध थे, तो भी ऐसे लोगों को दीक्षित करके ऐसे स्थानों पर कार्य करने के लिये विश्वासपात्र बनाया जा सकता था जहां वे अपने ज्ञान और वुद्धि का उपयोग कर सकते थे।

निस्संदेह अधिकांश पाठ्यक्रमों में पढ़ाये जाने वाले विषय संशोधित करने थे। मार्क्स, ऐंगिल्स, लेनिन, स्तालिन और माओत्से-तुंग के अधिकारिक ग्रन्थों तथा साथ ही उनके अनुयायी सिमिनोव की कला तथा लीसेन्को की विज्ञान सम्बन्धी उस समय प्रचलित रचनाओं को पाठ्यक्रमों का आधार बनाना था। इस तरह से समस्त यूनिवर्सिटी के लिये पाठ्यक्रम के आधार के रूप में अधि-कारिक ग्रन्थों को लागू करना अतीत कालीन शिक्षा पद्धति की ओर विचित्र प्रत्यागमन था। उस समय समस्त देश के विद्वान पुरातन ग्रन्थों पर अनेक वर्षों तक अपनी उन परीक्षाओं की तैयारी में परिश्रम किया करते थे जिनसे वे सम्राट के अन्तर्गत उच्चपदों को प्राप्त करने के योग्य बन सकते थे। इतिहास अर्थशास्त्र, दर्शन, साहित्य, समालोचना यहां तक कि भौतिक शास्त्र और जीवन शास्त्र की प्रतिपक्षी चिन्तनधाराएं अब बुर्जुवा पांडित्य के प्रतीक समझे जाते थे और इतिहास के नये चरण में "असत्य" सिद्ध हो गये थे।

---

* कम्युनिस्ट समाचार-पत्रों में पीकिंग की येनचिंग फूजिन और कैन्टन की लिंगनन यूनिवर्सिटी के बन्द होने के समाचार प्रकाशित होने से पहले यह अंश लिखा जा चुका था। अब मेरे इस वक्तव्य को परमार्जित करने के बाद इस तरह पढ़ना चाहिये "कुछ पुरानी यूनिवर्सिटियों को जीवित रखा जाय।"

यह नहीं कि कम्यूनिस्ट अध्यादेश पारित करके इन विरोधी चिन्तन धाराओं को समाप्त करेंगे जैसा किसी पुरानी सरकार ने किया होता। वे यह अच्छा समझते थे कि विचार की प्रतिपक्षी चिन्तनधाराओं को स्वयं प्रत्यक्ष तर्क के आधार पर स्वेच्छा से समाप्त किया जाय और जब कम्युनिस्ट मार्क्स, लेनिन और स्तालिन को यह सिद्ध करने के लिये उदधृत करते थे कि मार्क्स, लेनिन और स्तालिन सत्य के असल ठेकेदार थे तो हमारे अधिकांश प्रोफेसर इन तर्कों का स्वागत करते थे और उन्हें उसी रूप में स्वीकार कर लेते थे। उनका कहना था कि जागृत नये समाज में किसी पर कोई दवाव नहीं होगा और पुराने विचार व पुराने विषय स्वतः ही "समाप्त" हो जायेंगे।

समाप्त तो वे हो गये। हम में से बहुत से लोगों के लिये यह सहज ही आसानी से छुट्टी पाना जैसा था। जिन कक्षाओं में अभी तक पुराने विषय पढ़ाये जाते थे वहां विद्यार्थी ढीले पड़ने लगे। बहुत से शिक्षकों ने तो पुराने ढंग से हाजिरी लेना भी बन्द कर दिया। यदि कोई कम्युनिस्ट और युवक संघ के सदस्यों के साथ होता तो उसे कक्षा में मन चाही अनुपस्थितियां करने की छूट होती थी। पूरे लेक्चरके नोट लेने के सम्बन्ध में शिक्षक अब कठोरता नहीं बर्तते थे। जब कोई घसीट लिखे हुए क्लास नोटोंको अपने मित्रों को सरका देते या डैक्सों के आर-पार कानाफूसी करने लगते तो शिक्षक उन्हें नजरअन्दाज करने का बहाना करते थे। अगर हम सहपाठियों के साथ बातों में बह जाते या शोरगुल हद से ज्यादा हो जाता तो वह अपना लेक्चर बन्द करके हम पर अपनी नाराजी प्रकट करता। जब उसके धैर्य की सीमा पार हो जाती तो वह भौंडे रूप में कक्षा से प्रार्थना करता : "कृपया शान्त हो जायें ?" पर वह किसी को व्यक्तिगत रूप से नहीं डपटता था क्योंकि इससे युवक संघ या विद्यार्थी संघ के सदस्य के आत्मसम्मान पर चोट लग सकती थी।

जिन कक्षाओं के शिक्षक अपने विषयों में संशोधन किये जाने की प्रतीक्षा कर रहे थे वहां तो इस प्रकार का वातावरण था। राजनैतिक कक्षाओं में अनुशासन दूसरी तरह का था। उन कक्षाओं के शिक्षक हाजिरी नहीं लिया करते थे परन्तु हर कक्षा और विभाग का अध्यक्ष विद्यार्थी जैसे ही घंटा खत्म होता शिक्षक को अनुपस्थिति और उपेक्षा के दृष्टांतों की रिपोर्ट दिया करता था। ये कक्षाएं बड़े लेक्चर रूम में होती थीं जिसमें कम से कम सौ विद्यार्थियों के ऊपर एक शिक्षक तथा उसके दो सहायक होते थे। परन्तु कक्षाओं के विस्तार का यह अर्थ नहीं था कि उनमें अनौपचारिकता रहती थी। पूरी कक्षा में

इधर इधर पार्टी या युवक संघ के सदस्य अधीक्षक के रूप में बैठे रहते थे जिन्होंने जू-ज़ी के अनेक सम्मेलनों में विषय की मूलात्मा को पहले ही आत्मसात कर लिया था। उनका प्रमुख काम सहायता देना था।

लेकिन हमें सहायता देने के काम में जुट जाने के लिये भी समय की आवश्यकता थी। पहले छः सप्ताहों तक कक्षाओं के विस्तार और कुछ लेक्चरों की अरोचकता के कारण कुछ छात्र इन कक्षाओं को "तीन लोगों के सिद्धांत" पर होनेवाले लेक्चरों की तरह ही समझते थे जिन्हें हम पुराने शासन की हुकूमत में साल या दो साल तक सुनते-सुनते औंघा जाया करते थे। हम में से कुछ शिक्षकों के कार्टून खींचने में समय गुजार देते थे, कुछ लोग कक्षाओं में घसीट के लिखे हुए लेक्चर नोटों की नकल में लग जाया करते और कुछ लोग अपने मित्रों को नोट लिख कर भेजा करते थे। और जो शिष्ट थे वे धूप के चश्मे लगा कर घंटा समाप्त होने के इन्तजार में ऊंघा करते थे। अनादर और उपेक्षा के इन दृष्टान्तों को अन्त में आलोचना करने के लिये विभिन्न पारस्परिक सहायता केन्द्रों की जू-जी मीटिंगों में रखा जाता। हम चर्चा करते कि विद्यार्थियों में आत्म-सम्मान की भावना होनी चाहिये तथा हमें राजनीतिक शिक्षा से जी न चुराने या अपने मित्रों का गम्भीर अध्ययन की ओर से ध्यान न हटाने के बारे में अपने उत्तरदायित्व को निभाना चाहिये। फिर हम सब हाथ उठा कर प्रस्तावों पर मत देते जिनमें हम अपने से मांग करते कि भविष्य में ध्यान से सुनें, लेक्चरों के नोट लें और जो छात्र पढ़ने में ध्यान न दे उसे ठीक रास्ते पर लायें। इस मीटिंग के बाद यदि कोई छात्र कक्षा में अपना सिर उठाता था तो बड़े लेक्चर-हाल में हर छात्र के लिये यह अनहोनी बात जैसी लगती थी। हर एक छात्र अपनी कुर्सी से चिपका हुआ सा लेक्चरों को सुनता या लिखता रहता था जैसे कोई श्रद्धालु युवक भिक्षु अपने गुरु के तपे हुए ज्ञान की नकल कर रहा हो।

यदि लेक्चर में कोई ठोस बात होती तो हम ध्यान से उसका नोट लेने के बारे में बुरा नहीं मान सकते थे। हर रोज हमें यही बताया जाता था कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद ही एकमात्र दर्शन है, एकमात्र सत्य है और विचार की अन्य सभी धारायें पाखण्डी या प्रतिक्रियावादी हैं। पर, हमारी समझ में, हमारे शिक्षक नित्य ही स्वतःसिद्ध असंगति और भूल करते रहते थे।

उदाहरणार्थ यह शब्द उसने इतने बार दुहराये थे कि मैं बिना दिमाग लगाये उन शब्दों को दुहरा सकती हूं "साम्राज्यवादियों, देश-विदेश के प्रति-

क्रियावादियों, नीच बुर्जुवा सामन्दवादी भूपतियों के विरुद्ध मजदूरवर्ग के नेतृत्व में किसानवर्ग, मध्यवित्त और राष्ट्रीय बुर्जुवा को एकत्र करके हमने क्रान्ति का युद्ध छेड़ दिया है। हम जानते हैं कि अस्तित्व से चेतना निर्धारित होती है। मजदूर दृढ़तम क्रान्तिकारी होते हैं क्योंकि उनके तात्कालिक स्वार्थ बुर्जुवा लोगों के स्वार्थों से टकराते हैं। उनमें बड़े पैमाने के सामूहिक उत्पादन में हिस्सा लेने से वस्तुवादिता, दृढ़ता और कष्टों के सहने की क्षमता आदि वर्गगुण आ गये हैं। परन्तु हम मध्यवित वर्ग के लोग अस्थिर, समझौता करने के लिये तत्पर, स्वार्थी, घमण्डी, निर्बल और क्षमाशील हैं और अपना सामाजिक स्तर ऊंचा करने की तीव्र महत्वाकांक्षा रखते हैं। हमें इसी समय अपने आपको सुधारने, गठरी बांधने की प्रवृति को त्याग देने और मध्यवित भावना को कुचल डालने का संकल्प करके सर्वहारा के दृष्टिकोण को अच्छी प्रकार अपनाकर दृढ़तम क्रान्तिकारी बन जाना चाहिये।"

यदि पूछ पाते तो हम एक सवाल उनसे अवश्य पूछते: "दो दृढ़तम क्रान्तिकारियों के सहअस्तित्व के सम्वन्ध में आपके क्या विचार हैं? एक ओर आपने कहा कि सर्वहारा अपने उच्च कुल के नाते दृढ़तम है। दूसरी ओर आप कहते हैं कि हम विद्यार्थी भी, जो सर्वहारा नहीं हैं, अपने आपको दृढ़तम वना सकते हैं। अतः यह तो चार बहनों की उस कहानी के समान है, जिसमें सबसे बड़ी (सर्वहारा) सुन्दरतम है, पर तीसरी बहन (हम) भी सुन्दरतम हो सकती है।

"और अपनी मध्यवित भावना को छोड़ देने की बात का भी क्या अर्थ है? आपने पहले कहा था कि अस्तित्व से चेतना निर्धारित होती है और अब आप सचेत "स्वतंत्र इच्छा" से चेतना को समाप्त कर देने की बात कहते हैं। आपके पहले कथन के अनुसार स्वतंत्र इच्छा का अस्तित्व तो हो ही नहीं सकता। यदि बुर्जुवा का 'पिछला' अस्तित्व नहीं बदला जा सकता और यदि काम करने और रहने के ढंग वही रहते हैं तो बुर्जुवा चेतना बिना बाहरी दबाव के स्वतः ही कैसे बदल सकती है? यदि अब आप अपनी चेतना को "स्वेच्छा" से बदल सकते हैं तो क्या स्वतंत्र इच्छा और अनिर्णित ऐच्छिक कार्य का यह भाव एक आदर्शवादी विचार तथा प्रतिक्रियावादी पाखण्ड नहीं है?"

शायद मेरे अपने तर्क में ही कहीं न कहीं कोई त्रुटि होगी और यदि राजनीति की कक्षा में मुझे इन सवालों को पूछने का अवसर मिलता तो शायद शिक्षक ने इसका समाधान कर दिया होता।

निस्सन्देह शिक्षक ने जो बताया था उसे स्वतंत्र विचार की कसौटी पर कसने दिया जाता तो जितनी प्रगति हम करते उससे कहीं अधिक प्रगति हम कर चुके थे। उदाहरण के लिये चीन में समय समय पर खाद्यान्नों की कमी के प्रश्न को उसने ५० मिनिट की अवधि में हल कर दिया। "नियमित रूप से खाद्यान्नों की कमी का सिद्धांत बकवास है। वास्तव में हमारा देश खाने के लिये काफी खाद्यान्न पैदा करता है। अपनी जनता को खिलाने के लियें आवश्यक खाद्यान्न के अलावा भी हमारे पास इतना अतिरिक्त खाद्यान्न रहता है कि हम भारत जैसे कम खाद्यान्न उत्पादन करने वाले राष्ट्रों को उसे भेज सकते हैं। देश के कुछ विच्छिन्न क्षेत्रों में अकाल पड़ जाता है क्योंकि पुरानी प्रतिक्रियावादी सरकार के शासन में बेइमानी और भ्रष्टाचार व्याप्त था। साथ ही संचार के कुछ साधन ध्वस्त हो जाने के कारण यातायात की अनेक गम्भीर समस्यायें खड़ी हो गई थीं। कम्युनिस्ट पार्टी ने हमेशा ही यातायात और संचार की ओर ध्यान दिया है। खाद्यान्न की कमी की क्षणिक कठिनाई जो आज हमारे सामने है अवश्य दूर हो जायगी।"

क्या हमारे पास इतना खाद्यान्न था कि हम वास्तव में उसमें से कुछ निर्यात कर सकते थे? यह नग्न सत्य था और बाद में समाचार-पत्रों ने भी इसकी पुष्टि कर दी कि उत्तर पूर्व में जो खाद्यान्न हुआ था वह माल गाड़ियों द्वारा सोवियत संघ को जा रहा था। यदि हमारे पास इतना अधिक अन्न था तो म समझती हूं हमें कुछ अधिक अन्न मिलना चाहिये था और फिर पुराने दिनों में रेल की पटरियों और सड़कों को किसने विध्वंस किया था? जिन शहरों पर राष्ट्रवादी सरकार का अधिकार था उधर जाने वाले रास्तों को तो वह नहीं तोड़ सकती थी? जिन शहरों को खाद्यान्न देने का उस पर उत्तरदायित्व था उसके अनाज को तो वह नहीं रोक सकती थी? शायद यह बात सही थी कि पार्टी यातायात पर काफी ध्यान दे रही थी। सोवियत संघ को जाने वाली पटरियों की अच्छी हालत इसका स्पष्ट प्रमाण था।

क्या आपको आश्चर्य होता है कि राजनीति की कक्षा के ये भाषण दूसरे भाषणों सें इतने लम्बे क्यों लगते थे? कभी-कभी यह और भी तेजी से दिये जाते तो हम कलम पकड़ लेते और मशीन की तरह लिखने के काम पर जुट जाते। आखिर हम थककर अपनी कलम रख देते और अपनी आंखों को और अपने सिर को हाथों से मलते और फिर कलम उठा लेते। फिर भी राजनीति के

भाषणों से लोग कम ही अनुपस्थित होते थे। मामूली बीमारी के कारण अनुपस्थित रहना उचित न था। ऐसी हालत में कक्षा में आना, उस डाक्टर या नर्स से बहस करने से आसान होता था जिसे हमारी बीमारी की छुट्टी की अर्जी पर हस्ताक्षर करना पड़ता था। भाषण में हमें जितना चुस्त और रोचक दिखना अपेक्षित था कभी कभी उतना होना कठिन होता था पर उकता जाने या रुचि न लेने के बारे में कक्षा के मानीटर सावधान रहते थे। कक्षा खत्म होने के बाद हमसे पूछा जाता, "कामरेड, आप आज परेशान नज़र आते थे; क्या कोई परेशानी है ?"

पर इन मानीटरों से निबट लेने के लिये लड़कियों के पास एक शारीरिक साधन था जिसे प्रकृति ने पुरुषों को नहीं दिया था और कुछ लड़कियां तो इसे बिना हिचकिचाहट के इस्तेमाल किया करती थीं।

"क्या हो गया ? कामरेड ?" पार्टी लीडर मित्र भाव से पूछता। "आज 'बड़ी कक्षा' में आपकी हालत अच्छी नहीं लगती थी। लगता था जैसे आपको कोई तकलीफ हो। तन्द्रित या ऐसी ही दिखलाई देती थी।"

"मुझे दुख है—कामरेड ! कल रात में अच्छी तरह से नींद नहीं ले सकी। यह वह समय है जब—ऊंह—आप जानते हैं—" और झेंपा हुआ नेता भ्रम में लौट जाता।

पहले के कुछ "ऊंचे" छात्र यदाकदा अपने विश्वासपात्र मित्रों से इस सारे व्यापार की खिल्ली उड़ाने का भी साहस कर लेते थे। उन लोगों में एक के साथ एक दिन मैं क्लासरूम से बाहर निकली तो उसने मुझसे कहा : "कुमारी येन, मैं देख रहा हूं कि आप क्लास में नोट लेते समय प्रसन्नचित्त नहीं दिखलाई पड़तीं। पर जब बाहर घूमने जाती हैं तो अपने साथ हमेशा अपने नोटों को ऐसे ले जाती हैं मानों अभी अभी आपको कोई बड़ी निधि हाथ लगी हो। रात को आप इन नोटों का क्या करती हैं—क्या तकिये के नीचे रख कर सोती हैं ?"

"मैंने आज छः पेजों के नोट लिखे। मेरे विचार से आपने भी इतने ही लिये होंगे—" इस ऊँचे छात्र से अपनी तुलना करके मुझे वास्तव में बड़ी प्रसन्नता हो रही थी।

अपने क्लासरूम से निकलकर हम सीधे छात्रावास के पारस्परिक सहायता केन्द्रों में चले जाते। यदि मैं लेक्चर नोट नहीं भी लेना चाहती तो पारस्परिक

सहायता केन्द्र इस बात को प्रोत्साहित नहीं करते थे। मैं अपने नोटों को तकिये के नीचे रख कर सोती हूं यह मजाक एक बढ़ी चढ़ी बात हो सकती है पर यह इतनी विनोदपूर्ण नहीं थी। अन्य छात्रों के समान मैं भी आपस में गुथे हुये अनेक केन्द्रों से सम्बन्धित थी। एक मेरे छात्रावास का केन्द्र, दूसरा यूनिवर्सिटी कक्षाओं का केन्द्र और तीसरा राजनीतिक कक्षाओं का केन्द्र था। जैसे जैसे सत्र बीतता गया इन केन्द्रों की व्यवस्था इतनी कुशलता से होने लगी कि मुझे अपने लिये कोई समय ही नहीं बचता था।

छात्रावास के जिस केन्द्र से मैं सम्बन्धित थी उसमें मेरी कमरे की साथिन और पास वाले कमरे की दो लड़कियां भी थीं। साथ वाले कमरे की उन दो लड़कियों में एक कुमारी चांग पार्टी मेम्बर थी। अधिकांश केन्द्रों में एक पार्टी कामरेड या कम से कम युवक संघ का एक सक्रिय सदस्य अवश्य होता था। यदि केन्द्र बनते समय उसमें ऐसा कोई सक्रिय सदस्य नहीं होता था तो पार्टी उस गुट में अपने एक दो आदमी रखने के लिये पहले पहल विनम्र साधनों को अपनाती थी। वह केन्द्र के किसी सदस्य को दूसरे केन्द्र में बदली कराने के लिये उकसाने की कोशिश करती। फिर पार्टी बाकी सदस्यों को प्रोत्साहित करती कि वे लोग एक सक्रिय सदस्य को गुट में ले लें और तर्क यह रखती कि हर केन्द्र में कम से कम एक व्यक्ति तो ऐसा होना चाहिये जिसमें नेतृत्व प्रदान करने की क्षमता हो। यदि इससे काम न चलता तो दूसरे सीधे साधन अपनाये जाते। पार्टी के प्रतिनिधि केन्द्रों के सदस्यों से अकेले में बातें करते। और उन्हें दिक करते कि वे एक नया सदस्य ले लें और कभी कभी केन्द्र के सदस्यों को आपस में भिड़ा देने का प्रयास करते। कभी कभी यह चाल भी कारगर नहीं होती थी। तब ऐसे केन्द्र के सदस्य आलोचना मीटिंग में बड़े संकट में रहते क्योंकि दूसरे छात्र अब पहले से भी अधिक उनमें से एक एक को चुनकर सतर्कता से उनकी गम्भीर आलोचना करते। अपनी बात पर अड़े रहने के बजाय उन लोगों की बात जल्दी या देर से मान लेना अक्सर आसान होता था।

स्वतन्त्रता के बाद जब पहले पहल इन केन्द्रों को संगठित किया गया तो नेताओं में से एक सज्जन ने जो हमें सहायता देने के लिये आये थे अपना अभिप्राय यह बतलाया : "सामूहिक जीवन के प्रति साथी छात्रों को जागरूक रखने के लिये, एक दूसरे को प्रोत्साहित और प्रेरित करने के लिये उन्हें

अधिक अवसर देने के लिये, उनके जीवन को अधिक सम्पन्न बनाने के लिये ही यह केन्द्र बनाये गये थे। केन्द्र एक अतिरिक्त काम भी किया करते थे। इनके द्वारा हर छात्र के जीवन और उसके व्यवहार पर उसके तीन या चार साथी नजर रखते थे और वह छात्र उन पर नजर रखने में सहायता देता था।

ऐसी अवस्था में "प्रगतिशील" बनने का बहाना करना बड़ी मुश्किल का काम था। स्टेज पर निर्णायक भूमिका सम्पादित कर लेना काफी कठिन होता है पर रोज़ाना चलते फिरते परिचित लोगों की दृष्टि के सामने अभिनय करना तो असम्भव ही था। अन्त में इस प्रकार का अभिनय सरल हो जाता जब हम अपने में यह विश्वास पैदा कर लेते कि हम "प्रगतिशील" हैं, जिन भाषणों को हम सुनते थे उनमें वास्तव में विश्वास करते हैं, जो पुस्तकें हम पढ़ते और जो सार्वजनिक आलोचना अपनी और दूसरे की किया करते थे वह सही हैं।

आलोचना सभाएँ विद्यार्थियों पर नियंत्रण रखने की समूची व्यवस्था का शायद एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अङ्ग थीं। (आलोचना सभायें केवल विद्यार्थियों तक ही सीमित न थीं पर मैंने तो केवल इन्हीं मीटिंगों में हिस्सा लिया था।) नियमित रूप से सप्ताह में एक बार मेरे निवास केन्द्र में और हर एक केन्द्र अपने जैसे कुछ अन्य केन्द्रों के साथ उनके सदस्यों की प्रगति या प्रगति की कमी के बारे में विचार करने के लिए बैठा करते थे। "हांगकांग में आपका जो चचेरा भाई है। उसने आपको लिखा है कि समाचारपत्रों को पीकिंग में जितनी स्वतन्त्रता है उससे कहीं अधिक उस ब्रिटिश उपनिवेश के शासन में है।" अपने उत्तर में आपने उसकी बात का खंडन नहीं किया। यहां तक कि आपने ठीक तरह से समाचार पत्रों के प्रति जन सरकार की नीति की व्याख्या भी नहीं की थी।"

"और कुछ दिन पहले कुमारी वांग से आपने कहा था : 'भई, इस तरह उलझे रहने के अलावा अब हम कुछ नहीं कर सकतीं।' इससे आपका क्या अभिप्राय था ?"

"ड्राइङ्ग की कक्षा में आप जिस चित्र को बना रही थीं उसके लिए विवियन ले के चित्र को मौडल के रूप में इस्तेमाल कर रही थीं। क्या आप नहीं समझतीं पश्चिमी फिल्म गये बीते और प्रतिक्रियावादी है ?"

आपके सामने आपके मित्रों की नोटबुकों से निकलने वाली इन सब टीका टिप्पणियों का आपको सामना करना पड़ता। क्रोध और आश्चर्य से पराभूत

आप अपने आपको बचाने के लिए समय पर बहाने खोजने में भी असमर्थ हो जाते।

अंतः आपको स्वीकार करना पड़ता : "हां मैंने अपनी राजनीतिक कक्षा में काफी ध्यान नहीं दिया। हां, अभी तक मैं गये बीते विषाक्त बुर्जुवा सिद्धान्तों के चक्कर में थी। हां, मैंने लोक प्रिय उपन्यासों के कल्पना जगत में यथार्थ से भागने की कोशिश की थी। हां, शायद अपने दिल में अभी तक अचेतन रूप से हांगकांग में अपने चचेरे भाई की स्थिति से मैं ईर्षालु थी। जिस अर्थपूर्ण जीवन को मैं बिता रही थी उसमें मैंने काफी दिलचस्पी नहीं ली थी। और मैं न तो क्रान्ति के प्रति वफादार ही रही थी और न ही क्रांति में हिस्सा लेने के सम्बन्ध में दृढ़ रह पायी थी। पश्चिमी साम्राज्यवाद से मैं विषाक्त हो गई थी। पर इस विष को शुद्ध करने के बजाय मैं अपने स्वार्थों में ही लीन रही और मैंने अपनी मध्यवित भावना को खुली छूट दे दी।"

इन गलतियों को स्वीकार करने के अतिरिक्त पूरी गम्भीरता से यह भी विश्वास दिलाया कि आप अब से इन गलतियों को फिर नहीं दुहरायेंगी। इसके बजाय आप राजनीति में और परिश्रम से जू-जी करेंगी और ऐड़ी से चोटी तक अपने अन्दर सुधार करेंगी। आज आपके साथियों ने आपकी जो कठोर आलोचना और हार्दिक सहायता की थी उसके लिए आपने इन्हें धन्य-वाद दिया। आपने इन सभी बातों को कहा था और उन्हें कायल कर देने वाले उत्साह से कहा था। अन्यथा मीटिंग अभी भी समाप्त न होती और आपको घंटों और खड़े रहना पड़ता।

साधारण मानव अपने आपकी आलोचनात्मक रूप से परीक्षा लेने का आदी नहीं है। उसका आदी हो जाना हमारे लिए कठिन था। हम मीटिंग से उठ कर, थके मांदे, लाल पीले आते और आशा करते कि बिस्तरों में सिर छिपा कर सो जायंगे। लेकिन हमें कमरे के साथी का भी ध्यान रखना होता था। हमें लाल-पीली और उद्विग्न देखकर वह अगली मीटिंग के लिए भाषण का इस प्रकार गुप्त अभ्यास कर सकती थी।

"कुमारी चेन ने अपनी आलोचना के बाद कोई आभार प्रदर्शित नहीं किया। इतना ही नहीं उसनें गुप्तरूप से असन्तोष ही व्यक्त किया जिसके अर्थ थे कि उसकी स्वीकृति और अपने अन्दर सुधार करने के उसके वचन भी शुद्ध हृदय से नहीं निकले थे। उसके विचार बुनियादी तौर से गलत हैं और कट्टर-पंथी

होने से उसके अन्दर अपने आपको सुधारने की कोई आन्तरिक इच्छा भी नहीं है पर वह जनता का विरोध करते रहना चाहती है..."

खुली हवा में बाहर पार्क में घूमने जाना और वहाँ आलोचना करना ठीक नहीं था। कोई यह सोच सकता था कि आप अपने पर बहुत ज्यादा समय खर्च करती थीं। किसी दूसरे के जीवन के दर्शन कराकर जो पुस्तक आपकी परेशानियों को दूर करने में सहायता दे सकती थी उसे पढ़ने पर आपकी निन्दा होती और कम्युनिस्ट जिन पुस्तकों को पढ़ाना चाहते थे वे आपकी मुसीबतों की याद दिलाती थीं। अन्त में आपने कुछ नहीं किया। आपने अपनी खिन्नता को भरसक दबा दिया और अपने अतीत के बारे में गम्भीर मुद्रा धारण करने का स्वागं रचाया कि कम्युनिस्टों को वास्तव में यह विश्वास हो जाय कि आलोचना की प्रक्रिया से आप प्रभावित हुई थीं। बहुत समय के लिये अपने आपको आलोचना से बचाये रखने के लिए आप उन्हें सन्तोष दिलाने की केवल एक वात से आशा कर सकती थीं कि थोड़े समय के लिये मीटिंग के बाद किसी एक कामरेड के साथ घूमने चली जाया करें; उसके हाथ को गरमी से दबाते हुये हकलाती हुई कहें, "क-क-कामरेड, आज आपने मेरी स-स-सही आलोचना की। म-म-मैं आपकी सचमुच आ-आभारी हूं। महान कम्युनिस्ट पार्टी के लिये और-और मे-मेरे लिये यह आपके स-स्नेह का द्योतक है।"

इन नये तरीकों का उपयोग करने में मेरी कुछ मित्र अधिक कुशल थीं। कम्युनिस्टों के लिए कर्ण-प्रिय शब्दावली खोजने में वे अधिक प्रवीण हो गई थीं। "सचमुच, कामरेड जब मैं अपने अतीत के बारे में सोचती हूं...वह कितनी दूर की बात लगती है। मैं स्वप्न में भी कल्पना नहीं करती थी कि मेरे जैसी के लिये कुछ ही महिनों में इतनी प्रगति कर लेना सम्भव होगा। मुझे विश्वास है कि यह सब मुझे मिली सहायता के कारण हुआ। क्यों, अभी पिछली मीटिंग..." कुछ वक्ताओं को तो अपनी ओजस्विता पर गर्व था और वे कुछ अहमन्यता की भावना भी रखते थे क्योंकि वे छात्रों के नये नेताओं को "उल्लू" बना रहे थे।

अपने निवास केन्द्रों में स्वयं की आलोचना के समय अपनी गलतियों पर दूसरे लोगों की बहस सुनना आलोचना का एक अंग था। चाहे आप पिछली मीटिंग में सावधानी से आयी हों और चुपके से उठ कर चली गई हों पर आप वहां बैठकर अध्यक्ष से छुट्टी की आशा नहीं कर सकतीं। आपको भी अपने मित्रों की आलोचना करनी होती थी। यदि आप आलोचना करने में विफल हो जातीं

तो आपकी और भी कड़ी आलोचना होती थी । आप पर यह आरोप लग जाता कि "आप अपने उन साथी छात्रों और जनता के प्रति जिम्मेदार नहीं थीं" जो आपको शिक्षा दे रहे थे। अपने मित्र को ही आपको मुख्य शिकार बनाना पड़ता था । कम्युनिस्ट छात्रों और युवक संघ के कार्यकर्ताओं की गलतियां निकालना कठिन था । उनके अनुशासन ने उन्हें हमेशा सतर्क रहने की शिक्षा दी थी, नहीं तो उनके आचरण या टीका टिप्पणियों में थोड़ी भूल हो जाने पर भी उनके संगठनों द्वारा उन्हें दण्ड मिलता । यदि कोई कम्युनिस्ट छात्र गलती भी करता तो भी हमारी स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी कि हम उसकी उत्साह से आलोचना कर सकते । हम मुश्किल से ही पार्टी मेम्बरों को उनके अपने ही हथकंडों से हरा सकते थे । इसलिए हमें मजबूर हो कर आपस में ही आलोचना करनी पड़ती थी । इस प्रक्रिया से हमारे अन्दर एक सूक्ष्म हीन भाव-उत्पन्न हो गया । जिसकी मुझे आलोचना करनी पड़ती वे मेरे मित्र ही होते थे पर मैं कभी-कभी प्रतिकार की भावना से उनकी आलोचना करती थी ऐसी मुझे आशंका है क्योंकि पहले उन्होंने मेरी आलोचना की थी ।

एक दिन हम कुछ लोग अपने अन्दर की हीन-भावना से त्रस्त लॉन के एक शान्त कोने में बैठे थे । दस मिनिट बाद ही हमें अपनी आलोचना सभा में जाना था । मेरे एक मित्र ने बैठे-बैठे कुछ घास उखाड़ ली, उसके टुकड़े करके उन्हें अपनी हथैली पर रख लिया और फिर अपनी हथेली को फैला कर एक तिरस्कारपूर्ण फूंक मारी । वे सब हवा में इधर-उधर उड़ कर जमीन पर गिर गये । एक दूसरे मित्र ने भी थोड़ी सी घास उखाड़ी । उसने उसके गुच्छों में बल देकर तथा उन्हें आपस में मजबूती से बांध कर मोटी डोरी सी ली बना और फिर जोर से फूंक मारी पर वह डोरी खुली नहीं ।

चाऊ-ता-मिंग इस खेल को देख रहा था। "क्यों, यही बात तो है—" उसने यकायक उत्साह में भर कर कहा । "ठीक, क्या हम भी इसी तरह एक नहीं हो सकते ? हमें एक दूसरे से अलग क्यों रहना चाहिए ? हम संगठित होकर काम क्यों न करें ?"

चाऊ का बदन गठीला था और वह मटियाले रंग की विद्यार्थियों वाली पोशाक पहने हुए था । बिखरे हुए बाल और चश्मे के मोटे-मोटे शीशों में ऐसा लगता था जैसे वह हमेशा पुस्तक को "माप" लेता था पर पढ़ता नहीं था । जब वह हमारी ओर देखता तो उसे बहुत नजदीक से दिखलाई पड़ने के

कारण अपनी आंखों पर काफी जोर डालना पड़ता मानों वह हमारी भावाकृति में कोई कोष खोज रहा हो। वह विनोद प्रिय था पर साथ ही उसकी हाजिर जवाबी में व्यंग इतने आकर्षक होते कि हम हमेशा उसकी बातें सुनना चाहते थे।

"सुनो!" उसने अपने विचार व्यवस्थित कर लिये थे और अब वह बोलने लगा। "मीटिंग से पहले वे हमेशा पूर्व-प्रयोग करते हैं और पहले से ही सोच समझ कर तैयार होकर आते हैं। यही कारण है कि बार बार हमें बुरी तरह पछाड़ जाया करते हैं। अच्छा! हम भी पूर्व-प्रयोग क्यों न कर लें? जिस तरह का नाटक मैं रचना चाहता हूं उसमें हमें एक दूसरे की आलोचना करने का स्वांग रचना पड़ेगा। पर पहले हम सबको यह इतमीना हो जाना चाहिए कि हम इस कूट-प्रबन्ध को समझते हैं ताकि जब हम एक दूसरे की आलोचना करें तो कोई बुरा न माने।"

वह रुक कर हमारे चेहरे के भावों को पढ़ने के लिये चारों ओर देखने लगा, फिर बोला, "आपको यह कैसा लगा, जब हम अपनी ओर से किसी की आलोचना करेंगे तो अभियुक्त अपनी थोड़ी सी सफाई देगा और जल्दी ही कम्युनिस्ट और युवक संघ के सदस्यों कों हम पर हमला करने का मौका मिलने के पहले ही अपनी गलती स्वीकार कर लेगा। और फिर जब वे संगठित होकर हम पर हमला करें तो हम एक दूसरे की सफाई देने में एक हो जायेंगे। अब अगर हम इस तरह मिल कर काम कर सकते हैं तो हम अपनी आलोचना के समय इतने अधिक हठी या अभिमानी नहीं लगेंगे। पर साथ ही हमको उनकी हर बात को न तो इतनी जल्दी मानना होगा और न उनकी बकवास को बढ़ाने में सहायता देनी होगी। प्रयोग करके देखा जाय, आप लोगों का क्या विचार है?"

"इससे तो थोड़े समय के लिये राहत मिलेगी। यह स्थायी योजना नहीं है।" किसी ने खंडन करते हुए कहा।

"और जिस कुशल संगठन के खिलाफ हम खड़े हो रहे हैं, उसके सामने इस तरह की छोटी सी चाल ज्यादा उपयोगी नहीं हो सकती।" मैंने खंडन करने वाले के स्वर में स्वर मिलाते हुए कहा।

सबने अपनी अपनी राय प्रकट करने के बावजूद भी यही अनुभव किया कि कुछ भी न करने की बजाय किसी तरह का जवाब देना अच्छा था और

हमने ता-मिंग की सूझ पर विचार करना शुरू कर दिया। इससे पहले कि हम सभी बारीकियों पर निश्चय कर सकें, समय हो गया और हमें तुरन्त उठ कर कक्षा की ओर जाना पड़ा।

हम लोग हमेशा मीटिंग में गोल बना कर बैठते ताकि जब कोई बोले तो वह हर एक के चेहरे की ओर देख सके। उस दिन ता-मिंग अध्यक्ष के निकट ही बैठ गया। अतः स्वाभाविक रूप से हमारे संघर्ष में पहला वार उसने किया।

जिन दस मिनिट तक हम बातचीत करते रहे, उस बीच उसने अपने भाषण की रूपरेखा तैयार कर ली, ऐसा लगता था। वह कहने लगा, "साथियो, आज मैं अपनी ही आलोचना करने जा रहा हूं। मैं राजनीतिक शिक्षा-क्रम विषयक अपने काम के बारे में चिन्तित हूं। मैं न तो कभी लेक्चरों में ही और न कभी सामूहिक विवाद में गैरहाजिर रहा। मैंने उन्हें ध्यान से सुना है और उनमें हिस्सा भी लिया है। उस दृष्टि से तो मैंने काफी प्रगति की है। मैंने उत्तरों की अपेक्षा प्रश्न अधिक किये यह ठीक है, पर इसका यह अर्थ नहीं कि मैं अपने साथियों की मदद नहीं करना चाहता। जब आप इसकी वस्तुगत रूप से परीक्षा करेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि मुझे कम्युनिस्ट सिद्धांतों के बारे में बहुत कम मालूम है और इसीलिये मैं सहायता करने में असमर्थ हूं। जहां तक राजनीतिक पाठ्य-क्रम की निर्देश पुस्तकों का सम्बन्ध है, कक्षा के बाहर जो कुछ पढ़ने के लिये हमें दिया जाता है उस सबको मैंने पढ़ लिया है और जहां तक दिनचर्या की बात है, सभी जानते हैं कि मेरा जीवन हमेशा मितव्ययी और नियमित रहा है। अतः मैं नहीं समझता कि उसके बारे में मुझे और कुछ कहना चाहिए।" अन्त में सामान्य क्षमा याचना के साथ उसने बोलना समाप्त करते हुए कहा, "अवश्य ही बहुत सी दूसरी गलतियां मैंने की होंगी जिन्हें म वस्तुगत दृष्टिकोण न होने से नही जान सका हूं। इसलिये आप कृपया अपनी टिप्पणी करें।" उसने मेरी ओर उत्साहवर्द्धक दृष्टि से देखा।

मैं कुछ व्यर्थ की और अहानिकर त्रुटियां बताने के लिये तैयार थी ताकि उसे स्वीकार करने के लिये कुछ बातें और मिल जायं परन्तु मुझसे पहले ही युवक संघ के एक सदस्य ने आलोचना प्रारम्भ कर दी। "हमारे साथी चाऊ ने अपनी राजनीतिक जू-जी में प्रगति के काफी संकेत दिये हैं। यह बहुत अच्छी बात है। हमें आशा है कि वह अपना अध्यवसाय जारी रखेगा।" प्रस्तावना

हमेशा सावधानी से चुने हुए प्रोत्साहन के शब्दों में हुआ करती थी। यह अपराधी को निशस्त्र करने के अभिप्राय से होती थी ताकि वह असावधान हो जाय और बिना हील हुज्जत के आलोचना को स्वीकार कर ले।

इस प्रशंसा के साथ ही "लेकिन" से आलोचना प्रारम्भ हो जाती। "लेकिन एक व्यक्ति का राजनीतिक ज्ञान हमेशा उसके प्रयासों पर निर्भर होता है, यदि वास्तव में आपने लेक्चरों को सुना है और उनके नोटों का अध्ययन किया है, यदि आपने वास्तव में सावधानी से निर्देश पुस्तकों को पढ़ा है तो आपको अपने साथियों की विचार संबंधी समस्याओं को हल करने में समर्थ होना चाहिए था। जब आप यह स्वीकार करते हैं कि आपने उन्हें कोई सहायता नहीं दी तो उससे यही प्रकट होता है कि आप मे या तो उत्तरदायित्व की भावना नहीं है या आप अपने राजनीतिक अध्ययन में पिछड़े हैं। क्या आप इससे सहमत नहीं ?"

ता-मिंग अभी झुकने के लिये तैयार न था। "नहीं। मैंने सच्चे मन से; काफी मेहनत से राजनीतिक पाठ्य पुस्तकों को पढ़ा है। कम से कम उतना अवश्य पढ़ा है जितना कि पढ़ सकता था। यदि अभी तक मेरे विचार सही नहीं हुए, यदि मैंने उत्तर देने की बजाय अधिकतर प्रश्न ही पूछे हैं तो मुझे शंका है कि यह इसलिये है कि मैं अधिक कुशाग्र नहीं हूं। मैंने कठोर परिश्रम किया है पर अभी तक ज्यादा नहीं सीख पाया हूं।" हम सब और हमारे साथ कम्युनिस्ट भी सहमत थे कि ता-मिंग अन्य छात्रों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान था। अधिकांश प्रगतिशीलों से भी ज्यादा। वह कम्युनिस्टों के साथ जान बूझ कर खिलवाड़ कर रहा होगा क्योंकि वह जानता था कि उन्हें तर्क और व्यंग भरे उत्तर पसंद न थे।

उसके इस व्यवहार से नेताओं का खून खौलने लगा। सभी पार्टी कामरेड बहुत रुष्ट हो रहे थे। उन्होंने आंखों की भाषा में आपस में कुछ संकेत दिये मानों चारों ओर से हमले के लिये सेनायें घिर रही हों। मैं इस आशा से जल्दी ही बीच में कूद पड़ी कि ता-मिंग की कुछ सहायता कर सकूं।

मैंने कहा "साथियो ! साथी चाऊ सोचते हैं कि उन्होंने अपने राजनीतिक अध्ययन में भरसक प्रयत्न किये हैं। लेकिन"—मैं भी "लेकिन" का ही प्रयोग कर रही थी—"लेकिन मार्क्सवाद, लेनिनवाद और माओ त्से-तुंग के विचारों में इतनी गहराई है, इतनी व्यापकता है कि थोड़े समय में ही उन पर पाण्डित्य

प्राप्त नहीं किया जा सकता। वे साधारण विषयों की तरह नहीं हैं जो आंशिक सत्य या बिल्कुल झूठ का ही दिग्दर्शन कराते हैं। सत्य—सम्पूर्ण सत्य को समझना बहुत मुश्किल है।" यहां आकर मेरी हंसी प्रायः फूटने वाली थी। जब मैंने कम्युनिस्टों की गम्भीर स्वीकृति के भावों को देखा, उनकी गम्भीर मुद्राओं को देखा तो मैं संभल गई।

जरा सी हंसी सब करे धरे पर पानी फेर देती। जितना गम्भीर बन सकती थी उतना बनते हुये मैं बोलती रही। "लेकिन सत्य अन्त में अवश्य ही समझ में आएगा। यह भी एक कारण है कि आज हम में इतना विश्वास है कि हम अपने आपमें सुधार कर सकते हैं। साथी चाऊ ने राजनीति का ज्ञान प्राप्त करने में कठोर परिश्रम किया है फिर भी अन्वेषण में कुछ कठिनाइयां खड़ी हो जाती हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि वह अपने आपको इतना कुशाग्र नहीं समझता। पर भविष्य में किसी दिन जब वह अपने चारों ओर हजारों लोगों के विश्वासों को बदलते हुये देखेगा तो सत्य को बड़ी आसानी से समझ जायेगा और अपने आत्मविश्वास को पुनः पा सकेगा। और तब उसकी प्रगति आश्चर्यजनक होगी।"

ता-मिंग की स्वीकारोक्ति के पहले ही विषय को बदलने की दृष्टि से मैं जरा रुकी और फिर दूसरे विषय पर बात करने लगी। वह कोई मामूली सी गलती स्वीकार कर सके इसलिये मैंने उस पर दोष मढ़ना शुरू किया "पर जहां तक इनकी दिनचर्या का सम्बन्ध है, मैं समझती वे एकान्त में अधिक रहे हैं और उन्होंने अपने दूसरे साथियों के साथ मिलने में बहुत कम अभिरुचि दिखलाई है। मैं कामना करती हूं कि वे अपने अन्दर अधिकाधिक जनदृष्टिकोण पैदा कर सकें और सामूहिक जीवन के आनन्द को और उसके मूल्यों को समझ सकें।"

"कुमारी येन, आपने अभी अभी जो कहा है वह बहुत सही है।" मेरी ओर चापलूसी से मुस्कराते हुये मेरे विषय को एक पार्टी कामरेड ने अपने हाथ में ले लिया। "साथी चाओ यदाकदा ही जनसमूह के साथ हिलता मिलता है—और जब वह ऐसा करता है तो वह हमेशा खिन्न और अप्रसन्न दिखलाई पड़ता है। लाइब्रेरी में बैठना और वहाँ बैठकर लिखना या अपने कमरे में अकेले पढ़ना उसे अधिक पसन्द है। इसका कारण यह है कि उसमें अपने ही ढंग का पुराने बुद्धिजीवियों का उद्धतपन है। उसे इसी समय इन दोषों को अपने

अन्दर से निकाल देने का संकल्प करना चाहिये और गन्दगी में अकेले फूल की तरह अपनी प्रशंसा करना समाप्त कर देना चाहिये। उसे स्पष्ट समझना चाहिये कि वर्तमान युग सर्वहारा का है।"

"मैंने ता-मिंग के लिये कैसा बेतुका संकट खड़ा कर दिया" मैं अन्दर ही अन्दर कराह उठी। मैंने कम्युनिस्टों को देर तक आलोचना करने का मौका दे दिया था। चाऊ क्या करेगा ? क्या वह झुक जायेगा और अपनी गल्ती स्वीकार कर लेगा ? कामरेड अभी तक अपना भाषण बघारे जा रहा था पर मैं अब अधिक देर तक नहीं सुन सकी। हमने कैसे सोच लिया कि हम बिना संगठन या पहले से ही तैयार हुये बिना उन आदमियों से मुकाबला ले सकते थे जो दृढ़तापूर्वक संगठित थे और ऐसी स्थितियों को संभाल लेने में दक्ष थे, जो मीटिंग के पहले हमेशा सावधानी से तैयारियां करते थे और मीटिंग के बाद उसके परिणामों को पूरी तरह से जांचते थे।

हमारे सामने जो कठिनाइयां थीं उन्हें जीतने के लिये हमें अतिमानव होना पड़ेगा। और इसके अलावा हमारे सभी तर्कों में हमें जिन प्रतिबन्धों को मानना आवश्यक था उनसे भी हमारे हाथ बंधे हुये थे। हम अपना बचाव केवल कम्युनिस्ट दृष्टिकोण और सिद्धान्तों से ही कर सकते थे। हम न तो पहले ही कर सकते थे और न दूसरी विचारधारा के अस्त्रों से प्रहार ही कर सकते थे। हमें सत्य के अधिकारिक रक्षकों से सत्य के सम्बन्ध में तर्क वितर्क करना था। हम अधिक से अधिक यही प्रयत्न कर सकते थे कि किसी प्रकार कम झंझट में पड़ें अथवा अपने इन आरक्षकों के काटने से जितनी बार बच सकें बचें। क्योंकि यह आरक्षक हमारे पीछे उसी प्रकार लगे थे जिस प्रकार गड़रिये की भेड़ों के पीछे उसके कुत्ते लगे रहते हैं।

(१३)

'श्वेत-केशीय बाला'

नाटक

जब हम आशापूर्ण हृदय से मुक्ति की प्रतीक्षा कर रहे थे उन दिनों हमने सुना था कि जहां भी क्रांति आयी अपने आगमन के साथ कलात्मक सृजन की महान प्रेरणा लायी थी। जनता से प्रेरणा और शक्ति प्राप्त करने वाले नए गीत, नई किताबें, नए नाटक तथा नए चल-चित्रों का आश्वासन हमें उन छात्रों से मिला था जो मुक्त क्षेत्रों से सम्बन्ध रखते थे। कला और साहित्य में नयी जीवन-शक्ति की सम्भावनाओं ने हम सभी को उतना ही उत्तेजित कर दिया था जितना कि क्रांति के बाद अपेक्षित अन्य बातों ने। क्योंकि पुरानी कला में रुचि रखने वाले पेता के अधिकांश छात्रों की दृष्टि में वह समाप्त हो चुकी थी। १९२० के नवजागरण के नेता अब वृद्ध हो चुके थे और उनमें से कुछ प्रतिक्रियावादियों में मिल गए थे। उन्होंने शायद साहित्यिक भाषा में सुधार किए थे पर इसके अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं किया। आज हम जिनके प्रशंसक थे वे लोग दूर दृष्टा एवं प्रगतिशील थे तथा उनमें अपनी रचना को समाज के विरोध प्रकट करने का साधन बना देने का साहस था। अवन्त गर्दे (सर्वसाधारण के लिए), जिनमें हम सभी सम्मिलित थे, शास्त्रीय नाटक अवनति पर था। कम से कम पीकिंग में तो थियेटर भी मध्यम श्रेणी का था चित्रकला पुराने कलाकारों की निष्प्राण अनुकरण मात्र रह गई थी। कुछ कलाकार तो गये बीते थे जो वर्णसंकर कलाकृतियों का निर्माण कर रहे थे। उनमें चीनी सम्वेदना तो थी पर वे पश्चिम की आधुनिक कला से स्पष्ट हस्त-लाघवों की नकल करने की चेष्टा ही अधिक करते थे। समझे आप, हमारे अभिमत तीखे थे और आशाएं उससे भी अधिक थीं।

क्रान्ति के प्रसिद्ध नाटक "श्वेत-केशीय बाला" का यश जन-मुक्ति सेना के आगमन से पूर्व ही फैल चुका था। १९४९ के बसन्त में हमें उसे देखने का पहला अवसर मिला जब स्वतन्त्रता के कुछ महीने बाद ही उत्तरी चीन की नई

यूनिवर्सिटी के 'ड्रामा श्रमिक गुट' ने उसका अभिनय किया। यूनिवर्सिटी के प्रायः सभी लोग उसे देखने के लिए टिकट खरीदने को झपटे थे।

यह अनुभव उत्तेजनात्मक और हृदय द्रावक था। जिन छात्रों को इस ड्रामा के प्रति पूर्व प्रशंसा के भाव थे उन्हें पुराने ढंग के चीनी नाटक, उसकी प्राचीन परिपाटी की जर्जरित कथावस्तु और मध्यवर्गीय शृंगार अरुचिकर था और यह उनके लिये सच्चे मायनों में नवीनतम तथा लोकप्रिय कला थी। जिसमें नई शास्त्रीय कुशलतायें सम्मिलित थीं और जिसके कारण चार घंटे के इस नाटक में उत्तेजनात्मक नवीनताओं का तारतम्य बंधा रहता था। कहानी और अभिनय की सभी सूक्ष्मताओं को पहले से जानने के कारण हमारी और प्रत्याशाएं और भी तीक्ष्ण हो गयी थीं। जिस रात हम उसे देखने गये पूरा हाल पेता के साथी छात्रों से भरा था। अभिनय प्रारम्भ होने की प्रतीक्षा करते समय हम क्रान्तिकारी गाने गुनगुनाते और एक दूसरे की ओर चिल्लाते हुए अपने उत्साह को बनाये रहे।

जब पर्दा उठा तो दर्शक एकाएक शान्त हो गये। जब 'पीकिंग ओपरा' का पर्दा उठता था तो साधारणतया प्रासाद के किसी कमरे को व्यक्त करने के लिये कुछ भद्दी नाटकीय बनावट हमें दिखायी देती थी। अब उस पुरानी मंच-सज्जा के स्थान पर हमें एक साधारण किसान की झोंपड़ी के अन्दर का हिस्सा दिखायी पड़ा जिसमें भद्दा परन्तु सजीव और यथार्थ दिखने वाला फर्नीचर था और बाहर पड़ रही सर्दी को दिखाने के लिये कागज की खिड़की पर कभी-कभी बर्फ का टकराया जाना दिखलाया गया था और मंच पर दब दबा कर निकलने वाले राजा और रानी के स्थान पर हमें एक साधारण किसान दिखाई दिया जिसकी कमर अधिक आयु और काम करने के कारण झुक गयी थी। वह अपनी युवा पुत्री से कुछ कह रहा था। हमें सुनकर पता चला कि वह अपने जीवन के अन्तिम दिन गिन रहा था और उसका जमींदार अपने कर्जे की वसूली के लिये उस पर दबाव डाल रहा था जबकि उसके पास कर्जा चुकाने के लिये कानी कौड़ी भी नहीं थी। कर्जे से छुटकारा पाने के लिये एक ही मार्ग था और वह सम्मानित व्यक्ति होने के नाते कर्जा अवश्य निबटाना चाहता था। वह मार्ग था अपनी पुत्री को जमींदार की सेवा मे बेच देने का।

वृद्ध पिता विवश होकर हृदयहीन जमींदार के हाथों में अपनी पुत्री को सौंप देने के लिखित पत्र पर हस्ताक्षर कर देता है। परन्तु इस घटना की

वीभत्सता से उसका दिल टूट जाता है और वह अपने आपको फांसी लगा कर प्राणान्त कर लेता है। जब हमने जमींदार और उसके किराये के टट्टू उस वृद्ध के शरीर से चिपकी हुई युवती को खींच कर जमींदार के रनिवास की ओर ले जाते हुए देखा तो हम में से कुछ की आंखें डब-डबा आयीं। जमींदार के रनिवास की कर्कश स्त्रियों द्वारा गुलाम की तरह उस लड़की को पिटते हुए और उस पर गालियों की बौछार होते हुए देखकर हमारे अन्दर क्षोभ बहुत बढ़ गया। किसान की पुत्री सुन्दरी थी इसलिये एक रात को कामुक जमींदार उसे घेर लेता है और संघर्ष के बावजूद भी उसे बलपूर्वक अपने अधिकार में कर लेता है।

शेष कथा साधारण है। किसान की पुत्री गर्भवती हो जाती है। जमींदार विवाह का अश्वासन देता है और जब उसके प्रसव का समय बहुत निकट आ जाता है तो वह किसी और से शादी करने का निश्चय कर लेता है। इस परेशानी से छुटकारा पाने के लिये वह उसे एक वेश्यालय में बेचने का जाल बिछाता है। जब उस युवती को इसका पता लगता है तो वह अपने आपको फांसी लगाने की कोशिश करती है पर एक दूसरी नौकरानी को इसका पता लग जाता है। वह उसके फांसी के फंदे को काट देती है और उसे होश में ले आती है। अब वह भागने का निश्चय करती है और एक पहाड़ की गुफा में भाग जाती है। जहां वह अकेली ही बिना किसी की सहायता के बच्चे को जन्म देती है। अपने बच्चे के साथ वह उस गुफा में दो वर्ष तक रहती है और अपने को जीवित रखने के लिये रात को पास ही के एक मन्दिर से कुछ चढ़ावा चुरा लाया करती है। गुफा के अनन्त अन्धकार में उसके बाल लम्बे होने लगते हैं और बिलकुल सफेद हो जाते हैं और जब रात को चोरी छिपके वह बाहर निकलती है तो जिन अन्धविश्वासी किसानों की कभी-कभी उसपर नजर पड़ जाती है वे उसे डायन या भटकती हुई भूतनी समझ लेते हैं।

लेकिन तभी कम्युनिस्ट सेना की आठवीं टुकड़ी 'पा-लू-चन' के सेनानी वहां आ पहुंचते हैं और उसके गांव से जापानियों को खदेड़ देते हैं। इन गुरिल्लों में वह लड़का भी आता है जिसने हमेशा उस लड़की से प्यार किया है। वह चमचमाते हुए बालों वाली भूतनी के बारे में सुनता है और उस गुफा में उस भूतनी का पता लगाने के लिये जाता है। जब वह चिथड़ों में पिशाचनी को देखता है तो रायफल उठाकर गोली दाग देता है। वह लड़की घायल हो

जाती है और गुफा तक लड़का उसका पीछा करता है। वहां उसे उसका सही परिचय मिलता है।

वे दोनों गांव लौट आते हैं। वहां उन्हें पता लगता है कि अमानुषिक व्यवहार करने वाले उस जमीदार पर जापानियों का साथ देने के अपराध में मुकदमा चलने वाला है। जब वह लड़की अपने ऊपर हुए अत्याचारों का वर्णन करती है तो किसान एक स्वर में चिल्लाते हुये फैसला दे देते हैं कि जमींदार और उसके टट्टू को मौत के घाट उतार दो। एक ओर दोनों अपराधियों को गोली से उड़ाने के लिये ले जाते हैं और दूसरी ओर दोनों प्रेमियों का मिलन होता है।

मेरे द्वारा कहानी को दुहाराने पर उसकी रूपरेखा अधिक प्रभावोत्पादक नहीं लगती पर संगीत, नृत्य सेटिंग और सहज साधारण करुणाजनक सम्वाद के आकरण से अभिनय का स्वरूप कुछ और ही था। इस सजीव दृष्य ने सभी दर्शकों के हृदय की भावनाओं को छू लिया था पर उसमें सभी बातें नई नहीं थी। अभिनेता अभी तक पुराने नाटकीय ढंग से ही अपनी चेष्टाओं को चढ़ा-बढ़ा कर करते थे। यद्यपि संगीत 'परम्परागत नाटक' के संगीत की कृत्रिम लयों के स्थान पर लोक संगीत पर आधारित था पर संगीतज्ञ कहानी में नाटकीय उतार चढ़ावों को बताने के लिए अभी तक ढोल और मजीरों को जोर से वजाते थे। अतः "सफेद बालों वाली लड़की" नामक नाटक की कला बहुत कुछ पुरानी कला जैसी थी। और नृत्य भी ऐसा नहीं था जो परम्परा को मानने वालों को देखकर कुछ नाराजगी होती। पर उसमें गति का आरोप नया था। जिस समय सेट के पर्दे बदले जाते थे नाटक का विस्तार सामने के परदे के आस पास ही होता था जिससे नाटक की गति निर्बाध होती थी, और चार घंटे इतनी जल्दी निकल गये जैसे कि 'पीकिंग ओपरा' में कभी नहीं निकलते थे।

अधम जमींदार को फांसी पर लटकाने के लिए सैनिकों द्वारा खीचे ले जाने के बाद तालियों की ऐसी गड़गड़ाहट हुई जैसी मैंने कभी नहीं सुनी थी, दर्शकों में बैठे हुए सैनिक और छात्रों की जो कटुभावनाऐं थी वे इस गड़गड़ाहट से प्रकट हो रहीं थीं। और हम तालियां क्यों न बजाते ? क्रान्ति के लिये काम करके हमने अभी जो महान कलाकृति देखी थी उसके लिखे जाने में क्या सहायता नहीं दी थी ? जब भीड़ तितर-बितर हो गई तो भी उस रात्रि में उसका

प्रभाव बना रहा। "बहुत खूब... वास्तव में अद्भुत," मेरे साथ आये हुये लड़के ने कहा। "वे इससे आगे कैसे बढ़ सकते हैं ?"

यह उचित सवाल था पर उस समय हमने इसे ऐसा नहीं समझा। क्योंकि वे इससे आगे कभी नहीं बढ़ सके।

पुस्तकें

वे अभी तक किसी भी क्षेत्र में "सफेद बालों वाली लड़की" से आगे नहीं बढ़ सके थे। लेखन के क्षेत्र में तो अवश्य ही नहीं, जो मेरी रुचि और शिक्षा का पुराना क्षेत्र है। मुझे पुराने ग्रन्थों और नवजागरण की उपलब्धियों का थोड़ा बहुत ज्ञान है। नव जागरण उन पुराने सम-सामयिक लेखकों ने प्रारम्भ किया था जिन्होंने साहित्यिक भाषा को आम लोगों की भाषा "पे-हुआ" के पक्ष में जिसे जनता बहुत जल्दी समझ सकती थी त्याग दिया था पर अपने मित्रों की तरह ही मैं भी उन नवयुवक प्रगतिशील लेखकों के आधुनिक उपन्यासों और लेखों से अधिक प्रेरित हुई थी जिन्होंने अपने से बड़े लोगों द्वारा बनाई गई भाषा के माध्यम से पुराने समाज के सामाजिक दोषों पर प्रहार किया था।

अयोग्य शासन ने जनता पर जो गरीबी लाद दी थी, जो राजनीतिक उत्पीड़िन किया था और जो भ्रष्टाचार फैलाया था, उस पर प्रहार करने का साहस करने वाले प्रगतिशील लेखक हमारे लिये जन-नायक थे। पुराने समय में इनमें बहुत से लोगों को कठिनाइयां हुईं और कुछ को तो अपनी स्पष्टवादिता के कारण कष्ट भी उठाना पड़ा था। अत: स्वतन्त्रता के बाद पेता में पहले "साहित्य समारोह" की हमने बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा की। मैंने इतने प्रसिद्ध साहित्यकों के एक जगह पर एकत्रित होने की कभी आशा नहीं की थी। इनमें प्रगतिशील लेखक हो ची-फांग और चीन-ची-लिन, अन्य प्रसिद्ध लेखक और कवि पीकिंग में अनेक यूनिवर्सिटी के विभागों के प्रमुख तथा कम्युनिस्ट पार्टी के उस समय के प्रथम श्रेणी के साहित्यिक चाओ शूली भी उपस्थित थे। चाओ इस समारोह के वास्तविक नायक थे। जिन्होंने समारोह में महान् राष्ट्रीय कवि ली-पो की घोर आलोचना की। ली-पो अठारहवीं शताब्दी के कवि थे और उनकी आलोचना इसलिये की गई थी कि उन्होंने सामन्तवादी राजा और नवाबों की प्रशंसा में अपनी कवितायें रची थीं। चाओ ने ली-पो की उन रचनाओं की विशेष आलोचना की जिनमें ली-पो ने राज नर्तकी यांग-क्वी-फी के सौन्दर्य की प्रशंसा में संगीत रचा था। "यदि आज ली-पो जीवित

होता"—चाओ गर्जते हुये बोला, "तो वह अवश्य ही सुग-नी-लिंग (श्रीमती चांग काई शेक) के सौन्दर्य की प्रशंसा करता ।"

इसके बाद हो और पीन जिन्होंने हाल ही म विशेष दीक्षा का पाठ पढ़ाया गया था बोलने के लिये खड़े हुए । दूसरे स्कूलों से जो दर्शक छात्र अपने दोनों आराध्य देवों को सुनने के लिये आये थे और फर्श पर बैठे दो घंटों से प्रतीक्षा कर रहे थे, उन्होंने जब हो और चीन को खुद की उन सभी पुरानी रचनाओं की निन्दा करते हुये सुना, जो इन युवक पाठकों को प्रेरणा दिया करती थीं तो वे सुन्न रह गये अब हमने रचयिताओं को स्वीकार करते हुए सुना कि जिन पुस्तकों को हमने श्रद्धा से पढ़ा था उन सब में "पलायानवाद" और दूसरे नाशवान तत्वों से दूषित "कला के लिये कला" का सिद्धान्त ओतप्रोत था। बीस मिनट तक इधर उधर की वात करने के बाद अन्त में उन्होंने निश्चयात्मक रूप से यह कहा : "मैं अपनी बुर्जुवा विचार धारा को समाप्त करने की प्रतिज्ञा करता हूं । नौजवान साथियो, मैं पुनरारम्भ करूंगा ।"

यूनिवर्सिटी के साहित्यकों के भाषण सुनना और भी अधिक क्लेशदायक था । सभी को अपने विचार रखने पड़ते थे । पर वे अपने आपको बचाने के लिये, साहित्य सृजन के सम्बन्ध में माओ त्से-तुंग के सिद्धान्तों को दुहरा देने, उनकी प्रशंसा करने और जनता की सेवा के लिये अपने आपको सर्मापित करने का संकल्प करने के अलावा और कोई रास्ता नहीं सोच सकते थे । लोगों को शंका होती कि क्या यह वही अध्यापक थे जो आलोचना शास्त्र के सिद्धान्तों का विश्लेषण और आलोचना करने के लिये कक्षा में इतने पांडित्य और अधिकारपूर्ण ढंग से, चीनी तथा, और विदेशी सारे ही वांगमय में से कहीं से भी दृष्टांत दे सकते थे ।

अब हम सुनते : चेयरमैन माओ के शब्दों में साहित्य जनता का होना चाहिये । जो कुछ लेखक लिखता है उसका साहित्यिक मूल्य तभी हो सकता है जब वह मजदूर किसान और जनमुक्ति सेना के सैनिकों के लिए हो । अतीत में हम प्राध्यापकों ने अक्सर कक्षा को प्रारम्भिक झूठे सिद्धान्त पढ़ाने का मंच बनाया । हमने अक्सर गूढ़ता और परिशुद्धता पर जोर दिया जो कुछ थोड़े से लोगों को ही आकर्षित कर सका। साथियो ! अब इन परम्परागत विचारों तथा झूठे आदर्शों को समाप्त करने और साहित्य के ऐसे क्रान्तिकारी सिद्धान्त को निर्मित करने का कार्य हमारे सामने है, जो जनता को एक कर दे । अपनी

और आत्म-निन्दा करने के बाद वक्ता ने अपने पीछे बैठे हुये चाओ शू और दूसरे कम्युनिस्ट महारथियों की ओर देख कर कहा, "मुझे आशा है कि अनुभव से धनी और क्रान्तिकारी विचारों के पक्के जो कामरेड आज यहां उपस्थित हैं वे हमें शिक्षा देने में कभी नहीं हिचकिचायेंगे।"

बाद में दूसरे साहित्यिक महारथी आये, उन्होंने साहित्य के नये सिद्धान्त में और नये विस्तार किये। पेता के छात्रों ने काफी साहित्यक महारथियों के भाषण सुने। माओ तुंग, जाओ यू, लाओ शा (रिक्शा बाय का रचयिता) और तुंग लिंग सभी ने हमारे यहां भाषण दिये। तीन चार अलग अलग मुंह से एक ही विचार सुनने के बाद केवल यह अनुमान लगाने के लिये ही हमें सुनने लगे कि अमुक वक्ता का पार्टी के साथ कैसा सम्बन्ध है। वक्ता में जितना अधिक आत्म विश्वास और अपनी अतीत की भूलों के प्रति जितनी कम ग्लानि होती, उसकी वर्तमान स्थिति उसकी अच्छी होती। यदि वह पश्चा-ताप का नाटक रचता तो यह स्पष्ट हो जाता कि अभी भी वह पार्टी के साहि-त्यिक अधिकारियों की सहिष्णुता को जागृत करके अपने हित साधन की कोशिश कर रहा है। जिन पर अधिकारियों की दया दृष्टि थी वे अतीत की आलोचना करने में तो स्वतन्त्र थे किन्तु समकालीन साहित्य के सम्बन्ध में अधिक बोलने का साहस नहीं करते थे, शायद इसलिए कि पार्टी की आन्तरिक परिषद ने अभी तक यह निर्णय नहीं किया था कि उसे क्या पसन्द है और क्या नहीं ? आखिर, सिद्धान्त तो यह था कि साहित्यिक रचनाएं "खास वर्गों" और "खास पार्टियों" के लिए हैं। अतः स्वतन्त्रता से पूर्व जो कुछ भी लिखा गया था वह सभी संदिग्ध था क्योंकि विशेष तौर से सर्वहारा और पार्टी के लिए इसमें से कुछ भी नहीं लिखा गया था।

बलवान के नियम के आधार पर नये साहित्यिक सिद्धान्तों को प्रयुक्त करना भाषणों ने हमें सिखला दिया। साहित्य के लिए साहित्य की श्रेष्ठता अब गौण हो गई थी। केवल शैली या स्वरूप के कारण साहित्य का गुणगान अब संभव न था। एक वक्ता ने टीका टिप्पणी करते हुए कहा कि, "गुणगान तो बुर्जुवा या हराम की खाने वाले वर्ग का ही पेशा था।" (स्पष्ट था कि वक्ता यह भूल गया कि चेयरमैन माओ त्से तुंग ने कहा था कि लाखों मेहनत-कश जनता में भी साहित्य के गुणगान की भारी शक्ति थी) अब इसके विपरीत साहित्य एक साधन मात्र था। १९४२ में येनान में हुए साहित्यिक कार्यकर्ताओं के एक सम्मेलन में अध्यक्ष माओ ने एक भाषणक्रम में साहित्य के

सम्बन्ध में कम्युनिस्ट सिद्धान्तों को अधिकारिक रूप दिया और तभी से ही पार्टी के साहित्य महारथी उसको मानते आ रहे हैं। अध्यक्ष माओ ने येनान में कहा, "आज की दुनिया में समस्त संस्कृति, साहित्य या कला किसी खास वर्ग या पार्टी से सम्बन्धित होती है और राजनीति में कुछ विशेष विचार पद्धति का अनुसरण करती है।" आगे बोलते हुए माओ ने स्पष्ट घोषणा की : "साहित्य को पार्टी के आदेशों का पालन करना पड़ेगा।" पर साहित्य पार्टी की आज्ञा-पालन की अभावात्मक भूमिका तक ही सीमित नहीं था। जन राज्य के सेवक के रूप में इसे एक निश्चयात्मक भूमिका सम्पादित करनी थी। क्या लेनिन ने साहित्य को "समूची मशीन का एक पेच मात्र नहीं कहा ?" पर केवल पेच कहने की अपेक्षा "औजार" या "अस्त्र" अधिक आदरसूचक है। हम में से बहुत थोड़े लोगों ने अध्यक्ष माओ के भाषणों को आद्योपांत पढ़ा था। लेकिन ख्याति प्राप्त लेखकों के भाषणों में जो हमने सुना था उससे मालूम हुआ कि नये साहित्य को एक आवश्यक सामाजिक दायित्व निभाना पड़ेगा। यद्यपि यह निश्चय करने वाले अधिकारिक मध्यस्थ कि उस दायित्व को किस खूबी से निभाया जा रहा है अभी अध्ययन कर रहे और नियम बना रहे थे।

साहित्य के सम्बन्ध में जव अधिकारिक मानदण्डों की स्थापना हो रही थी ऐसी बीच की स्थिति में क्या पढ़ना उचित था ? हमारी प्रिय पुस्तकों को यदि पार्टी या युवक संघ ने सामन्तवादी शासक वर्ग की रचनायें बतलाकर या सही सर्वहारा के महत्व से रहित व्यर्थ की "ट्राट्स्कीवादी बुर्जुवा" बकवास मानकर खण्डन कर दिया तो कैसी अव्यवस्था हो जायेगी। मेरे अधिकांश साथी इस प्रकार के विष के आक्रान्त होने से इतने भयभीत नहीं थे जितने कि वे उस सहायता से भयभीत थे जो उन्हें अवश्य ही दी जाती, यदि उनके पार्टी के मित्रों को यह पता लग जाता कि उन्हें 'विषाक्त' किया जा रहा था। अपने पाठ्य विषयों को चुनने में इतनी सावधानी बरतने का मुख्य कारण ऐसी "सहायता" की सम्भावना ही हुआ करती थी। आधुनिक सोवियत उपन्यास-कारों के अनुवादों को पढ़ना सुरक्षित था। हम फदियेव और सीमानोव जैसे प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएं भी खरीद सकते थे। तुर्गनेव और डौस्टोवसकी की रचनाओं और यहां तक कि गोर्की के अनुवादों को भी जिन्होंने चीनी लेखकों की पीढ़ी की पीढ़ी को प्रभावित किया था, घिसी-घिसाई रचनायें कह कर रद्द कर दिया गया था। चीनी साहित्य में चाओ शू ली, तिंग लिंग की 'सांग चाइन नदी के साथ' रचना और युवक लेखकों की तथाकथित सामूहिक रचनायें

पढ़ना उचित था जिन्हें "पार्टी के लक्षणों" की सम्पन्नता के लिए सराहा जा रहा था। इनके अलावा हर रचना को शंका की दृष्टि से देखा जाता था तथा इसमें वे पुस्तकें भी सम्मिलित थीं जिनकी कम्युनिस्टों ने पहले "प्रगतिशील" कहकर प्रशंसा की थी।

अधिकांश नई पुस्तकें मजदूरों, किसानों और सैनिकों के बारे में लिखी गई थीं। ऐसे लेखक कम मिलते थे जो छात्रों, दफ्तरों में काम करने वालों, दूकान के क्लर्कों या व्यवसायियों के बारे में लिखने के इच्छुक हों। हम मजदूरों और किसानों के बारे में पढ़ना चाहते थे पर हमने यह पता लगा लिया कि हर वर्ग के बारे में एक पुस्तक पढ़ लेने पर हम बखूबी घोषणा कर सकते थे कि दूसरी रचनायें कैसी होंगी। कारखाने में काम करने वाले मजदूरों के बारे में जो पुस्तकें थी उनके नायक बहुत परिश्रम से काम करते थे और गिरते हुए स्वास्थ्य और दूसरी कठिनाइयों के होते हुए भी वे उत्पादन को बढ़ाने के लिए प्रतिस्पर्धी-आन्दोलनों—स्ताखनोवाईट आन्दोलन के चीनी रूप—में सम्मिलित हो जाते थे। कृषि जीवन सम्बन्धी पुस्तकों में भूमि सुधार के लिए अपने जमींदारों से "संघर्ष" करने के बाद किसान जितना दे सकता था वह सारा अनाज सैनिक मोर्चे की सहायता के लिए दे देता था और फिर देश-भक्ति के जोश में सेना में भर्ती हो जाता था। सेना सम्बन्धी पुस्तकों में सभी सैनिक पराक्रमी अतिमानव थे जो प्रशंसनीय सेवा करने और जनता के नायक होने के अलावा दूसरी बात नहीं सोचते थे। इन सभी पुस्तकों में कथा-वस्तु, और विषय एक जैसे थे और विचित्र बात तो यह थी कि उनकी शैली इतनी मिलती जुलती होती थी कि उनमें से अधिकांश उपन्यासों को एक ही व्यक्ति लिख सकता था।

इसके कुछ माह बाद हम पुनः उच्चकोटि के उस देशी और विदेशी साहित्य को पढ़ने लगे जो विशेष रूप से वहिष्कृत नहीं किया गया था। शैक्सपीयर के सम्बन्ध में हमें शंका थी। स्वतंत्रता के बाद उत्साही प्रगतिशील छात्रों ने पश्चिम के समस्त साहित्य की निन्दा की थी। और उसमें शैक्सपीयर भी सम्मिलित था। पश्चिमी भाषा और साहित्य विभाग के कम्युनिस्ट छात्रों ने बतलाया कि शैक्सपीयर के अधिकांश नायक राजा या नवाब थे जो केवल अपने व्यक्तिगत सम्मान या यश का ध्यान रखते थे। हमें बतलाया गया कि शैक्सपीयर के नाटकों में जनता के वही पात्र सामने आते हैं जो सामन्तवादी

व्यंग के परिहास -स्थलों की सृष्टि करते थे। अतः जिन छात्रों को शैक्सपीयर पसन्द था उन्हें उसे पढ़ने के लिये धूर्तता करनी पड़ती थी।

परन्तु जिन छात्रों ने शेक्सपीयर पर कालिख पोती थी उन्हें तीव्र निराशा हुई क्योंकि सोवियत सांस्कृतिक शिष्ट-मंडल के दिनों पीकिंग में सोवियत पत्र-पत्रिकाओं की जो पहली बाढ़ आई उसमें उसी शैक्सपीयर को प्रमुख स्थान दिया गया था। सचित्र पत्रिकाओं में से एक में ऐसे अनेक छाया चित्र थे जिनमें समाजवाद की पितृ-भूमि में इस महान नाटककार को, उसके नाटकों का अपरिमित व्यय से दिग्दर्शन करके, सम्मानित करते दिखलाया गया था।

शैक्सपीयर के प्रगतिशील आलोचकों ने अपनी "विमति" को समझ कर अपने पुराने विचारों में आमूल परिवर्तन करना शुरू कर दिया। चीनी सांस्कृतिक शिष्ट-मण्डल के सोवियत रूस को देखने के बाद लौटने पर जब प्रसिद्ध नाटककार जाओ-यू ने पेता के छात्रों के सामने अपने भाषण में शैक्स-और कुछ दूसरे "अधिक प्रगतिशील" लेखकों के प्रति सोवियत साहित्यकों के सम्मान को व्यक्त किया तो इसमें चार चांद लग गये। शैक्सपीयर का चलन फिर से हो गया पर अब उसके दुःखान्त नाटकों के ग्रन्थों को कक्षाओं में ले जाना प्रतिक्रियावादी होने का लक्षण नहीं रहा था। इस महान मानव की जन्मतिथि के अवसर पर ब्रिटिश कौंसिल में प्रदर्शित उसकी रचनाओं और उसके जीवन के चित्रों को हम सभी लोग देखने गये। और हमें उस समय बड़ा आनन्द हुआ जब हमने उन प्रगतिशील लेखकों को वहां प्रमुख रूप से देखा जिन्होंने तीन महीने पहले इंगलैण्ड के इस महानतम लेखक को "प्रति-क्रिया वादी" घोषित किया था।

संगीत

स्वतंत्रता के बाद 'यांग-को नृत्य तथा नगाड़ों की थप-थप और नये क्रांति-कारी गानों की गुनगुनाहट हर आदमी के कानों में होने के कारण पश्चिम के शास्त्रीय संगीत के सुनने वालों की संख्या कम हो गई। क्रान्ति के महान गीत 'ची-लाई' के अब कितने ही प्रतिपक्षी हो गये थे पर वह सबसे अधिक प्रचलित बना रहा, क्योंकि वह जापान के विरुद्ध लड़ाई में हमारा महान् राष्ट्रीय गीत रहा था। कम्युनिस्टों ने, बहुत सी अन्य चीजों के समान इस गाने को भी अपना लिया। तभी से यह कम्युनिस्ट शासन का अधिकृत राष्ट्रीय गीत हो गया और फार्मोसा स्थित राष्ट्रीय सरकार ने इसे निषिद्ध घोषित कर दिया।

पेता के अनेक छात्र बीथोविन, चोपिन, शूबर्ट, मोजार्ट और दूसरे पश्चिमी संगीतज्ञों के प्रशंसक थे। पर हम व्यक्तिवादी शिष्टता की अट्टालिका पर समय नष्ट करके जन-क्रान्ति के महत्व को किसी प्रकार हल्का कर रहे थे, इस दोषारोपण से बचने के लिये हमने अपने ग्रामोफोन रिकार्डों को बजाना छोड़ दिया।

कम्युनिस्टों के आगमन के छः महीने बाद हमारे नये क्रान्तिकारी संगीत को सुनने के लिये एक सोवियत सांस्कृतिक मण्डल आया। चुंगनन हुई में उनके स्वागत में कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं ने एक समारोह का आयोजन किया। उस खुले पार्क में हमारे बीच हमारे सम्मानित अतिथि एक ऊंचे मंच पर बैठे और हमने उनके स्वागत में नगाड़े और झांझ बजा कर ऊंचे स्वर में "नये किसान का गीत" गाया। इसके बाद लड़कियों ने नूतनतम गीत "दस स्त्रियों द्वारा अपने पतियों की प्रशंसा" ऊंचे स्वर में गाया। "ऐ—यह सुनकर तो ऐसा लगता है कि दस पति उन्हें पीटते रहे हैं।" मैंने किसी अश्रद्धालु व्यक्ति को बड़बड़ाते हुए सुना।

सौहार्द व्यक्त करने की पद्धति के अनुरूप विदेशी अतिथियों ने जोर जोर से तालियां बजायीं, पर वास्तविक आनन्द की मुस्कान को दबाये रखा। इसके बाद वे अपने वाद्य को उठाकर बजाने लगे। उनके पहले संगीत के बाद तालियां बजाने और दुहराने के लिये आह्वान करने से पूर्व छात्रों ने एक दूसरे की ओर और अपने नेताओं की ओर देखा। पहले सोवियत जन कलाकार ने बुर्जुवा क्रीसलर का "तेमवोरिन चिनोइज" संगीत बजाया। यह एक पूर्वी संगीत जैसा लगने वाला हल्के फुल्के संगीत का अंश था जो हमारे सत्कार में बजाया गया था। इसके बाद पियानों पर सोप्रानों सोलो का दूसरा संगीत बजाया गया। यह शूबर्ट की रचना थी और इस बार फिर श्रोताओं में खलबली मच गयी। किसी आदमी द्वारा जोर से पढ़कर सुनाया हुआ हमें याद था कि "शास्त्रीय संगीत जनता से दूर हो गया है। यह शोषक और आराम तलब वर्ग को आनन्द देता रहा है और सर्वहारा क्रान्ति के झंडे के नीचे इसे जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है। गायन और वादन के सोलो व्यक्तिवादी अभिव्यक्तियां हैं। वे व्यक्तिवाद को व्यक्त करती हैं और सामूहिक समाज में उन्हें सहन नहीं किया जा सकता।" जब हम अपने आश्चर्य से प्रकृतिस्थ हो गये तो सोवियत कलाकारों को हमारे हार्दिक सौहार्द पर आश्चर्य हुआ होगा।

कार्यक्रम के अन्त में शिष्टमण्डल के नेता ने अपने छोटे से भाषण में बतलाया कि वह अपने मुक्त चीनी कामरेडों के सामने सोवियत संघ की कुछ सांस्कृतिक उपलब्धियों को प्रदर्शित करके कितने आनन्द का अनुभव कर रहा था। उसके शिष्टमण्डल का जो सत्कार हुआ उससे उसका चेहरा चमक रहा था। उसने हमें बतलाया कि साधारण सोवियत मजदूर सांस्कृतिक प्रगति में उपनिवेशों और पूंजीवादी देशों के मजदूरों से आगे है। "वह प्रवदा और दूसरे समाचार-पत्र खरीदता है। वह सम्भवतः मजदूर लाइब्रेरी का भी सदस्य होता है और साथियो, काम के बाद वह अपना रेडियो...उसका निजी रेडियो....बजा सकता है और कोई नाटक या शायद बीथोविन की कृति सुन सकता है।"

मजदूर बिथोविन सुनते हैं। हमारे पारस्परिक सहायता केन्द्रों के नेताओं को कुछ दिन आग्रहपूर्ण प्रश्नों की बौछार का सामना करना पड़ा। तो सोवियत संघ में मामूली मजदूर बिथोविन के महान संगीत को सुनते हैं। फिर नये जनवादी राज्य के यूनिवर्सिटी के छात्रों को, जो राष्ट्र के सांस्कृतिक उत्तराधिकारी हैं, यह अधिकार क्यों नहीं मिला जो समाजवाद की महान पितृ-भूमि में सर्वहारा को प्राप्त है? यह संगीत हमारे लिये विष और हमारे सोवियत साथियों के लिये अमृत क्यों था? एक बार हम सब मार्क्सवादी सिद्धान्तों के आधार पर तर्क कर सकते थे और विश्वास के अधिकाधिक ठेकेदारों को परेशान कर सकते थे। पर अब तक हमारे नेता प्रारंभिक जोश में हुई गलतियों के खुलने पर अपना मार्ग बदल देने के आदी हो चुके थे। अपनी गलतियों को स्वीकार किये बिना उन्होंने यह मान लिया कि शास्त्रीय संगीतज्ञ—या उनमें से कुछ—सर्वहारा की प्रेरणाओं को कुछ रहस्यात्मक ढंग से समझ सके थे। यह स्पष्ट था कि जिन संगीतज्ञों की रचनायें सोवियत संघ में बनाई जाती थीं उनमें कुछ क्रान्तिकारी सहानुभूतियां थीं। अतः जिन ग्रामोफोन रिकार्डों को हमने छिपा दिया था अब वे फिर सामने आ गये।

हमारे विदेशी दर्शकों की रुचि के लिए सरकार ने वायलिनवादक मा जुत्स-तुंग और गायक श्रीमती कुआन को पीकिंग में उसी पुराने पश्चिमी शास्त्रीय संगीत सुनाने के लिए आमंत्रित किया, जो वे पहले सुनाया करते थे। पर "नये क्रान्तिकारी" लोक संगीत को ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने पहला स्थान दिया। पार्टी ने रेडियो से शास्त्रीय संगीत बजाने की फिर अनुमति दे दी। शायद यह विदेशी मित्रों और सलाहकारों के लिये किया गया पर इसे

कोई निश्चयात्मक प्रोत्साहन नहीं दिया गया। सरकार का सारा ध्यान "लोकप्रिय संगीत" पर था।

यह नया संगीत "कम्युनिस्ट पार्टी के अकथनीय उपकार" और "अध्यक्ष माओ की स्तुति में" से लेकर "नई नारी का गीत" और "बंजर जमीन को जोत हे भाई बहन" तक विभिन्न रचनाओं में था। सच तो यह है कि जनता के सच्चे प्रतिनिधि बहुत कम इन "प्रचलित" ध्वनियों को सड़कों पर गुनागुनाते, पर मंच से यह अवश्य सुनाई पड़ते। हम उन्हें रोजाना सुनते ही न थे बल्कि हमें उन्हें गाना भी पड़ता था। कम्युनिस्टों के आने से पहले पेता के छात्रों ने अनेक "संगीत मण्डलियां" बनायीं थीं जो कई बार साथी छात्रों से सम्बन्ध स्थापित करने और गाने की स्वाभाविक आड़ में गुप्त राजनीतिक कार्यवाही करने के आवरण के रूप में इस्तेमाल की जाती थीं। स्वतंत्रता के बाद सहगानों की संख्या और उनका विस्तार काफी हो गया और अब वे छात्रों को राजनीतिक कार्यवाहियों में लेने के साधन के स्थान पर प्रचार-अनुशासन के साधनरूप बन गये। अपनी कक्षा द्वारा संगठित संगीत मण्डली में हिस्सा लेने के लिए हर छात्र से कम या अधिक आशा की जाती थी। इन मण्डलियों का संगठन, स्वयं को गाते हुए सुन कर आत्म सुख के लिये नहीं बल्कि यूनिवर्सिटी के अन्दर और बाहर प्रचार कार्य के लिए, किया गया था।

छात्रों के गुटों को परेडों में दफ्तर और कारखानों के मजदूरों को और घर की स्त्रियों को गा-गा कर सुनाते हुये नौ-दस महीने हो जाने पर यह गाने ठीक उसी प्रकार हमारे शरीर के अंग बन गये थे—जैसे कि त्वचा हमारे शरीर का अंग थी। "कम्युनिस्ट पार्टी के उपकार" जैसी ध्वनियां लगातार तालीमों के सहारे हमारे अन्दर इतनी घर कर गई थीं कि जब कभी हम कोई गाना गुनगुनाते तो यही मुंह से निकलतीं। हम यूनिवर्सिटी में छात्रावास में, ड्रिल के मैदान में, खाना खाने के कमरों में और यहां तक कि गुसलखानों में भी जहां कहीं होते, हमें यही गाने सुनाई पड़ते।

बहुत से आधुनिक रूसी गीत भी चीनी बन गये थे पर उन्हें इतनी सफलता नहीं मिली थी। उनके अनुवाद या तो बहुत भोंड़े थे या जानबूझ कर व्यंगात्मक कर दिये गये थे। अनुवादों में इस प्रकार की पंक्तियां आती थीं: "कितनी चौड़ी और महत्वपूर्ण हमारी पितृ-भूमि है। कितनी असंख्य उसकी पहाड़ियां और खेत हैं। अपनी पितृ-भूमि के स्वामियों की भांति हम जहां चाहें

जा सकते हैं।" दूसरा गाना था : "हमने ऐसा देश कभी नहीं देखा जहां हम इतनी स्वाधीनता से रह सकते हैं। कोई देश न देखा जहां हम इस तरह शांति में रह सकते हैं।" पर इन विदेशी गानों की रुकती हुई ध्वनि से सर्वोपरि हमारे अपने नेताओं के निश्चित और स्पष्ट संगीत गूंजते थे : "कम्युनिस्ट पार्टी के उपकार अकथनीय हैं।"

चलचित्र

युद्धोत्तर काल में चलचित्र हमारा प्रिय मनोरंजन बन गया। पीकिंग में शंघाई और हांगकांग जैसे आधुनिक सिनेमा घर नहीं थे। यहां के थियेटरों में अक्सर पुराने चित्र ही प्रदर्शित किये जाते थे। पर यह वास्तविक विघ्न न था। युद्ध के दिनों हम में से बहुतों ने कोई भी चित्र नहीं देखा था और अब उन्हें देखने के लिये हम व्यग्र थे। इसके अलावा पुराने चलचित्र उन यदाकदा आने वाले नये चित्रों से अधिक उच्च कोटि के लगते थे जो शंघाई से यहां आते थे। जब किसी प्रसिद्ध पुराने चलचित्र का विज्ञापन होता तो कभी कभी अस्सी प्रतिशत से भी ज्यादा दर्शक छात्र ही होते थे और सिनेमाघर अक्सर पेता के सभा-मंडप की तरह लगता था।

हममें से बहुत कम लोगों के पास अतिरिक्त धन था इसलिये शहर में कोई आकर्षक चित्र आने पर उसे देखने योग्य पैसा बचाने के लिए हम हर प्रकार से प्रयत्न करते थे। मुझे मालूम था कुछ लड़के सप्ताह के कपड़े खुद ही साफ करते थे। फेरी वालों से अल्पाहार और खाने पीने की चीजें खरीदने में अपनी जेब खाली करने के बजाय कुछ दिन हम लोग सबेरे छात्रावास के भोजनालय से मिलनेवाले ज्वार के दलिए को खाने के लिए लाइन में खड़े हो जाते यद्यपि ज्वार के दलिए से हमें घृणा थी। ऐसे अदूरदर्शी छात्र जिन्होंने अपने वजीफों को पहले ही खर्च कर दिया था हम लोगों को फुसलाते और तंग किया करते जब तक उन्हें टिकट खरीदने के लिए थोड़ा कर्जा नहीं मिल जाता। कभी-कभी थियेटर हमें कम कीमत पर स्पैशल टिकट भेज दिया करता था। विद्यार्थियों की स्वायत्त संस्था का हितकारी विभाग अपनी जनता की सेवा करने के इन अवसरों को हाथ से न जाने देने के लिए सचेष्ट रहता था।

जब 'मैडम क्यूरी,' 'जैनी आया,' 'रिबैका' या 'फार हूम दि बैल टौल्स' जैसे उच्च कोटि के चित्र आते तो सारी यूनिवर्सिटी में उत्तेजना की लहर दौड़ जाती थी। ऐसे समय यूनिवर्सिटी के पास रहने वाले लोग हमें दो या तीन के

गुटों में आपस में बातचीत करते हुए प्रसन्न और खुशी में फूले हुए सिनेमा की ओर साइकिलों पर जाते हुए देख सकते थे ।

हममें से अधिकांश मंच के अभिनय की अपेक्षा चलचित्र देखना अधिक पसंद करते थे, इसलिए नहीं कि हमारा सांस्कृतिक स्तर इतना नीचा था, कि हम नाटक या औपेरा को पसंद नहीं कर सकते थे वरन इसलिए कि ऐसे अभिनय पीकिंग में यदा कदा ही हुआ करते थे । निस्सन्देह पीकिंग औपेरा तो हमेशा होता था पर उसके नाटकीय अभिनेता तथा घिसी पिटी कहानी द्वारा शास्त्रीय कला के अभिनय को देखने में चलचित्र देखने से तीन या चार गुणा अधिक पैसा खर्च होता ।

दक्षिण पश्चिम असोसियेटेड यूनिवर्सिटी से युद्ध के बाद लौटे हुए छात्रों द्वारा स्थापित पेता नाट्य संघ, स्वतंत्रता से पहले काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था । इस गुट के अभिनेताओं ने विभिन्न यूनिवर्सिटियों और शहर के मिडिल स्कूलों में 'विजयी पुनरागमन' नामक नाटक दिखाते हुए भ्रमण किया । यह नाटक विद्यार्थियों के एक गुट द्वारा सामूहिक रूप से लिखा गया था । इस नाटक में जापानियों द्वारा आक्रान्त एक नगर में विजय दिवस के बाद राष्ट्रवादी सैनिकों का लौटना और जापानी सैनिकों की सहायता से स्थानीय जनता की उस सैनिक शक्ति को मिटा देना दिखाया गया था जो जापानियों से वास्तव में लड़ी थी । नाटक में सबसे अधिक स्मरणीय दृश्य वह था जिसमें एक राष्ट्रवादी अधिकारी को पता चलता है कि उसने स्वयं अपने बच्चे को गोली मार दी जिसे वह अपने सैनिकों द्वारा पकड़े जाने पर पहचानने में असफल रहा था । उसकी रोती हुई पुत्री ने जब बुरी तरह उसे कोसा तो उसने गोली मारकर आत्महत्या कर ली । यद्यपि सम्वाद अच्छे नहीं थे और नाटक कुछ बेपरवाही से खेला गया था पर इसने बहुत से लोगों की आखों में आंसू ला दिए ।

'तरक्की कैसे मिले' एक दूसरा सफल प्रयास था जिसे जिंगुवा, येनचिंग और सीहेना के छात्रों ने मिलकर खेला था । इस व्यंग चित्र में सरकार की शक्ति को घुन की तरह खाने वाले भ्रष्टाचार और बेईमानी का पर्दाफाश किया गया था । मेरे कुछ साहित्य-प्रेमी मित्रों ने तो इसकी तुलना गोगोल के प्रसिद्ध नाटक 'इन्सपेक्टर जनरल' से कर डाली । जब कभी कठिनाइयों को बताने के लिए विद्यार्थियों की भारी संख्या विरोध प्रदर्शित करती तो पेता नाट्य संघ

अकसर छोटे प्रचार नाटक दिखाता । बाद में हमें मालूम हुआ कि नाट्य संघ भी वही काम करता था जो पार्टी के कार्यकर्ताओं के लिए छात्रों के कोरस करते थे । मनोरंजन, कला या गुणानुवाद की चिन्ता करने की बजाय संघ भूमिगत कार्यकर्ताओं की भरती करने, सूचना संचार को संगठित करने और गैर कानूनी प्रचार साहित्य को बांटने का साधन बन गया ।

जब पीकिंग में नई सरकार बनी तो नाट्य संघ 'लाल झंडे का गीत,' 'विचार की समस्या,' 'मास्को का रूप' और 'रूसी समस्या' जैसे प्रचार नाटकों को प्रदर्शित करने लगा । मार्च १९४९ में जब कम्युनिस्ट शासन का दूसरा मास था, नई सांस्कृतिक नियंत्रण समिति ने ५७ पुराने नाटकों के अभिनय पर प्रतिबन्ध लगा दिया । सरकारी घोषणा में बतलाया गया था कि कुछ को अंधविश्वासी या स्वेच्छाचारी होने के कारण निषिद्ध किया था और कुछ अन्य को इसलिए कि वे मंगोल या तातारों के आक्रमण का अभिनय करके राष्ट्रीय गौरव का अपमान करते थे । चार नाटक दास-मनोवृति के बताये गये, दास मनोवृति की व्याख्या चाहे जैसे की गई हो । कई नाटकों में सामंतवाद के गौरव के गीत गाये गये थे और इसके अतिरिक्त कई को सरकारी आलोचकों ने "विनोदहीन" कह कर निषिद्ध कर दिया । (मैं सोचती हूं कि इस अन्तिम अपराध के विरुद्ध दूसरे देशों के आलोचक भी इसी तरह की कड़ी कार्यवाही करते होंगे ।)

मार्च के महीने में ही विदेशी चल-चित्रों के विरुद्ध आन्दोलन शुरू हो गया जो पहले पीकिंग के अधिकांश सिनेमाघरों में दिखलाए जाते थे । अभी तक खुले रूप से दबाव नहीं डाला गया था पर थियेटर वालों से प्रतिक्रियावादी चित्रों के स्थान पर प्रगतिशील कार्यक्रम अपनाने को कहा जाता था । इस आन्दोलन के बारे में एक समाचारपत्र काफी भोंडे रूप से लिख रहा था, "स्वस्थ रूसी चित्रों द्वारा मरणासन्न अमरीकी चित्रों को निकाल बाहर करना चाहिए ।" उत्तरी चीन में पचास रूसी चल चित्र चल रहे थे और तेरह पीकिंग में दिखलाए जाते थे । अपने मुख्य निर्माण केन्द्र शंघाई में बने कई चीनी चल-चित्रों को प्रतिक्रियावादी करार देकर उन पर सार्वजनिक रूप से प्रतिबंध लगा दिया गया ।

थियेटर के मालिकों को अपने थियेटर चालू रखने में वास्तविक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा क्योंकि रूस से आये हुए और जल्दी जल्दी में बने चीनी चित्र इतने कम थे कि थियेटर का पूरा कार्यक्रम नहीं बन पाता था । प्रगतिवादी चित्रों के लगते ही दर्शकों की संख्या एकदम कम हो गई तथा

अधिक भीड़ आकृष्ट करने के लिए एक सप्ताह के भीतर ही उन्हें अपने टिकट की कीमतों को कई बार कम करना पड़ा। टिकटों की कीमतों में गिरावट को प्रगतिशील क्षेत्रों में, सिनेमा को वास्तव में जन साधारण को प्राप्त होने वाली जन-कला बनाने की ओर एक चरण समझा गया। पर चूंकि जनता उनमें नहीं जा रही थी, थियेटर मालिकों की ओर से विरोध होने के कारण सरकार ने अन्त में महीने में पांच दिन के लिए विदेशी गैर-सोवियत फिल्मों को दिखाने की छूट दे दी।

परिणाम यह हुआ कि तीस दिन में पांच दिन तो सिनेमाघर भरे होते और बाकी पचीस दिन दर्शकों का अभाव रहता। प्रतिक्रियावादी फिल्मों में भरे सिनेमाघर और सोवियत चित्रों में खाली सीटों का अन्तर स्पष्ट था। अतः जनता के समस्त वर्गों और पक्षों से हानिकारक और भ्रष्ट विदेशी फिल्मों को पूरी तरह बन्द कर देने के लिए मांगें एक साथ प्रेस में फूट पड़ीं। सरकार ने शीघ्र ही सहानुभूतिपूति पूर्ण कदम उठाया। प्रतिक्रियावादी चल-चित्रों पर हमेशा के लिए प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

कुछ सप्ताह बाद हमने सुना कि पास के त्यान-सिन के सिनेमाघरों में से उत्तरी मुक्ति मार्ग पर स्थित मैजस्टिक सिनेमाघर को सोवियत फिल्म वितरण ऐजेन्सी के हाथ बेच दिया गया। एक मात्र सोवियत संघ से आने वाले चित्रों के प्रदर्शन के लिए इसे लिया गया था और इसका नाम अब मौस्कावा रख दिया गया।

सोवियत चल-चित्रों में पीकिंग के दर्शकों की भीड़ की भीड़ न जाने का कारण यह नहीं था कि उन्हें कम्यूनिस्ट पार्टी या सोवियत संघ से घृणा थी पर कारण यह था कि एक रूसी फिल्म को देखकर ही आदमी इतना संतुष्ट हो जाता था कि उसे देखने के बाद वह कई दिनों तक दूसरे चित्र को देखने की परवाह नहीं करता था। 'दी स्टोरी आफ मैडलाइन,' 'दी रेनबो चेपे,' 'शेर बच्चा,' 'मैगजीम्स यूथ,' 'डिफेन्स आफ लेनिनग्राड,' 'दी बैटलशिप पोर्टे-मकिन,' 'दी ईस्टबाउन्ड ट्रेन,' जैसे गम्भीर विषयों की लाइन लग गई। लड़ाई के पहले बने पुराने चलचित्रों में कुछ अच्छे और प्रेरणादायक थे। उनमें से अधिकांश नीरस थे। यहां तक कि वे पेता के छात्रों को भी नीरस लगते थे। वैसे पेता के छात्र भी उतने ही प्रगतिशील थे जितने कि पीकिंग में दूसरे प्रगतिशील गुट।

जब शहर में बहु विज्ञापित 'दी यंग ग्रैनिडियर' चलचित्र आया तो मेरी कक्षा के प्रशासनिक मैनेजर ने हमसे पांच मिनट ज्यादा ठहरने के लिए कहा जिससे वह उसके बारे में भाषण दे सके। उसने चित्र के शिक्षा सम्बन्धी महत्व की प्रशंसा की और बतलाया कि विद्यार्थी संघ के अधिकारियों ने 'प्रजातन्त्रवादी केन्द्रवाद' के सिद्धान्त के अनुसार पहले ही प्रबन्ध कर दिया है कि हम लोग सामूहिक रूप से जाकर आधी कीमत पर इसे देख सकें। जो भी देखने जाना चाहता था उसे केवल अपने हस्ताक्षर करके अपने कक्षा के मैनेजर को टिकिट के लिए पैसे दे देने थे। मैंने पहले ही ऐसे बहुत से चित्र देख लिए थे। अतः अपनी किताबों को अपने बस्ते में रखकर मै लिस्ट में अपना नाम लिखाने की चिन्ता न कर कक्षा के बाहर निकलने ही वाली थी कि सहायक मैनेजर ने मुझे पकड़ लिया।

"क्या आपने हस्ताक्षर नहीं किये ?"

"मैं इसे कल देखना नहीं चाहती।" मैं हाल में सीढ़ियों की ओर चल पड़ी।

पर वह पुनः मेरे पास आ धमका। "कुमारी येन, मुझे आशा है कि आप इसपर गंभीरता से सोचेंगी। आप जानती हैं कि इन दिनों हम अपनी व्यक्तिगत रुचियों के बारे में चिन्ता नही कर सकते। आज..." उसे यकायक ही यह याद आया कि उसने "आज सर्वहारा क्रान्ति···" यह वाक्य पहले भी बहुत बार इस्तेमाल किया था। अतः वह फिर बोलने लगा।

"मैं समझता हूं कि शायद आप इस फिल्म में विशेष दिलचस्पी नहीं रखतीं। पर इसी कारण आप इसे देखें और लाभ उठायें। प्रत्येक छात्र को जिसमें क्रान्ति के प्रति किसी प्रकार का उत्साह है ऐसे शास्त्रीय चलचित्रों को देखने में काफी रुचि लेनी चाहिये।"

वह रुका। मैं जानती थी कि वह मेरी प्रतिक्रिया जानने की प्रतीक्षा कर रहा था ताकि वह निश्चय कर सके कि मेरे साथ कौन सा रास्ता अख्तियार करे। मैं यह भी जानती थी कि यदि मैं उसके साथ बहस में पड़ गई और उससे अपनी असलियत कह दी तो हम दोनों अपना समय बर्बाद करेंगे और इससे भी ज्यादा गम्भीर बात यह थी कि मैं परेशानी में पड़ सकती थी। मैंने कृत्रिम सौहार्द्रपूर्ण मुस्कान छोड़ी।

"मैं नहीं समझती कि इसमें मैं आपसे कम दिलचस्पी रखती हूं। मैंने 'दी रेनबो' को कुछ सप्ताह पहले ही देखा। यह बहुत सुन्दर चित्र था। इसने मेरे ऊपर इतना प्रभाव डाला कि शायद मैं वास्तव में चिल्ला पड़ी थी और जबसे मैं थियेटर से बाहर आयी हूं तभी से वह चित्र मेरे दिमाग में बार बार घूम रहा है और मैं पुराने विचारों में परिवर्तन कर रही हूं। मैंने विदेशी फिल्म न देखने और सोवियत चलचित्रों से लाभ प्राप्त करने का निश्चय कर लिया है। यह सही है कि मेरा अपना दृष्टिकोण इतना दृढ़ नहीं हुआ है ऐसा मैं समझती हूं। विदेशी फिल्में मुझे बुर्जुवा विचार की आदतों की ओर खींचती हैं और रूसी फिल्में मेरे राजनैतिक विचारों में परिवर्तन ला देंगी और सर्वहारा दृष्टिकोण को लेकर चलने में बल प्रदान करेंगी।"

मेरे इस भाषण के बाद मुझे लगा जैसे मैं अपने गालों पर तमाचा मार रही थी।

"बहुत अच्छा।" उसने तिरछी निगाह से मेरी ओर घूरा। शायद उसने मेरी बेईमानी को भांप लिया था क्योंकि उसके चेहरे से मुस्कान गायब थी। "पर यदि यह बात सही है तो आप हमारे साथ 'दी यंग ग्रेनेडियर' देखने क्यों नहीं चलना चाहतीं ?"

मैं हक्की बक्की रह गई। चाहे उसने मेरी सही भावनाओं को भांपा या नहीं मैं अब अपनी झूंठ में फंस चुकी थी।

"अच्छा, इस समय तो देखने जाने की इच्छा नहीं है। इन दिनों मैं कुछ खिन्न रहती हूं। जब दुबारा मौका आयेगा तो मैं अवश्य ही इसका देखना नहीं छोड़ूंगी। मुझे विश्वास है कि यह बहुत दिन तक चलेगी।"

"आप अकेली ही जायेंगी या अपने परिवार के साथ ? ऐसी ही बात है न" ? मुझे लगा कि वह मुझ पर फिर से विश्वास कर रहा था। उसकी आंखों से अविश्वास लुप्त हो चुका था और मुस्कान लौट आयी थी। "पर मैंने देखा कि आपने अपने साथियों के साथ हिलने मिलने में कभी आनन्द नहीं लिया है। यदि आप इसी रास्ते पर चलती रहेंगी तो आपके विचार या भावनाएं जनसमूह के साथ-साथ नहीं होंगी। ये हमारे आत्मसुधार में एक गम्भीर बाधा होंगी। आप इसे हमारे साथ क्यों नहीं देखतीं ? जरा कोशिश करें।"

एक बार फिर उसी प्रकार का उत्साह उसके चेहरे पर चमक उठा जैसा कि उसने पहले नृत्य समारोह में लोगों से नृत्य करने का अनुग्रह करते हुए प्रदर्शित किया था। "आप सामूहिक जीवन से प्रेम करेंगी। आप सचमुच करेंगी। एक सामूहिक भावना के निर्माण में हमें सहायता दें। आप उसे चाहने लगेंगी और आप इस चलचित्र से भी प्रेम करने लगेंगी।"

अतः अन्त में मैंने अपना नाम लिखा दिया, इसलिए नहीं कि मैं पूरी तरह से संतुष्ट हो गयी थी पर इसलिए कि सोवियत चलचित्रों और सामूहिक जीवन के प्रति अपने प्रेम की मैं परीक्षा लेना चाहती थी।

यह दोपहरी का एक स्पेशल शो था। जनवादी स्क्वायर दर्शकों से खचा-खच भरा था। हर एक दर्शक अपनी अपनी कक्षाओं को देख रहा था। अन्त में हम लाइन बनाकर खड़े हो गए, हाजिरी दी और कैथे थियेटर की ओर 'जनवादी युवक के चरण' गाते हुए चल पड़े। यह गीत दूसरे रास्ते चलने वालों के लिये गाया जा रहा था जो हमें देखने के लिये आ गये थे। थियेटर के सामने हम लाइन में रुक गये ताकि लाइन से ही हर क्लास हाल में घुस सके। हम से दूर गली के कुछ बच्चे आश्चर्य से हमें देख रहे थे। शायद उन्हें हमसे ईर्ष्या हो रही थी।

एक नेता ने जोर से पुकारा "कानून विभाग।" और कानून विभाग की विभिन्न कक्षायें लाइन में अन्दर चली गयीं। "इतिहास विभाग।" इतिहास की कक्षायें एक सीधी लाइन में अन्दर चली गयीं। एक गुट के बाद दूसरा गुट थियेटर में दाखिल होता गया। अन्त में हम सबने अपनी अपनी जगह ले ली। मुझे बीच के मार्ग के निकट अच्छी जगह मिली थी। मेरे कुछ अभागे साथी पंक्तियों के अन्त में बैठे गुस्से से मैनेजर पर बुड़बुड़ा रहे थे। मैनेजर ने ही उनको टिकटें दी थीं पर उन्हें जगह मिली थी खम्भों के पीछे।

अंधेरा हो गया। यथारीति मार्शल स्टालिन और चेयरमैन माओ त्से-तुंग के चित्र पर्दे पर चमक उठे। जोर जोर से तालियां बज उठी फिर सैनिक संगीत बज उठा और चित्र शुरू हो गया।

चित्र का संवाद चीनी भाषा में दिया गया था, पर भाषान्तर अच्छा नहीं हुआ था। मैं नहीं जानती कि बोलती हुई आवाज किसकी थी या तो रूसी थे या चीनी जो विदेशी बोली बोल रहे थे। इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उनकी आवाज की ध्वनि और उतार-चढ़ाव विचित्र थे। इसकी

कहानी थी कि घायल होने पर भी किस तरह एक पराक्रमी सोवियत युवक अपने दृढ़ मार्क्सवादी विश्वास से जर्मन फांसिस्ट हमलावरों के पूरे दल को समाप्त करने में सफल हो गया था। कहानी प्रभावपूर्ण हो सकती थी पर चुभने वाले शास्त्रीय दोषों के कारण उसके गुण छिप गये थे।

ध्येय के प्रति विश्वास के ज्वलंत वचनों को ऐसे पढ़ा जा रहा था मानो चीनी या चीनी बोलने वाले रूसियों के मन में शंका थी। जबकि उनसे विश्वास प्रकट होना चाहिये था। भावनाओं की उत्तेजनाओं के स्थलों को विस्मयोत्पादक शांति से प्रकट किया गया था। प्रशंसा गालियां जैसी लगती थीं। करुणात्मक दृश्यों से चपलता टपकती थी। चित्र की लिपि में तो सही भावनायें थीं लेकिन बोलने वालों ने उसका सत्यानाश कर दिया। जब हमने एक युवक सैनिक को उसकी बातूनी आवाज में कठोरता से घोषणा करते हुए सुना, 'मैं बलिदान दूंगा। मैं अपनी पितृ-भूमि के लिये जीवन का बलिदान देने की शपथ लेता हूं।' तो इससे प्रेरणा नहीं मिल रही थी। जब मैंने दूसरे नौजवान गोलेबाज को एक लड़ाकू की ओर दौड़ते हुए देखा जो गोली खाकर गिर पड़ा था तो वह नौजवान गोलेबाज धोखेबाजी की आवाज में पुकार उठा; कामरेड, शान्त रहो, मैं तुम्हें अपनी पीठ पर ले चलूंगा।" मुझे घायल वीर के लिये वास्तव में चिन्ता हो रही थी। चित्र के पात्र भी विदेशी थे। पात्रों की शक्ल सूरतें और उनकी भूमिका में स्पष्ट असंगति थी। सादापन और साधारणता अच्छी हैं पर उनमें कुरूपता नहीं आनी चाहिये। हमारी चीनी नजरों में कुछ अभिनेता वास्तव में विनोदात्मक लगते थे। उनकी गम्भीर मुद्रायें दर्शकों पर प्रभाव नहीं डाल पाती थीं। वास्तव में उनके कथोपकथन हास्यास्पद लगते थे। प्रमुख अभिनेत्री में कोई सौन्दर्य और आकर्षण हमें नहीं मिला। वह एक जासूस थी जिसे एक जर्मन अधिकारी ने उसके सजीव सौंदर्य से आकृष्ट होकर सैनिक रहस्य दे दिये थे। मुझे आश्चर्य न था कि जर्मन लोग युद्ध में हार गये।

अंधेरी में बैठी जब मैं चित्र देख रही थी तो मैं उस प्रेरणा की खोज में थी जिसे लेने की हमसे आशा की जाती थी। मुझे आश्चर्य था कि इस रूसी नौजवान का साहस जापान के विरुद्ध लम्बे संघर्ष में हमारे नौजवानों के साहस से अधिक प्रशंसनीय क्यों समझा गया। जिन साहस के कार्यों को मैं देख रही थी हम चीनियों के लिये उनका शैक्षणिक महत्व अधिक क्यों था? क्या इसलिये कि वे किसी रूसी ने किये थे?

अन्त में बहुत देर बाद नायक ने अपना अंतिम भाषण दिया। विजय संगीत के साथ चित्र समाप्त हो गया और बिजलियां जल उठीं। हम भीड़ और दम घुटने वाले वायु मंडल से कुछ चकाचौंध हुए लाइन में बाहर निकले। हरएक ऊंचे से ऊंचे स्वर में चित्र की प्रसन्नता में संलग्न था। "उच्चकोटि का टेक्नीक", "शैक्षणिक महत्व से सम्पन्न।" "दी रेनबो" से अभी तक जो चित्र देखे उनमें सर्वश्रेष्ठ है।"

अपने एक विश्वासपात्र मित्र से जिसने अभी अभी अपने पारस्परिक सहायता केन्द्र के नेता से चित्र की प्रशंसा करना समाप्त की थी, कोहनी मार कर मैंने पूछा, "क्या यह वास्तव में इतना अच्छा था ?"

"हां", उसने स्नेहपूर्ण मुस्कान बखेरते हुए उत्तर दिया, "वास्तव में यह सब आपके सर्वहारा दृष्टिकोण पर निर्भर करता है।"

वह यूनिवर्सिटी की ओर दुपहरी की धूप में मेरे साथ चल रहा था और जाती हुई भीड़ में अपना रास्ता खोजते हुए मुझे उन साथियों से ईर्ष्या हो रही थी जिनकी सीटें खम्भे के पीछे थीं।

(१४)

विवाह का स्वरूप

"कम्युनिस्टों के शासन में स्त्री और पुरुषों के सम्बन्धों के बारे में आपका क्या कहना है ?" हांगकांग पहुंचने के कुछ सप्ताह बाद जब मैं जुकाम खांसी की दवा लेने गई तो डाक्टर ने मेरा निदान समाप्त करके काफी कीमती दवा लिख दी और उसी समय मुझसे यह प्रश्न किया : "मैंने सुना है कम्युनिस्ट चरित्रहीन होते हैं । क्या ऐसा नहीं है ?" वह खुशी से गुदगुदाहट अनुभव कर रहा था । "क्यों ? उनका कहना है कि लड़की यह जाने बिना ही गर्भवती हो जाती है कि उसका बीज डालने वाला कौन था ?"

"मैं जो कुछ जानती हूं वह है..." मैं वात काटते हुए बोली । "सैनिकों में कुछ व्यभिचार हो सकता है पर मैंने नहीं सुना । लेकिन इस तरह की बातें हो जाना स्वाभाविक है । पर स्कूल और कालेजों में उनका आचरण बिलकुल दूसरे तरह का है । वहां कोई व्यभिचार नहीं, बिलकुल नहीं !"

"पर पर" वह हकलाने लगा, " हां...अवश्य ही ! यह ठीक है । मैं भी यही सोचता हूं । और जब से कम्युनिस्ट वहां आये हैं रास्ते ठीक हो गये और खाना भी अधिक मिलने लगा । निस्सन्देह, ऊंह—यह सब तो जनता के लिये एक वरदान है ।"

मुझे अपनी हंसी रोकने में कठिनाई अनुभव हुई । उसके एक साथ बात पलट लेने के अर्थ थे कि मेरी पुरजोर शब्दों में अस्वीकृति के कारण शायद वह सोचता होगा कि मैं कोई प्रगतिशील या पार्टी मेम्बर थी जिसे हांगकांग में उस जैसे व्यापारियों पर जासूसी करने के लिये भेजा गया था । परन्तु मैं तो केवल सच कहने का प्रयास ही कर रही थी क्योंकि नये चीन के नवयुवकों के जीवन में प्रेम और जिसे विदेशी "सेक्स" कहते हैं, कोई महत्व नहीं रखता था । इसके अलावा और कुछ कहने की जो कोई कोशिश करता है वह अन्धकार में आपकी रुचि के साथ खेलने की चेष्टा करता है ।

स्वभावत: पेता के छात्र 'सैक्स' के बारे में स्वतंत्रता के पहले से भी जानते थे। इसी कारण एक दूसरे के प्रति आकर्षित होना भी बिल्कुल स्वाभाविक था। हममें से अधिकांश लड़कियां लड़कों के साथ घूमने जाती थीं। समय-समय पर लड़के हमें चल-चित्र दिखाने भी ले जाया करते थे। और कुछ लड़कियां उनके साथ नृत्यों और दूसरे समारोहों में भी सम्मलित होती थीं। पर इनमें सब से प्रिय नौका-विहार था। प्राय: कोई भी पे-हई या कुन मिन झील पर नौका किराए पर ले सकता था। बसन्त की ढलती हुई दुपहरी में हल्के रंग के हरे सरकंडों और प्रस्फुटित होने वाली कलियों को साधे हुए कमल की पत्तियों के बीच धीरे-धीरे नौका खेने से अच्छा और कुछ नहीं लगता था। यह कलियां खिलकर बाद में सारी झील पर छा जाती थीं। अंधेरा होते ही चारों ओर बिजलियां जली हुई दिखाई देतीं और शीतल मन्द समीर पानी में कम्पन पैदा कर देता। यह बड़ा सुखद होता था, विशेषतौर पर जब हमें ज्ञात हो कि नजदीक ही बाहर मैदान के रेस्तरां में छोटी-छोटी मसालेदार च्याओत्से (गोस्त की पकौड़ियों) की दावत मिलने वाली है।

चल-चित्रों में हम इनग्रिड बर्गमेन, गैरी कूपर और चार्ल्स बायर की प्रशंसा करते। पर यह ध्यान रखना चाहिए कि पीकिंग के छात्र अपने व्यक्तिगत जीवन में रूढ़िवादी थे चाहे वे अपनी राजनीति में कितने ही प्रगतिशील हों। इसके अलावा हम लोगों के पास अक्सर विचार करने के लिए और जरूरी बातें थीं...। और १९४८ में भविष्य निर्माण का काम हमारी व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत होता था। ऐसे तरक्कीपसन्द विद्यार्थी बहुत थोड़े थे जिन्होंने इस पुराने कम्युनिस्ट सूत्र को पढ़ा था कि वासना पूर्ति पानी के उस गिलास की तरह है जिसे आप प्यास लगने पर पीते हैं। मेरे विचार में, कम से कम सिद्धान्त रूप में, जैसे ही स्वतन्त्रता के बाद उन्हें अवसर मिलता वे इस तरह के साहसी और अरूढ़िवादी होने के लिए तैयार भी थे। पर इन साहसिक व्यक्तियों को भी अपनी योजनाओं को स्थगित करना पड़ा जब उन्होंने देखा कि समय की गति कुछ और ही थी। स्वतंत्रता के बाद जीवन और भी अधिक कर्मठ हो गया, काम बहुत करना था और स्त्री और पुरुष के जीवन में व्यक्तिगत सम्बन्ध महत्वपूर्ण बन सकें इसके लिए समय कम था।

मुझे अपने विभाग के एक लड़के और लड़की की याद है जो पार्टी में प्रवेश के लिए उम्मीदवार थे। वे मित्र भी थे और कामरेड भी। वे साथ-साथ काम करते और अक्सर एक दूसरे से मिला करते थे। पर उनका समागम पार्टी के

काम से ही होता था। मिलने पर, उसे जो कुछ काम करना होता वह उसकी चर्चा अपनी मित्र से करता और जैसे ही वह चर्चा समाप्त होती वह उसे छोड़ कर चला जाता था। स्वतंत्रता के प्रारम्भिक महीनों में वे दोनों काम में संलग्न और प्रसन्न रहते थे और लम्बी बातचीत के लिए समय ही नहीं था फिर व्यक्तिगत मामलों का तो प्रश्न ही कहां था।

यकायक ही लड़के को यह बोध हुआ कि वह उस लड़की से प्रेम करने लगा था। यह एक उलझन थी क्योंकि वह अच्छा पार्टी मेम्बर होने के बारे में गंभीर था और डरता था कि उसकी इच्छा करना उसके काम और जू-जी में, बाधक होगी। अभी तक बात यहां तक नहीं पहुंची थी कि वह पार्टी से औपचारिक तौर पर अपने इस सम्बन्ध के बारे में बातें करने पर विचार करता। अतः वह अपने निकटतम पार्टी मेम्बर से मिला और उससे बहुत देर तक गम्भीर बातें करता रहा। उसके मित्र ने उससे कहा कि यदि यह इतना गम्भीर हो गया हो तो सीधा रास्ता अख्तियार करना अच्छा होगा वे दोनों सहमत हो गये कि अपने मन की शांति को प्राप्त करने के लिये उत्सुक प्रेमी को केवल यह करना चाहिये कि वह पूरी शक्ति से उससे विवाह के लिये प्रार्थना करे और उसे मना ले। "उस पर पहले आप वार करना शुरू कर दें। आप दोनों ही अच्छे काम-रेड हैं। आपको तो लाभ ही होगा हानि नहीं। प्रेम और काम दोनों को साथ साथ चलने दो—" उसने अलंकारिक भाषा में कहा।

अतः दूसरे दिन दोपहर को जब वह अपने कमरे में लिखने में व्यस्त थी लड़के ने दरवाजा खटखटाया। उसने स्वागत करते हुए उससे अन्दर आकर बैठ जाने की प्रार्थना की। "यदि आपको कोई जरूरी काम है तो मैं अपना लिखना बन्द कर देती हूं—" उसने अपने प्रेमी से कहा।

उसने फिर अपनी आंखें उस पर गड़ा दीं मानो उसने उसकी बात को सुना ही न हो। उसके घूरने से उसने जो कुछ कहा था उसे दुहराने लगी। जैसे ही उसने बोलना शुरू किया वह अपनी कुर्सी से उछल कर उठा और बदतमीजी से उसके हाथ को पकड़ कर अशिष्टतासे बुदबुदाया—"मैं तुम्हें प्रेम करता हूं—कृपा कर मेरे प्रेम को स्वीकार करें।"

वह हक्की-बक्की रह गई। उसे प्रेम का कोई अनुभव न था। अवश्य ही उसने यह कभी आशा न की थी कि वह उतावला कामरेड उसका पहला प्रेमी होगा जिसे वह सिर्फ साथ साथ काम करने वाला साथी समझी थी। उसके

द्वारा जकड़े हुए अपने हाथ को उसने खींच लिया। खड़ी हो गई और पीछे हट गई। "बहुत ठीक पर मैं-मैं तो अभी आपको अच्छी तरह जानती भी नहीं।"

वह सीधी बात कहता रहा। "कृपया मेरा प्रेम स्वीकार करो। मैं तुम्हें चाहता हूं। इतनी लज्जित क्यों हो रही हो ?" उसमें आदेश और तिरस्कार दोनों ही थे। "हम कामरेड हैं। क्या नहीं ? हम कैसी कैसी कठिनाइयों और परीक्षाओं से गुजरे हैं। हमने कन्धे से कन्धा मिलाकर काम किया है। हमारा एक ही विश्वास और एक जैसा दृष्टिकोण है। हमें प्रेम के सम्बन्ध में कौन सा रुख अपनाना चाहिये उसे बतलाने की मुझे आवश्यकता नहीं। कुछ भी हो हम कामरेड हैं। काम ने हम दोनों को पास-पास ला दिया है और आपने पहले ही मेरे बारे में अति आधारभूत और महत्वपूर्ण बातों को जान लिया है। कृपया मेरा प्रेम स्वीकार करें।"

उसे अभी तक कोई उचित उत्तर न सूझा। थोड़ा रुकने के बाद वह सिर्फ इतना कह सकी : "सोचने के लिए थोड़ा समय दें। मुझे इस पर विचार करने दें और..."

"इसमें सोचने की बात ही क्या है ?" उसने अभी तक अपना प्रहार नहीं रोका था। "क्या हमने अपने को पुनर्निर्माण करने, बुर्जुवा भावना को अपने अन्दर से निकाल फेंकने की शपथ नहीं ली थी ? अब वह दिन और वह जमाना नहीं रहा जब एक आदमी औरत के पीछे भागने में अपनी जिन्दगी लगा दे या एक औरत झूठी लज्जा और प्रपंच रचा करें। हमें खुल कर प्रेम करना चाहिये, निर्भय होकर प्रेम करना चाहिए। केवल यही सर्वहारा प्रेम हो सकता है—क्रान्तिकारियों का सच्चा प्रेम !" गूंजते हुए सर्वहारा शीर्षक से अपने कामरेड की भावनाओं को कुचल देना—यही सबसे अच्छा और अन्तिम शस्त्र था।

पर उसने फिर वही जवाब दिया कि उसे इस पर विचार करने के लिए समय देना होगा। यह दोनों के लिए एक महत्वपूर्ण निर्णय था। वह इस मामले को अपने पार्टी के मित्रों तक ले गया। आखिर यह भी पार्टी से संबंध रखता था। खुल कर कुछ वाद-विवाद करने के बाद सब सहमत हो गए कि यदि वह प्रेम को स्वीकार कर ले तो दोनों आदर्श दम्पति होंगे। दोनों ने विचार किया है और शीघ्र ही पार्टी सदस्य बनने वाले हैं। वे दोनों ही पार्टी के काम

के प्रति बड़े श्रद्धालु रहे हैं। यदि वे प्रेम कर सके, एक दूसरे को प्रोत्साहित कर सके और कठिन परिश्रम कर सके तो पार्टी के लिए लाभदायक होंगे। और दूसरे मामलों में वे एक दूसरे के अनुरूप हैं अथवा नहीं यह उनका व्यक्तिगत मामला होने के कारण पार्टी ने इस पर विचार नहीं किया।

अपने मित्रों की मदद से वह लड़का एक कामरेड लड़की से मिला और उसके साथ बड़ी देर बात की। उसने कहा कि उसे आशा है कि वह उसकी प्रेमिका से घुलकर बात करेगी। उसके बारे में उसे बतलाएगी और उसे सलाह देगी कि वह प्रेम करने के पुराने बुर्जुवा तरीके से ही न चिपकी रहे। "यह क्रान्ति का समय है। हम पत्र लिखने, रोमान्टिक फिल्म देखने, पार्क में घूमने और साथ साथ चाय पीने में ज्यादा समय नहीं बर्बाद कर सकते। हमें अपनी भावनाओं को खुलकर प्रकट करना सीखना चाहिए। आज की नारी के लिए और विशेषकर बुद्धिजीवी के लिए लज्जा की शरण लेना सर्वहारा तरीका नहीं है।" कामरेड लड़की ने उसके सन्देश को उसकी प्रेमिका तक पहुँचा दिया।

जब लड़की की समझ में न आया कि क्या किया जाय तो उसने पार्टी के उच्च अधिकारियों से प्रार्थना की। उन्होंने उससे प्रेम स्वीकार करने के लिए कहा। अवश्य ही, यदि वह वास्तव में उसे नहीं चाहती तो वे जबर्दस्ती प्रेम स्वीकार करने की उससे आशा नहीं रखते। उसने पार्टी के उच्च अधिकारियों को बताया कि अब तक उसके बारे में एक साथी से ज्यादा और कोई भावना अपने अन्दर पैदा करने में वह असफल रही है।

पर इस घटना को दो सप्ताह भी नहीं हुए थे कि उसके प्रेमी ने सब लोगों की प्रसन्नता से अपने मित्रों को मिठाई भेंट की जो इस बात का संकेत था कि दोनों ने अपने प्रेम की घोषणा कर दी थी। पेता में अपनी सगाई की घोषणा का साधारणतया यही मान्य तरीका था। उसकी सहेलियां दौड़ी दौड़ी उसके पास आईं और यह स्वीकार करने के लिए उसे चिढ़ाने लगी, कि क्या यह घटना ठीक थी? पहले पहल उसने यही कहा कि अभी बात पक्की नहीं हुई है पर वे उसे और भी तंग करने लगीं और अन्त में लज्जा के साथ उसने स्वीकार किया कि पिछले कुछ दिनों से वह उसके प्रति सर्वहारा प्रेम अनुभव करने लगी थी। हां, उसने मन ही मन सोचा, हां, वह उसका प्रेम स्वीकार कर सकती है। एक दो सप्ताह तक हम उसे चिढ़ाते रहे पर इस बीच हम उन्हें खाली समय में मिलते हुए देखने की आदी हो चुकी थीं। लगभग एक महीने के बाद वे ऐसे दिखलाई पड़ने लगे मानो वे अनेक वर्षों से विवाहित हों।

पर हमें आश्चर्य था कि उसमें वास्तव में उसके लिए सच्चा प्रेम जागृत हो गया था अथवा "सर्वहारा" के जादू ने उसे मोहित कर लिया था।

कभी कभी प्रेम जनता की सेवा के गम्भीर कार्यों के बीच आ खड़ा होता। मेरे विचार में कभी कभी उत्साही कामरेड लड़कियों के साथ अपने परिचय को गाढ़ा करने के लिए अपने राजनीतिक काम को इस्तेमाल करते थे। यदि कोई लड़का गाने वाले प्रचार दल में होता तो जिस लड़की का वह प्रशंसक था उसे अपने दल में सम्मिलित कराने के लिए वह बहाने निकाल लेता। यदि वह सम्मिलित होने से इन्कार कर देती तो वह गम्भीरता से बतलाता कि "सार्वजनिक कार्यवाहियों में हिस्सा न लेने की आपकी अस्वीकृति प्रकट करती है कि आप जनता से दूर हैं और अभीतक मध्यवित धारणाओं से चिपकी हुई ह" यदि उसे स्वयं नृत्य करना न आता होता या ऐसा वह बहाना करता और यदि वह लड़की असाधारण रूप से अच्छा नृत्य करती होती अर्थात् उस लड़के की ऐसी धारणा होती तो वह उस लड़की से नृत्य सिखाने के लिए हमेशा कह सकता था और इस प्रकार वह लड़की के साथ रह सकता था। यदि वह लड़की हिचकिचाती तो वह किसी भी समय न्यायपरायण होकर कह सकता था, "अमुक लड़की अपने साथियों को सहायता देना पसन्द नहीं करती, वह अभीतक असहनशील और दम्भी है।"

या उसे अकेली घूमते हुए पा कर उसके पीछे-पीछे चलना और क्रान्ति के सिद्धान्त की बात चीत छेड़ देना बहुत आसान था। यदि राजनीतिक कक्षाओं में उसका मन भटकने लगता तो जब मीटिंग खत्म हो जाती वह उसे खोज लेता और गम्भीरता से टीका करता ; "आपने जो सवाल पूछे, उससे मुझे डर है.कि अभी तक आपके दिमाग में गलत विचार भरे हैं इन बुर्जुवा बातों ने गहरी जड़ें बनाली हैं और आपके विचारों में वे दृढ़ होती जा रही हैं। उनका पूरी तरह और कठोरता से मूलोच्छेदन करने का आपको निश्चय करना चाहिए।" फिर भारी चिन्ता प्रगट करते हुए वह कहता; "मेरे विचार से यह अच्छा होगा कि जब आपके पास समय हो हम बातचीत करें। इन भ्रमिक विचारों को विनष्ट करने में आपकी सहायता में थोड़ा समय खर्च करने में मुझे खुशी होगी। कल कैसा रहेगा ?" यह स्पष्ट था कि उसका मन थोड़े समय में ही बदला नहीं जा सकता था और यह निश्चय करने के लिए वह बिगड़ न जाय अब से उसे सहायता की आवश्यकता होगी।

जब वह स्वालोचना सभाओं में उसे अपनी आलोचना करते हुए सुनता तो अपनी प्रसन्नता उस लड़की पर बिखेर देता। "आपके मन में बुनियादी परिवर्तन आ चुके है" मीटिंग के बाद वह उससे कहता, "मुझे आशा है 'कि आप जू-जी में इसी तरह का परिश्रम करती रहेंगी और आगे बढ़ती रहेंगी। आप पीछे न रहिए। आपको हमारे साथ कदम मिलाना है। मेरे विचार से यह अच्छा होगाकि हम अपनी बातें जारी रक्खें। आपका क्या विचार है? जब लड़की पार्टी या युवक संघ की सदस्या होती और लड़का केवल प्रगतिशील, तो कई बार स्थिति उलटी होती या राजनैतिक दृष्टि से शून्य ऐसे उदाहरण कम मिलते थे कि विचार और कर्म में प्रेमी से ज्यादा प्रेमिका निश्चयात्मक होती। ऐसे अधिकांश प्रेमी जल्दी ही भयभीत हो जाते थे पर जब ऐसा हो भी जाता तो लड़की या तो अपने प्रेमी को बिल्कुल ही अस्वीकार कर देती या इस शर्त पर उसके प्रेम को स्वीकार करने का बचन देती कि वह कठोर परिश्रम करके अपना नाम 'श्रेष्ठजनों की सूची' में लिखा लेगा। 'श्रेष्ठजनों की सूची' उन उम्मीदवारों की सूची हुआ करती थी जिन्होंने पुराने साम्राज्यवादी दिनों में सरकारी परीक्षायें पास कर ली थीं और इस तरह वे सरकारी पदों पर नियुक्त होने के योग्य हो गये थे। पर अब तो 'श्रेष्ठजनों की सूची' उन उम्मीदवारों की सूची थी जिन्हें युवक संघ या पार्टी का सदस्य बना लिया गया था।

ऐसे दृष्टान्तों पर जिसमें दम्पत्ति में से एक पार्टी का सदस्य होता और दूसरा नहीं हमेशा खुले रूप से और विस्तार से पार्टी की बैठकों में विचार होता था। जो कोई अपने प्रेम को छुपाता उसे "इतना शर्मीला कि वह अपने प्रेम को स्वीकार न कर सके", "सामन्तवादी भावना को प्रकट करने वाला" या "ऐसे गुप्त भेद वाला जिन्हें प्रकट नहीं किया गया अतः वह सर्वहारा के दृष्टिकोण से असंगत था" कहकर बुरा भला कहा जाता। यदि किसी ने अपने प्रेम को प्रकट कर दिया तो केन्द्र उस पर बातचीत करता और परामर्श देता। यद्यपि आपको उनके विचारों को स्वीकार करना आवश्यक न था, फिर भी पार्टी मेम्बर होने के नाते आप उसके राजनीतिक जीवन से सम्बन्धित थे। यदि आपका 'ऐ-जिन' या प्रेमी अपने विचारों में काफी पिछड़ा हुआ होता तो पार्टी या युवकसंघ आप से अपने भावनात्मक बंधनों को तोड़ने के लिये कह सकता था लेकिन पार्टी या युवकसंघ अक्सर आप पर ही बोझा डाल देता कि आप उसका सुधार करें और उस पर प्रभाव डालें। यदि आप उसके विचारों में परिवर्तन ला सकते तो अपने प्रेम में आप आगे बढ़ सकते थे।

मैंने अपने जीवन में कभी भी किसी व्यक्ति का इतना अति प्रसन्न चेहरा नहीं देखा जैसा कि मैंने अपनी एक सहेली का देखा था जो एक लड़के से प्यार करती थी। उसने उस लड़की से एक साल पहले बी०ए० पास कर लिया था और दक्षिण की ओर एक छोटे कस्बे में उसे काम दे दिया गया था। वह पहले ही पार्टी मेम्बर थी अतः उसका प्रेमी अपने को उस सम्मान के योग्य सिद्ध करने की कोशिश कर रहा था। पार्टी के प्रति उसकी श्रद्धा होते हुये भी वह अक्सर अपनी निजी समस्याओं के बारे में चिन्तित रहती थी और कभी-कभी अपने कमरे में रोया भी करती थी। एक दिन जब वह मेरे साथ घूमकर छात्रा-वास में वापिस आई तो उसके पत्र को लिये हुये द्वार-पाल इन्तजार करता हुआ मिला।

"उसी का है ?" मैंने पूछा।

"हां", वह बोली। "मुझे डर है वह भयंकर रूप से निरुत्साहित हो रहा है। मुझे उसके पत्र पढ़ने में डर सा लगता है।" जब तक वह कमरे में नहीं चली गई, उसने उस पत्र को नहीं खोला।

पर जब उसने पहला वाक्य पढ़ा तो उसकी उदासीनता प्रसन्नता की चमक में बदल गई। ऐसी प्रसन्नता की चमक मैंने पहले कभी नहीं देखी थी। वह पढ़ती रही और फिर कमरे में नाचने लगी मानों वह बिजली की कठपुतली हो। "ओह !" वह बोली। "उन्होंने उसके आवेदनपत्र को स्वीकार कर लिया है। वह पार्टी का सदस्य होने जा रहा है।"

"यह तो बहुत अच्छी बात है"—मैंने उससे कहा। "आप दोनों के संबंध से मुझे प्रसन्नता है। अब आप आगे बढ़ सकते हैं और शादी के लिये अपनी योजनायें बना सकते हैं।"

"ओ वह..." वह बोली और फिर थोड़ी शान्त हो गई। "जब तक म ग्रेजुएट नहीं हो जाती, मुझे इन्तजार करना होगा, ऐसा मेरा अनुमान है। और हम दोनों को पार्टी से आज्ञा भी तो लेनी पड़ेगी।"

मुझे उसके बारे में प्रसन्नता थी। पर मैं उसके दृष्टिकोण को अभी तक नहीं समझ सकी थी। उसके मन में और शायद सभी कम्युनिस्ट लड़कियों के मन में यह विचार दृढ़ हो गया था कि वह केवल राजनीतिक कामरेड को ही ठीक तौर पर प्रेम कर सकती थी। परन्तु पार्टी के बाहर महत्वाकांक्षी लड़कियां जो निश्चित रूप से चाहती थीं कि उसे ऐसा पति मिले जिसका

भविष्य उज्ज्वल हो, वे भी अपने आप से कहने लगीं कि "मैं भी एक पार्टी कामरेड से ही शादी या युवक संघ के सदस्य से ही प्रेम करूंगी।" कालेज की महत्वाकांक्षी लड़कियों के सोचने में यह एक विचित्र परिवर्तन था। चीनी गणराज्य के प्रारम्भिक वर्षों में—शायद जापान के विरुद्ध लड़ाई होने तक अधिकांश बुद्धिजीवी युवतियां इसी विचार को पकड़े हुई थीं—"मैं केवल युद्ध से लौट कर आये हुये छात्र से शादी करूंगी।" यह विचार पूरी तरह से मध्यवित और झक्की, दम्भी और अभिमानपूर्ण था। "मैं केवल पार्टी मेम्बर से ही शादी कर सकती हूं" यह विचार सर्वहारा था। पर मुझे यह विचार भी वैसा ही झक्कीपन लगा जैसा पहला और शायद उतना ही असभ्य और अव्यवहारिक भी।

प्रेम और विवाह की समस्याओं पर केवल युवकसंघ और पार्टी में ही विचार नहीं होता था बल्कि कक्षाओं और यूनिवर्सिटी के विभागों में भी उन पर बहस होतीं थी। इन भाषणों का सारांश हमेशा एक ही होता था। प्रणय भावना को राजनीति के बुनियादी विश्वास और दायित्वों के अधिक महत्वपूर्ण विषयों के लिये समर्पण करना होगा। प्रेम की हमारी कल्पना "सर्वहारा" या जीवन और विश्व के मार्क्सवादी दर्शन के अनुकूल होनी चाहिए। आखिर, प्रेम और विवाह हमारे व्यक्तिगत जीवन से संबंध रखता है और बिना पार्टी के कोई व्यक्तिगत सुख पा नहीं सकता। यदि सर्वहारा के दल की पराजय हुई तो व्यक्तिगत आनन्द क्षणभंगुर होगा।

इसलिये नये चीन के सभी नागरिकों को और विशेषतौर पर नवयुवक बुद्धिजीवियों को, जिन्हें जनता के खर्चे पर उच्च शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य मिला है, अपनी निजी भावनाओं से काम को अधिक महत्व देना चाहिए। प्रणय भावना पिछड़ा हुआ और बुर्जुवा प्रेम है। संकीर्णता और भी बुरी है। यदि स्त्री और पुरुष के संबंधों में ढिलाई और दुराचरण है तो ऐसी वासना में रमना काम में लगने वाली शक्तियों और भावनाओं को दूसरी ओर मोड़ देगा, और इस तरह से पार्टी के कार्यकर्ताओं में भ्रम और प्रतिस्पर्धा को जन्म देगा। राजनीतिक गुरुओं की बात सुनने वाले छात्रों के अनैतिक प्रेम के लिये सिद्धांत सीधा सादा था : जो थोड़ा बहुत अवकाश मिले उसे प्रेम की खोज में लगाओ और जब समय आ जाय शादी कर लो। थोड़े शब्दों में आचरण का यह नियम इस प्रकार था : "यदि आपका मन पुनर्निमित और ठीक हो चुका है तो आपके प्रेम से जू-जी या आपके काम में हर्ज नहीं होना चाहिए।"

जो विद्यार्थी राजनीति और "जनता की सेवा" से अभी तक दूर थे वे अपने दायित्व के प्रति इतने सजग नहीं थे और उनके जीवन में प्रतिबन्ध भी थोड़े थे। इस तरह वे अधिक स्वतन्त्र थे। जिन लड़के और लड़कियों में वे रुचि रखते थे उनके साथ अपने निजी संबंधों के वे प्रायः "स्वामी" थे। "प्रायः" एक महत्वपूर्ण शब्द है। ये विद्यार्थी अब भी राजनीतिक रूप से कर्मठ सह-पाठियों की दृष्टि के नीचे रहते थे और अपने आचरण की नियमित रूप से होने वाली आलोचना से छुटकारा नहीं पा सकते थे। यदि कोई लड़का किसी एक ही लड़की के साथ घूमने में बहुत ज्यादा समय नष्ट करता या अधिक पैसा व्यय करता तो उस पर "भावुक" या उससे भी बुरा "बुर्जुवा के 'सबसे ऊंचा प्रेम' की कल्पना में विश्वास रखने वाले" का लेबिल लगा दिया जाता। उदाहरण के लिये वह अपनी प्रेयसी को प्रभावोत्पादक प्रेम कहानी दिखाने के लिये सिनेमा नहीं ले जा सकता था। थोड़े दिन के बाद जिन चलचित्रों को देखने के लिये वे टिकट खरीद सकते थे वे लड़ाई और क्रांति और बारूद से भरे हुए होते थे। नौका विहार भी अब इतना सुखद नहीं रहा था जितना पहले था। झील पर अभी भी उतनी ही नौकाएं थीं पर जो लोग उनको खेते थे वे सब भूरे रंग की यूनिफार्म पहने हुए होते और उनके आनन्द में भी कठोरता होती थी। इसके अलावा हर एक व्यक्ति के निजी खर्चे अधिकारियों की देख-रेख में हुआ करते थे और निजी खर्च पहले की अपेक्षा बहुत थोड़ा हुआ करता था। अन्त में यदि हमारे 'अच्छे-बुरे' चरित्र के ठेकेदारों ने यह निश्चय कर लिया कि कोई बहुत आगे बढ़ गया है तो वे उसके लिये अधिक काम ढूंढ़ निकालते थे जिससे वह अपना समय बेकार कामों में बरबाद न कर सके।

हांगकांग में मैंने जो सनसनी पूर्ण समाचार सुने उनके विपरीत पार्टी ने विवाह को भी प्रोत्साहित किया था। आखिर विवाह का उद्देश्य शान्त गृहस्थी था जो उस सिद्धान्त का न्यायसंगत और प्राकृतिक अंग था कि स्त्री और पुरुष के बीच भावनापूर्ण सम्बन्ध अन्य दूसरी महत्वपूर्ण बातों में बाधा न बने। निस्संदेह एक "छोटा परिवार" शुरू करना उस समय तक ठीक था जब तक कि पार्टी के "बड़े परिवार" में आपके हिस्सा लेने में बाधा उत्पन्न न करे।

नये आत्मसंयम के साथ ही विवाह में भी सरलता आ गयी। अधिकांश विद्यार्थी अपने राजनीतिक स्तर के अनुरूप तीन प्रकार के विवाहों में से किसी एक प्रकार से विवाह करते। पहला तो पुराने सिविल विवाह का सरल रूप था। (याद रहे कि अधिकांश छात्र किसी तरह के धार्मिक विश्वास का पालन

नहीं करते थे) फिर भी दुलहिन की शानदार ओढनी या परम्परागत विवाह की दावत को "बुर्जुवा शोभा" कह कर रद्द कर दिया गया। इसके स्थान पर दुलहिन अपने सबसे अच्छे वस्त्रों को पहनती, पहले से अधिक बनाव शृङ्गार करती और कभी-कभी अपने हाथ में फूलों का गुच्छा ले लिया करती। वर सहित, प्यानों से उठ रही संगीत की ध्वनि के साथ, वह हाल में प्रवेश करती। वर यूनीफार्म या पश्चिमी ढंग के व्यापारिक सूट पहने हुए होता था। माता-पिता और गवाह समारोह में विवाह के नियमों के पढ़े जाने को देखा करते। फिर बारात रेस्तरां में दावत के लिये चली जाती। उसके बाद रिक्शे द्वारा नव-विवाहित दम्पत्ति अपने कमरे में चले जाते। वधू को परम्परानुसार चिढ़ाने के लिये अब कोई मित्र नहीं आते थे। निस्संदेह यह एक सुधार था। पुराने समय में मेज पर बैठे हुए उद्दंड अतिथि शराब पीते हुए दुलहिन को चिढ़ाने में बहुत ज्यादा अशिष्ट हो जाया करते थे।

तथाकथित "सार्वलौकिक विवाह" उस दम्पत्ति के लिये था जो पार्टी का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते थे। यद्यपि वर और वधू उसी प्रकार के वस्त्र पहनते थे जैसे वे 'सिविल विवाह पद्धति' के अवसर पर पहनते पर "सार्वलौकिक विवाह" के पहले वे बाहरी दालान में एक साधारण प्रीतिभोज में भाग लेते थे जो अतिथियों द्वारा किया जाता था और वही उसका खर्च उठाते थे। विवाह भवन को रंग विरंगी झंडियों से सजा दिया जाता तथा अध्यापकों और साथी छात्रों द्वारा भेंट में दिये गये टी सैट, चित्र और यथोचित भावनाओं को अलंकारिक कविता में व्यक्त करने वाले पत्र वहां प्रदर्शित किये जाते। कमरे के बीचों बीच पांच कुर्सियां होती थीं जहां पर विवाह मण्डली—वर, वधू उनके माता पिताओं में से दो व्यक्ति और अधिकारिक गवाह—बैठती थी। बैंचों पर बैठे हुए अतिथि, जब दुल्हा दुलहिन आते तो उनका अभिवादन करने के लिये खड़े हो जाते। जब सब लोग फिर से बैठ जाते तो गवाह विवाह के प्रमाणपत्र को पढ़ता। तदोपरान्त अध्यापक और साथी छात्र दम्पत्ति की प्रशंसा में भाषण देने के लिये खड़े हो जाते। जब दूल्हा अपने मित्रों की शुभकामनाओं के लिये धन्यवाद दे देता, उसके बाद हर व्यक्ति "एकता ही शक्ति है", "पार्टी के उपकार अकथनीय हैं" जैसे प्रिय गान गाने के लिये खड़ा हो जाता। जब अध्यापक और सहपाठी चले जाते तो पुराने रिवाज़ के अनुसार वर वधू और उनके माता-पिता द्वार के पास खड़े होकर सबसे विदा लेते।

यदि वर कर्मठ सदस्य होता जिसके रहने, खाने, पहिनने और रोजाना

की जरूरतों के लिये मुफ्त व्यवस्था थी और उसका ेब खर्च बहुत थोड़ा होता तो सरकार "पार्टी द्वारा आयोजित विवाह" के लिये खर्चा देती थी। हाल साधारण रूप से सजाया जाता था जिसमें चेयरमैन माओ का एक चित्र होता और दोनों ओर चीनी गणराज्य का नया पांच सितारों का झण्डा और पार्टी का झण्डा होता था। भोजन उच्च कोटि का नहीं होता था पर अतिथियों के अल्पाहार के लिये मेज़ों पर मिठाइयां, मूंगफलियां और तरबूज के बीज होते थे। उत्सव शुरू होने का संकेत मिलते ही वर और वधू अपनी यूनिफार्म में जयजयकार और तालियों की गड़गड़ाहट के बीच हाल में आ जाते। पहले उपस्थित पार्टी के बड़े सदस्य "बड़े परिवार" में वधू के आगमन का छोटे से भाषण द्वारा स्वागत करते। निकट के एक या दो मित्र निजी शुभकामनाएं देते और अंत में वर वधू उनको समुचित उत्तर देते। यद्यपि इनमें दिखावा कम होता था परन्तु पार्टी द्वारा आयोजित समारोह सिविल समारोहों से अधिक प्रभावशाली होते थे।

भाषणों के बाद मुख्य मुख्य अतिथि दम्पत्ति को अभिनन्दन गीतों के पत्र भेंट करते थे जो विशेष रूप से इसी अवसर के लिये लिखे होते थे। यद्यपि कभी-कभी इन अभिनन्दन गीतों की भाषा प्रांजुल्य न होती पर अशिष्ट कभी नहीं होती थी। कभी-कभी यह बहुत ही रसिक और सामयिक होती थी। उदाहरण के लिये दम्पत्ति को उनके पूरे नामों से उद्बोधन करने के बजाय पत्रों में इस तरह के निपुण अभिनन्दन भी हो सकते थे जैसे "वांग-ली सहकारी उत्पादन समाज के उद्घाटन पर अभिनन्दन"। अन्त में जयजयकार और तालियों के बीच वर और वधू सीधे मण्डप की ओर चले जाते। मण्डप भी सरकार द्वारा बनाया हुआ होता था।

किसी भी संस्था का सदस्य विवाह बाद तीन दिन से लेकर एक सप्ताह तक विवाह भवन में रह सकता था। कमरे को खूब अच्छी तरह से सजाया जाता था जहां गांव के समान ही चौंधियां देने वाली लाल-लाल चीजों की भरमार होती थी क्योंकि लाल रंग को सुख और आनन्द का परम्परागत रंग माना जाता है। जब वधू भवन में प्रवेश करती, उसे मोटी रूई की रजाइयां जिनके खोलों पर लाल किमखाव का काम होता, गद्दे‌दार विस्तर पर तकिये जिसके लाल खोले पर कढ़ावट होती, लाल कपड़ों से ढकी हुई मेजें, बहुत सी कुर्सियां और लाल मेजपोश से ढकी हुई मेज़ कमरे में दिखाई पड़ती। जाड़ों में दहकती हुई आग सारे भवन को गर्म बनाये रहती। ये सारे आराम के

साधन मेरे विचार से पार्टी सदस्य और उसकी नई पत्नी को यह विश्वास दिलाने के लिये जुटाए जाते थे ताकि वे समझ सकें कि "क्रान्तिकारियों के बड़े परिवार" में भी उन्हें वही स्नेह और वही सावधानी मिल सकती थी जो कि उन्हें छोटे परिवार में मिलती ।

विवाह के ये तीन मुख्य ढंग थे । पर कुछ स्वतंत्र विचार के छात्र इससे भी साधारण उत्सव करते थे । दम्पति द्वारा आपको अल्पाहार के लिये आमंत्रित किया जाता और ठीक समय पर पहुंचने पर यह घोषित कर दिया जाता कि वे विवाह करने जा रहे थे । यह बिल्कुल विवाह जैसा नहीं लगता था । दो बड़ी जलती हुई मोमबत्तियां मेज पर विवाह प्रमाण-पत्र के दोनों ओर रखी होती थीं । इसके अतिरिक्त और कोई सजावट नहीं होती थीं । मेरे कुछ सहपाठियों ने तो इतने से उत्सव के विना भी विवाह किये थे । उनका विवाह का यह तरीका होता था कि वे ग्रीष्म भवन में कुनमिन लेक पर जाने के लिये अपने कुछ मित्रों को निमंत्रण दे देते और एक बड़ी नाव पर हंसते हुए मौखिक रूप से वर और वधू अपने विवाह की घोषणा कर देते थे । इसके बाद सब लोग नाव से उतर जाते और पिकनिक में लग जाते थे । वधू प्रतीकस्वरूप अपने सीने पर केवल एक फूल लगा लेती ।

नव-दम्पति शीघ्र ही अपने काम में लग जाते थे । हर एक के अपने काम होते थे । कुछ सप्ताह बाद नव-विवाहित दम्पति अपनी नई अवस्था के बारे में इस प्रकार उत्तर देते । "हम ठीक हैं, अवश्य ही हम बहुत व्यस्त रहे हैं." जो दम्पति सरकार या पार्टी के काम में लगी हुई होती उनके बारे में यह बात विशेषतौर पर ठीक थी । उनका काम कभी कभी उन्हें अलग कर देता पर यदि वे पीकिंग और 'त्यांग-सिन' जैसे पास पास शहरों में होते थे तो सप्ताह में एक बार मिल सकते थे । सुहागरात के बाद वे फिर पुराने कार्यक्रम पर लौट जाते जैसे दिन में आठ घंटे काम और फिर काम के बाद जू-जी की कक्षायें और दूसरी मीटिंग । पार्टी ने ठीक ही व्यवस्था की थी कि जब पति और पत्नी काफी गम्भीर कामों में लगें हों तो बुर्जुवा प्रणय-भावना के लिये स्थान कहां हो सकता था ।

(१५)
श्रेष्ठजनों की सूची

"क्या तुमने समाप्त कर लिया ?"

मैंने अध्यापक को पास आते नहीं देखा पर उसने जान लिया कि मैंने निबन्ध पूरा कर लिया था। उसने मुझे कलम रखते और अपने परीक्षा-पत्रों को इकट्ठा करते अवश्य ही देखा था। मैं संभल गई और चारों ओर देखा। मेरे अधिकांश सहपाठियों ने अपने अपने निबन्ध दे दिये थे और वे चले गये थे। अपनी आखिरी परीक्षा देकर बाहर निकलने पर वे प्रसन्न थे।

"हां, मैंने समाप्त कर लिया। पर मैं जरा इसे फिर देखना चाहती हूं कि उसमें किसी तरह का सुधार हो सकता है क्या।"

वह वापिस लौट गया और मुझे निबन्ध पढ़ने के लिये अकेला छोड़ दिया। सावधानी से लिखे गये साफ साफ जिन शब्दों को मैं लिख चुकी थी वे अब मेरे शब्द नहीं लगते थे। जितनी सावधानी से मैं पढ़ सकती थी उसे पढ़ने लगी। यह अन्तिम परीक्षा जो थी। पर मेरे लिये या और किसी को इससे क्या अन्तर हो जाता ? जिस परीक्षा का वास्तव मे कोई मूल्य था वह अन्तिम परीक्षा तो पहले ही हो चुकी थी यह मैं जानती थी।

वास्तविक अन्तिम परीक्षा के लिये तैयारियां परीक्षा होने के दो महीने पहिले ही शुरू हो चुकी थीं। उस समय वे लोग जिन्होंने अपने जीवनवृत्ति की कोई ठोस योजना पहिले ही नहीं बना रखी थी गम्भीरता से बात कर रहे थे कि जब उनका अध्ययन समाप्त हो जायेगा तो उन्हें क्या करना चाहिए। उसी समय सरकारी घोषणा हुई कि बुद्धिजीवियों के लिये बेरोजगारी अब पुराने जमाने की बात थी। इससे खुशी की लहर दौड़ गई। वक्तव्य में पुनरावलोकन करते हुए कहा गया था कि पुराने दिनों में कालेज के ग्रेजुएट अक्सर ऐसी दुनिया में प्रवेश करते थे जहां उनके लिये काम नहीं थे पर अब बात दूसरी थी। सभी ग्रेजुएट छात्रों के लिये उनके उपयुक्त काम दिलाने में सरकार मदद के लिये तैयार थी।

इस समाचार से जितनी प्रसन्नता होनी चाहिये थी उतनी नहीं हुई। ऐसे सीनियर छात्र जो आगे अध्ययन करना चाहते थे अथवा डाक्टरी या ैज्ञानिक प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहते थे बहुत चिन्तित थे, क्योंकि सरकारी ढांचा इतनी तेजी से बढ़ रहा था कि उसे प्रशासन में सहायता देने के लिये ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो पढ़ लिख सकते थे। हमें खुद ऐसा लगता था कि पत्र लिखने और सरकारी दफ्तरों में रिपोर्ट नकल करने में ही हमारा जीवन समाप्त हो जायगा। इसके अलावा सरकार भूमि सुधार दलों के साथ किसानों के बीच काम करने के लिये बुद्धजीवियों को भरती करने की कोशिश कर रही थी। और अफवाह ऐसी थी कि इस संबंध में आये हुये आवेदन-पत्रों की संख्या बहुत निराशाजनक थी।

सरकारी काम पर जबरन लगाए जाने का डर हमारे सामने था इसलिये कुछ सीनियर छात्र उस ब्यूरो या दफ्तर के सामने लाइन बना कर खड़े होने लगे जहां कि उनके विचार में काम करना उनके लिये अत्यन्त अनुकूल होगा। विशेष तौर पर जिन लोगों की सगाई हो चुकी थी वे बहुत घबड़ाए हुए थे। दोनों ही इस बारे में निश्चित होना चाहते थे कि वे शहर में ही रहें। पर इन दूरदर्शी छात्रों के भावी मालिक और भी दूरदर्शी निकले। यह जानते हुए भी कि उन्हें सहायता की बहुत आवश्यकता थी, वे सीनियर छात्रों को अपने यहां नहीं रखना चाहते थे। "अब बहुत कठिन है" एक अधिकारी ने उन्हें बतलाया। "ऐसा लगता है कि आप बहुत योग्य हैं। और हम आपको लेना भी चाहेंगे। हमारे पास आदमियों की भी कमी है। इस बारे में कोई प्रश्न नहीं है। तथ्य तो यह है कि मैं अपने से बड़े अधिकारी से भी कह सकता हूं पर वे तब तक कोई कार्यवाही नहीं कर सकते जब तक सरकारी काम कर लेने का काम सम्पन्न न हो जाय।"

यूनिवर्सिटी में पुनः कम्युनिस्ट छात्र बाकी लोगों को छोटे छोटे भाषण द्वारा स्वार्थपरतापूर्ण निजी आशाओं और योजनाओं को छोड़ कर अपनी बुद्धि "जनता की सेवा" के लिये अर्पित करने के महत्व को समझाने लगे।

"साथियो ! हमें जनता ने खिलाया-पिलाया है। जनता ने हमें पढ़ाने में —आपको, मुझको और पेता के हर एक छात्र को पढ़ाने में—अपना खून और पसीना लगाया है। अधिकांश अच्छे कामरेड इस बात को मानते हैं और उनके कृतज्ञ हैं। यह न्यायपूर्ण है और ठीक भी है कि हम, जो अब ग्रेजुएट हो कर

पेता से जायेंगे, अपनी प्रिय यूनिवर्सिटी से बाहर जाकर जनता की सेवा के लिये कार्य करें। साथियो, यह यशस्वी कार्य है!"

"हम सब लोगों को जो क्रान्ति में सबसे आगे रहने के आनन्द को जानते हैं अपने औजारों को लेकर जहां हमारी आवश्यकता हो, अपने कामरेडों के साथ जाने के लिये तैयार रहना चाहिये।' ऐसे कुछ सहपाठी हैं जिन्होंने पुराने दिनों के उन सपनों को अभी तक नहीं छोड़ा है जिनमें जनता द्वारा दी गई शिक्षा को ऐसे पदों की खोज में इस्तेमाल करते हैं, जहां उन्हें निजी ऐश्वर्य मिल सके और जहां वे मजदूर या साधारण किसान को अपनी शिक्षा और पद से प्रभावित कर सकें। ऐसे मित्रों से हमें यही कहना है कि उन योजनाओं को भूल जाएं। वे योजनाएं आज के लिये नहीं हैं। साथियो! वे हमारी नई जिन्दगी के लिये नहीं हैं। जो पीछे हट रहे हैं उनसे मैं कहता हूं, साथियो! हमारे साथ मिल जाओ। नये चीन का निर्माण करने के लिए हमारे साथ मिल जाओ। हम आपका स्वागत् करने और हाथ बंटाने के लिये तैयार खड़े हैं।"

बाद में उन्होंने "हाथ बंटाने" की व्याख्या की। हाथ बंटाने के अर्थ थे कि जो छात्र अपनी जीवन योजनाओं के बारे में "भ्रमित" थे उन्हें "सही" निश्चय कराने के लिये ऐसे नेताओं द्वारा "मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार" किया जाना था जो उन्हें १½ साल से जानते थे। हमें पहले पहल "मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार करने" की विदेशी संज्ञा को समझने में कठिनाई हुई पर अब हम पहले ही अनुमान लगा सकते थे कि इस क्रिया में "वाद-विवाद" का क्या महत्व था। गैर-कम्युनिस्टों के लिये "ग्रेजुएट होने के बाद नौकरी की समस्या के बारे में विचार करने" के अर्थ थे कि वे अपने गलत विचारों का परीक्षण करें, पार्टी और युवक संघ के नेताओं के सुझाव और आदेशों को शान्ति से सुने और जब तक उनको काम दिया जाय वे चुपचाप बैठे रहें। वादविवादों से हम कई महत्वपूर्ण बातें सीख सकें जैसे, संकेत कैसे समझाया जाय, चेहरे के भावों को कैसे समझा जाय और बढ़ते हुए गुस्से का सामना करते हुए कैसे शांत बैठा जाय। पर इस वादविवाद से सबसे अधिक महत्वपूर्ण सबक यही सीखा जिसे हम पहले भी सीख चुके थे कि "यदि आप शान्त रह सकते हैं तो शान्त रहें। नहीं रह सकते हैं तो बहुत थोड़ा बोलें। यदि आवश्यक हो तभी अधिक बोलें। ज्यादा सच बोलने की अपेक्षा कम सच बोलना अच्छा है या थोड़ा सच बोलने की अपेक्षा बिल्कुल सच न बोलना अच्छा है।"

लगभग एक महीने के बाद हमारे नेताओं ने यह समझ लिया कि हम नई नौकरी के फार्म भरने के लिये पूरी तरह से तैयार हो चुके थे। हर छात्र को उस फार्म की चार प्रतियां भरने को कहा गया। एक प्रति यूनिवर्सिटी के लिये और दो प्रतियां सरकार के लिये थीं। चौथी प्रति हमेशा विद्यार्थी का साथ देने के लिये थी : उस चौथी प्रति को अपने से बड़े अधिकारी का अभिमत लिखवाने के बाद बंद लिफाफे में उस संख्या में पहुंचाना होता था जिसमें उसे काम मिलता था। जब वह काम छोड़ कर किसी काम की तलाश करेगा तो यह फार्फ नये मालिक को उसके बारे में ऐसे तथ्यों को बतलाएगा जिसे वह कभी नहीं पढ़ सकता था।

कुछ छात्र फार्म की लम्बाई और जटिलता को देखकर दंग रह गए। निस्सन्देह उसमें पहले कुछ प्रश्न साफ साफ थे जैसे :—

नाम ?

आयु ?

स्त्री या पुरुष ?

जन्म स्थान ?

सामान्य स्वास्थ्य ?

अवश्य ही स्वास्थ्य महत्वपूर्ण था क्योंकि हमारे बड़े अधिकारियों को ऐसे सदस्य चुनने थे जो पूरे आठ या दस घंटे काम कर सकें और फिर इसके अलावा दो से चार घंटे जू-जी के लिये जा सकें। स्पष्ट था कि काम बहुत बाक़ी था अतः इससे आश्चर्य की कोई बात नहीं कि पार्टी सदस्य या सरकारी कर्मचारी को इतना काम करना पड़ता। यह ठीक है जब किसी कर्मठ सदस्य को तपेदिक हो जाती तो वह विशेष भत्ते की आशा करता था। और कोई दूसरी बीमारी हो जाने पर वह मासिक वेतन के अलावा ज्यादा से ज्यादा लगभग दो रूपे भत्ते की "स्वास्थ्य रक्षा शुल्क" के रूप में और आशा कर सकता था। इस परिस्थिति के बारे में आपको स्वयं फार्म पढ़ने से एक भारी संकेत मिल सकता था। फार्म में जहां "स्वास्थ्य" के विषय में जगह छोड़ी गई थी वह बहुत थोड़ी थी। यह साफ था कि आपसे उस स्थान पर "नार्मल" या "टी० बी०" ही लिखने की आशा की जाती थी। यदि दुर्भाग्य से आपको 'प्लूरिसी' हो तो उस शब्द के लिये पर्याप्त स्थान नहीं था।

शौक और विशेषताओं के लिए भी कोई स्थान न था। शायद यह एक संकेत था कि वे तो जनता की आवश्यकताओं के साथ एक हो जानी चाहिए। दूसरा प्रश्न विदेशी भाषाओं और विभिन्न चीनी बोलियों के आपके ज्ञान के बारे में था। ये बहुत महत्वपूर्ण थे। ऐसे किसी व्यक्ति को भी नज़रअन्दाज़ नहीं किया जाता था जिसे रूसी, अङ्गरेजी या हुनान भाषा आती थी।

इसके बाद प्रश्न अधिक व्यक्तिगत हो जाते थे। आप विवाहित या अविवाहित होने की घोषणा तो कर सकते थे, पर आप जैसे भी होते आपसे आपके ऐजिन, "प्रेमी" या "प्रेमिका", का नाम भी पूछा जाता था। यदि आप विवाहित हों तो यह व्यक्ति आपका पति या पत्नी होगी और यदि आप अविवाहित हों तो आपका प्रेमी या प्रेमिका। अपने प्रेमी की राजनीतिक धारणा, उसका व्यवसाय और पता लिखने के लिए भी फार्म में जगह थी। यह प्रश्न भी उतना ही जरूरी था जितना कि आपके माता पिता के सम्बन्ध का प्रश्न। कम्युनिस्ट जानते थे कि बहुत से युवक अपने सम्बन्धियों को छोड़ सकते थे पर अपने 'ऐजिन' को शायद ही कोई छोड़े। इसके अलावा जो किसी कम्युनिस्ट को प्रेम करता था उसको कम से कम विश्वास योग्य प्रगतिशील तो मान ही लिया जाता था।

आपके 'ऐजिन' के सम्बन्ध में पूछताछ करने के बाद आपके परिवार वालों के नाम, उनके व्यवसाय और उनकी राजनीतिक धारणाओं के बारे में प्रश्न थे। जो छात्र ग्रेजुएट होने जा रहे थे उनमें से किसी के भी माता पिता सर्वहारा वर्ग के नहीं थे। यदि सच कहा जाय तो बहुत से लोगों के माता-पिता पुराने ढङ्ग के और रूढ़ीवादी थे परन्तु कोई छात्र भी फार्म में इस बात को स्वीकार करना नहीं चाहता था। वे उन्हें प्रगतिशील भी नहीं कह सकते थे। क्योंकि उनका—विशेषतौर पर हमारी माताओं का—कोई स्पष्ट राजनीतिक मत नहीं था और जो कोई उनकी आर्थिक अवस्था में सुधार कर सके उसी का समर्थन करने को वे तैयार थे। उनके बारे में ठीक ठीक वृत्तान्त यही दे सकते थे : "राजनैतिक धारणाएं स्पष्ट नहीं हैं।" पर इससे तो यह शंका होती थी कि हमारे मातापिता गुप्तचर भी हो सकते थे। अपने भाई बहनों के राजनीतिक विचारों के बारे में बतलाना तो और भी कठिन था। यह कार्य निस्सन्देह सरल होता यदि वे सबके सब पार्टी मेम्बर होते—या तब शायद यह और भी कठिन हो जाता।

इस फार्म का दूसरा भाग "सामाजिक सम्बन्धों" के बारे में था। हमारे नेता व्यक्तिगत सम्बन्धों के बारे में विशेष ध्यान देने वाले निकले। यदि आपके सम्बन्धी ख्यातिप्राप्त या सम्मानित मित्र थे तो आपको उनके बारे में सब कुछ बतलाना अच्छा था। न जाने कौन आपकी सहायता के लिए आ जाय। यदि दुर्भाग्य से आपके सम्बन्धी या मित्र प्रतिक्रियावादी अधिक थे तो फिर उनका नाम न लिखना ही अच्छा था। बाद में यदि कोई पूछ बैठे तो केवल उनसे इतना कह देना ठीक था कि आपने राजनीतिक मतभेद के कारण सम्बन्ध तोड़ लिए थे। पूछने वाला इस पर विश्वास करे या न करे पर उस कालम में कुछ न भरना ही ठीक था।

नौकरी के फार्म की प्रश्नावली को भरकर समाप्त करने के बाद दूसरी ओर अपना व्यक्तिगत इतिहास लिखना पड़ता था। स्वतन्त्रता के पहले आप किस संगठन में थे ? आप किन मिडिल स्कूलों में पढ़े हैं ? विद्यार्थी संगठनों में आप कौन सी कार्यपालक पदवी पर रहे हैं ? जल्दी से ही हमने इनको भर डाला। हमें आश्चर्य केवल यही होता था कि उन्हें फिर से क्यों पूछा गया जब कि पहले उन्हें कितनी ही बार पूछा जा चुका था।

अन्त में व्यक्तिगत रुचि संबंधी प्रश्न था। आपको किन व्यवसायों में जाने में सर्वाधिक रुचि है ? देश के किस भाग में ? किस संस्था या संगठन में ? इस बारे में हममें से अधिकांश लोगों ने बड़ी सावधानी के साथ नपे तुले उत्तर दि थे।

नौकरी के फार्म में नीचे "कक्षा का निर्णय" लिखा जाना था जिसे भविष्य ही बता सकता था। किसी भी छात्र के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण निर्णय होता था। उसका निर्णय करने में कक्षा उसकी योग्यताओं और योजनाओं पर उसके साथ विचार करके उसकी सहायता करती थी। इसी प्रश्न के अंतर्गत "विभाग" के विचारों के लिए भी स्थान था। पर कोई भी मामूली छात्र यह जान सकता था कि विभाग निस्सन्देह उन जनवादी वाक्यों का ध्यान रखकर ही निर्णय करेगा, जिन्हें उसकी कक्षा ने उसके बारे में लिखा था।

और इस सब से नीचे भविष्य में हमारे नेताओं के इस्तेमाल करने के लिए प्रश्न था। जिसका शीर्षक था "अभिमत"।

हमने यथा संभव योग्यता से फार्मों को भर कर दे दिया। अब हम अपने सहपाठियों के सामने अपने प्रार्थनापत्रों पर फैसला सुनने के लिए

बुलावे की प्रतीक्षा में थे। वर्गनिर्णय जैसे सामूहिक कार्यक्रमों में सदा ही वामपक्ष या दक्षिणपक्ष की ओर कुछ न कुछ झुकाव हो जाना स्वाभाविक था। इस बार झुकाव वामपक्षीय था। कुछ कक्षाओं में नेताओं ने जो प्रश्न हमसे पूछे वे बहुत कठोर और पाशविक थे। कुछ छात्रों से तो इतनी बुरी तरह से जिरह की गई कि उनके कुछ मुंहफट सहपाठियों ने उनकी ओर से विरोध किया। हमारे नेताओं को एक बात सूझ गई। बिना सूचना दिये मीटिंग को स्थगित कर दिया गया और जिन लोगों के प्रति कठोर फैसले दे दिये गए थे उन्हें बदल दिया गया।

कक्षा की आलोचना मीटिंग जब फिर होने लगी तो ग्रेजुएट होने वाले छात्रों के प्रति अभिमत में लिखे गये जनवादी वाक्य साधारणतः वास्तव में जनवादी रहे। गरमागर्म बहस के बाद वामपक्षीय अतिवादी अक्सर चुप हो जाते और कक्षा का सामूहिक फैसला कुछ नरम ही होता जैसे "जू-जी में परिश्रम से काम करने वाला", "अपने पढ़ने लिखने के काम में भी बहुत अच्छी", "जनता से भी अच्छे सम्बन्ध"। और हम नरम क्यों न होते ? जब हमने अपने फैसले दिये तो हमें याद था कि हम पर भी ये सहपाठी, जिनके भविष्य पर अब हम विचार कर रहे थे, शीघ्र ही फैसला देंगे। गम्भीर दोषों को किंचित ही प्रकाश में लाया गया यद्यपि कुछ नरमी से टीका अवश्य हुई थी। "हमें आशा है आप जू-जी में तरक्की करेंगे।" "आपके मित्रों को आशा है कि आप जनता में और भी हिलमिल जायेंगी।" "आपके साथियों को आशा है कि आप और अधिक कम्युनिस्ट सिद्धान्तों को अपना लेंगी।" "आपके कामरेडों को उत्कट आशा है कि आप सब मेहनत करके कठोर परिश्रम से अपने जीवन के त्रस्त और स्वतन्त्र ढंग को छोड़ देंगी।"

फैसलों में आम नरमी रहने के बावजूद भी बहुत से छात्रों को विवश होकर नौकरी के लिये अपनी पहली रुचि को छोड़ कर कक्षा के नेता द्वारा उन पर थोपे गये नौकरी के चुनाव को मंजूर करना पड़ा। हम यह अनुभव करते थे कि नई सरकार को बहुत से छोटे छोटे दफ्तरों में कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करने के लिये, शिक्षित नवयुवकों की कितनी बुरी तरह आवश्यकता थी। जो छात्र प्राइवेट नौकरियों में शिक्षक भी बनना चाहते थे या जो आगे डाक्टरी भी पढ़ना चाहते थे, पार्टी ने उनकी आलोचना "स्वार्थी" और "व्यक्तिवादी" कह कर की जो जनता की चीज जनता के लिये लौटाने के इच्छुक नहीं थे। निस्सन्देह हठी प्रार्थी अपनी इच्छा की नौकरी के लिये अड़ सकते थे पर आखिर

विरोध करना भी महत्वपूर्ण था। इसलिये चारों ओर से विरोध होने के कारण हठी छात्रों को भी अक्सर अपने कामरेडों के सुझावों को स्वीकार करना पड़ता था। जो थोड़े से लोग अपनी बात पर अड़े रहे और अपनी इच्छा की नौकरी ही मांगते रहे, अन्त में विजयी हुए और अपने ऊपर अभिमान करने लगे।

हमारे नेताओं द्वारा प्रतिपादित ऐसी "जनवादी भावना" के प्रदर्शन के बाद हमने समझा कि विभिन्न कक्षाओं द्वारा दिये गये "जनवादी वाक्यों" का आदर किया जायेगा। जैसा कि मैं कह चुकी हूं, अधिकांश वाक्य बहुत कुछ सहानुभूतिपूर्ण थे। हमारे अन्दर जो जरा अधिक गंवार थे उन्हें काफी संतोष हुआ और काजियों के सामने अपना "मुकदमा" होने के बाद गहरी नींद सोयें।

पर मैं ? क्या मैं भी गहरी नींद सो सकी ? तब मैं कक्षा में बैठी प्रश्न पत्रों के अपने लिखे उत्तर देख रही थी और याद कर रही थी, कि किस तरह कक्षा में मेरे साथ बहस करने की कोशिश की गयी थी कि मैं पढ़ाने की और शायद लिखने की महत्वाकांक्षा को छोड़कर सरकारी नौकरी स्वीकार कर लूं। उन्होंने कहा "आपके मित्रों को आशा है कुमारी येन, कि आप अपने इस निर्णय पर पुनः विचार करेंगी। हम समझते हैं कि, इस बारे में इस तरह सोचना यह प्रकट करता है कि आप जनता का ध्यान रखने की अपेक्षा अपनी महत्वाकांक्षाओं का अधिक ध्यान रखती हैं। यही समय है कि ऐसे व्यक्तिवादी स्वप्नों को त्याग कर आप अपने साथियों के साथ अपना उचित स्थान ले लें। जिस प्रकार जनता को हम सब की जरूरत है उसी प्रकार आपकी भी है।"

कक्षा के शान्त कमरे में बैठे हुए मुझे आश्चर्य हो रहा था कि सरकार को, सैनिक नियंत्रण आयोग को, या जनता को, मेरी किसको आवश्यकता है ? क्या यही सर्वहारा क्रांति है जिसके हम से वायदे किये गये थे ? क्या यही स्वतंत्रता और शान्ति का मार्ग है जिसके बारे में हम से स्वतंत्रता से पहले कहा गया था ? विश्वास करने के हमने कितने अथक प्रयत्न किये थे। यदि प्रयत्न करती रहती, यदि मैं अपने नेताओं के प्रोत्साहन और उपदेशों को सुनती रहती तो क्या मैं विश्वास कर सकती थी ? अपने मन में उत्तर जानती थी पर क्या मेरे अन्दर उसके अनुरूप कार्य करने का साहस था ?

क्योंकि उत्तर था—मैं विश्वास नहीं कर सकती। यथार्थ ने मेरे विश्वास को नष्ट कर दिया था या कहना चाहिये कि मेरे अन्दर विश्वास कभी था ही

नहीं; केवल आशा थी कि आश्वासन सही निकलेंगे। शायद यह उस व्यक्ति की तरह था जिसे स्वर्ग का आश्वासन दिया गया था पर उसे वह नहीं मिला हो—कम से कम इस दुनिया में तो नहीं। मुझे अब पता चला कि यथार्थ इतना उज्ज्वल नहीं होगा जितनी कि आशायें हैं। यह स्वीकार करने के लिये मैं और मेरे सहपाठियों की आयु ठीक नहीं थी। यदि हम ज्यादा उम्र के होते, हमारे अपने परिवार होते और बनाये रखने के लिये अपना समाज में कोई स्थान होता तब शायद हमारा स्वार्थ हमें विश्वास करने में सहायता दे सकता था। यदि हम कम उम्र के होते, पेता के बजाय मिडिल स्कूलों के छात्र होते और जिन कुछ पुस्तकों और विचारों को पेता में हमने पढ़ा था उसके खिलाफ बगावत न की होती तब भी हम विश्वास कर सकते थे। चूंकि अब हमारे छोटे भाई बहिन भी उसके अलावा कुछ नहीं जानेंगे जो कि हमारे नेता उन्हें बतलाना चाहेंगे, अतः वे यह भी विश्वास कर लेंगे कि वास्तव में आश्वासन सत्य हो गये थे और शायद ऐसा विश्वास करने पर वे अधिक प्रसन्न भी होंगें।

पर हमारी यह आशा, कि कम्युनिस्ट हमें स्वतंत्रता, सम्पन्नता और शान्ति लायेंगे, उन बातों को लायेंगे जिनका उन्होंने आश्वासन दिया था, उन विचारों के आधार पर बनी थी जिन्हें हमने कम्युनिस्टों से प्राप्त नहीं किया था और अब ज्ञात हुआ कि हमारे नेताओं की इन बातों की अपनी मौलिक व्याख्या थी। नये नेताओं के लिये हम लाभदायक सिद्ध हो सकते थे, पर यदि हम जनता के साथ एक नहीं हो जाते, जैसा कि नेता हमें करना चाहते थे, तो हम खतरनाक भी सिद्ध हो सकते थे।

शायद यह आत्मग्लानि थी। पर मुझे विश्वास हो गया था कि मेरी पीढ़ी के कुछ लोग उस सुरक्षा या शान्ति को कभी नहीं प्राप्त कर सकेंगे जिसे हमने एक साल पहले बिलकुल सुलभ समझा था। हम प्रशिक्षित हो सकते थे। हां, हमें पहले ही उसमें ठीक बैठाने के लिये प्रशिक्षित किया जा चुका था। और स्वतंत्रता से पहले दुर्भाग्य से हमने जो कुछ समझा था, हम उससे समझौता कर सकते थे। समझौता तो हमने पहले ही कर लिया था। हर बार जब हम निबन्ध लिखते, मीटिंग में जाते, जिन बातों को हमें सिखाया गया था उन्हें तोते की तरह सुनाते, अपने अपराधों को स्वीकार करते या अपने मित्रों के विचारों पर आक्रमण करते, यह सब हम समझौता ही तो कर रहे थे।

क्या मैंने पहले ही बहुत ज्यादा समझौता कर लिया था ? शायद अब मान जाने और आत्म सम्मान पर आंच आये बिना जो भी जगह मिलती उसे स्वीकार करने के अतिरिक्त और कुछ संभव न था। ऐसी जगह जहां पराङ्मुखता इतनी कठिन नहीं होगी कि सहना ही दूभर हो जाये। कभी मैं सोचती कि अब वक्त नहीं रहा। पर यही तो वे चाहते थे। क्या उन्होंने मुझे और मेरे सहपाठियों को इतनी अच्छी तरह से समझ लिया था ?

मान लो वे गलत थे तो भी उन्हें अपने पर इतना भरोसा था, इतना विश्वास था कि उनमें से कुछ हमसे भिड़ने को भी तैयार थे। मान लो मेरे अन्दर अभी तक इतनी हठ थी कि मैं उनके साथ मिलती तो भी इससे अधिक अन्तर पड़ने वाला नहीं था। इससे उन्हें कोई विशेष हानि भी नहीं हो सकती थी। पर मुझे या कम से कम मेरे कुछ मित्रों को इससे यह निश्चय हो जाता कि उनका अपने आप में और अपनी विजय में विश्वास शतप्रतिशत नहीं था। पर मेरे लिये इसका महत्व इससे अधिक था : मैं इतनी स्वार्थी थी कि किसी ऐसी जगह पर रहना चाहती थी जहां सत्य के विरुद्ध षडयंत्र इतनी अच्छी तरह से संगठित न हो जितना कि वे यहां पर करने में सफल हुए हैं। मेरा आत्म-सम्मान चाहे दूसरे के लिये अधिक महत्व का न हो पर मेरे लिये तो था ही। मान लो मुझ में भागने का वास्तव में साहस भी हो। तब तो मैं स्वीकार करती हूं मुझे भागना ही होगा। पर क्या मुझे मौका मिलेगा ? वह तो और भी कठिन होता जा रहा था। पर अब मेरी अन्तरात्मा ने यही कहा कि मुझे धैर्य से अवसर की प्रतीक्षा करनी चाहिये। जब तक मैं कोशिश नहीं करती तब तक मैं नहीं जान पाऊंगी कि मुझमें छोड़ भागने का साहस भी है या नहीं। पर मैं जानती थी कि जब तक मैं प्रयत्न न करलूं, जिस जीवन को लेकर मैं चला रही थी उसके साथ समझौता होना कठिन था।

मेरे लेख का अन्तिम पृष्ट मेरे सामने था। मैं निबन्ध में जितना कुछ अपने आप को उंडेल सकती मैंने किया और चेयरमैन माओ त्से-तुंग के नेतृत्व में पार्टी के कुशल नेतृत्व के प्रति अपेक्षित श्रद्धांलि अर्पित करके किसी तरह मैंने उसे समाप्त कर दिया। मैं अन्तिम पृष्ट को फिर नहीं पढ़ना चाहती थी। मैंने उसे दूसरे पृष्टों के साथ छोड़ दिया और खड़ी हो गई।

"मेरे विचार से यह समाप्त हो गया", मैंने पर्यवेक्षक से कहा। उसने परीक्षा पत्रों को ले लिया और मैं उसकी ओर देखकर मुस्करा दी। वह एक अच्छा शिक्षक रहा था यह मैंने मन ही मन में सोचा।

कुछ खोई सी मैं कक्षा से बाहर निकल आई। मैंने अपने स्कूल की सभी चीजें शान्ति से समेट लीं और फाटक पर एक रिक्शे वाले को बुला कर घर चली आई।

अगले सप्ताह कई मित्र मेरे पास आये और स्कूल प्रारम्भ होने के उत्सव में हिस्सा लेने के लिये चलने को कहा। उसमें जाने का मैंने बहाना ढूंढ़ लिया। बात यह थी कि मैं सचमुच ही अपने को स्वस्थ अनुभव नहीं कर रही थी। अतः मेरे चेहरे को देख कर हर कोई विश्वास कर लेता था कि मैं ठीक कह रही थी। इसके बाद दूसरे सहपाठी आये और प्रशिक्षित नौकरियों के लिये जाने से पहले गर्मी के दिनों श्रम और अध्ययन के कार्यक्रमों में हिस्सा लेने के लिये मुझे आमन्त्रित किया। मैंने उससे भी कह दिया कि पिछले साल अधिक काम करने से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं। मेरे मित्र चांग ने भांप लिया कि मैं किसी विषय में चिन्तित हूं और पूरी ईमानदारी से उसने मुझे मिलने को बुलाया।

"आप उखड़ी उखड़ी सी लगती हैं कामरेड। कहीं आप को यह भय तो नहीं कि जो काम आपको मिलेगा वह आप न कर सकेंगी?" उसने चाय उंडेलते हुये कहा।

"नहीं, यह बात नहीं। उसकी तो मैं पहले से ही आशा करती हूं।"

"ठीक—मुझे आशा है आप यह कहने तो नहीं जा रहीं कि सरकार हमें हमारे अनुकूल काम नहीं देगी। आपको इतना अविश्वास नहीं करना चाहिये।" उसने गम्भीरता से किन्तु मृदु स्वर में कहा। "सप्ताह दो सप्ताह में ही हमारी नौकरियों की घोषणा होने जा रही है। मुझे विश्वास है जो काम आपको मिलेगा उससे आप सन्तुष्ट हो जायेंगी। और आप उसे छोड़ना भी नहीं चाहेंगी।"

"हूं" मैंने लापरवाही से जवाब दिया, "छः महीने पहले जब आपके मित्र वांग ने यह कोशिश की थी कि मैं युवक संघ की सदस्यता के लिये प्रार्थना पत्र भर दूं तो मालूम है उसने मुझसे क्या कहा था? उसने कहा था: 'आप ग्रेजुएट होने जा रही हैं न? और ग्रेजुएट होने के बाद क्या आप हमारे लिये काम नहीं करना चाहेंगी? यह निश्चित है, कि आप पुराने ढंग की बुर्जुवा औरत की तरह किसी के आने और शादी करने की प्रतीक्षा में घर पर न बैठ कर काम करना चाहेंगी। अगर आप मुझसे खुलासा कहलवाना चाहती हैं तो यदि आप संगठन में सम्मिलित न हुईं तो सरकार आपको ठीक तरह का काम कैसे दे

सकती है ? यदि आप इस तरह बाहर रहीं तो सरकार आप पर कैसे भरोसा कर सकती है ? आप जानती हैं मैंने उसी क्षण निश्चय कर लिया था ?"

यद्यपि जिस लड़के से मैं बातें कर रही थी वह "प्रगतिशील व्यक्ति" था पर मैं जानती भी थी कि वह पार्टी और युवक संघ के दूसरे सदस्यों की अपेक्षा कम आज्ञाकारी था और अभी तक भी अपने बारे में सोचने का अपराधी था। मुझे उसके साथ इतनी संभल कर बातें करने की आवश्यकता नहीं थी पर अभी अभी मैंने अपने निश्चय करने के सम्बन्ध में उससे कुछ कहा था। सूक्ष्म में मैंने जो कहा था शायद उससे बात कुछ विशेष स्पष्ट नहीं होती थी।

"किस बारे में निश्चय करना ?" मेरे बोलने की बाट जोहने के बाद उसने मुझसे पूछा।

मुझे उससे कहने का साहस नहीं हुआ कि मैंने विरोध करने का निश्चय किया था और झूठमूठ ही कहा : "ओह, अभी मैंने सरकार पर भरोसा न करने का निश्चय किया है। हो सकता है कि जनता की सेवा करने के लिए मुझे स्वयं कोई काम तलाश करना अच्छा लगे।"

"आप में अभी काफी अभिमान है—" उसने हंसते हुए कहा और मैं भी हंस पड़ी। अब वह गम्भीर होकर बोला, "नहीं, आप पहले भी अपने बारे में निश्चित नहीं लगती थीं। यह अच्छा होगा कि आप अपने विचारों को सावधानी से फिर देखें। यदि आप ऐसा नहीं करतीं तो लोग यही कहेंगे कि आप बुर्जुवा के अहम से पराभूत हो रही हैं। आपको ज्ञात ही है कि वे कहें, कि आप व्यक्तिगत पराक्रम के विचार से चिपकी हुई हैं, कि आप केन्द्र से काम देने की सरकारी नीति पर नहीं चलना चाहतीं और आप सरकार की सभी आवश्यकताओं की चिन्ता नहीं करतीं। पर मैं ऐसा नहीं कहना चाहता। मैं समझता हूं कि आप बुनियादी तौर पर—" वह परेशान होकर रुका. फिर बोला, "कुछ भी हो, मुझे विश्वास है कि आप जनता की सेवा करना चाहती हैं। अगर मुझे यह विश्वास न होता तो मैं यहां आप से बातें करने ही न आता। पर आपका सरकार पर विश्वास नहीं है। और यदि आप मेरी सच्ची राय चाहती हैं तो मैं कहूंगा कि आप बहुत हठी हैं।"

अगर वह बहस करना चाहता तो मैं भी उसके लिये तैयार थी। पर उसकी प्रेयसी हो लि-लिंग के आ जाने से हमारी बातें रुक गईं। वह हमें आपस में बहस करते देखकर ग्रीष्म भवन की यात्रा के बारे में बातें करने लगी। फिर इधर

इधर की ही बातें होती रहीं। सूर्यास्त के समय मैंने विदा मांगी। वें मुझे घर के दरवाजे तक छोड़ने आये और विदा होते समय उसने कहा, "भरोसा करो पार्टी हमें धोखा नहीं देगी। अभी तक यह आपको जान लेना चाहिये था कि पार्टी युवकों की शुभेच्छु है। आपके लिये सब से अच्छी बात यही होगी कि पुनः अपना विश्वास जमा लें और जानकार व्यक्तियों द्वारा काम दिये जाने की नीति का पालन करें।"

जहां तक मुझे याद है छात्रों की पहले गुट ने अपने विषय में निर्णय १२ जुलाई को सुना। कला और विज्ञान कालेज की पार्टी और युवक संघ के एक छोटे से गुट के नामों की सूची लगा दी गई थी। उनके लिये यह अच्छा समाचार था। उन्हें 'संस्कृति और शिक्षा समिति' में काम दिया गया था पर वह अभी निर्धारित नहीं किया गया था। फिर यह घोषणा हुई कि पुनः विशेष शिक्षण के लिये उन्हें पूर्वी योरूप के जनवादी देशों को भेजा जायेगा।

चूंकि पहले गुट को प्रथम कोटि के काम दिये गए थे अतः हमने समझा कि शायद दूसरे गुट को द्वितीय कोटि के काम मिलेंगे। कुछ चिन्तित छात्रों की फुसफुसाहट पार्टी के कानों तक पहुंच गई। इन छात्रों का सरकार में उतना विश्वास नहीं था जितना कि समझा जाता था। चूंकि पार्टी यह समझ गई कि वह घोषणाओं को व्यर्थ ही उत्तेजनात्मक रूप से कर रही है अतः उसने अपनी पहली योजना को बदल दिया जिसके अनुसार वह गुटों में कामों की घोषणा किया करती थी। अब हमें बतलाया गया कि वह हर व्यक्ति के काम की घोषणा एक साथ करेगी।

२९ जुलाई की सुबह हम सब को उत्तरी भवन के असेम्बली हाल में इकट्ठा किया गया। हमने एक सरकारी प्रतिनिधि को हमें मिलने वाली जगहों की सूची पढते हुये सुना। यह सुनने के लिये कि हमारे नेताओं ने क्या निश्चय किया था हम उत्तेजित और तने हुये आगे को झुक गये।

"चैन त्यांग-को—वित्त और अर्थ समिति।"

"चैत्र मा-क्वई—राज्य प्रशासन परिषद्।"

"चैन यिंग-ती—राजनीति और कानून समिति।"

"फैंग ता-वी—परराष्ट्र-मंत्रालय।"

"फैंग यांग-जी—पिंग-य्वान की प्रान्तीय सरकार।"

मेरा नाम सूची के अन्त में होना चाहिये। प्रतीक्षा करते करते मैंने अपने चारों ओर देखा। मेरे सहपाठियों में, जिन्हें सबसे अधिक कष्ट हुआ, ऐसे लोग थे जो गहरी नींद में सोये हुए थे। वास्तव में वे अभी भी जगे नहीं थे। पर जिन सहपाठियों ने अपने नेताओं के सुझाव के अनुसार अपने चुनाव को बदल दिया उन्हें किसी तरह का आश्चर्य या निराशा नहीं हुई।

मैंने देखा कि अधिकांश लोगों को पीकिंग और तिनशिन में केन्द्रीय जन-सरकार के विभिन्न कार्यालयों में काम दिये गये थे। कम भाग्यशाली कामरेडों को भीतरी मंगोलिया में, पिंगस्वान प्रान्त में और ऐसे ही स्थानों पर विभिन्न संस्थाओं में काम दिया गया जिनके नाम घोषित नहीं किये गये थे। सूची पढ़ने वाले आदमी ने अब मेरा नाम लिया।

"मेरिया यैन—राजनीतिक और कानून समिति।"

क्या मैं कभी यह सोच भी सकती थी—जैसे कुछ समय के लिये प्राणदण्ड से छुटकारा मिल गया हो। मैं कुछ दुखी सी भावशून्य बैठी थी। परन्तु साथ ही म खुश थी कि इस काम को स्वीकार करने के पहले ही मैं विरोध करने का निश्चय कर चुकी थी। पुलिस और जन न्यायालय ने मुझ पर विश्वास किया जबकि मैं ऐसा नहीं सोचती थी। पर उन्हें ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो कम से कम विदेशी भाषाओं का पढ़ने योग्य ज्ञान रखते हों और मैं उस कोटि में ठीक बैठती थी।

जब वक्ता हमारी नियुक्तियां बता चुका तो एक ही संगठन में काम पाने वालों को वहीं पर एकत्रित होकर अपने संगठन से संबंध बनाये रखने के लिये प्रतिनिधि चुनने की आज्ञा हुई ताकि वे कार्यालय में काम पर जाने की ठीक तारीख और अपने अपने कार्यालय ठीक तरह से समझ जायें। कुछ विशेषा-धिकार प्राप्त पार्टी मेम्बरों के अलावा अन्य छात्र केवल जिसमें काम करने जा रहे थे उस मंत्रालय का नाम और अपने साथ काम करने वालों को जानते थे।

अब पछताने का समय निकल चुका था। जिसे नौकरी करनी थी उसे काम पर जाने के अलावा कोई दूसरा रास्ता न था। जिन छात्रों को अपनी समझ में योग्यतानुसार काम नहीं मिला उनके मन में स्वाभाविक प्रश्न थे: "मैं संगठन में क्यों नहीं सम्मिलित हो गया?" "मैंने ठीक तरह की मनोवैज्ञानिक तैयारियां क्यों नहीं कीं?" मैंने अपने अभिमान को त्याग कर आलोचना सभाओं में मिलने वाले सुझावों को क्यों न मान लिया?" वास्तव में ऐसा

क्यों ? बैठे बैठे ही मैंने देखा कि इस वितरण में कम्युनिस्टों को उनका मन-माना काम मिला था, चाहे वे स्कूल में कैसे भी थे। इसके बाद युवक संघ के सदस्यों की बारी आती थी। जिन छात्रों के राजनीतिक विचार गलत थे अथवा जो राजनीति के प्रति उपेक्षा रखते थे उनमें से अधिकांश को ऐसे "विषम" काम दिये गये जिनमें उनके गुण या रुचि से कोई सम्बन्ध नहीं था। चूंकि इन विद्यार्थियों में हमारे कुछ श्रेष्ठतम विद्वान और कुशलतम कार्यकर्ता थे अतः मुझे लगा कि हमारे नेताओं ने इन "बुद्धू किताबी कीड़ों" को मूर्ख गधों की तरह सख्त मेहनत का काम देकर उनको दण्ड देने का निश्चय किया था। शायद कम्युनिस्ट सोच रहे थे : "इन हठी छात्रों को सबक मिलना चाहिए और देखना चाहिए कि वे हमारे संगठन की ओर अब भी आते हैं या नहीं।"

छात्रों को काम मिलने वाली लिस्ट की घोषणा होने के तीसरे दिन चांग फिर मुझसे मिलने आया। निश्चित था कि वह मुझसे मिले हुए काम को स्वीकार करने का आग्रह करने आया था। पर उससे बात शुरू करने के पहले ही मैंने उससे सीधा कह दिया कि मैंने स्वयं ही दूसरा काम खोज लिया है और चूंकि वह काम पीकिंग में नहीं है इसलिए मुझे पीकिंग छोड़ना पड़ेगा।

"मैं नहीं समझता था कि आपने वास्तव में निश्चय कर लिया है।" उसके स्वर में निराशा थी, "सरकार ने आपको जो नौकरी दी है उसे स्वीकार करना आप पर निर्भर करता है। पर जो नौकरी आपने अपने बल पर ली है, राज्य प्रशासन परिषद् से उसकी स्वीकृति लिए बिना उसे स्वीकार करना क्या बुद्धिमत्ता होगी ?"

"वह सब मैं जानती हूँ।" मेरी आखें नीचे की ओर झुकी थीं क्योंकि मैं उसके चेहरे की ओर नहीं देखना चाहती थी। "परन्तु, वास्तव में मेरे सामने दो नौकरिया हैं और दोनों ही दक्षिण में रहने वाले मेरे एक मित्र के जरिए मिली हैं। उनमें से एक किसी निजी स्कूल में शिक्षक की जगह है। मेरा विश्वास है कि निजी संस्था में काम करने के लिए सरकारी स्वीकृति नहीं लेनी पड़ेगी। आखिर स्कूल मुझे काम पर रखने के लिए तैयार है।"

इस डर से कि कहीं वह इस झूठमूठ के स्कूल के बारे में कोई प्रश्न न पूछ बैठे, मैंने शीघ्र ही विषयांतर कर दिया। "और आपके बारे में क्या है ? क्या आपका अपनी नौकरी पर हाजिर होने का समय आ गया ? क्या आप जानते हैं कि आपको कब हाजिर होना है ?"

"ठीक तारीख तो नहीं मालूम, पर आशा है जल्दी ही चला जाऊंगा। मेरिया, मुझे आशा है कि तुम अन्तिम निर्णय ठीक करोगी और पार्टी पर विश्वास करोगी। सरकार पर भरोसा रखो कि वह नौजवानों को धोखा नहीं देगी। विश्वास करो कि जो काम हमें मिले हैं वे हमारी निजी रुचि के अनुकूल होंगे और जनता की आवश्यकताओं को पूरा करेंगे...।"

वह बोलता रहा पर मैं आगे नहीं सुनना चाहती थी।

आखिर वह रुष्ट और कुछ निराश होकर चला गया। मैंने अपना कथन दोहरा दिया था। "मैंने निश्चय कर लिया है। क्या आपके विचार में मैं बार बार अपने निश्चय को बदलती रहूं?"

मैंने भी निश्चय कर लिया था। मैं पूरी तरह नहीं जानती थी कि मैं क्या करने जा रही थी। पर इतना निश्चित था कि मैं पार्टी, या सरकार के लिए, जनसुरक्षा पुलिस या जनन्यायालयों के लिए किसी दूसरे मन्त्रालय या ब्यूरो में छोटी या बड़ी नौकरी के लिए लालायित नहीं थी। मैं लगभग तीन सप्ताह तक घर पर ही रहकर इसका निश्चय करती रही कि आगे क्या किया जाय। अब तक मेरे माता-पिता मेरे बारे में चिन्तित हो उठे थे और मुझे घर से बाहर जाने का आग्रह कर रहे थे। चांग के बारे में मेरे मन में विचार उठा। यद्यपि हमारी विदाई बड़ी ठण्डी हुई थी पर वह अभी तक मेरा मित्र था। मैंने यह सब होते हुए भी उसके यहां जल्दी से उसकी मां से यह पूछने के लिए जाने का निश्चय किया कि वह अपने नए काम को कैसे कर रहा था।

पर जब नौकर ने दरवाजा खोला तो उसकी मां के स्थान पर उसकी प्रेयसी हो ली-लिंग ने मेरा अभिवादन किया। वह थकी हुई और परेशान दिखाई दे रही थी। वह चांग के बारे में बहुत ज्यादा सोच रही थी इसलिए मैंने उसके कंधों को थपथपाया। "चेहरा क्यों इतना उतरा दिखाई दे रहा है? उसकी चिन्ता छोड़ो। वह हर सप्ताह तुम्हें मिलने के लिए घर आ सकता है। वह अभी पीकिंग में ही है न?"

"वह यहीं है।" कुछ वक्रता से वह मुस्कराई। "बैठो, मैं उसे बुलाती हूं।"

चांग आया। बहुत दिनों की बढ़ी हुई डाढ़ी और बिखरे हुए बाल। जब मुझे खड़ा हुआ देखा तो उसने मुस्कराने की कोशिश की, पर वह कृत्रिम मुस्कान थी।

थोड़ी देर चुप रहने के बाद उसने पूछा, "अच्छा मेरिया, पीकिंग छोड़ने की कब तैयारिया हैं ?"

मैं अपने झूठमूठ के काम के बारे में अधिक विस्तार से कहने के लिए बातें गढ़ने की चित्तवृत्ति में नहीं थी। मैं तो यह जानने के लिए आतुर थी कि उसे क्या हुआ था। मैंने अपने कंधे हिलाकर उसके प्रश्न को टाल दिया और पूछा, "तुम तो अवश्य ही व्यस्त रहे हो। हो न ? पर तुम इस तरह की हालत में यहां कैसे आये ?"

उसकी प्रेयसी उससे अधिक तेज थी। उसका उत्तर देते हुए बोली—"ठीक है अब घर लौट आए हैं। मैं नहीं चाहती कि अब ये वापिस काम पर जायं।"

"क्या हो गया ?"

चांग अभीतक चुप था मानों वह अपने आपसे तर्क-वितर्क कर रहा हो। अन्त में वह आत्म-विडम्बना के स्वर में बोला, "आप जानती हैं मैं कुछ सप्ताह पहले कैसे उपहास का पात्र बन गया था जब मैंने तुमसे हरएक पर विश्वास करने के लिए कहा था। मुझे इतना चतुर होना चाहिये था कि मैं अपनी सलाह न देता। जब हम अपने कामों पर जा रहे थे तो सचमुच हम भेड़ों के झुण्ड जैसे लग रहे होंगे। पर—जिस तरह से मैंने सीखा है उस तरह सीखना भी अच्छा ही हुआ।"

मैंने ली-लिंग की ओर देखा। वह स्पष्ट रूप से दुविधा में पड़ी थी। उसने उस कहानी को पहले ही सुन रखा था और अब दुबारा नहीं सुनना चाहती थी। वह तो उसके साथ रहना चाहती थी।

"लगभग दो सप्ताह पहले मुझे आखिर में काम में उपस्थित होने का आदेश मिला", वह कहता रहा, 'जिस दिन हम काम पर जाने वाले थे उससे एक दिन पहले एक कर्मठ सदस्य ने हमसे सामान को इकट्ठा करने और दूसरे दिन यूनिवर्सिटी में आने के लिये कहा। हमें वहां से ट्रक मिलने की आशा थी जो हमें किसी मार्ग पर बने हुए एक भवन में ले जाने वाला था जहां हमें काम करना था। चूंकि हम अन्त में काम पर जाने के बारे में उत्सुक थे अतः लौट आये और अपना सामान बांध कर ठीक समय पर पेता में हाजिर हो गये। हमें बिदा करने वाले लोग वहीं हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब उन्होंने जय-जयकार किया और नारे लगाये तो हमने अपने को सच्चा "नायक" समझा।

उसने अपनी डाढ़ी को मला और बोला, "जब हमारे सामान को ट्रक में भर दिया गया और हम उस पर चढ़ गये तो कौन अनुमान लगा सकता था कि कर्मठ सदस्य हमसे कहेंगे कि आदेश बदल गये थे और हम बड़े भवन की ओर नहीं जा रहे थे। इसके बजाय हमें शहर के बाहर एक जगह ले जाया गया।"

"क्या आप सब राजी थे ?" यदि वे राजी हो गये थे तो मुझे क्रोध आ गया होता।

"नगाड़े के बजने और विदाई देने वाले लोगों की जय-जयकार के बाद क्या आप सोच सकती हैं कि कोई ट्रक से कूद पड़ता ?"

"फिर क्या हुआ ? आप लोग कहां गये ?"

"किसे मालूम कौन जगह थी ?" लगता था चांग को गुस्सा आ रहा था। "सिर्फ इतना जानते थे कि हम पेड़ों के झुंडों, खेतों पर बने मकानों, खेतों और कब्रिस्तानों से गुजरे थे—हम उस जगह को नहीं जानते। अन्त में हम एक लम्बे मकान के सामने आकर रुक गये। उस मकान के अन्दर सभी लोग यूनीफार्म में थे।"

"वह क्या था ?" आश्चर्यचकित हो मैंने उसे रोक कर पूछा। "तुम तो सैनिक परिषद् के लिये भेजे गये थे और फिर उस मकान में सैनिक कैसे थे।"

"तुम जानो ?" वह इतना क्रोधित हो चुका था कि वह चिल्ला पड़ा।

"मैं जानूं ? क्या तुम उनमें से नहीं थे जिन्होंने मुझसे कहा था कि पार्टी नवयुवकों से कितना प्रेम करती है वह कैसे हमें धोका देगी ?" मुझे यह कहने के बाद ही दुख हुआ कि मैंने उसे बेकार चिढ़ाया। वह रुक गया। हम एक दूसरे की ओर देखकर मुस्कराये और वह तेजी से बोलता गया, "कर्मठ सदस्यों ने देखा कि हमें वह काम पसन्द नहीं था—कुछ गर्म दिमाग वाले तो पहले से ही अपने अपहरण किये जाने पर बुड़बुड़ा रहे थे। इसलिये कर्मठ सदस्यों के प्रधान ने हमें बतलाया कि किसी ने गलती की थी, क्योंकि हमें कल ही आदेशों म एक साथ परिवर्तन की सूचना मिल जानी चाहिये थी। दूसरे कर्मठ सदस्य हम पर हंसे। हमारा मजाक उड़ाया और हम से आग्रह किया कि जो हो गया उस बारे में जानने से पहिले हम कुछ खा पी लें। अच्छा, मैं तुम से पूछता हूं उस समय कौन खा सकता था ? कुछ छात्रों ने तो कर्मठ सदस्यों के सामने ही उन्हें भला बुरा कहा।"

"तुम्हारा मतलब कि युवक संघ के कामरेडों ने भी बुरा भला कहा ?" मैं विश्वास न कर सकी कि यदि युवक संघ के सदस्यों की, जिन्हें अच्छे कामों की आशा थी, यह हालत थी तो हम दूसरों के बारे में क्या सोच सकते थे ? मैं कहती रही, "स्वाभाविक है अगर आप संगठन में नहीं हैं तो रातों रात इस तरह कामों के बदल जाने की आशा की जा सकती है पर क्या युवक संघ के कामरेडों के साथ भी इस तरह वर्ताव हुआ ।" मैंने यह इस तरह कहा कि मेरा कहना बिल्कुल निष्कपट लगे ।

"मेरिया, पहले मेरी बात खत्म हो जाने दो । युवकसंघ के अनेक कामरेडों ने कर्मठ सदस्यों के नेता को घेर लिया और चिल्लाने लगे कि वे पेता वापिस जाकर सब तथ्यों को जानने के बाद पूरे मामले को साफ करना चाहते थे । नेता ने उन्हें बतलाया कि वे अभी बच्चे थे और उन्हें भड़काया जा सकता था । उसने कहा कि उनके लिये अच्छा यही था कि वे शांत हो जायं और अपने कार्य के परिणाम के बारे में सोचें । पर उससे कुछ लोग डरे नहीं और हमने वापिस जाने और अपनी स्वतंत्रता के बारे में उनसे बातचीत करने की कोशिश की ।"

"बातचीत की क्यों चिन्ता की ? बस वापिस चल क्यों नहीं पड़े ?"

"कहने से करना कठिन है । हम उस जगह ट्रक से आये थे और हमें वहां पहुंचने में तीन घंटे लगे थे । चाहे हम रास्ते को जानते भी होते—जिसे हम नहीं जानते थे—हम शहर के दरवा बंद होने के पहले वापिस नहीं आ सकते थे । पर हम इन्तजार भी नहीं करना चाहते थे । अगर हम कल तक इन्तजार करते तो यह भी हो सकता था कि वे हमें और भी दूर जगह पर ले जाते और फिर हमारा सामान ? हमारा सामान अभी तक ट्रक में था और छुट्टी की स्लिप लिये बिना कोई भी अपनी चीजें नहीं ले सकता था ।"

"आप लोगों को अपना सामान छोड़ देना चाहिये था । आखिर वहां तो सामान से अधिक की बाज़ी लगी थी ।"

"आप मुझे कितना बुद्धू समझती हैं । मैं अपने सामान को छोड़कर तो तुरन्त लौट सकता था पर आप क्या यह नहीं सोच सकती कि मैं शहर को वापिस आने के लिये रास्ता कैसे खोजता ? क्या नाक की सीध में चलने से ही आ जाता ?"

इससे पहले कि वह और गर्म हो मैंने उसे रोकना चाहा। "ठीक है महत्वपूर्ण बात तो यह है कि तुम लौट आये। अब तुम क्या करने की योजना बना रहे हो ?"

"मैं नहीं जानता ?" वह दयनीय दिख रहा था। "मैं सरकार से दूसरा काम देने के लिये कहने की सोच रहा हूं।"

"तुम्हारे खयाल में तुम फिर धोखा नहीं खाओगे ?" मैंने धीरे से पूछा। "एक बार धोखा खाकर क्या सन्तोष नहीं हुआ ?"

फिर वही वक्र मुस्कान। "एक बार—कई बार। जब युवक-संघ के सदस्यों ने शोरगुल मचाया तो कर्मठ सदस्यों ने हमें आश्वासन दिया कि ट्रक वापिस आते ही हमें शहर भेज दिया जायेगा। इस बीच उसने हम से एक व्याख्यान सुनने को कहा जो तीन घंटे तक चलता रहा। तीन घंटे का भाषण अधिकांशतया बकवास थी। उसमें धमकियों और फुसलाने के अलावा और कुछ न था। उसने कहा यदि हम शान्त हो जायं और जो नया काम हमें मिला है उसे स्वीकार कर लें तो हमारे सामने भविष्य उज्ज्वल होगा और हमें जल्दी ही अच्छे कामों पर बढ़ावा दे दिया जायेगा। हमने ट्रक आने की आवाज को सुना पर कर्मठ सदस्य बोलता रहा। जितना ज्यादा देर हम सुनते गये उससे निकल भागने की हमारी आतुरता बढ़ती गई। अंत में जब उसने बोलना बन्द कर दिया तो हमने फिर पीकिंग भेजे जाने की मांग की। कर्मठ सदस्य ट्रक देखने के लिये बाहर आया। जब वह कमरे के अन्दर आया तो हम से बोला : "कामरेड मुझे बहुत दुःख है। ट्रक आया तो था पर चला गया। सब के सब ड्राइवर इधर उधर चले गये हैं ऐसा मेरा खयाल है। कृपया कल सुबह दूसरे ट्रक से चले जायें।"

"हमारा पारा बहुत चढ़ चुका था। वापिस जाने के लिए हम एक साथ चिल्लाने लगे। पार्टी सदस्यता के लिए एक उम्मीदवार ने हम लोगों से शान्त हो जाने और तथ्यों पर विचार करने के लिए कहा। हम उस पर बरस पड़े : केवल एक ही तथ्य है कि हम वापिस जाना चाहते हैं। अन्त में तीन घंटे का एक और भाषण सुनकर दूसरे दिन सुबह हमको वापिस आने दिया गया। इस भाषण में एक कर्मठ कार्यकर्ता ने बताया कि उन्हें हम लोगों से बहुत निराशा हुई थी।"

"क्या आप सचमुच में विश्वास करते हैं कि सरकार आपको दूसरी बार कोई अच्छा काम दे देगी ?" मैंने पूछा।

"यह हो सकता है कि अच्छा काम न मिले पर मैं यह नहीं चाहता कि तुम यह सोचो कि मुझे अपने नेताओं में विश्वास नहीं रहा है। मैं विश्वास नहीं कर सकता कि हमने जो कुछ सुना था सभी झूठ है। मैं नहीं जानता कि जनता पर आधारित सर्वहारा के नये शासन का इतनी आसानी से कैसे पतन हो सकता है। कुछ भी हो निश्चय करने से पहले मैं इन्तजार करना और देखना चाहता हूं, हो सकता है हमने अपने बारे में गलत विचार बना लिये हों जो हम को साफ साफ समझने में बाधक होते हों। अगर आप क्रान्तिकारी नहीं तो क्रान्ति-विरोधी हैं। मैं दलित मजदूरों और मेहनतकशों के पक्ष में रहना चाहता हूं। आप मुझ से पालतू कुत्तों और साम्राज्यवादियों को समपर्ण करने को आशा नहीं कर सकतीं।"

पांच मिनिट पहले मैंने उसे अपनी ओर लाने की कोशिश की होती पर उसकी बात पूरी तरह सुनने के बाद मैंने अपना विचार छोड़ दिया। "आपने अभी जो कुछ कहा है वह कर्मठ सदस्य के भाषण में से ही ले लिया गया हो सकता है। और जानते हो तुम्हें कसे ठगा गया ?"

"मुझे आशा है कि वह सम्पूर्ण चित्र का एक अंश मात्र था। जानती हो— एक आंशिक विमति।"

"एक आंशिक विमति ?" मैंने उनकी खिल्ली उड़ाते हुये कहा। "क्या बकवास है। तुम भूल गये होगे। तुम उस कर्मठ सदस्य से क्यों घृणा करते हो या उसे क्यों दोष देते हो ? मैं उनमें से किसी को भी घृणा नहीं करती।" मेरा पारा इतना चढ़ चुका था कि मैंने टेबिल पर मुक्का दे मारा। "मैं तुम्हें बताती हूं कि मैं किसमें विश्वास करती हूं। मैं विश्वास करती हूं कि सरकार ने हमें काम दिया है ताकि हम भी दूसरे नौजवानों को ठगने के लिए कर्मठ सदस्यों जैसे बन जायं। उसी योजना के सदस्य की तरह जिसने तुम्हें ठगा है...।"

"तुम्हें क्या हो गया" वह बीच में बोल उठा। "तुम इतनी उतेजित किस लिये हो। अपने को शान्त करो।"

"क्यों यह भी तुम से कर्मठ सदस्य ने कहा था ?"

"सुनो ! तुम नहीं...." वह पूरे प्रयास करने पर अपने आपको रोक सका। "अच्छा, बहुत हुआ। अब मैं इसके बारे में ज्यादा बातें करना नहीं चाहता।"

मुझे सचमुच दुःख था कि मुझे गुस्सा आ गया। इतने दिनों तक आशा और विश्वास करने के बाद वह भरोसा रखना चाहता था। और क्या यह

संभव था कि वह ऐसा कर पाता ? अपने दिल में मैं जानती थी कि ऐसा संभव न था । मैंने पिछले अठारह महीनों और उनमें हमें सिखाई गई बातों पर दृष्टिपात किया । कैसे आज्ञा मानें । कैसे मीठी बातें करें । कैसे अभिवादन करें । पर मैं उसे प्रतीति न करा सकी । उसे स्वयं प्रतीति करनी होगी और यदि वह भाषणों को अक्सर सुनता रहा तो शायद उन्हीं बातों में वह अटका रहेगा । उसे अपने रास्ते पर जाना होगा और मुझे अपने रास्ते पर । क्या मैंने उसे इतनी बुरी तरह चोट पहुंचाई है कि वह मुझे भी चोट पहुंचाने की सोचेगा ? मैं ऐसा नहीं सोचती । चांग ने अभी तक ऐसा करना नहीं सीखा था ।

जितना जल्दी हो सकता था मैंने विदाई ली । हमने स्नेह से हाथ मिलाये यह दिखलाने के लिये कि हमारा गुस्सा लुप्त हो चुका था । मैंने क्षमा मांगी : "मुझे दुःख है कि मैंने आपको नाराज कर दिया । आप थके हुये और हतोत्साह होंगे । आप थोड़ा सुस्तालें और आराम कर लें । मैं फिर आंऊगी यह देखने के लिये कि इन दिनों आपका कैसे चल रहा है ।"

मैंने उससे फिर हाथ मिलाया क्योंकि मैं जानती थी कि अब फिर वापिस नहीं आऊंगी । यही आखिरी मौका था कि हम मित्रों की तरह आपस में मिललें ।

(१६)

निर्णय

१६४६ की सर्दियां शुरू हो गई थीं। ग्रेजुएट होने में अभी छः महीने बाकी थे। दक्षिण में नई सरकार की सैनिक विजय पर विजय हो रही थी। उस समय यूनिवर्सिटी में एक नई घटना हुई। हमारे दो सहपाठियों ने अपने सामान को बांध कर स्कूल के अधिकारियों को चकमा देकर अपने अधिकार पत्र ले लिये। और बिना किसी को बताये रेलगाड़ी में बैठकर ग्यानसिन की ओर चल दिये। वहां से फिर जहाज से हांगकांग को खिसक गये। वे इतनी अच्छी योजना बनाकर भागे थे कि उनके निकटतम मित्रों को भी सन्देह नहीं हुआ। लुप्त होने से एक दिन पहले भी वे कक्षाओं में उपस्थित थे और एक राजनीतिक सभा में भी शामिल हुए थे।

इन भगोड़ों में से एक, जिसे मैं ज्याओ कहूंगी, दर्शन विभाग का छात्र था। उसका रिकार्ड शानदार था। कई वर्ष तक उसने जिन विषयों को लिया उनमें से अधिकांश में औसत ८५ या ६० प्रतिशत अंक प्राप्त किये थे। यह पेता में एक बहुत कठिन था जहां नम्बर कठोरता से दिये जाते थे और ७५ प्रतिशत औसत अङ्क वाले को एक अच्छा छात्र समझा जाता था। वास्तव में पिछले वर्ष ज्याओं आर्ट्स कालेज के सभी छात्रों में प्रथम आया था। यह सही है कि वह बहुत मिलनसार न था, पर यूनिवर्सिटी में प्रायः हर एक छात्र यह जानता था कि वह कौन था और सब उसकी इज्जत करते थे।

उसका साथी जू पश्चिमी साहित्य का छात्र रहा था। ज्याओं की तरह ही वह भी अपने विभाग में सबसे अच्छे छात्रों में समझा जाता था। उसे समय और नामों के बारे में चिन्ता नहीं करनी होती थी। परिणाम स्वरूप वह ज्याओं की तरह इम्तहान में इतने अधिक नम्बर नहीं ले पाता था। पर उसके विचारों में मौलिकता थी जिससे वास्तविक साहित्यिक प्रतिभा का आभास मिलता था। अध्यापकों को उस पर गर्व था और बहुत से शिक्षक तो उसे निजी तौर पर भी पढ़ाने को उत्सुक रहते थे।

दो सहपाठियों के भाग जाने से पेता में उथल पुथल मच गई। इन दोनों को अपनी डिग्रियां प्राप्त करने में केवल छः महीने बाकी थे। युवक संघ के सदस्यों ने घोषणा की कि उन्हें हमेशा ही उनके बारे में प्रतिक्रियावादी होने की आशंका थी। सम्पूर्ण विश्वास के साथ एक नेता को हमने कहते सुना: "हो सकता है आज वे सुरक्षित हों पर वे कहां जा सकते हैं जहां "मुक्ति" नहीं पहुंचेगी।" जब भी हमारे नेता चाहते, हम घृणा और गाली गलौच के सहगान में सम्मिलित हो जाते। पर अन्दर ही अन्दर हम में से कितने ही शायद खुश हुये थे कि हमारे दो मित्र तो बच निकल भागने में सफल सिद्ध हुये थे।

मुझे १९४८ का वह दिन याद था जब पेता के छात्र मुक्त प्रदेशों में भाग रहे थे और एक प्रोफेसर ने एक मित्र से कहा था कि यह पुरानी सरकार के समाप्त होने की निशानी है। "कम्युनिस्ट पक्ष की ओर भागते हुये नवयुवकों को देखो। गत चालीस वर्षों से हमारे विद्यार्थियों ने समय के अग्रदूत की तरह काम किया है। इस तरह छात्रों के भागने का अर्थ है कि पुरानी सरकार का अन्त अब निश्चित है।" अब रुख बदल गया था। पर यदि प्रोफेसर दोनों में समानता देखता तो भी वह इतना कुशल था कि वह उसे अपने तक ही रखता। जो कुछ वह कहता गुप्त होता—"हां—अच्छा, यह बहुत कुछ आश्चर्य जैसा लगता है, क्यों न ?"

जब मैं अपने और अपने मित्रों के बारे में आप से कहती हूं तो मेरा यह अर्थ कदापि नहीं कि कुछ मुट्ठी भर छात्रों के पेता से चले जाने का यह अर्थ है कि कल उस कम्युनिस्ट सरकार का तख्ता उलट जायेगा जिसकी सेनायें हैं, पुलिस की ताकत है और आज्ञाकारी और अनुशासित पार्टी मेम्बर हैं। पर कुछ लोगों का भाग जाना ही इस बात का साक्षी है कि उनके अतिरिक्त दूसरे नोजवान भीं हैं जो उन्हें मिले आश्वासन पूरे न होने के कारण निराश हो चुके थे। उन भगोड़ों का साथ देने का न तो उनमें साहस था, और न उन्हें अवसर ही मिला था।

उन दो छात्रों के भाग जाने के छः महीने बाद तक भी मैं भागने के संबंध में निर्णय नहीं कर सकी। शायद तब उनके पद-चिन्हों पर चलने के लिये मुझ में साहस और निश्चय की कमी थी। अपने परिवार और मित्रों को छोड़कर चीन के बाहर एक आकर्षण-विहीन और अनिश्चित जीवन अपनाना आसान न था। इसके अलावा मैं इतनी स्वार्थी भी थी कि ग्रेजुएट होना चाहती थी। और

यह ठीक है कि मैं आशा के विपरीत भी (जो मेरे विचार से कम्युनिस्टों के सबसे अच्छे सहायकों में से एक है) यह सोचती रहती थी कि शायद किसी तरह सब बातें ठीक हो जायंगी। इसी तरह तो स्वतन्त्रता के बाद के अठारह महीनों में हम में से बहुत से लोग अपने आपको समझाते आये थे। यद्यपि हालात वैसे नहीं हुए जैसा कि आश्वासन दिया गया था तो भी हमें यह स्वीकार करना होगा कि नई सरकार के सामने बड़ी-बड़ी समस्यायें थीं और यदि कभी वे तानाशाही अथवा मनमानी करते थे तो उसका कारण यह था कि इतने थोड़े समय में इससे अधिक "जनवादी" तरीके से काम करना सम्भव न था। पर इसका अर्थ क्या यह था कि बाद में जब "मलबे" को रास्ते से साफ कर दिया जायगा और प्रजातन्त्र के भवन का निर्माण शुरू हो जायगा तब भी "प्रजातन्त्र" नहीं होगा ?

इस प्रश्न का मन ही मन उत्तर पेता के हरएक छात्र को खोजना था और मुझे यह कहना पड़ेगा कि हम में से अधिकांश छात्रों का विचार-संघर्ष नाटकीय या सहज-स्वाभाविक न था। उत्तर के साथ साथ और बहुत-सी चीजें थीं—स्वयं की और साथ ही चीन के लिये हमारी आशाएं, हमारे पारिवारिक बन्धन और नये चीन के निर्माण के लिये अपनी तैयारी के समय पेता में चार साल के बीच किया गया काम इत्यादि-इत्यादि। हां ! अब हम अपने हथियारों से लैस कक्षाओं को छोड़ने की तैयारी कर रहे थे। पर हमारे नेता हमें किस तरह का नये चीन का निर्माण करने के लिये प्रशिक्षित कर रहे थे यह किसी को पता न था।

ओह ! हम स्वयं सब ठीक कर लेंगे। आखिर हम बुद्धिजीवी होने वाले थे। जो कुछ हुआ था उस सब के लिये मैं प्रयत्न करके कोई कारण खोज सकती थी प्रायः उस सबके लिये जिसे नई सरकार ने किया था। जब मैं नहीं खोज पाती तो मेरे मित्र मेरे लिये कारण खोजने को सदैव तत्पर रहते थे। पर किसी तरह भी सारे व्यक्तिगत कारण मिलकर भी मुझे यह विश्वास नहीं दिला सकते थे जिसके लिये मैं "जनता का शासन" स्वीकार करके आत्म-समर्पण के लिये तत्पर हो जाती। मैं जानती थी कि किसी दिन मुझे समस्त कारण छोड़ने पड़ेंगे। यदि मैं ईमानदारी से कहूं तो भविष्य में मुझे ऐसे व्यवस्थित और कुशलतापूर्ण अत्याचारों की आशंका थी जैसे इसके पूर्व कभी नहीं सुने गये थे।

हम विश्वास करने के लिये कितने उत्सुक थे। हम काम करने और संघर्ष करने के लिये कितने उत्सुक थे। भक्तिभाव से हम बहुत दिनों से विश्वास

करते आ रहे थे। मेरे बहुत से मित्र अभी तक विश्वास करते थे। मैं जानती हूं कि एक दिन उनमें से भी कुछ लोग गुप्त रूप से स्वयं यह स्वीकार करेंगे कि उन्हें अब कोई आशा और विश्वास नहीं रहा। थोड़ी-सी कल्पना के सहारे मैं अनुमान कर सकती हूं कि जब ऐसा मौका आयेगा तो उसका विरोध करने और डटे रहना कितने साहस का काम होगा। अधिकांश लोगों के लिये भाग जाना अब प्रायः असम्भव हो गया था। यथा समय ईमानदारी से जमे रहना, गुप्त रूप से आंतरिक संघर्ष समाप्त करने की चेष्टा करना और सबके सामने अपने अभिमान को कुचल देना बहुत ही साहस का काम था। निर्वासन में चाहे आपके साथ हजारों निर्वासित क्यों न हों आप अकेले हो जाते हैं, पर मैं जानती हूं कि झण्डों और नगाड़ों के घोष तथा अनुशासित जयजयकार के बीच आप पीकिंग में उतने ही एकाकी हो सकते हैं जितने कि निर्वासन में।

क्या यही एकमात्र बात थी जिसके कारण मुझे जाना पड़ा था या अनेक बातों के कारण मैं गई? निश्चय करने, छोटे छोटे बहुत से समझौते करने, और अनुशासन सिखाने के उद्देश्य से आपको जो पराजय और अपमान सहने पड़े उनके साथ समझौता करने के लिये बहुत देर तक प्रतीक्षा की जा सकती थी। मैं अभी तक समझ चुकी थी कि अपने मुंह को सी लेना और सरकार ने जो काम दिया था उसे स्वीकार कर लेना कितना आसान हो सकता है। शायद यह अच्छा होगा कि मैं अभी चली जाऊं अन्यथा शायद मुझ में कभी भी जाने का साहस ही न हो सकेगा।

यदि अपने दिमाग को इस्तेमाल किया जाय और भाग्य साथ दे तो अभी भी भाग जाना सम्भव था। बाद में शायद न हो सके। पुलिस पहले ही यात्रियों के बारे में पिछले साल से अधिक चौकन्नी हो गई थी। विदेशियों को शहर के दरवाजों से बाहर जाने के लिये भी पास की आवश्यकता पड़ती थी। थोड़े दिन में शायद चीनियों को भी पास की आवश्यकता पड़ने लगे।

इन सब बातों से मैंने समझ लिया कि यही जाने का समय है पर एक बार जब मैंने भागने की कोशिश करने के बारे में निश्चय कर लिया तो मुझे उसको कार्यान्वित करने की योजना सोचने में लगभग एक सप्ताह लग गया। बिना किसी हो-हुल्ला के यदि मैं पीकिंग छोड़ने में सफ़ल हो सकी तो मैं केन्टन तक जा सकती थी और उसका बहाना भी था कि मैंने वहां एक अध्यापिका का काम ले लिया था। कैन्टन ब्रिटिश उपनिवेश हांग-कांग से केवल अस्सी मील के लगभग था। केवल अस्सी मील—क्या यह बहाना मुझे इतनी दूर ले

जायेगा ? क्या यह सम्भव नहीं कि मैं जनता में न मिल पाऊं ? जैसे जैसे मैं कैन्टन के पास पहुंचूंगी वे क्या मुझे भांप न सकेंगे ? मैं वास्तव में उस जगह के बारे में इतना नहीं जानती कि एक सत्यसदृश्य कहानी भी गढ़ सकूं। मुझे प्रयत्न करना होगा, यह मैंने निश्चय कर लिया था। और एक बार कैन्टन में पहुंच कर मुझे हांगकांग की सीमा में दाखिल हो जाने का अवसर प्राप्त करने का कोई रास्ता खोजना होगा।

अपने कल्पित काम के बारे में अपने एक मित्र से, जिसे मैं मि० न्यू कहूंगी, बातचीत करने के बाद मैंने उनसे कैन्टन में श्रीमती लोह के नाम एक सिफारशी पत्र ले लिया। मैंने मि० न्यू को यह संकेत देने की पूरी तरह से कोशिश की कि मैं किस तरह की सहायता चाहती थी। पर मुझमें इतना साहस न था कि मैं उससे खुलकर यह कह देती कि मैं कैन्टन में रहने और काम खोजने के लिए नहीं जा रही थी। फिर अपने हाथ में पत्र लेकर मैं अपने परिवार को यह समाचार देने के लिए घर लौट आई कि मैं पीकिंग छोड़ना चाहती हूं।

मेरे कैन्टन जाने का विचार पिता जी को पसन्द न था। मैंने अपने परिवार को यह नहीं बतलाया कि कैन्टन तो रास्ते में रुकने का स्थान मात्र था। यह मुझे विश्वास था कि वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि मैं हांगकांग जैसी विदेशी जगह जाने के बारे में भी सोच सकती थी। उनसे मैं इसलिए नहीं कह सकी कि मैं जानती थी कि मेरा यह निर्णय कैसी बहस खड़ी कर देगा। अत: "केन्टन में अध्यापिका का काम लेने की मेरी योजना" का समर्थन करने के लिए जो तर्क मैं सोच सकती थी मैंने पेश किए। उनके विरोध के सामने मैं डिगी नहीं और पहले मेरी मां पसीज गई।

"मेरे ख्याल में मेरिया को इसकी कोशिश करने दी जाय इससे कोई बड़ी हानि न होगी।" मां मेरी ओर आ गई थी और अन्त में काफी हिचकिचाहट के बाद पिता जी भी राजी हो गए।

इस बाधा को पार करने के बाद मैं अपने निवास स्थान के रजिस्ट्रेशन को रद्द कराने और उसे कैन्टन के लिए तबदील कराने का प्रार्थना पत्र देने जिला पुलिस स्टेशन गई। मेरे ग्रह अच्छे थे। जिस आदमी से मैंने पुलिस स्टेशन पर बातें कीं वह उस दिन सुबह से ही अपने काम से कुछ खिन्न दिखलाई पड़ता था। अपनी खिन्नता को छिपाने की कोई कोशिश न करते हुए उसने जनगणना पुस्तिका को उलटा पलटा और अन्त में मेरा नाम खोज निकाला।

फिर बहुत ज्यादा सवाल किए बिना ही, मेरे छात्र होने के परिचय पत्रों को देखने के बाद मेरे प्रार्थनापत्र को स्वीकार कर लिया। प्रसन्न चित्त मैं पुलिस स्टेशन से बाहर आ गई और अपना टिकट लेने के लिए सीधी चीन-मिन स्टेशन पहुँची।

अन्तिम विदाई के लिए मैं इधर उधर गई। पहले मैं यूनिवर्सिटी भवन पर रुकी जहां कि प्रोफेसर ची और प्रोफेसर पैंग रहते थे। मैं जानती थी कि वे उग्र "प्रगतिशील" थे पर वे मेरे प्रति कृपा-दृष्टि रखते थे। दस मिनिट तक गपशप करने के बाद मैं खड़ी हो गई और भरसक शान्ति से बोली, "इन वर्षों में आपने मुझे जो सहायता दी है उसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहती हूं क्योंकि यह आपसे मिलने का आखिरी मौका हो सकता है।" इतना कह कर मैं स्वयं दरवाजा खोलने के लिए आगे बढ़ी।

"क्या मतलब ? जरा रुकिये। आपको तो पीकिंग में ही काम मिला है। क्या ऐसा नहीं है ? आपको अभी कहीं नहीं जाना है। जरा बैठें और उसके बारे में बातचीत करें।"

जो आदमी मुझे प्रिय थे और जिनका मैं आदर करती थी उन्हें मैं धोखा नहीं देना चाहती थी पर मैं उनसे सच बात भी न कह सकी। मुझे उत्तर देना पड़ा। "हां शायद फिर वापिस आना पड़े। किसी भी तरह आज इस बारे में बातचीत करने के लिये मुझे आपका समय नहीं लेना चाहिए।"

"क्या आपने यह नहीं कहा कि आपको किसी दूसरी जगह काम मिल गया है ?" प्रोफेसर ची ने उत्तर के लिये आग्रह किया।

प्रोफेसर पैंग भी खड़े हो गये। "कम से कम आप यह बताने के लिये तो रुक सकती हैं कि आपके साथ क्या गड़बड़ है ?"

मुझे दरवाजे का हैन्डिल छोड़ना पड़ा और फिर बैठ गई। जितना जल्दी हो सके मैं बस उनसे बिदा लेना चाहती थी। इसलिये जो वे जानना चाहते थे उसे एक सांस में ही मुझे कहना पड़ा। "जानती हूं आप सुन कर मुझसे निराश होंगे पर आप से भी ज्यादा मैं निराश हूं...अतः जो मैं अब करने जा रही हूं उसे मुझे करना पड़ा है। सरकार ने जो काम मुझे दिया है उसे म स्वीकार नहीं कर सकती।" मेरी स्मृति पटल पर १९४८ के आखिर दिनों की बातें एक साथ ताजी हो गईं। उस समय जब शिक्षक हाजिरी लेते थे तो कक्षा

में बहुत से छात्रों को गायब पाते थे। "अब आप मुझे समझने की कोशिश करें, मैं अभी तक जनता की सेवा करना चाहती हूं। इस बारे में मैं पूरी तरह ईमानदार हूं पर मैं यहां से जाना चाहती हूं—और ऐसा कुछ काम तलाश करना चाहती हूं जिसे मैं अपने अनुरूप समझती हूं। मेरा विश्वास है कि मैं अपने आपको सरकार से अच्छी तरह समझती हूं। शायद आप सोचेंगे कि मैं स्वार्थी हूं पर मैं अब यहां ज्यादा नहीं रुक सकती।"

प्रोफेसर ची शान्त थे, पर प्रोफेसर पैंग बोले : "हमने तो नहीं सुना। सरकार ने आपको क्या काम दिया है ?"

मैंने उन्हें बतलाया, "राजनीतिक और कानून समिति।"

उनके बोलने की मैं प्रतीक्षा करती रही। अन्त में मैं शान्तिभंग करते हुए बोली, "अच्छा, अब मैंने बतला दिया। मैं आपका और अधिक समय नहीं लेना चाहती। आशा है आप मुझ से इतने निराश नहीं होंगे।"

अन्त में प्रोफेसर पैंग ने कहा। "मेरे खयाल में यह स्वीकार करना पड़ेगा कि यह ऐसा काम नहीं जो ऐसे छात्र को मिले जिसने कालेज आफ आर्ट में डिग्री ली है। आपको यह समझना चाहिये कि यह केवल पुलिस का काम नहीं है। यह तो अपने देश की सेवा करने का एक वास्तविक अवसर है—बतलाओ क्या तुम युवक संघ की सदस्या हो ?"

"नहीं, मैं नहीं हूं।"

"तुम नहीं हो ? तुम पहले ही उसमें क्यों नहीं गईं ?"

मैं जानती थी कि मेरे बारे में उनकी चिन्ता सही थी। पर मैं यह नहीं भूल सकती थी कि वे "प्रगतिशील" थे। मैं बोल उठी, "वास्तव में सरकार को दोष देने का मेरा किंचितमात्र भी विचार नहीं है। सरकार मेरे प्रति दयालु रही है। क्या मेरी शिक्षा जनता के पैसे से नहीं हुई ? मैं नहीं सोचती कि उन्होंने मुझे यह काम देकर मेरे साथ भेदभाव किया है। हमारी कक्षा के युवक संघ के कामरेडों को भी मेरे साथ काम मिला है और उनका कहना है कि ऐसे महत्वपूर्ण काम मिलने पर उन्हें गर्व है। जैसा कि मैंने अभी कहा मैं निराश इसलिए हुई हूं कि सरकार यह नहीं जानती कि मैं क्या कर सकती हूं और क्या नहीं ?"

प्रोफेसर ची के अन्तिम शब्दों से भी निराशा टपकती थी। "इससे पहले मैं आपको यही सलाह देता कि सरकार के नेतृत्व और एक साथ काम देने की सरकारी नीति को तुम स्वीकार करो। पर मैं आज उसके बारे में नहीं कहूंगा।" उसने अपना सर उठाया और मेरी आंखों की ओर देखने की कोशिश की। "आज मैं आपसे यही कह सकता हूं कि आपको अपनी आशा और अपने उत्साह को केवल इस कारण नहीं छोड़ना चाहिए कि आपकी आशा के विपरीत काम आपको दिया गया है। यह नहीं कि मैं आपको सलाह देना चाहता हूं कि सरकार ने भरपूर कोशिश नहीं की कि जिस काम के लिये आप योग्य हैं वह आपको दिया जाय। पर अभी इतनी देरी नहीं हुई कि इसके बारे में कुछ न किया जा सके। यह लज्जाजनक होगा कि आप आगे अध्ययन करने की भी आशाओं को छोड़ दें—मैं जानता हूं कि आप उसमें रुचि रखती हैं। हमारे सामने अत्यन्त शानदार काम है। नये चीन को बनाने का जो शानदार काम है उसमें जो कोई व्यक्ति हिस्सा नहीं लेना चाहता वह मार्क्स-लेनिनवाद और नये जनवाद के अध्ययन को छोड़ सकता है पर आपको अपने पहले प्रेम (अध्ययन) को जारी रखने के लिये भी तो वहां समय रहेगा।" वह सांस लेने के लिये रुका।

"यदि", प्रोफेसर पैंग ने पितृ-तुल्य भाव से कहा, "यदि इस साल युनिवर्सिटी के स्टाफ की व्यवस्था में परिवर्तन नहीं हुआ तो मैं सोचता हूं कि हम आपको एक सहायक के रूप में यूनिवर्सिटी में लगा सकेंगे। क्या आप थोड़ा और नहीं ठहर सकतीं। मैं आपको कोई गारन्टी तो नहीं दे सकता, पर मुझे विश्वास है कि यदि आप मुझसे कोशिश करने को कहें तो मैं आपके उपयुक्त काम खोज सकता हूं।"

उसने जो कहा था वह ठीक हो सकता था। प्रोफेसर पैंग को यूनिवर्सिटी के प्रशासन में काफी जिम्मेदारी दे रखी थी और उसके सांस्कृतिक क्षेत्र में भी अच्छे परिचय थे। पर मैं पहले ही निश्चय कर चुकी थी। इस निश्चय पर मैं काफी चिन्ता और सोच विचार के बाद पहुंची थी और अब उसे बदलने का कोई प्रश्न न था।

यद्यपि मैंने उनकी इस मेहरबानी के लिये धन्यवाद दिया पर मैंने कहा कि चूंकि मेरे मित्र ने कैन्टन में मुझे काम दिलाने का आश्वासन दिया था इसलिये मेरे लिये उन्हें ज्यादा परेशान होने की आवश्यकता नहीं। बिदा लेने के लिये

फिर मैं दुबारा उठ खड़ी हुई। विदा मांगना इतना आसान था यह मैंने पहले कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था।

फिर मैं अपने दूसरे प्रिय प्रोफेसर के पास गई। पेता में गतवर्ष जो हुआ था उसे छिपाने में चूंकि वह अधिक हठी नहीं था इसलिये मैंने उसे सही बात बतला दी। बहुत देर तक वह खामोश रहा और मैं इस प्रतीक्षा में बैठी थी कि वह भी यही सलाह देगा कि मैं जाऊं।

अन्त में अत्यन्त शान्ति के साथ उसने कहा: "मेरे विचार से आप सबसे अच्छा काम कर रही हैं।" वह रुका। "मेरी भी इच्छा है कि मैं जा सकता, पर वह असम्भव है, वास्तव में असम्भव।" मैंने उसके चेहरे की ओर देखा, थका हुआ, जरा जीर्ण और दुःखित। "जहां आप जा रही हैं वहां पहुंचने पर मुझे पत्र दें।" वह आगे बोला, "इस सम्बन्ध में हमें और कुछ नहीं कहना है।" मैंने हाथ मिलाने के लिये अपना हाथ बढ़ा दिया। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर अच्छी तरह दबाया। "मेरी शुभकामनाएं आपके साथ हैं।" उसने ऊपर की ओर नहीं देखा। मैंने उसे कमरे में ही खड़ा हुआ छोड़कर दरवाजा बन्द कर दिया।

अन्त में वह दिन आया जब मैं ट्रेन में सवार हो गई। मैं अपनी सीट पर अकेली थी। जब मैंने ऊपर सामान रखने की जगह पर अपना सूटकेस, अपनी सीट पर लपेट कर रखा हुआ बिस्तर और खिड़की के बाहर प्लेटफार्म पर अपने मित्रों से विदाई लेने खड़े लोग देखे तो मेरे आंसू छलक आये और फूट-फूट कर रोने लगी। अभी तक प्लेटफार्म के फाटक पर होने वाली जांच पड़ताल से छुटकारा लेने की चिन्ता ने मेरे मन की भावनाओं को बांध रखा था। पर मेरे सामान को सैनिकों ने केवल सरसरी नजर से देखा। क्योंकि मेरे पीछे खड़े अधेड़ व्यापारी तक पहुंचने की उन्हें बहुत जल्दी थी। इस प्रकार मुझे छुटकारा मिला। तीन दिन की यात्रा मेरे सामने थी और करना कुछ नहीं था, केवल बैठे रहना और सोचते रहना कि भागने के लिये गढ़ी हुई कहानी कितनी कमजोर और जर्जर थी।

ऐंजिन ने जोर से सीटी दी और मेरे नीचे रेल के पहियों ने घूमना शुरू कर दिया। मेरी परिचित सभी चीजों से यह अन्तिम विदा थी। मैं अब फफक फफक कर नहीं रो सकती थी क्योंकि मेरे आस पास जो लोग बैठे थे वे मुझे उत्सुकता से देखने लगे थे। शायद मैं किताब पढ़ने लगूं तो काम

चल जायेगा ऐसा सोचकर मैंने अपने विस्तर-वन्द में चारों ओर टटोला। आखिर तांग की कविता की पुस्तक मिल गई जो मैं अपने साथ लाई थी। मैंने एक कविता खोली जो मुझे प्रायः कण्ठस्त थी। मेरे आंसुओं के कारण अक्षर काले कीड़े मकोड़ों की उमड़ती हुई रेखा जैसे लगने लगते अतः मैंने सोचा कि मैं अपने साथ अंग्रेजी की पुस्तक पढ़ने को क्यों न ले आई। कम से कम अंग्रेजी टाइप के अक्षर ऐसे कीड़े मकोड़ों जैसे तो न लगते। फिर विचार आया पर यह बुद्धिमत्ता न होती। जिस रक्षक ने मेरे सामान की तलाशी ली थी वह उसे देख-कर कुछ कह सकता था।

मैंने मन ही मन अपने आपको समझाया कि मुझे रोना बन्द कर देना ठीक होगा। यह इस समय उपयुक्त न था। पर मैं उस समय जोर जोर से न रोती तो क्या करती। क्या मैं घर छोड़ कर नहीं जा रही थी ? गाड़ी रास्ते के मोड़ पर आ चुकी थी और शहर की चहार दीवारी की सुरंग से होकर निकल चुकी थी। मेरे माता पिता ने कहा था कि वे बूढ़े थे और अपने बच्चों को ज्यादा दूर नहीं भेजना चाहते थे। मैंने अपने दांत भींच कर दसों बार उनसे कहा कि मैंने जाने का निश्चय कर लिया था और अन्त में वे राजी हो गये थे। हालांकि उन्होंने मुझे चले आने दिया था पर मुझसे कहा था कि मैं अध्ययन करूं या कहीं कोई शान्ति की नौकरी कर लूं ताकि मैं राजनीतिक कार्यवाहियों से दूर रह सकूं। मैंने अपना निचला ओंठ काट कर उनसे सहमत होने का स्वांग रचा था।

मैंने उन दो लोगों को क्यों धोखा दिया जो मुझे दुनिया में सबसे ज्यादा प्यार करते थे ? में इतनी वज्रहृदय कैसे हो सकी कि मैं अपने माता और पिता को छोड़ कर इस तरह भाग खड़ी हुई ? मेरे भागने से उनको केवल नुकसान ही हो सकता था। मेरा आश्वासन झूठा था। जहां कहीं भी मैं जा रही थी मुझे संघर्ष करना पड़ेगा। मेरे माता-पिता को जितना पता था उससे कहीं, अधिक दूर मैं जा रही थी। अब उसके बारे में सोचना उचित न था, पर फिर भी मैं सोच रही थी कि नई जगह में अकेली कैसे रहूंगी, जहां शायद मैं मर भी जाऊं और उन लोगों को भी न देख सकूं जो मुझे सबसे ज्यादा प्यार करते थे। मैं यह भी न जानती थी कि मैं पीकिंग लौट सकूंगी या नहीं। मैं निर्वा-सन के बारे में सब कुछ जानती थी। क्या मैंने सफेद रूसियों को नहीं देखा था ? तीस वर्षों से जिनका कोई देश नहीं था। जहां भी थोड़े बहुत समय के लिये जगह मिल जाती वहीं रह जाते थे। उन्हें चीनी और विदेशी दोनों ही घृणा

करते थे। उनके लड़के उन कामों को करते जो कोई नहीं करना चाहता और उनकी लड़कियां अपने को भाग्यवान समझतीं यदि विदेशी सैनिक और नाविक उन्हें पसन्द कर लेते। अब समाचार पत्रों ने श्वेत चीनियों का भी मजाक बनाना शुरू कर दिया था—वे श्वेत चीनी जो मालदार व्यापारी थे, भ्रष्ट अधिकारी थे अथवा सफेद लोगों के दलाल थे तथा जो मुझ से पहले ही हांगकांग भाग गये थे।

मैंने सोचा कि सिर पीछे टिका कर बैठना ज्यादा अच्छा होगा। पीछे सिर टिकाकर बैठने से रुलाई कम आने की सम्भावना थी। मैंने आंखें बन्द करके ऊंघने और सोने का बहाना करने का निश्चय किया और फिर ट्रेन के झटकों, हिलोरों और गाड़ी के चलने के शोरगुल ने मुझे वास्तव में सुला दिया।

जब जगी तो रात काफी हो चुकी थी और सारा शरीर टूट रहा था। डिब्बे के बीच में केवल एक धीमी सी रोशनी जल रही थी। जिसके कारण हर चीज मौत की तरह शान्त थी। केवल ट्रेन के पहियों की धड़-धड़, खिड़की की खट-खट, चौखटों की चूं चूं और कभी पास में सोये हुए लोगों की निश्वास या खुर्राटों की आवाज़ आती थी। खिड़की के बाहर अंधकार ही अंधकार था। मैंने आंखें मलीं, जो दुःख रही थीं, उनमें करकराहट हो रही थी और वे सूज गई थीं। मुझे भूख लगी थी लेकिन डिब्बे में मैं ही अकेली जग रही थी। मैंने अपने अन्य यात्रियों की ओर देखा और सोने वालों के बारे में पढ़े हुए एक लेख के अंश का मुझे धुंधला सा स्मरण हुआ, जिसके इधर-उधर लुढ़के हुए शरीर लड़ाई समाप्त होने के बाद रणभूमि में पड़ी लाशों की तरह थे, जिनमें कोई भावनाएं शेष न रही हों और केवल उस अमूर्त शान्ति का प्रेम ही उनमें बना हो।

जिन्दगी में पहली बार मैंने पूर्ण एकाकीपन का अनुभव किया। बन्द मुट्ठी में अभी भी आंसू-सूखने के कारण कड़ा पड़ गया रुमाल था, जिसे सोते समय मैंने अपने हाथ में ले रखा था। मुझे वह मलिन लगा। मैंने उसे अपने बंडल में फेंक दिया और साफ रुमाल खोजने लगी। पर अब आंसू नहीं आ रहे थे। मैं रुमाल को अपने हाथ में लिये रही और पहियों की खड़खड़ और गाड़ी के हिलने डुलने की आवाज़ सुनते सुनते मैं फिर सो गयी।

खिड़की से आ रही बाल-सूर्य की किरणों ने मुझे जगा दिया। मेरे साथ चलते हुए चीन को मैंने देखा। जहां तक मैं देख सकती थी उत्तर के पीले और

हरे मैदान फैले हुए थे। मेरी आंखों में अब इतना दर्द नहीं था। मुझे नाश्ते का खयाल आया। पर थोड़े समय के लिये उसे भूल कर अपनी गढ़ी हुई कहानी को अच्छे से अच्छे ढंग से कहने पर ही ध्यान केन्द्रित करना मैंने उचित समझा। जल्दी ही कोई न कोई मुझ से पूछ सकता था।

सुबह जब ट्रेन रुकी तो अपनी पीठ पर राइफल लटकाए दो सैनिक हमारे सामान की तलाशी लेने के लिये डिब्बे में चढ़ आए। ऊपर रखे हुए सूटकेस को नीचे उतार मैंने उनके सामने खोल दिया। बड़ी उत्सुकता से उन्होंने मेरे कपड़ों को उल्टा-पल्टा और मेरी किताबों को और भी अधिक दिलचस्पी से देखा। मुझे विश्वास था कि वे पढ़ नहीं सकते थे पर कुछ भी हो उन्होंने पन्नों को इधर-उधर तो किया ही। सामने जो आदमी था उसने मुझे ऐड़ी से चोटी तक देखा और उत्तर की मेरी बोली में पूछा :

"क्या आप छात्रा हैं ?"

"हां कामरेड, राजधानी में पढ़ती हूं।"

"कहां जा रही हो ?"

यह तो मेरे टिकट पर साफ लिखा था जो उनके हाथ में था। पर मैंने नम्रता से उत्तर दिया।

"कैन्टन को, कामरेड।"

"किसलिए ?" वह अभी भी उत्सुक था। "तुम तो उत्तरी भाषा बोलती हो। तुम्हारा मकान तो कैन्टन में नहीं है, क्यों ?"

जिसका मैं अभ्यास कर रही थी वही उत्तर देने को मैं तैयार हो गयी। पर दूसरे सैनिक ने उसके कंधे को थपथपाकर कहा। "चलो। हमें और भी जरूरी काम करने हैं। हमारा काम तो चोरी छिपे माल लाने वालों को और निषिद्ध वस्तुओं को खोजना है। क्या तुम समझते हो कि यह कामरेड अपने जेब में चांगकाई-शेक को ले जा रही है, क्या सोचते हो।"

उन्होंने मुझे छोड़ दिया और डिब्बे में दूसरी ओर चले गये। मैंने शान्ति की सांस ली। ऊपर रैक पर अपना सूटकेस रख दिया और कविता की पुस्तक निकाल कर फिर पढ़ने बैठ गयी। वे अभी तक दूसरे मुसाफिरों की तलाशी ले रहे थे। मैंने मनचाहा पृष्ठ खोल लिया और मेरी आंखें पुरानी पंक्ति पर गड़

गयीं । "यात्रा कठिन है, मैं घर वापस चला जाऊंगा ।" जल्दी से मैंने दूसरा पृष्ठ बदल लिया ।

"मिस ?"

यह किसी आदमी की आवाज थी । वह मेरी सीट के पास खड़ा था, पर उसकी ओर मुड़कर देखने में भी मुझे डर लग रहा था ।

"मिस ?"

यह किस तरह का असभ्य और प्रगतिशील आदमी है ? मैंने सोचा, मैं उसकी ओर ध्यान न दूं यही अच्छा होगा । यही ठीक होगा कि उसकी ओर देखू भी नहीं ।

"मिस, क्या मैं आपसे दो बात कर सकता हूं ?"

मैं अपनी किताब पढ़ती रही, पर मैंने अच्छी तरह से नहीं देखा कि पृष्ठ में क्या लिखा था ।

उसकी आवाज में नम्रता और आग्रह था । "क्या मैं आपसे दो बात कर सकता हूं ? मिस, मेरे खयाल में हम एक दूसरे से परिचित हैं !"

अन्तिम वाक्य ने मुझे इतना चौंका दिया कि मैंने उसकी ओर देखा । हां, वास्तव में हम एक दूसरे को जानते थे । मैंने एक जाना पहचाना चेहरा देखा जो मेरी ओर देख रहा था । यहां तक कि काफी जैसे रंग की जाकिट और पीले खाकी रङ्ग की पैन्ट भी पहचानी हुई थी । मैंने भरपूर कोशिश की पर मुझे याद नहीं आया कि मैं उससे कहां मिली थी ?

वह नम्रता से मेरी ओर देखकर मुस्कराया और मेरे सामने बैठ गया । वह कौन था ? मैं अपनी स्मृति को झकझोरने लगी ।

"आपने अभी तीन सप्ताह पहले बी. ए. पास किया है, ठीक है न ? मुझे याद है मैंने अक्सर आपको कक्षा में जाते हुए देखा है, आपका चेहरा आपकी पोशाक यहां तक कि"—उसने मेरी सीट के पास टंगे कढ़े हुए कपड़े के थैले की ओर संकेत किया—"मैं आपके इस थैले को भी पहचानता हूं । कृपा कर मेरे इस मुंहफट तरीके को दोष न दें । पर वास्तव में यह एक संयोग है कि हम ट्रेन में इस तरह अप्रत्याशित रूप से मिले । मेरे बैठ जाने और आपसे बातें करने पर तो आपको कोई आपत्ति नहीं । है क्या ?"

और मेरे साथ ही चलने को कहे एक दूसरा पेता का छात्र ! यदि वह भी केन्टन जा रहा हो तो में क्या कर सकती थी ? मैंने अपने आपको धन्यवाद दिया कि कुछ मिनट पहले जब सैनिक मेरी तलाशी लेने आए थे वह मेरे पास नहीं बैठा हुआ था। मान लो तलाशी लेने वाला दल निश्चित जवाब देने पर जोर डालता; मेरी कहानी—"मैंने अभी मिडिल स्कूल पास किया है और कैन्टन में एक नौकरी के लिए जा रही हूं"—यदि मेरे साथी छात्र ने सुन ली होती तो गज़ब हो जाता।

उसने मेरी चुप्पी को रजामंदी समझ लिया और अपने बारे में कहानियों पर कहानियां कहने लगा। अपने नये काम पर जाते हुए वह कितना खुश था? मैंने उसकी बात अच्छी तरह नहीं सुनी। मैं एक नई कहानी रचने की उधेड़-बुन में लगी थी ताकि मैं उसे, या और किसी को जो मुझसे पूछ बैठे, संतुष्ट कर सकूं।

"देखो कामरेड ! कैन्टन तक अपनी शेष यात्रा में हम दोनों साथ ही क्यों न रहें।" उसने कुछ हिचकिचाहट के साथ ही "कामरेड" शब्द का प्रयोग किया था। "रास्ता अभी भी लम्बा है। मैं आपके और आपके असबाब की देख भाल के बारे में चिन्तित हूं, यदि आप पेता के एक पुराने सहपाठी पर विश्वास कर सकती हैं तो क्यों न मैं आपका अङ्गरक्षक बन जाऊं ?" उसकी सुखद निष्कपटता में मुझे कुछ दूसरी बात नजर पड़ी। उसने अपनी बात संयत भाषा में कही थी। क्या वह अपने आपको मध्ययुगीय प्रेमी समझता था ? "अच्छा इस बारे में आपके क्या विचार हैं कामरेड, वास्तव में यह सब आपके भले के लिए है—एक युवती और उसके साथ कोई नहीं। क्या आपको डर नहीं लगता कि कोई......।"

"डर नहीं लगता कि कोई आप जैसा न मिल जाय, आपका यही मतलब है ?" जैसे ही यह शब्द मेरे मुंह से निकल गये मुझे उन पर पछतावा होने लगा। अगर वह नाराज हो गया तो ट्रेन में लोगों के लिए तमाशा बनाना अच्छा नहीं था। मैंने शीघ्र ही अपना स्वर बदल दिया। "नहीं, मेरा यह तात्पर्य नहीं ? मुझे अफसोस है, अभद्र होने के लिए मैं क्षमा मांगती हूं। वास्तव में मैं आपके प्रस्ताव की क़द्र करती हूं। पर मैं अकेली ही सफर करने की आदी हूं। मैं अपने असबाब की खुद ही देखभाल कर सकती हूं। कुछ भी हो, आपकी कृपा के लिए धन्यवाद।"

शायद मेरे उत्तर में काफी नम्रता थी। हमारी सीटों की बीच में रखी हुए टेबिल पर वह झुक गया मानो मैंने उसे ऐसा करने का ही संकेत दिया हो। "ओह ! कामरेड झूठमूठ बातें बनाना छोड़ो। अपनी आंखें तो देखो। अपने साथी छात्र को अपनी देखभाल करने दो।"

मैं नहीं समझ पाई कि हंसू या नाराज हो जाऊं; पर मुझे उसे भगाना था। "पर कामरेड, अब तो रेलगाड़ी जनता की है। यह जनता के हाथ में है। अब सब चीजें ठीक और पूरी तरह से सुरक्षित हैं। मैं नहीं सोचती कि मुझ पर कोई आपत्ति आ जायेगी।" मैंने लज्जा से अपना सिर नीचे कर लिया। "इसके अलावा, जब मैं कैन्टन पहुंचूंगी" मैंने अपने ओंठों को रूमाल से थपथपाया—"मेरा प्रेमी मुझसे स्टेशन पर मिलने के लिए प्रतीक्षा में खड़ा होगा।"

उसने टेबिल पर जो हाथ रख दिया था उसे खींच लिय। "अच्छा, तब ठीक है, बहुत अच्छा मिस।" वह पुनः सीट का सिरहना लगा कर बैठ गया। "ऐसी बात है तो मुझे चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। हां, मैं—मैं आप से मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ।"

उसने सब से निकटतम बात की। भाई की तरह वह मुस्कराया और चला गया।

मुझे मालूम हुआ कि पुस्तक के अध्ययन से लोग मुझे परेशान करना बन्द नहीं करेंगे। थोड़ी देर के लिए मैंने अपना सिर खिड़की की ओर कर लिया, फिर पीछे की ओर झुक गई और सो जाने का बहाना किया। बस कोई भी व्यक्ति बातें करने के लिये मुझे नहीं जगायेगा यह निश्चित है। मैंने अपनी आखें बन्द कर लीं और मेरे और पीकिंग में मेरे परिवार के बीच जो शहर और खेत आये थे वे मेरे मानसपट पर मंडराने लगे। मैंने सोचा फिर से आंखे खोल लेना ठीक होगा। जिन प्रदेशों को मैं छोड़ती जा रही हूं उन्हें देखना ठीक होगा।

मेरे सामने वाली सीट खाली पड़ी थी। अब वहां लेनिन यूनीफार्म पहने एक व्यक्ति बैठा था। वह चालीस वर्ष का लगता था। उसका चेहरा चौड़ा, नाक दबी हुई और आंखें चौड़ी-चौड़ी थीं। वह थोड़ा मुस्कराया। "तो कामरेड आप जाग गईं, आपका सौभाग्य है कि आप सो सकीं। लम्बा सफर है, क्यों ? और मैं नहीं समझता कि तुमने पहले भी इतना लम्बा सफर किया है ? कम

से कम, कल तो आप सफर के बारे में खुश नजर नहीं पड़ रही थीं। कल जब मैं पास से निकला था तो आप रो रही थीं पर आज आप अच्छी हैं। क्यों न ?"

उत्तर में मुस्कराने के अलावा मैं और क्या कर सकती थी। "धन्यवाद कामरेड। सत्य तो यह है कि मैंने पहले भी अकेले सफर किया है। मैं ठीक हूं। मैं केवल सोच रही थी"—अपने माता पिता के बारे में कहने का मेरा साहस नहीं हुआ। यह कहना तो "सामान्तवादी विचारधारा" या "मध्यवित्त भावनावाद" होता— "सोच रही थी अपने साथ काम करने वाले कामरेडों के बारे में।"

"तुम विद्यार्थी दिखाई पड़ती हो। बोली से तो तुम दक्षिण की नहीं हो। क्या करती हो ? दक्षिण क्या अकेली ही जा रही हो ? कहां जा रही हो ?"

"कैन्टन"

"कैन्टन—बहुत ठीक, मैं भी कैन्टन जा रहा हूं, मैंने सोचा तुम शायद तू-हान के पास किसी जगह अध्ययन के लिए जा रही हो, कैन्टन को, क्या कैन्टोनी समझ सकती हो ?"

"मैं वहां पढ़ने नहीं जा रही हूं, समझे आप ! अतः यह कोई बात नहीं कि मैं वहां की बोली समझती हूं।

"तब किस लिये जा रही हो ?"

कुछ सैकिंड तक मैं प्रतीक्षा करती रही अन्त में बोली। "अपने प्रेमी से मिलने।"

"ओह—वह कहां काम करता है ?"

"स्कूल में।"

"कौन सा स्कूल ?"

उसकी आवाज भारी थी जो शायद आर्डर देने के लिये अधिक अच्छी थी।

मने सोचा कि यदि स्कूल का नाम बतला दिया तो वह अवश्य पूछेगा कि मेरा प्रेमी अध्यापक था या छात्र, वह क्या पढ़ा रहा था ? किस विभाग में ? उसका क्या नाम था ? उसका उपनाम ? यदि मैंने एक स्कूल गढ़ लिया जो वहां था ही नहीं और यदि यह आदमी कैन्टन को अच्छी तरह जानता हो। तो मुझे यह विषय छोड़ देना ही चाहिये।

"वह सुन यात-सेन यूनिवर्सिटी में काम किया करता था पर चूंकि वह बीमार हो गया इसलिये उसे घर वापस जाना पड़ा। उसने लिखा है कि उसकी बीमारी दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। मुझे निश्चित आशा है कि उसे तपेदिक नहीं है और उसने मुझे मिलने के लिये बुलाया है।"

"तो यह बात है।" वह हंसा और अपनी नाक पर आये पसीने को हाथ से पोंछने लगा "कल तुम इतनी देर तक रोईं, मैंने सोचा कि कोई बात जरूर होनी चाहिये। तुमने कहा कि तुम अपने कामरेडों के बारे में सोच रही थी।" उसके चेहरे का विनीत भाव प्रायः नाटकीय था। "इसके विपरीत मैं सोचता हूं कि तुम अपने प्रेमी का वियोग अनुभव कर रही हो।"

और प्रश्नों को टालने के लिये मैंने उस पर प्रश्नों की बौछार शुरू कर दी। वह कहां से आ रहा था? क्या करता था? वह खुश था और जिस किसी विषय को मैंने उसके सामने रखा उस पर वह दस मिनट तक बोलता रहा। अन्त में उसने अपनी घड़ी की ओर देखा और स्वयं ही बोलते हुये रुक गया। वह खड़ा हो गया। "कामरेड मुझे दुःख है पर मुझे अपने दल के साथ भोजन करना है पर बाद में हमें एक दूसरे से मिलने का अवसर प्राप्त होगा।"

उसने ज्यादा बातें करना? यह बहुत खतरनाक था। मैं उसको टाल सकती थी पर ट्रेन में तो बहुत से लोग थे। उनमें से कोई जरूर मेरे पास आ जायेगा और मुझ से प्रश्न पूछेगा। चाहे मुझ से प्रश्न पूछने वालों के मन साफ़ हों पर मैं बचकर भागे हुए बन्दी के समान थी और जितने ज्यादा लोगों के सम्पर्क में आई और जितने अधिक प्रश्न पूछे गये तो पकड़ कर वापस भेज दिये जाने का खतरा उतना ज्यादा हो जायगा। ट्रेन में खाने की गाड़ी में खाना खाते समय मैं खिड़की के बाहर अपनी आंखें गड़ाये देखती रही। खेतों में बने मकान, पेड़, उन पर गांवों का छत्ता और नदी के ऊपर छोटे छोटे पुल, सब उस दुपहरी में मुझे अपने समान ही एकाकी लग रहे थे। मैंने सूअर के गोश्त के टुकड़ों के साथ तले हुये मांस की तश्तरी खतम की और थोड़ा सा शोरवा लिया। उस चलती हुई गाड़ी में भोजन करने के डिब्बे से लौटकर मैं अनिश्चित मन से अपनी जगह पर आ गई। मेरा मन अभी तक परेशानी और आशंकाओं से भरा था।

फिर कहीं से मुझे प्रेरणा मिली। मैंने अपना रुपया निकाला और कण्ड-क्टर से मिलने चल दी। मैंने उसे बतलाया कि मेरी तबियत ठीक नहीं थी

ग्रौर कहा कि यदि सम्भव हो तो वह मुझे एक बर्थ दे दे। वह बहुत विनम्र था। "मेरे पास केवल एक जगह खाली है। दुर्भाग्य से उस चार लोगों के डिब्बे में तीन यात्री पुरुष हैं। मैं नहीं समझता कि वह ग्रापके लिये इतना उचित होगा। ग्राप क्या समझती हैं ?"

मैंने ग्रपने बंधे हुये नोटों को उसकी मेज पर रख दिया। "धन्यवाद कामरेड, मैं ग्रापकी यात्रियों की सेवा करने की भावना से प्रभावित हूं, पर मैं नहीं सोचती कि यह खाली सीट मुझे लेनी चाहिए। कृपया क्या ग्राप देखते रहेंगे कि कब सीट खाली होती है ? मेरे विचार से यह ठीक होगा कि मैं किसी स्त्री के साथ या कम से कम किसी विवाहित दम्पत्ति या इसी तरह के किसी ग्रन्य यात्री के साथ डिब्बे में रहूं।"

उसने मुझे पैसा वापिस दे दिया। "कामरेड, यह कोशिश करने में मुझे प्रसन्नता होगी। मेरे खयाल में कुछ सोने वाले मुसाफिर थोड़े स्टेशनों बाद उतरेंगे, तब ग्राप रुपये लेकर ग्रायें। ग्रगर ग्राप इस समय मुझे यह रुपया दे जायंगी तो सब को शक हो जायगा कि मैं घूस ले रहा हूं।"

उसके बाद जहां भी ट्रेन रुकती मैं कण्डक्टर से यह कहने के लिये भागी जाती कि वह मुझ से पहले किसी ग्रौर को बर्थ न दे। ग्रन्त में शाम के भोजन से पहले उसने मुझे नीचे की एक बर्थ दे दी। डिब्बे में नीचे की दूसरी बर्थ खाली थी। ऊपर की दो बर्थ पर कोई पति पत्नी थे जो शंघाई की भाषा बोल रहे थे। हालांकि वे ग्रधेड़ थे पर वे नव-विवाहितों की ग्रपेक्षा एक दूसरे से ग्रधिक प्रेम करते थे। बहुत रात तक वे वहां पड़े-पड़े ग्रापस में बातें ग्रौर एक दूसरे से मजाक करते रहे। उनका संग मिलने से मैंने ग्रपने ग्रापको भाग्यशाली समझा। वे ग्रपने ग्राप में ही इतने रमे थे कि उन्होंने मेरी ग्रोर तनिक भी ध्यान नहीं दिया।

इस तरह छिप कर दो दिन ग्रौर दो रात मैं प्रतीक्षा करती रही ग्रौर ग्रंत में ट्रेन कैंटन के रेलवे स्टेशन पर ग्राकर रुकी।

जब रिक्शे वाले ग्रपने भाड़े के लिये ग्रौर कुली मुसाफिर का ध्यान खींचने के लिये चिल्लाते तो खिड़की के बाहर मुझे ग्रपरिचित ग्रौर क्रोधपूर्ण लगने वाली दक्षिणी बोली सुनाई देती थी। यह शोरगुल, डरावना ग्रौर विचित्र था ग्रौर मैं डिब्बे की परिचित सुरक्षा को छोड़ना नहीं चाहती थी। उसी समय एक रूखा ग्रौर पसीने से तरबतर कुली पतली कमीज ग्रौर नेकर पहने मेरे

डिब्बे में घुस आया और उसने मेरे थैले को ले लिया। वह भीड़ में से इतनी बुरी तरह से निकल कर जा रहा था कि मुझे डर लगा कि कहीं मेरा थैला ही न ले कर भागजाय। इसलिये मैं जितना तेज हो सकती थी उसके पीछे पीछे दौड़ती रही। दक्षिण की गर्मी में पसीने से भीगी हुई मैं मुश्किल से उसके पीछे पहुंची ही थी कि ट्रेन के बाहर उसने मेरा थैला रख दिया और मजदूरी मांगी। चूंकि सैनिक मेरी तलाशी लेने का इन्तजार कर रहे थे मैंने उसे दुगना पैसा दे दिया पर वह फिर भी चिल्ला रहा था मानो मैंने उसे लूट लिया हो। अपने थोड़े से रुपयों में से मैंने उसे दो रुपये और दे दिये और उन्हें लेकर वह बिना धन्यवाद की औपचारिकता दिखाये किसी और शिकार की खोज में भाग गया।

इन्सपेक्टर के निकट की अपेक्षा अब मैं सड़क पर सुरक्षित थी। मैंने अपना हैण्डबैग खोल कर देखा कि श्रीमती लोह के नाम परिचय-पत्र अभी तक सुरक्षित था। अब मैं ने एक रिक्शा बुलाई और लिफाफे पर लिखे पते को उसे दिखलाया। मैं कैण्टानी बोली नहीं बोल सकती थी और न वह मेरी उत्तरी बोली समझता था। उसने किराया बतलाया। मैंने सिर हिला कर यह बतलाया कि मैं नहीं समझती। उसने मुझे दो अंगुलियां दिखलाईं और कुछ स्पष्ट बोलते हुए वह उन दोनों उंगलियों को मेरे सामने हिलाता रहा। क्या वह दो हजार या बीस हजार 'जिनमिन' डालर चाहता था ? यकायक ही मुझे याद आया कि मैं एक भगोड़ी थी और एक भागा हुआ अपराधी मोल भाव करने के लिये कैसे रुक सकता था। रिक्शे में सामान रखने के लिये मैंने उसे संकेत किया। उसने समझा कि जितना उसने मांगा था वह देने के लिये मैं राजी थी। वह कूदता हुआ मुझे ले चलने लगा। जब वह रुका तो मैं उतर गई। बहुत से बड़े मूल्य के नोटों को उसे देकर विनम्रता से मैंने बाकी लौटाने के लिये कहा। वह फिर मेरी ओर स्पष्ट भाषा में बोला और अपना सिर हिलाते हुए चला गया। मैंने उसे जाने दिया और घर में घुस गई।

घंटी बजाने पर यूनिफार्म पहने मिडिल स्कूल की एक छात्रा ने दरवाजा खोल दिया। मैंने उससे पूछा कि क्या श्रीमती लोह घर पर हैं। उसने मेरी ओर देखा और लड़खड़ाती हुई मन्दरिन भाषा में उत्तर दिया, "मां बाहर हैं आप रात को फिर वापिस आयें।"

"मैं पीकिंग से आई हूं", मैंने व्याकुलता से कहा। "मैं कैन्टन में और किसी को नहीं जानती और न मैं यहां पहले कभी आई हूं। तुम्हारी मां के मित्र का एक पत्र लेकर मैं आई हूं जिसमें मुझे यहां कुछ दिन ठहराने के लिये

प्रार्थना की गयी है। क्या मैं अन्दर आकर थोड़ी देर विश्राम नहीं कर सकती ?"

उसने अनिच्छा से सिर हिलाकर स्वीकृति दे दी और सूटकेस को अन्दर ले जाने में सहायता दी। फिर एक कप चाय देकर अपने कमरे में बिना कुछ कहे लौट गयी। उसकी छोटी बहन जो छः या सात वर्ष की होगी मेरे पास बैठी रही और जब मैंने उससे बोलने की कोशिश की तो वह मेरी बोली पर मूर्ख की तरह हंसने लगी।

बैठक में म व्यग्रता से प्रतीक्षा करती रही और अन्त में शाम होते होते श्रीमती लोह वापिस लौटीं। वे चालीस से ऊपर थीं। उनका चेहरा लम्बा और भावशून्य था। वे छपी लिनन की केन्टौनी ढंग की जाकिट और पाजामा पहने थीं। बन्डल को अपनी सबसे बड़ी पुत्री के हाथ में देते हुए उन्होंने मुझ से सुथरी हुई मन्दरिन भाषा में पूछा : "आपका शुभ नाम, आपको किसने भेजा है ?"

मैंने अपना परिचय दिया और उन्हें पत्र दे दिया। उन्होंने उसे सावधानी से पढ़ा और पहली बार मुस्कराई। "तो प्रोफेसर न्यू ने तुम्हें भेजा है ठीक है, वह मेरे पुराने मित्र हैं—दस साल से भी अधिक पुराने। इस नये वातावरण में वे कैसे हैं ?"

मैंने उन्हें बतलाया कि वे ठीक हैं और अभी तक पढ़ाते हैं। उन्होंने बड़े ध्यान से सुना मानो वे बहुत दिलचस्पी रखतीं हों। जब मैंने प्रोफेसर न्यू के बारे में कहना समाप्त कर दिया तो वे बोलीं : "मिस्टर न्यू का मित्र मेरा भी मित्र है। अगर आपको कोई परेशानी हो तो मैं आपकी मदद की भरसक कोशिश करूंगी। इस पत्र में तो उन्होंने आपकी सहायता के लिये कहा है पर यह नहीं लिखा कि मैं आपकी क्या सहायता कर सकती हूं ? ऐसा लगता है कि मेरे पुराने मित्र न्यू अब बहुत लापरवाह और भुलक्कड़ होते जा रहे हैं।"

क्या वे नहीं समझीं कि इससे तो प्रकट होता था कि वे कितने सावधान और बुद्धिमान थे ? मुझे विश्वास है कि वे समझ गयी थीं कि यदि प्रोफेसर न्यू श्रीमती लोह से लिखित में मुझे हांगकांग की सीमा पार भेजने में सहायता के लिये लिखते और यदि रास्ते में जिन लोगों ने मेरे सामान की तलाशी ली

श्रीमती लोह और मि० न्यू दोनों ही पुलिस द्वारा बुला लिये गये होते । मुझे उन पर विश्वास करना था इसलिये मैंने सीधा ही कहा ।

"मैं आपसे दो बड़े अनुग्रह चाहती हूं : पहला कुछ दिन मुझे यहां ठहरनें दें और दूसरा कृपया हांगकांग भेजने में मेरी सहायता करें ।"

मैं चकित थी कि उन्हें आश्चर्य क्यों नहीं हुआ ? शान्ति से वे बोलीं : "निस्संदेह आप जैसी युवती के लिये अकेले होटल में रहना ठीक न होगा । इस घर में आराम के साधन अधिक नहीं हैं पर कम से कम आप यहां वहां से अधिक घर जैसा अनुभव करेंगी । जहां तक हांगकांग जाने की बात है, यदि आप सतर्क हों तो वह अभी इतना कठिन नहीं है ।"

"क्या ! आपका मतलब है कि वास्तव में यह इतना कठिन नहीं है ?" मैंने बीच में टोकते हुए कहा । पीकिंग को वापस लौटे हुए मित्रों ने तो मुझे बतलाया था कि यहां से जाना बहुत कठिन है । पहले जाने के बारे में कम्युनिस्ट संतरियों से बातें करनी पड़ती थीं, फिर ब्रिटिश सरकार से प्रवेश की आज्ञा लेनी पड़ती थी और तब कहीं ब्रिटिश पुलिस सीमा में घुसने देती थी और यदि आपको ब्रिटिश पुलिस ने वापिस भेज दिया तो कम्युनिस्ट संतरियों को शंका होना स्वाभाविक था और ऐसा होते ही आपको पुलिस स्टेशन भेज दिया जाता ।

"अभी इतना मुश्किल नहीं है । लोग भारी संख्या में जा रहे हैं । कभी कभी कठिनाई होती है । अभी भी यदि कोई मामूली व्यापारी जैसा लगता हो तो अक्सर पहरेदार उतना नहीं सताते ।"

"हांगकांग पुलिस का क्या रवय्या है ?"

"वहां भी अभी अधिक कठिनाई नहीं है । हांगकांग पुलिस से आगे निकलने के लिये हम केण्टनवासियों को प्रवेश आज्ञा लेने की आश्यकता नहीं पड़ती । यदि हमारा आचरण संदिग्ध न हो तो हम अपनी इच्छा से आ जा सकते हैं ।"

"पर मैं तो केण्टनवासी नहीं हूं और न मैं केण्टनी भाषा ही बोलती हूं । शीशे को हीरे के रूप में आप कैसे चला सकती हैं ?"

"मेरे विचार से हम ठीक कर सकते हैं । आपको केण्टनी फेरी वाले व्यापारी की तरह कपड़े पहनने होंगे और थोड़ी कैण्टनी सीखनी होगी । अगर ग्रह अच्छे हैं तो सब ठीक हो जायेगा ।"

मैं अभी तक विश्वास नहीं कर सकती थी कि यह इतना सरल होगा। "अगर मेरे सीखे हुए थोड़े से शब्द प्रयोग कर चुकने के बाद वे मुझसे और प्रश्न पूंछें जिन्हें मैं न समझ सकूं तब क्या करूंगी। यदि एक बार हांगकांग पुलिस ने मुझे पहचान लिया और वापिस भेज दिया और अगर मुझे फिर दोबारा भागने का मौका भी मिला तो मैं इतनी घबड़ा जाऊंगी कि डरती हूं कि उनके कुछ पूछने से पहले ही कहीं मै खिलखिला कर हंस न पड़ूं।"

"जो सवाल वे पूछते हैं वे हमेशा एक जैसे होते हैं उनमें कोई नवीनता नहीं होती। कोशिश करने से पहले तुम्हें उनके उत्तरों का अभ्यास करना होगा। लेकिन अच्छा तो यही होगा कि हम ये मौका न जाने दें। अगर ये मौका हाथ से निकल गया तो आगे उम्मींद कम हो जायेगी। फिर कम से कम एक महीने तक इन्तजार करना होगा, जब तक लोग तुम्हें भूल न जायें और तुम्हें भाग निकलने का दूसरा मौका न मिल जाये।

लेकिन अभी चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं। यदि वे तुम्हें पहचान जायं कि तुम केन्टोनी नहीं हो और वापस भेज दें तो सीमा पर जाने के दूसरे भी रास्ते हैं। हम 'पीले सांड'* को आपको ले जाने के लिये खोज सकते हैं। निस्सन्देह इसमें काफी रुपया खर्च हो जायगा और आपको ऊबड़ खाबड़ रास्ते से जाना होगा। पहाड़ियों से चढ़ना होगा और कभी कभी नदियों को भी पार करना होगा। आप युवती हैं। आपके लिये यही अच्छा होगा कि मुख्य मार्ग से ही आप सीमा पार जायं।"

मैंने पूछा कि हांगकांग की सरकार कैन्टन वासियों के साथ विशेष पक्षपात का बर्ताव क्यों करती है और उन्हें स्वेच्छा से आने जाने क्यों देती है? उन्होंने मुझे बतलाया कि यह शायद इसलिये है कि हांगकांग की सरकार को डर है कि चीन के भीतरी हिस्सों से और विस्थापित आकर उस पर बोझ न बन जायें। फेरी वाले यात्रियों को वे नहीं रोकते क्योंकि ऐसे लोग कोलोनी के आर्थिक हित में हैं और हांगकांग में बसे बिना वे वहां आते जाते रहते हैं।

"मुझे दूसरी चिन्ता और है : आपके मोहल्ले के पुलिस स्टेशन में रजिस्ट्रेशन कराने के बारे में क्या करना होगा?"

---

* चीन और हांगकांग की सीमा पर 'पीला सांड' नाम का गिरोह लोगों और सामान की चोरी छिपे सीमा पार कराता है।

"बहुत आसान है। थोड़ी प्रतीक्षा करें। मैं एक नोट लिख ूंगी और अपनी लड़की के हाथ उसे भेज दूंगी।" उन्होंने मेरी आंखों की ओर देखा "आपका नाम ? निवास स्थान ? ठहरिये—आप स्वयं ही अपने बारे में सब कुछ लिख दें। मैं गलती नहीं करना चाहती।

बिना हिचकिचाये मैंने अपना जाली नाम और अन्य विवरण लिख दिये। मेरे हाथ से लिखाये जाने के लिये मैं उन्हें दोष नहीं देती। अगर वह जाली साबित हो जाता तो वे कह सकती थीं कि वे कुछ नहीं जानती।

वे चाय की चुस्की लेती हुई मुझे लिखते देखती रहीं। फिर उन्होंने एक प्रश्न किया जिसका मैं उत्तर नहीं देना चाहती थी। "आप हांगकांग किस लिये जा रही हैं ? लोगों से मिलने या काम ढूंढ़ने ?"

"पहले, लोगों से मिलने और फिर काम की तलाश की कोशिश करने।" चूंकि मैं उनकी आंखों से नहीं बच सकती थी मैंने उनकी ओर सीधे देखकर कहा। "मेरा प्रेमी हांगकांग में है। वह वहां अच्छी तरह से है—एक विदेशी आयात निर्यात फर्म में काम करता है। मुझे आशा है कि वह मेरे अनुरूप कोई काम खोज देगा।"

"मैं समझती हूं आपको काफी अंग्रेजी आती है। पर क्या आपको शार्ट-हैण्ड और टाइप भी आती है ? वहां हजारों लड़कियां हैं और काम मिलना मुश्किल ही है। पर यदि आप इन बातों को जानती हैं," उन्होंने मेरी स्टूडेण्ट यूनीफार्म और यात्रा से घिसे हुये जूतों की ओर देख कर कहा "यदि आप अपने वस्त्रों और जूतों को बदलें और उन्हें चमकीले और फैशनेबिल बना लें तो आपका काम ठीक हो सकता है और बनाव शृंगार का ढंग बतलाने के लिये भी आपको किसी को पकड़ना होगा।"

"इससे क्या अन्तर पड़ सकता है ? अगर मैं तेज गति से टाइप कर सकती हूं और अच्छी स्टेनोग्राफर हूं तो क्या मुझे कहीं काम नहीं मिल सकता ?"

"बनाव शृंगार करने में क्या दोष है ? आप वास्तव में बड़ी प्रगतिशील लगती हैं। क्या आप एक आफिस को इसलिये दोष देंगी कि वह सुन्दर और आकर्षक व्यक्तियों को काम देता है ?"

"ठीक है, मान लीजिये लड़की युवा और सुन्दर है पर अंग्रेजी और टाइप नहीं जानती तो क्या उसे वहां काम मिलने की गुंजायश हो सकती है ?" मैंने सोचा कि हांगकांग शीतोष्ण शहर होने से बहुत दिखावटी और रंगीला होना चाहिए।

"इतना ही पर्याप्त नहीं। जानती हो वहां बहुत सी सुन्दर लड़कियां हैं जिन्हें कोई काम नहीं मिलता।" मैं जिस परिस्थिति में जा रही थी उसका मुझे भान होने लगा।

उसी समय वही छोटी लड़की जो मेरी बोली पर मूर्खों की तरह हंस रही थी अपनी मां को प्यार करने के लिए दौड़ी आई और मुझे दुबारा देखा। श्रीमती लोह ने उसे चूमा और पूछा, "लिली क्या तुमने घर के लिए दिये गये स्कूल के काम को समाप्त कर लिया है?"

लिली ने कैन्टनी में उत्तर दिया। जिन एक दो शब्दों को मैं समझ पायी उनसे मैं यही समझी कि वह अपनी मां से कुछ मांग रही थी। श्रीमती लोह ने कैन्टोनी में उत्तर दिया जो मेरी समझ से परे थे। फिर लिली उछलती-कूदती स्कूल में सिखाये गये नये "मुक्ति गीतों" में से एक गीत को गुन गुनाती चली गई।

श्रीमती लोह ने देखा कि मैं निराश हो रही थी। उन्होंने अपने स्वर को बदल दिया। "पर शायद तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी ऐसी मुझे आशा है। इसके अलावा हांगकांग में तुम्हारा प्रेमी भी तो है। तुम्हें किस बात की चिन्ता है। देखा मैं भी कितनी बेवकूफ हूं। आप इन सारे दिनों ट्रेन में रहीं और मैं हूं जो आपको आराम का मौका दिये बिना ही बातें करने में लगी हूं। मैं सोचती हूं कि खाना खाने के बाद आपके लिये सबसे अच्छा यही होगा कि आप नहाकर सीधे बिस्तर में लेट जायें। हम आपकी समस्याओं पर कल भी बातें कर सकते हैं।"

अकेली होने पर फिर मैंने अनुभव किया जैसे मेरे आंसू ढुलक आयेंगे पर इस बार वे संतोष के होंगे। कम से कम मैं इतनी दूर तो आ चुकी थी और अभी पर्याप्त अवसर था कि बाकी रास्ते को भी तय कर सकूं। मैं कितनी दूर आ चुकी थी इसका मुझे ज्ञान न था। इसका मुझे तब पता लगा जब मैं सोने के कमरे से बाहर बरामदे में निकल कर दक्षिण के आसमान में सितारों की ओर देखने लगी।

दूसरे दिन सुबह श्रीमती लोह ने मुझे अपने साथ ले लिया और कैंटन की दर्शनीय चीज़ों को दिखा कर, मेरे विचार से, मुझे प्रसन्न रखने की कोशिश करने लगीं। चूंकि अब मैं चलने के लिये उत्सुक थी मैंने उनसे उन शब्दों को सिखाने का आग्रह किया जिन्हें पुलिस से बचने के लिये मुझे कैण्टोनी भाषा

में जानना आवश्यक था मैंने उनसे यह सिखाने का भी अनुरोध किया कि कैंटोनी व्यापारी औरत की तरह कपड़े कैसे पहने जायं। आखिर उन्होंने मेरा अनुरोध स्वीकार कर लिया और मुझे काली सुनहरी सिल्क से बनी कैंटनी वस्त्रों की एक पोशाक दिलाने के लिये एक दुकान में ले गईं। उन्होंने कहा, "अच्छा यह है कि इन्हें दिन में रोज पहनो और रात को धो कर सुखा दो। नये दिखने से शक पैदा होगा।" यह श्रीमती लोह ने मुझसे दुकान के बाहर निकल कर कहा। फिर हम सड़क के उस पार काले और चौरस ऐड़ी के सुन्दर कैण्टोनी जूते खरीदने गये।

घर पहुंचने पर श्रीमती लोह ने मुझे बतलाया कि 'सुमचुन' के पुल को पार करने के बाद ब्रिटिश सीमा में हांगकांग की ओर का कोई व्यक्ति मुझसे पूछेगा कि मैं कहाँ जा रही हूं। इसके उत्तर में मुझे हांगकांग कहना होगा। फिर वह मेरा पता पूछेगा मुझे उससे कहना होगा, ६ वूसंग स्ट्रीट, दूसरी मंजिल, कोलून। श्रीमती लोह ने इन उत्तरों को मेरे दिमाग में बार बार भर दिया। और जब भी गलती करती वे उच्चारण में सुधार कर देती थीं। खाते पढ़ते या यहां तक कि लोगों से बातें करते कैंटनी ध्वनि को मैं अपने दिमाग में हमेशा दुहराती रहती थी: हांगकांग, कोलून, दूसरी मंजिल, ६ नम्बर, वूसन स्ट्रीट।

तीसरे दिन जब कि ऊषा की लालिमा फैलने लगी थी श्रीमती लो ने मुझे पुकारा। मैं बिस्तर से फौरन उठ बैठी और जल्दी से अपना मुंह धोया। फिर अपने सिर में थोड़ा तेल डाल कर लम्बी चोटी कर ली। इसके बाद मैंने कैंटनी कपड़ों को और चौरस एड़ी के जूतों को पहन लिया। जब मैंने अपनी आकृति गुसलखाने के छोटे से बल्ब की रोशनी में शीशे में देखी तो मेरे विचार से मैं बहुत कुछ असल कैंटनी जैसी लगती थी। मेरी आकृति मुझ पर मुस्कराई। कैंटन आने पर यह मेरी पहली मुस्कान थी।

श्रीमती लोह मेरे साथ जा रही थीं। हम दोनों ने दो डलियों में ताजे करम कल्ले और कपड़ों का एक एक बण्डल लिया। मैंने अपने कपड़े नहीं लिए उन्हें तो मुझे वहीं छोड़ देना पड़ा। किसी को घर में जगाए बिना हम घर से चल दिए और एक रिक्शा करके सूर्योदय से पहले ही स्टेशन पर पहुंच गये। टिकट मिलने से पहले आधा घण्टे तक लाइन में इन्तजार करना पड़ा—निस्संदेह तीसरे दर्जे का टिकट लेना था क्योंकि यात्रा करके फेरी लगाने वाली व्यापारी औरतें पहले और दूसरे दर्जे का टिकट लेने का खर्चा नहीं उठा सकती थीं।

हम फिर लाइन में खड़े हो गए और राइफलों को लेकर खड़े हुए सैनिकों के पास घूमते रहे पर उन्होंने हमारी तलाशी न ली। आखिर सीमा पर दूसरे पहरेदार तलाशी लेने के लिए थे ही।

गाड़ी में बैठकर जब मैंने अपने चारों ओर देखा तो हंसी को मुश्किल से रोक सकी। शायद गाड़ी में हरेक व्यक्ति फेरी वाला व्यापारी था। उनमें से हर एक दो डलियां ले जा रहा था जिसमें अण्डे, करमकल्ले फल और कई तरह के खाद्य पदार्थ भरे थे। केन्टन की बजाय हांगकांग में इनकी ज्यादा कीमत मिल सकती थी। हर एक कैन्टनी वस्त्र और चौरस ऐंढ़ी के जूते पहने था। हर एक धाराप्रवाह कैन्टनी भाषा बोल रहा था। हरेक दूसरों को अविश्वसनीय लगता था। मैं जान गई कि अगर मैं अभी भी स्टुडैन्ट यूनिफार्म में होती तो शायद यहां बैठने से पहले ही पुलिस-स्टेशन में प्रश्नों का उत्तर दे रही होती।

हमने नाश्ता नहीं किया था। मैंने श्रीमती लोह को बतलाया कि मुझे भूख नहीं थी पर उन्होंने सोचा कि मैं तकल्लुफ़ कर रही हूं। उन्होंने चावल की दो तश्तरियां तथा मसालेदार मांस खरीद लिया। मैंने ज़बरदस्ती मांस के दो टुकड़े खाये पर चावल न खा सकी। मैं अधीर होती जा रही थी और ट्रेन के परिचित धक्के और हिलोरें मेरे अन्दर फिर से उन सभी भय और दुःखों को जगा रहे थे जिनका मैंने पीकिंग से आते समय अनुभव किया था।

दो घंटे बाद गाड़ी सीमा के पास रुक गई। मैं यहां तक आ पहुंची थी। पटरियां पुल तक बिछी थीं और जिन मुसाफिरों को हांगकांग जाना होता वे यहां उतरकर पैदल ही पुल पार करके दूसरी ट्रेन पकड़ते थे जो इससे मेल लेने के लिये प्रतीक्षा में खड़ी रहती थी। हम बाहर निकलने के लिये ट्रेन के दरवाजों की ओर बढ़ने का प्रयत्न कर रहे थे। डिब्बे में हर एक आदमी एक दूसरे से पहले उतरने के लिए प्रयत्नशील था। गर्मी बढ़ रही थी। हम व्यापारियों के झुंड के साथ कांटेदार तारों के घेरे की ओर लपके। लोग इतने अधिक थे कि सैनिक कोई व्यवस्था कायम नहीं रख सके। काफी देर बाद हम उस धक्का मुक्की, खींचातानी और लपक झपक में कुछ कदम बढ़ पाये।

एक सप्ताह से अधिक समय से मैंने एक दिन के लिये भी विश्राम न किया था। इसके अलावा मुझे गर्मी, भूख और प्यास भी लग रही थी। शोरगुल में, पसीने की बदबू और गोलियों जैसी चिल्लाहट के बीच में मुझे चक्कर आने

लगे। मुझे लगा मेरे घुटने टूट रहे थे। मैंने उनकी ओर देखा। सांस लेने के लिये भी मुझे कठिन परिश्रम करना पड़ रहा था। अब सोचती थी कि मैंने उस समय थोड़ा और अधिक मांस क्यों न खाया। मेरा सिर घूमने लगा। यदि मैं यहां बेहोश हो गई तो बड़ा बुरा होगा। इसी समय यकायक मेरे सामने वाली औरत मुझसे टकरा गई और मेरी ओर मुंह करके गाली देने लगी। उसकी पैनी आवाज ने मुझे बेहोशी से जगा दिया। श्रीमती लोह ने मुझे पीछे खींच लिया और क्षमा याचना की। मैं खामोश थी क्योंकि श्रीमती लोह ने मुझे ऐसा करने को कह रखा था।

अब तक सिपाहियों ने हमें धक्का देकर एक क्यू की तरह लाइन में खड़ा कर दिया था क्योंकि हम कांटे वाले तारों में खुली जगह के पास जगह लेने के लिये आपस में धक्का मुक्की कर रही थीं। जब मैंने पुल को देखा, जो कांटेदार तारों से घिरा था और जिसके दरवाजे अंग्रेजी के एक्स अक्षर की तरह बने थे और पुल के दूसरी ओर एक ध्वज-दंड से बर्तानिया का झंडा फहरा रहा था तो मैं अपनी तकलीफों को भूल गई और कैन्टनी भाषा के उन वाक्यों को याद करने की कोशिश करने लगी जिनकी मुझे अब आवश्यकता थी।

"कामरेड, मुझे तलाशी लेने दो।" जिस महिला सैनिक ने मुझे रोका था वह इतनी बुरी कैन्टनी बोलती थी कि मैं उसे समझ नहीं सकती थी। वह भी मेरी तरह उत्तर की रहने वाली थी। अब तक मुझे यह भान नहीं हुआ था कि मैं मुक्त क्षेत्रों में तलाशी लेने के आखिरी अड्डे पर आ पहुंची थी।

मैंने बुद्धू की तरह, यह स्वांग रचते हुए कि मैं कदाचित ही उसकी उत्तरी जबान को समझ सकती थी, उसकी ओर देखा। जब तक उसने मेरे करमकल्लों की और फिर मेरे पुराने कपड़ों की तलाशी ली मैं चुपचाप खड़ी रही। उसने मुस्कराते हुए कहा, "तुम बहुत ईमानदार हो।" उसने मेरे शरीर को थपथपाया और फिर कहा "अच्छा जाओ।"

इस बार मैं वास्तव में मुक्त कर दी गयी थी।

मैंने श्रीमती लोह के साथ पुल पार कर लिया था। अब मैं अधीर न थी। घेरे के बीच में नेकर और खाकी कमीज पहने और कंधों पर बर्तानिया का चिन्ह लगाये हुए एक चीनी पुलिसमैन ने मुझसे कैंटनी में पूछा कि मैं कहां जा रही थी। कैण्टनी भाषा में मैंने कहा 'हांककांग'। पुल के छोर पर एक

दूसरे इन्सपैक्टर ने फिर पूछा कि मैं हांगकांग में कहां जा रही थी। मैंने पता दोहरा दिया : ६ नम्बर, वृसंग स्ट्रीट, दूसरी मंज़िल।

हांगकांग के एक तीसरे पूलिसमैन ने हमें लाइन में चेचक का टीका लगाने के लिये खड़ा कर दिया। जैसे ही हमने टीका लगवाने के सर्टीफिकेट लिये हम कोलून के टिकट खरीदने चली गयीं। तब हमने चिल्लाने और पुकारने की आवाजें सुनी। "क्या हो गया ?" मैंने श्रीमती लोह् से पूछा। "क्या ब्रिटिश पुलिस ने कुछ उत्तरवासियों को कैंटनी बनने का स्वांग रचते हुए पकड़ लिया और क्या वे उन्हें वापिस भेजने की जबरदस्ती कर रहे हैं ?"

"झंझट में न पड़ो।" श्रीमती लोह् ने झटका देकर खींच लिया। "यह हमारा काम नहीं, चलो, यह तो हर समय होता ही रहता है। यहां से चलें और दूर हो जायें।" वह धीरे-धीरे मन्दारिन में कह रही थी पर मैं उसे सुन सकती थी। "चलो, इस रास्ते पर इस तरह से चिल्लाना बिल्कुल ही आम बात है हर एक के अपने अपने कारण हैं इससे परेशान न हो। यहां आ जाओ और कोलून स्टेशन के लिये अपने टिकट ले लो।"

हम ट्रेन पर सवार हो गये जो 'जनता' की नहीं थी। मैंने श्रीमती लोह् से पूछा कि कोलून पहुंचने में हमें कितनी देर और बैठना पड़ेगा। "इतनी जोर से नहीं।" उन्होंने मुझे चेतावनी के स्वर में कहा। "अभी हम खतरे से बाहर नहीं हैं। पिछले बार मैंने दो उत्तरी युवक छात्रों को पुलिस द्वारा गुमचुन वापिस भेजे जाते देखा था। मेरे खयाल में वे छात्र ही थे। वे बहुत बुद्धू थे। सीमापार करने पर वे इतने प्रसन्न हो गये थे कि जैसे ही वह कोलून ट्रेन पर सवार हुए अपनी उत्तरी भाषा में चिल्लाना और एक दूसरे से मजाक करना शुरू कर दिया। वास्तव में पन्द्रह मिनट बाद वे सुरक्षित हो जाते !"

कोलून स्टेशन पर हम गाड़ी से उतर गये। स्टेशन द्वीप के कम चौड़े किनारे के पास उस घाट के नजदीक है जिसके ऊपर इस कालोनी का नाम पड़ा है। हम उसबड़े और अंधेरे स्टेशन से बाहर आ गये जहां विदेशी दृश्य और ध्वनियों का मिश्रण था। चारों ओर बड़ी बड़ी लाल दो मंजिली बसें, छोटी लपकती हुई टैक्सियां, अपने वस्त्रों में जो सांवले दिखने वाले ब्रिटिश सैनिक, यूरोपीयन औरतें और तट पर काले रंग के भारतीय इन्सपैक्टर दृष्टिगोचर थे। किसी ने हमें अपनी करम-कल्ले की डलिया सहित तीसरे दर्जे के फाटक की तरफ संकेत किया। निचले डैक से श्रीमती लोह् मेरी ओर देखकर मुस्करायीं।

"तो आखिर तुम यहां आ पहुंचीं। मैं कल्पना कर सकती हूं कि तुम्हें देखकर तुम्हारा प्रेमी कितना खुश और उत्साहित होगा। अब क्या है? क्या विवाह भोज के लिये मुझे निमंत्रण मिलेगा।"

अब मैं उनसे सही बात कह सकती थी। "मेरा प्रेमी कोई आदमी नहीं है मैं पूरी तरह नहीं कह सकती कि वह क्या है। कुछ ऐसी बात है जिसे मैं अभी आप को अधिक नहीं बतला सकती। वह मेरे पीछे नहीं दौड़ रहा है पर मैं उसके पीछे दौड़ रही हूं।"

श्रीमती लोह नहीं समझीं और न मैं उनको समझा ही सकी। पहले मुझे अपने आपको समझाने के लिये शब्दों को खोजना होगा। उनकी अन्तिम विदाई और उनके अन्य विदा वाक्य "शुभ कामनाएं—पत्र भेजना" आदि अभी तक मेरे कानों में गूंज रहे हैं।

क्या मैं वास्तव में आ पहुंची थी? क्या मैं वास्तव में हांगकांग में थी? दो वर्ष बाद भी हरी ऊन जैसी पहाड़ियों के ऊपर नीला आकाश, हरा समुद्र, किनारे से लगे बड़े बड़े जहाज, सफेद नावें और मछुओं का कूड़ाकरकट, अभी तक एक नाटक या फिल्म का दृश्य जैसा लगता था। मुझे ऐसा लगा कि मैं दर्शक हूं जिसने टिकट खरीदा है या कहिये जो बिना टिकट ही घुस आया है और फिल्म देख रहा है। ऊंची ऊंची चोटियां, उनके नीचे छोटी छोटी पहाड़ियां और उसके इर्द गिर्द फैले हुए पहाड़ी द्वीप के तले में झुण्ड के झुण्ड सफेद मकान अभी तक नकली लगते हैं। मैं पूरी शान्ति के साथ नाटक देख रही हूं। मैं उसके बारे में उत्तेजित नहीं हो सकती। मैं खुशी का अनुभव नहीं करती पर मैं दुखी, क्रोधित या डरी हुई भी नहीं हूं।

आप सोच सकते हैं कि मैंने अनुभूति और आशा हमेशा के लिये छोड़ दी है।

मेरी पहले से ही थकी पुरानी आशाएं, इस जगह के चमकते हुए सूर्य में लुप्त हो गयी हैं। पर बुद्धि जागृत होने लगी है और अपना सर उठा रही है। वह मुझ से कह रही है कि आशा धुंधली नहीं हुई है। यह शान्ति से और अन्दर ही अन्दर मेरे प्रेम के पात्र को खोज रही है।

उपसंहार

मेरी डैस्क एक छोटी सी खिड़की के साथ सटी हुई थी । खिड़की से मुझे एक छोटे से ढलान पर जहां पहाड़ी और हरियाली अलग होती थी झोपड़ियों की कतार दिखाई देती थी । वहां दूसरे विस्थापित लोग रहते थे । सारे दिन जोर जोर से बहस, झगड़ा, बच्चों का रोना, मचलना तथा खाना या पुराने कपड़ों को बेचने की कोशिश करते हुए आदमियों की पुकार मैं सुनती थी। यद्यपि रात को ये आवाजें शान्त हो जातीं पर मेरी खिड़की से उन कैम्पों से बू आती रहती जिससे मेरे जैसे लोगों को उल्टी आने लगती । वह बदबू पहाड़ी के ऊपर सब्जी के फैले हुए खेतों में रात को गन्दगी से और रास्ते चलते लोगों द्वारा किए गए पाखाने से आती थी । यह पेता और उसकी पुस्तकों की गन्ध से बहुत भिन्न थी । यही वास्तविक दुनिया थी गन्दगी, कूड़ेकरकट और बू की दुनिया, जिसका अभी तक मुझे अपने जीवन में कोई अनुभव न था ।

रात को मैं मिट्टी के तेल का लैम्प जलाती । उसकी मन्द रोशनी में, जो किताब मैं पढ़ती या जिस कागज पर मैं लिखती वह पीला दिखलाई देता। उसकी लौ से धुआं निकलता और वह इधर उधर हिलती रहती थी । पर जलते हुए मिट्टी के तेल की बू उस गन्ध से कहीं अच्छी थी जो रात को शीतल हवा मेरी खिड़की से लाती थी । जब मैं लैम्प से हटकर अपने चारों ओर अंधेरे को देखती तो मैं दुःख और दर्शन से भरी निराश हो छोटी छोटी कवितायें लिखना चाहती थी । पर जो काम मैंने अपनाया था उसके लिए यह आवश्यक था कि मैं बहुत ही बुद्धिसंगत और भड़कीली बातें लिखूं । अतः मैं और भी तेजी से लिखने लगी ।

जब मैं रात को काफी लिख चुकती तो बत्ती बुझाकर, कपड़े उतार बिस्तर में घुस जाती । बिस्तर मेज के पास ही बना हुआ था । यह सख्त और पुरानी लकड़ी के तख्तों का बना था और जब भी मैं उस पर सोती तो जितनी बार करवट लेती वह जोर से चर्राता ।

किसी दिन अपने मित्रों की तलाश करते समय प्राप्त अन्धकारमय शयन-कक्ष में पड़ी मैं सोचा करती । उस कमरे के मिल जाने से मैं अपने आपको

भाग्यशाली समझती थी, उसमें एक बिस्तर और किताब लिखने के लिए एक मेज तथा मेरे समान अनुभव वाले और मेरे उसी हालत में रह रहे मित्र आस पास फैले हुए थे पर मुझे अपने माता पिता के घर में अपना कमरा याद आया। मेरे पास पढ़ने के लिए वहां एक बिजली का लैम्प था, मुलायम बिस्तर था, और कपड़ों को रखने के लिए अलमारी थी। मैं स्वीकार करूंगी कि कभी कभी मुझे अपने लिए दुःख होता था।

क्या आप जानते हैं कि विस्थापित होने पर कैसा अनुभव होता है? आप एक अनजान शहर के यातायात की खड़खड़ और हों हों के बीच अपने किसी दूर के रिश्तेदार का मकान ढूंढ़ते ढूंढ़ते उसके पास पहुंचते हैं क्योंकि वहां वही आपका एकमात्र परिचित है, उसके यहां पहले ही अपने परिवार की भीड़भाड़ है पर पारिवारिक सम्बन्धों के कारण वह आपको भी जगह दे देता है। अतः आप जो कुछ अपने साथ ला सके थे उसे अपने साथ लेकर किसी कमरे के एक अंधेरे कोने में ठहर जाते हैं। जब उनका कोई अतिथि वहां हो तो आप, ज्यादा बात करने का साहस नहीं करते। भोजन के समय तश्तरियों में से ज्यादा खाने की हिम्मत नहीं करते। आप खाने की सलाइयों से अपने निकटतम तश्तरी में से ही खाने का साहस कर सकते हैं। मेज को इस्तेमाल करने में भी आपको डर लगता है। आप कुर्सी पर बैठकर या अपनी चारपाई के सिरहाने बैठकर अपने घुटनों पर किताब के ऊपर कागज का टुकड़ा रख कर पत्र लिखते हैं। बाद में जब रोशनी बुझा दी जाती है तो आप कहीं स्वतंत्रता की सांस ले पाते हैं। कम से कम आपको वे तीखी नजरें तो नहीं सहनी पड़तीं, जो लोग विस्थापितों पर डाले बिना नहीं रह पाते।

पर सुबह उठते ही आप फिर विस्थापित हो जाते हैं। आपको बाहर जाकर काम तलाश करना पड़ता है। यह नहीं कि आप यह आशा करते हैं कि आपकी विस्थापित छात्र जैसी वेशभूषा आपको नौकरी देने वाले मालिक को प्रभावित करती है। जब कि आप कैन्टनी भी नहीं बोल सकते, जब रात को आप घर वापिस लौटते हैं तो नौकरी आपसे उतनी ही दूर है जितनी कि पहले थी। और अपने उन दूर के रिश्तेदारों का सामना आप कैसे करेंगे?

इससे तो छोटा शयनागार, सख्त बिस्तर और बदबू ही अच्छी है। कम से कम आपको अपने दोस्तों के बीच रहने और स्वयं अपना निर्वाह करने का मौका तो है। आप दो प्रकार से भाग्यवान थे। पहले तो यहां आपके "दूर के रिश्तेदार" हैं और दूसरे यहां आपके मित्र भी। पर थोड़ी सी कल्पना करके

आप उन अभागों का अनुमान लगा सकते हैं, जिनके पास न पैसा है और न देखने भालने के लिए मित्र ही। वे कोई जगह ढूंढ़ने के लिए सड़कों पर चक्कर काटते हैं। चबाने के लिए मोटी, रोटी खरीदने को एक एक पैसा मांगते फिरते हैं। वे कहां सो सकते हैं ? शायद सड़कों पर ही। पर ऐसी सम्भावना हमेशा रहती है कि कोई पुलिसमैंन उन्हें जगाकर किसी दूसरी जगह भेज दे। "दूसरी जगह कहां ?" हर जगह तो लिखा है "निजी सम्पत्ति, अंदर न आएं।"

एक लड़के ने होटल के जीने पर थोड़े दिन के लिए जगह पा ली। वहां ठंड थी पर हवा नहीं पहुंचती थी। हमारी तरह ही उसने भी यह नहीं सोचा था कि हांगकांग में सर्दी में इतनी ठंडी और नमी होती है। वहां रहने वाले अधिकतर लोगों ने उसे नजरअन्दाज कर दिया। पर एक नौजवान छैले ने, जो तीसरी मंजिल पर रहता था, एक दिन उसे लात मारकर जगा दिया जब उसने देखा कि वह लड़का ज़ीना को रोके पड़ा था। एक दूसरी बार तीसरी मंजिल पर रहने वाली एक अधीर औरत ने उसके हाथ पर थूक दिया जिससे वह अपना मुंह ढक कर सो रहा था। और एक बार एक नौकरानी ने, जो सीढ़ियों पर जोर जोर से आ रही थी, कुत्तों के खाने से भरे हुये बर्तन को जानबूझ कर उसके सिर पर डाल दिया। पर उसका यह कष्ट हमेशा रहने वाला नहीं था। अंधेरे में उस हो हुल्ले की कुत्तों के रहने की जगह पर भी वह लड़का अपनें बहुमूल्य निधि फाउन्टेनपेन का उपयोग कहानियां लिखने के लिये किया करता था जो किसी तरह विस्थापितों की एक पत्रिका में छप गईं। फिर हमारे गुट ने उसका पता लगा लिया और उसको अपने साथ रहने के लिये बुला लिया।

जिन दो और लड़कों को में जानती थी वे काफी भाग्यवान थे। उन्होंने एक स्कूल में रात को पहरा देने वाले आदमी से दोस्ती गांठ ली और अन्त में एक कक्षा में सोने की इजाजत भी ले ली। रोज रात को वे चुपचाप कमरों में घुस जाते और कुछ मेज़ों को मिलाकर बिस्तर बना लेते। पौ फटने से पहले ही चौकीदार उन्हें जगाने आ जाता और बाहर जाने की चेतवानी दे देता। वे मेज़ों को उनकी पुरानी जगह पर रख देते और जल्दी से उन्हें साफ करके फिर चोरों की तरह सड़क पर निकल आते।

आप पूछ सकते है, ये हृष्ट-पुष्ट नवयुवक नौकरी की तलाश क्यों नहीं करते थे ? उन्होंने की थी और कुछ को मिल भी गई। एक भूतपूर्व छात्र को ऐसा काम स्वीकार करना पड़ा जिसके बारे में एक वर्ष पूर्व वह स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था।जब पुराने विचारके परिवारों में शादी या मातम

जाता तो काफी शोर मचाने के लिए फटे पुराने चिथड़े पहने बाजे वालों को भाड़े पर बुला लिया जाता। मेरा मित्र इन बाजे वालों में शामिल हो गया। वह पुराना कढ़ा हुआ चोगा और रंग विरंगा टोपा पहन कर, जो उसकी भौहों तक आता था, इन समारोहों में तुरही बजाता या ढोल पीटता हुआ चलता था। उस भयंकर कोलाहल में उसने शायद हंसना या चिल्लाना चाहा होगा पर उसे अपने ओठ तुरही पर रख कर उसे बजाना पड़ता था, जबतक लाश को कब्र में दफना न दिया जाता या प्रसन्न दम्पति, विवाह मंडप में जाकर लुप्त न हो जाते। अन्यथा उसका, यह काम भी जो कि उन दिनों मिलना कठिन था और जो भोजन और वस्त्रों के लिए भी अपर्याप्त था कोई दूसरा विस्थापित ले लेता।

अपने इस काम में कौन सी चीज़ मेरे मित्र को सबसे अधिक पसन्द थी ? हालांकि वह नया था पर हांगकांग में थोड़े बहुत लोगों को वह जानता था। उन में से कुछ लोग उसकी सहायता करने के इच्छुक न थे और कुछ असमर्थ थे। कुछ उस पर कम्युनिस्ट-पक्षीय होने का शक करते थे क्योंकि वह कम्युनिस्ट सैनिकों के आने से पहले चीन छोड़ कर नहीं भागा था। कुछ लोगों से वह सहायता चाहता नहीं था क्योंकि उसे वह काम करना पड़ता जिसे वह बेईमानी का काम समझता था। पर मान लो उसके परिचितों में से किसी ने उसे इस हास्यास्पद गुट के साथ तुरही बजाते हुये और मुर्दे के पीछे-पीछे जाते देख लिया ? जो चीज मेरे मित्र को सबसे अधिक पसंद थी वह थी उसकी बड़ी ढीली ढाली टोपी जो उसकी नाक तक लटकती रहती थी।

यह ठीक है कि हांगकांग में इतने मातम और शादी विवाह नहीं होते हैं कि जो भी वहां काम करना पसंद करता उस को काम मिल जाता। कुछ छात्रों को सूती कपड़े के कारखानों में मजदूरों का काम मिल गया। कुछ लोगों को दियासलाई के बक्स बनाने या सोने और चांदी के वर्क मोड़ने और दुकानों पर विदेशी यात्रियों को बेचने के लिए कुछ कढ़ाई करने का काम, सरीखे अजीब से काम मिल गये। कुछ लोग जो दूर शहर में गन्दी जगहों पर रहते थे, वे जली हुई सिगरेट के टुकड़ों को इकट्ठा करके सस्ती सिगरेट बना लेते थे। कुछ रद्दी कागज और रांगे की पन्नी इकट्ठा कर लेते। कुछ अन्य, विदेशी धनाड्य स्त्रियों के पुराने निलन के मोजे लेकर उन्हें ठीक करके बेच देते।

मैं समझती हूं कि कितने ही मध्यवित व्यापारियों, भूपतियों, अध्यापकों, पत्रकारों तथा सरकारी अधिकारियों के बेटे बेटियों ने हांगकांग में अनुभव किया होगा कि दिन में एक बार भोजन चाहे भूख को दूर कर सकता हो पर जिन्दगी

को चला सकता है। वेष भूषा का कोई महत्व नहीं रहा था। स्कूल में चाहे किसी ने बालों को इसलिए बढ़ाया हो कि दूसरे लोग उसे कलाकार या कवि समझें पर अब इसलिए बढ़ाने पड़ते थे कि इन्हें कटवाने के लिए पास पैसा न था। हमने समझ लिया था कि शरीर की गर्मी और रहने के लिये मकान कितना आवश्यक था। अगर आपका भाग्य अच्छा था तो आप को गैर कानूनी बनी हुई झोपड़ियों में से किसी में, अपने दो या तीन मित्रों के साथ जगह मिल जाती यदि आपको पैर सिकोड़ कर सोने की आदत हुई तो आपको सोने के लिये स्थान मिल सकता था। झोपड़ियों में गर्मी की धूप और सर्दी की नमदार हवा उसके अन्दर आ जाती। गर्मियों में दिनभर मूसलाधार वर्षा को सहन करना बड़ा दुःखदायी होता था। जब भी वर्षा होती, हर बार बाहर के मौसम के साथ हमदर्दी रखने के लिये झोपड़ी के अन्दर भी पानी टपकने लगता।

लेकिन मैं चित्र का अंधकार पक्ष ही उपस्थित करना नहीं चाहती। और मैं यह भी नहीं चाहती कि उसे चित्रित करने में अधिक समय लगाया जाय। मेरा ऐसा खयाल है कि हांगकांग में ऐसे बहुत कम लोग होंगे जो आत्म-ग्लानि से मुक्त हों। पर अन्त में निराशा और उदासीनता की पहली भावना असन्तोष में बदल जाती है और अधिकांश लोग उससे बचने का रास्ता खोजने में लग जाते हैं। कुछ लोग गैर-कानूनी तौरपर बनी हुई झोपड़ियों में रहने में ही सन्तोष मान लेते हैं और उन परिस्थितियों में जीवन का सर्वोतम उपयोग करते हैं। दूसरे थोड़े आगे बढ़ते हैं और नई दुकानों और व्यापारियों के यहां क्लर्क या फौकिस हो जाते हैं। इन दुकानों और व्यापार को पुराने और अधिक सम्पन्न विस्थापितों ने शुरू किया था जो अपने साथ कुछ पैसा ले आये थे। कुछ लोगों ने अध्यापन और ट्यूशन का काम कर लिया। बहुत थोड़े लोग थे जो पासपोर्ट और अनुज्ञापत्रों की बाधाओं को पार करके अपनी शिक्षा को पूरा करने के लिये विदेशों को चले गये थे।

और शेष लोग? और जो हमारी तरह ही सोचते थे वे क्रमशः सम्पर्क में आने लगे, एक दूसरे को पाने लगे। हम अब विस्थापित कहे जाना पसन्द नहीं करते थे—कम से कम तब तक तो नहीं जब तक हम सब आपस में मिल सकते थे, और अपने रहने के स्थानों और वहां के लोगों तक पहुंचने की कोशिश कर सकते थे। हम विद्यार्थियों ने यदि कम्युनिस्टों से और कुछ नहीं तो कम से कम यह तो सीखा था कि किस तरह संगठन करना चाहिये? पर इस बार हम स्वयं संगठन करना चाहते थे।

हम में से जिनके विचार एक से थे उन्होंने एक संगठित गुट या संघ बना लिया जो अब पहले से काफी मजबूत हो गया है। हमारे विचार में हमारे सामने दो काम हैं। एक तो अपनी और अपने मित्रों की सहायता करना जब तक कि चीन की मूल भूमि पर परिवर्तन के लिये कुछ कर सकें, और दूसरा इससे भी अधिक महत्वपूर्ण काम किसी प्रकार कोई प्रभावशाली कदम उठाना था।

अब तक हमने काफी किताबें लिखी थीं, तथा कुछ पेम्फलैट और पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी किया था। हमने यहां तथा अन्य जगहों पर भी दूसरे गुटों से सम्पर्क स्थापित करना शुरू किया था। यह हम नहीं जानते थे कि इससे क्या बनेगा अथवा इससे कितनी प्रगति हुई या क्या ऐसे बहुत से लोग हैं जो इसे सुनेंगे। हम एक बात के बारे में निश्चित थे, कि हम कम से कम प्रारम्भ से ही आरम्भ करके, ठीक काम कर रहे थे।

इससे मेरा अभिप्राय है कि जिस चीन को हम छोड़ आये थे वहां क्या हो रहा है उसे समझते रहना और जो कुछ हमें ज्ञात हो उसका यथासम्भव वस्तु-गत विश्लेषण और वर्णन करना हमने अपना काम बना लिया था। हम अध्ययन करना चाहते थे कि कम्युनिस्ट किस तरह हमारे मित्रों को सन्तुष्ट करने में सफल होते हैं और किस तरह कितने और दूसरों को धोखा देते हैं कि वे फिर कुछ भी नहीं कर पाते। कम्युनिस्ट अपील का आधार क्या है ? वे क्यों विजयी होते हैं ? वे अपनी ताकत को कैसे बढ़ाते और कायम रखते हैं ? उनके कुछ उत्तर तो स्पष्ट थे। पर कुछ में निरीक्षण और अन्वेषण की आवश्यकता थी। दूसरे शब्दों में मैं समझती हूं, आप कह सकते हैं कि चीन के बारे में कुछ करने की योजना बनाने से पहले यह पता लगाना हमारा काम था कि वहां क्या हो चुका और क्या हो रहा है ?

जब मैं इस गुट में सम्मिलित हुई तो अनुसंधान और विश्लेषण का काम पहले से ही शुरू हो चुका था। मुझे दिये गये अंधेरे शयनागार के बारे में जब मुझे शिकायत करने की इच्छा हुई तो अपने आप मेरे मन में दूसरे कमरे में रहने वाली लड़की के बारे में विचार उठा। उसके पास भी एक मेज और बिस्तर था जो दोनों आपस में जुड़े हुये थे। और जगह मुझसे भी कम थी। क्योंकि कमरे का एक भाग तो चीन से आने वाले कम्युनिस्ट समाचार पत्रों और पत्र-पत्रिकाओं की पिछली प्रतियों के इकट्ठे होने से ही भर गया था।

यह हमारा पहला "अनुसन्धान केन्द्र" था। यह अब बढ़ गया है और दूसरी बड़ी जगह चला गया है। इस योजना में जो लोग काम करते हैं उन्होंने अभी तक १,४५,००० विभिन्न समाचार काट कर फाइलें बना ली हैं जिसमें हमारी रुचि के हर विषय के बारे में कुछ न कुछ है। भूमि सुधार के नाम पर ढाये गये जुल्मों से लेकर बाध्य होकर हमारे शिक्षकों द्वारा उन सभी बातों का सार्वजनिक परित्याग जिसमें वे हमेशा से विश्वास करते आये थे और जिसके लिये हमेशा लड़े थे, इसमें सम्मिलित थे। हमारे गुट के सदस्य और दूसरे लेखक भी अपने लेखों और किताबों की सामग्री इसमें से ही लेते हैं।

और हम पता क्या लगा पाये हैं ? केवल वही न जिसे कम्युनिस्ट हमें पढ़ाना चाहते हैं या जो असावधानी से उनके हाथ से निकल जाता है। तथापि हमारे लिये देश में हुए उन बड़े-बड़े परिवर्तनों की धुंधली झांकी ही पर्याप्त है जो १९५० में मेरे देश छोड़ आने के बाद हुए थे। इन परिवर्तनों में, भूमि सुधार, विचार सुधार, प्रतिक्रियावादियों का शिकार (निस्सन्देह यह आधुनिक युग का अत्यन्त सफल निष्पादन था क्योंकि हमें कम्युनिस्ट समाचार-पत्रों से लेख प्राप्त हुये हैं जिनमें कार्यकर्ताओं को आज्ञायें दी गई थीं कि प्रतिक्रिया-वादियों का "दमन जोर शोर से किया जाय"), मध्यवित वर्ग पर आर्थिक प्रहार, अमरीका-विरोधी और कोरिया सहायता आन्दोलन, "तीन दोष" और "पांच दोषों" के विरुद्ध सनफानवूफान आन्दोलन जो पार्टी में शुरू हुआ था और बाद में स्कूलों और दूसरी सरकारी संस्थाओं तक फैल गया था और जो अन्त में चीन में हर दुकानदार तक पहुंच गया, आदि सम्मिलित थे।

पर मेरे परिवार और मेरे शेष देशवासियों के साथ जो गुजरी वह वर्णन करना मेरे सामर्थ्य से बाहर है। हमारी सबसे अधिक व्यक्तिगत दिलचस्पी स्वाभाविक तौर पर यह जानने में थी कि हमारे सहपाठियों और छोटे भाई बहिनों के साथ क्या गुजरी ? हम उन सभी लोगों से मिलने का प्रयास करते जो हमारे बाद चीन से भाग कर आते। पर जो कुछ हम यहां चीन से आने वाले समाचार-पत्रों को आद्योपान्त पढ़कर जान पाते, उससे अधिक उनसे कुछ भी पता न चल पाता।

फिर भी हम थोड़ी बहुत बातें जानते ह। यूनिवर्सिटी और मिडिल स्कूल में रहने सहने की स्थिति १९५० से अब अधिक कठोर हो गई है। उस समय हम दुःखी थे कि हम अपने भोजन के लिये मही` में केवल "५२००० जिन-

मिनप्यो' मूल्य की ज्वार का भोजन पाते थे । अथवा एक दिन में हम लगभग दस आने के मूल्य का भोजन पाते थे । मध्यवर्ती दक्षिणी चीन के लिये कम्युनिस्टों के मुख-पत्र 'चांगचिंगा' दैनिक के १६ जुलाई १६५१ के अंक में एक समाचार के अनुसार हुनान यूनिवर्सिटी में हर छात्र को '४५००० जिनमिनप्यो' मूल्य का भोजन मिल रहा था। मिडिल स्कूल के छात्रों को इससे भी कम मिलता था। चुंगकिंग के 'ता कुंग पाओ' में २१ दिसम्बर १६५१ को एक समाचार था कि लोशन गर्ल्स मिडिल स्कूल की छात्राओं को महीने में '४२००० जिनमिनप्यो' के मूल्य का भोजन मिलता है । छः महीने बाद १७ जून १६५२ कोंपीकिंग के 'क्वागमिंग' दैनिक ने शिकायत की कि चौथे म्यूनिसिपल मिडिल स्कूल के छात्रों को तीन वर्ष पुराने मंचूरिया के अन्न पर जीवित रहना पड़ रहा था जो खाने में कड़वा और देखने में हरा हो गया था । और इस अन्न के साथ केवल ५ छटांक करमकल्ला और आधा तोला वनास्पति तेल और मिलता था।

पर ऐसे असम्बद्ध तथ्यों से अधिक निष्कर्ष निकालना सम्भवतया गलत है। चीनी समाचारपत्रों में दूसरी रिपोर्ट भी प्रकाशित हुई जिसमें दावा किया गया है कि विद्यार्थी जीवन में बराबर सुधार होता जा रहा है। चीन के स्कूलों में वास्तव में जो हो रहा था उसका आभास १६५१ के ग्रीष्म और पतझड़ के दिनों में मिला। जब कम्युनिस्टों के शब्दों में शिक्षण विभाग की 'भ्रामक अवस्था' में सुधार आन्दोलन मध्य चीन में शुरू हुआ और धीरे-धीरे सारे देश में फैल गया। हमें जो झलक मिली उससे सन्तोष ही हुआ। एक साल या अठारह महीने बाद नये नेताओं ने उन गलतियों को स्वीकार किया था जो पेता में हमारे समय की गई थीं।

जिस आन्दोलन का मैं वर्णन करना चाहती हूं वह गर्मियों के प्रारम्भ में शांति से उस समय शुरू हुआ था जब चुंगकिंग के 'जिन हुआ जी पाओ' समाचारपत्र ने स्वीकार किया कि "उच्च शिक्षा के निजी और सार्वजनिक स्कूलों में (दक्षिणी पश्चिमी चीन में) छात्रों की संख्या गत छः महीनों में २३ प्रतिसत कम हो गई है। उसी समाचारपत्र ने यह भी बतलाया "चुंगकिंग के मिडिल स्कूलों में भर्ती ५४ प्रतिशत कम हो गई थी। क्यों ?" पार्टी, सेना, राजनीति और नागरिक संस्थाओं ने हर जगह छात्रों को स्वेच्छा से कार्यकर्ता के रूप में कार्य करने के लिये भरती कर लिया था। उन्होंने बेमेल सामाजिक गतिविधियों में भाग लेने के लिये विद्यार्थियों और अध्यापकों को भरती कर लिया

अथवा स्कूलों को अपनी सभाओं के लिये ले लिया। इससे बहुत गड़बड़ मच गई* ।

जेचूअन यूनिवर्सिटी के छात्रों में तो विशेष तौर पर खलबली मची होगी क्योंकि समाचार पत्र के अनुसार उनकी यूनिवर्सिटी के समूचे इलाके को मीटिंग करने के अभिप्राय से पूरे चार सप्ताह के लिये ले लिया गया था। "सोने के कमरे, क्लास रूम और भोजन करने का बड़ा हाल, सभी ले लिये गये थे। छात्रों को या तो दूसरी जगहों पर जाना पड़ा या कई-कई लोगों को मिलकर लाइब्रेरी के कमरों में एक साल रहना पड़ा।" मैं यह स्वीकार करूंगी कि पेता में हमारे साथ कम से कम ऐसा नहीं हुआ।

इस रिपोर्ट के प्रकाशन से संकेत मिल गया कि दूसरी जगहों के स्कूलों को भी अपनी अवस्था के बारे में शिकायत करने में कोई हानि नहीं थी। पीकिंग के 'पीपिल्स डेली न्यूज' ने उसी समाचार में लिखा कि पूर्वी चीन के कुछ स्थानों में स्थिति दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्रों से कहीं अधिक गम्भीर थी। "फूकीन, चीक्यांग और दक्षिणी और उत्तरी अनावी से इकट्ठे किये गये तथ्यों से मालूम हुआ है कि ऐसे उदाहरण अक्सर सामने आ रहे हैं जहां विद्यार्थियों को "सरपट कामों", स्वागत समारोहों, विदा समारोहों, मीटिंग की जगहों को तैयार करने, या सामूहिक कर देने वाले (व्यापारियों) या सामूहिक अनाज देने वाले (किसानों) को विदा देने के लिये नगाड़ा नृत्य करने वालों में हिस्सा लेने के लिए जबरदस्ती ले जाया गया है—वे (पार्टी और राजनीतिक संस्थाएं) शैक्षणिक व्यवस्था को सामयिक व्यवस्था समझते हैं और मनचाहा जब शैक्षणिक कार्यकर्ताओं को भरती कर लेते हैं यहां तक कि स्कूल का काम बिलकुल ठप्प हो जाता है। स्कूल में स्कूल का प्रशासन ट्रेड यूनियन, विद्यार्थी संस्थाएं, पार्टी युवक संघ, महिला संघ, चीनी शान्ति संस्था तथा चीन रूस मित्रता संघ आदि की अपनी अपनी व्यवस्था होने के कारण अनेक नेतृत्व खड़े हो गये हैं। अध्यापकों और विद्यार्थियों के सिर पर अनेक प्रकार के काम, सम्मेलन तथा सामाजिक गतिविधियों का बोझ आ पड़ता है जिसके कारण अच्छे से अच्छा विद्यार्थी भी पिछड़ जाता है। शिक्षक जितना अधिक प्रगतिशील होता है उतना ही अधिक उसे सभाओं में हिस्सा लेना पड़ता है और उसी अनुपात में वह पढ़ाने में पीछे

---

* मौलिक प्रकाशन की तारीख ज्ञात नहीं है। यह रिपोर्ट पीकिंग के 'पीपल्स डेली न्यूज' ने ६ अगस्त १९५१ को उद्धृत की थी।

रह जाता है। इस बात ने विद्यार्थियों और अध्यापकों के स्वास्थ्य को भी भारी नुकसान पहुंचाया है।

जब केन्द्रीय जन सरकार के प्रवक्ता ने शिक्षा सम्बन्धी, बहुत देर में की गई इन शिकायतों को अपने हाथ में लिया तो प्रान्तीय समाचार पत्रों ने उस सम्बन्ध में और भी विस्तार से तथ्यों को प्रकाशित करना शुरू कर दिया। हानको के 'चांगच्यांग' दैनिक पत्र ने १४ अगस्त को एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें कहा गया था कि वुहान क्षेत्र के तीन शहरों में भी (हानको, वूचांग, हनियांग) अव्यवस्था फैली हुई है। पिछले सत्र में म्यूनिसिपल मिडिल स्कूल और दूसरे आठ स्कूलों में हर तरह की गतिविधियों में हिस्सा लेने के कारण अध्यापन कार्य अक्सर रोक दिया जाता था। फलस्वरूप १११० घंटों की नियमित रूप से होने वाली पढ़ाई नहीं हुई। प्रारम्भिक जांच के अनुसार चौदह विभिन्न संस्थाओं ने इन स्कूलों से काम कराया था। २३ से २८ अप्रेल तक के सप्ताह में दूसरे म्युनिसिपल मिडिल स्कूल ने चौदह मीटिंग में हिस्सा लिया। जिगमिंग गर्ल्स स्कूल की अध्यापिका और छात्रों ने जन स्वयंसेवकों के लौटे हुए प्रतिनिधियों से उन्हीं भाषणों को तीन बार सुना। पहले दिन विद्यार्थी संघ के निमन्त्रण पर, दूसरे दिन महिला संस्था के निमन्त्रण पर और तीसरे दिन शैक्षणिक कर्मचारी संघ के निमन्त्रण पर। दूसरे जिले के नवें प्राइमरी स्कूल ने १ अप्रेल से २६ अप्रेल तक ५६ बाहरी मीटिंग और ३३ विभिन्न प्रकार की कार्यवाहियों में हिस्सा लिया।

इस नीति के परिणामों को संक्षेप में बतलाते हुए उसी अंक में पत्र ने लिखा, "मुक्ति से पहले हुनान प्रान्त में मिडिल स्कूलों में १,४०,००० छात्र थे। १९५१ के पहले कार्यकाल में केवल ६२,३६८ छात्र रह गये।" उसी पत्र के ११ सितम्बर के अंक में कुछ और आंकड़े दिये गये। "मध्यवर्तीय दक्षिणी चीन की यूनिवर्सिटियों और टैक्नीकल संस्थाओं ने १६५५७ छात्रों को लेने की योजना बनायी परन्तु इस क्षेत्र के केवल ८७२७ छात्रों ने ही इस क्षेत्र की प्रवेश परीक्षाओं के लिये प्रार्थना पत्र भेजे।"

इसी तरह के समाचार पीकिंग, तीनसिन, कैंटन, शंघाई, नानकिंग और दूसरे शहरों में भी प्रकाशित हुए। पीकिंग के 'पीपुल्स डेली न्यूज' ने स्वीकार किया कि "सीनियर मिडिल स्कूल से ऊपर की कक्षा के छात्रों की संख्या में कमी एक देश-व्यापी समस्या है।" फिर भी शिक्षा मन्त्रालय के अधीक्षण विभाग के प्रधान ल्यू० शी० ने १ अक्तूबर १९५१ के 'पीपुल्स चाइना' में

लिखा कि शिक्षा में "भारी उन्नति" हुई है और माओ त्से-तुंग द्वारा निर्धारित कार्यक्रम तथा सोवियत संघ के उन्नत शैक्षणिक अनुभवों और सोवियत शिक्षकों की सहायता से हम शिक्षा के क्षेत्रों में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं।" निस्सन्देह 'पीपुल्स चाइना' विदेशों में चीन का प्रचार करने के लिये अंग्रेजी में प्रकाशित होता है। हांगको या चुंगकिंग में शायद ही उसे कोई पढ़ता है।

पीकिंग में बैठे हुए नेताओं के लिये इसका समाधान खोजना आसान था। अपने से छोटे अधिकारियों पर दोषारोपण करना और आदेश जारी कर देना कि "स्कूलों में शिक्षा कार्य में जो भ्रमित अवस्था हो गयी है उसमें सुधार किया जाय।" शायद आदेशों का काम पूरा हो गया। कम से कम उस विषय पर फिर कोई देश व्यापी प्रचार नहीं हुआ।

फिर भी थोड़ी बहुत गलतियां हो जाती हैं। शैक्षणिक कार्यों में गड़बड़ी को समाप्त करने के आन्दोलन के लगभग एक साल बाद हांगको के 'चांग चियांग दैनिक' समाचार ने २ सितम्बर १९५२ को एक समाचार प्रकाशित किया जो आई-चांग स्थित हूपी प्रान्तीय स्कूल में हुई एक गलती के सम्बन्ध में था। (आई-चांग यांगत्सी नदी के किनारे एक बन्दरगाह है जहां लगभग एक लाख लोग रहते हैं)। वास्तव में यदि मैंने इस समाचार को सरकारी चीनी पत्र के अतिरिक्त कहीं और पढ़ा होता तो मैंने इसे कम्युनिस्ट विरोधी, मनगढ़ा भौंडा प्रचार मात्र समझ कर छोड़ दिया होता।

हांगको के इस समाचार पत्र के अनुसार आई-चांग की घटना इस प्रकार है: नार्मल स्कूल के लघुपाठ्यक्रम के छात्रों को व्यवहारिक अध्ययन का कुछ अनुभव प्राप्त करने के लिये १९ जून को दूसरे प्राइमरी म्युनिसिपल स्कूल में भेजा जाना निश्चित हुआ था। इस निश्चय को बिना कारण बतलाये ही बदल दिया गया। कुछ छात्र उनकी योजनाओं में परिवर्तन हो जाने पर बड़बड़ाए पर स्कूल के अधिकारियों ने उनकी इस बड़बड़ाहट पर कोई ध्यान नहीं दिया।

दूसरे दिन, वाइस प्रिन्सिपल वांग-सू ने जो एक पुराने पार्टी सदस्य भी हैं और स्कूल का संचालन करते हैं, सुबह को ड्रिल के समय घोषणा की कि असन्तुष्ट छात्रों के विचारों की जांच-पड़ताल के कारण पढ़ाई नहीं होगी। शिक्षक होने की ट्रेनिंग ले रहे इन नवयुवक छात्रों में कुछ संदिग्ध परिवारों के पिछड़े हुए सदस्य थे जो पुराने समाज के विचारों को साथ ले आये थे। फिर

उसने दस छात्रों का नाम लिया जिन्हें उसके विचार में विशेष परीक्षा की आवश्यकता थी।

उसने विद्यार्थियों से कहा कि जिन तीन सवालों का उत्तर हमें पाना है उनमें से एक है "अध्यापन के कार्य में कौन बाधा पहुंचा रहा है ?"

"परीक्षण" शुरू हुआ। जिन्हें अपनी गलतियां स्वीकार करने पर मजबूर किया गया। उन छात्रों में एक लड़की चांगपांगया और एक लड़का ज्यांग पीचू थे। प्रश्नों की सतत् बौछार द्वारा उनको धीरे धीरे थका कर थोड़ा थोड़ा कष्ट दिया गया। इसके बाद उसके सहपाठियों ने "छोटी मीटिंग में चिल्ला-चिल्ला कर सवाल पूछते हुए उनके रहस्यों का पर्दाफाश" करने की धमकियां दीं। फिर उन्हें तंग करने के लिये बड़ी मीटिंग बुलायी गयीं। दोनों अपराधी झुक गये। चांग नामक लड़की ने स्वीकार किया कि वह पुराने कोमिन्तांग युवक संघ की सदस्य रही थी। लड़के का वृत्तान्त अधिक रोचक था। उसने स्वीकार किया कि "गांवों में उसने आठ प्रतिक्रियावादियों को संगठित किया था और किसानों को मारने का षड़यन्त्र रचा था।" वाइस प्रिन्सिपल वांग को विश्वास हो गया कि ज्यांग वास्तविक 'ते बू' या विशेष दलाल है और उसे कारावास में डाल दिया गया।

प्रारम्भिक जांच पड़ताल के दौरान में एक फोटो मिला जिसे उस लड़के और लड़की ने दो अन्य छात्रों के साथ खिचवाया था। स्वाभाविक था कि फोटो में जो दो छात्र थे; त्यूजिन क्वान और स्वांग ते चुंग वे भी अपराधी थे। वाइस प्रिंसिपल वांग ने अब और छात्रों को जांच पड़ताल जारी रखने के लिये अपने साथ ले लिया। इन चार नौजवान षड़यन्त्रकारियों पर बार-बार "थकान द्वारा मुकदमे" चलाकर अन्त में वांग सू ने निष्कर्ष निकाला कि चांग लड़की षड़यन्त्र की नेता थी। जांच जारी रही।

चारों अपराधियों ने २३ और २४ जून को स्वीकार किया कि उन्होंने स्कूल के प्रिन्सिपल की हत्या करने और स्कूल के अधिकारियों के खिलाफ सशस्त्र बगावत करने में छात्रों का नेतृत्व करने की योजना बनाई थी। उन्होंने दस और विद्यार्थियों के नाम लिए जो उनमें सम्मिलित थे। अतः वाइस प्रिन्सिपल वांग-सू ने जांच पड़ताल जारी रखने के लिये दूसरे विभागों से राजनैतिक रूप से विश्वनीय १९ छात्रों को और बुलाया और उस लड़की और उसके साथी दूसरे लड़कों को नजरबन्द कर लिया।

जांच पड़ताल चल ही रही थी कि २८ जून को वांग-सू ने घोषणा की कि सभी विद्यार्थी और अध्यापकों को स्कूल छोड़कर जाना मना है और सभी आने जाने वाले पत्रों की जांच प्रारंभ कर दी गई है। उस दिन मौसम साफ था और धूप बहुत तेज़ थी परन्तु स्कूल वालों ने चावल की रसद लाने के लिए कुछ विद्यार्थियों को १५ मील दूर भेज दिया। जब थके मांदे ये लोग लौटे तो उन्हें जल्दी-जल्दी शाम का भोजन करना पड़ा। फलस्वरूप, भोजन के थोड़ी देर बाद ही दस से भी ज्यादा छात्रों को उल्टी हो गई और तात्कालिन इलाज के लिये स्कूल के डाक्टर को बुलाना पड़ा। वांग-सू को अब जहर दिये जाने का शक पैदा हो गया। स्कूल से बीमार छात्रों को परीक्षा कराने के लिये जन अस्पताल में भेज दिया गया। वहां डाक्टरों को जहर देने का कोई चिन्ह न मिल सका पर वांग सू अपनी बात पर अड़ा रहा।

उसने संदिग्ध लोगों से पूछ-ताछ शुरू करदी। पूछताछ करने वालों ने चांग नामक लड़की को रस्सियों से कस दिया। उसके हाथों को बांधकर उसे लटका दिया और उसे मारा। जिससे उसने स्वीकार कर लिया कि उसके साथी ज्यांग ने अपने साथी छात्रों को जहर दिया था। जब ज्यांग को मार पड़ी तो उसने कह दिया कि वास्तव में जहर चू ने दिया है। चू को सोते से उठा लाया गया और और बांध कर दो घंटे तक पीटा गया। तब उसने बताया कि फोटो में जो चार छात्र थे उनमें से ते ह्वांग-चू भी इस षडयंत्र में सम्मिलित था।

पूछताछ करने वाले दल के सदस्यों ने ह्वांग को लटका दिया और दो छात्रों को उसे पीटने की आज्ञा दी। ह्वांग ने ल्यूजिन-क्वांग को भी अपने साथ लपेट लिया। विद्यार्थियों के अध्ययन के निरीक्षक शिक्षक तांग लू-ह्यू और विभाग के कार्यवाहक अध्यक्ष लू वी-चुन ने अपने हाथों से ल्यू को लटका दिया और उसकी पीठ पर लट्ठा बांध दिया फिर लट्ठे के दोनों सिरों से दूसरे विद्यार्थी लटक गये ताकि उसकी बाहों और कंधों पर बोझ पड़ सके। जो प्राय: असहनीय हो जाय। अन्त में ल्यू ने स्वीकार कर लिया कि उसने स्कूल के स्वी-कंग अर्थात पानी के बर्तनों में जहर डाल दिया था।

अग्नि को और भी प्रज्ज्वलित करने के लिये वांग शू ने आठ दूसरे छात्रों को और खोज निकाला जिन पर उस कांड में सम्मिलित होने का शक था और उनकी गिरफ्तारी की घोषणा कर दी। ३० तारीख की सुबह इन अपराधियों की जांच पड़ताल जारी रखने के लिये चौदह विशेष जांच पड़ताल

टीमें बनाई गईं जिनमें पचास से ज्यादा विद्यार्थी थे। अब स्कूल में हंगामा मचा हुआ था। विद्यार्थियों के सुरक्षा विभाग ने रसोई घर के वर्तनों में भरे सभी पानी को उड़ेल दिया उनमें से तीन कप रसायनिक विश्लेषण से जहर की जांच करने के लिये रहने दिये गये। पानी के इन नमूनों का परीक्षण हुआ और जहर का कोई चिन्ह मिला।

फिर भी वांग ने समस्त अध्यापक और छात्रों से "शीघ्र ही सुसज्जित" होने के लिये कह दिया और नौजवान ते-त्रू (विशेष दलाल) के अपराधों की घोषणा•कर दी। इसी बीच जांच पड़ताल करने वालों ने वांग ते चुंग को उलटा लटका दिया। उसके हाथों को पीठ के पीछे एक मेज से बांध दिया गया। वह चिल्ला न पाये इसलिये उसके मुंह पर तौलिया लपेट दिया गया। सांग ल्यूह्यू नामक अध्यापक ने उसे ठोकर मारी और साथ ही कुछ छात्रों ने उसे पीटा। यद्यपि यह यंत्रणा दुपहर तक चलती रही पर उन्हें और कोई सूचना नहीं प्राप्त हुई।

फिर जांच-पड़ताल करने वालों ने एक वक्तव्य में चौदह गिरफ्तार छात्रों के क्रान्ति विरोधी संगठन में हिस्सा लेने के तथ्यों का विस्तृत वर्णन किया। उन्होंने चांग की स्वीकृति उस कागज पर लिखा कर उसे उसके साथी ह्यांग को दिखलाया फिर उस कागज को उससे जोर जोर से पढ़वाया और अपने अपराध की स्वीकृति उससे लिखवा ली। फिर उन्होंने ह्यांग की स्वीकृति को चू को दिखलाया और चू को तरह तरह की यातनाएं दीं। चू ने भी अपराध स्वीकार कर लिया। अब उसे जिस जहर का प्रयोग किया था उसे खोजने को बाध्य किया गया। कहीं पर पलास्टर बनाने के काम में आने वाला चूना उसे मिल गया जिसे उसने यातना देने वालों को दे दिया।

उसी दिन सुबह स्कूल के प्रधान अध्यापक ली तिवेन इस मामले की रिपोर्ट देने उस क्षेत्र की सरकार के पास गये। वे प्रधानमंत्री ली हान-जो से मिले और उन्हें बतलाया कि हत्या करने का षड़यन्त्र खुल चुका है और हत्या का प्रयत्न करने वालों को बन्दी बना लिया गया है। साक्षी के रूप में प्रिन्सिपल जिस चूने के नमूने को लाया था, प्रधानमंत्री ने उसका परीक्षण किया और घोषणा की कि वह जहर नहीं था। जन सुरक्षा ब्यूरो (पुलिस) के इस मामलों से सम्बन्धित विभाग के प्रधान यिंग को बुलाया गया और वह बार बार कहता रहा कि कुमारी चांग 'विशेष दलाल' नहीं थी। प्रधानमंत्री ने प्रिन्सिपल को

स्कूल लौट जाने और छात्रों को छोड़ देने की आज्ञा दी। पर जब प्रिन्सिपल ने यह आदेश वांग-सू को सुनाये तो उसने उन पर कोई ध्यान न दिया और चौदह छात्रों में से केवल पांच को "दबाव में आकर अपराध के संगी" बतला कर मुक्त कर दिया।

अन्य बन्दियों पर होने वाली यातनाएँ बढ़ा दी गईं। ३ जुलाई को वांग-सू ने एक नियम की घोषणा की कि कोई भी छात्र बिना दो और साथियों के स्कूल के अन्दर एक कमरे से दूसरे कमरे में भी नहीं जा सकता था। ५ जुलाई को वांग-सू ने बन्दी छात्रों को स्वीकारोक्ति लिखने के लिये कहा जिसमें उनका निजी इतिहास, स्कूल की गतिविधियां और परिवार का इतिहास हो। उसने कहा कि इनमें विशेष जोर जहर और उसके सम्बन्ध में सबूत पर होना चाहिये। ६ तारीख को वांग-सू नये सबूत लेकर प्रधानमंत्री के पास मिलने के लिये गया। नये सबूत दो पुड़ियों में थे जिन्हें वह जहर समझता था। परन्तु मिस्टर ली ने कहा कि जन सुरक्षा ब्यूरो बन्दी छात्रों में से एक की जांच पड़ताल कर चुका है और वह 'विशेष दलाल' नहीं था। उसने वाइस प्रिन्सिपल को चेतावनी दी कि यदि उसने छात्रों को जल्दी रिहा नहीं किया और यदि किसी ने इस मामले की समाचारपत्रों को खबर दे दी तो वह संकट में पड़ सकता है।

पर वांग जब स्कूल लौटा तो उसने प्रगतिशील छात्रों से कहा कि वे अपने साथी अभियुक्त छात्रों को स्वीकारोक्ति लिखने में "सहायता" दें और विशेष रूप से इस बात का ध्यान रखें कि इस बात का सबूत मिल सके कि जहर देकर हत्या करने के प्रयास किये गये थे। अभियुक्तों में से एक, येन, किसी तरह अपनी रजाई में पैर के पाउडर का डिब्बा पा गया जिसे वह अपनी छाजन ठीक करने के लिये इस्तेमाल करता था। अपने अपराध के प्रमाण स्वरूप उस डिब्बे को उसने पेश कर दिया। चांग लड़की ने कुछ और चूना पेश कर दिया जिसे कि उसने लड़कियों के स्नानागार में पाया था। पर चूंकि ज्यांग किसी तरह का सन्देहप्रद पाउडर पेश न कर सका उसे फिर से लटका दिया और दो दिन और दो रात तक बार बार पीटा गया।

७ तारीख को तीन छात्र रिहा कर दिये गये। यद्यपि स्वाभाविकतया वांग को इससे नीचा देखना पड़ा पर उसने दूसरे बन्दी व्यक्तियों को अपने-अपने अपराध स्वीकारोक्ति लिखने में व्यस्त रखा। येन नामक छात्र ने, जिसे जन-सुरक्षा ब्यूरो ने बरी कर दिया था, अपने उस स्वीकारोक्ति की सभी बातें

लिखने के लिये दस लाइन वाले कागजों के सौ से भी अधिक पृष्ठ इस्तेमाल किये, जिसके बारे मे उससे लिखने को कहा गया था। अन्त में ११ तारीख को सभी बंदी छात्रों को मुक्त कर दिया गया।

कुछ दिन बाद आई-वांग प्रान्तीय नार्मल स्कूल में हो रही विचित्र घटनाओं के समाचार जब इधर-उधर फैले तो सरकारी शिक्षा व्यूरो से एक इन्सपेक्टर और एक क्लर्क मामले की जांच के लिये आये। उन्होंने अध्यापकों और छात्रों से कहा कि सम्भावित क्रान्ति-विरोधियों से निबटने में गलती से नर्मी के बजाय सख्ती करना अच्छा था।

जब इन्सपेक्टर और उसका क्लर्क चला गया तो तीन साहसी अध्यापकों ने मौका पाकर १३ जुलाई को ह्यू पी की प्रान्तीय जन सरकार और चांग चियांग दैनिक को इस मामले के बारे में लिखा। इस पर शिक्षा के प्रान्तीय व्यूरो ने इस मामले की जांच पड़ताल की मांग करते हुये आई-चांग सरकार को तार दिया। आई-चांग सरकार ने शीघ्र ही प्रिंसिपल ली को जो हमेशा ही सरकार की जी हुजूरी करता रहा था पदच्युत कर दिया। वांग सू अपनी जगह पर बना रहा।

अगस्त के महीने में और जांच पड़ताल करने वाले आये। उन्होंने सत्य का पता लगा लिया और उसे २ सितम्बर १९५२ के चांग चियांग दैनिक में प्रकाशित करा दिया। समाचार पत्र ने लिखा कि "वांग सू के निजी सहयोग और प्रोत्साहन के अन्तर्गत" २९ जून से ६ जुलाई तक चौदह "नजरबंद" छात्रों में हरेक को लटका कर पीटा गया। अंकों के प्रति अत्यन्त सावधानी दिखलाते हुए समाचार पत्र में कहा गया था कि कुल मिलाकर छात्रों पर सैतालीस (४७) विभिन्न प्रकार की यातनाएं ढाई गईं।

छात्रा येन ने सोलह प्रकार की यातनायें भोगीं। छात्र चिन ने नौ प्रकार की यातनायें भोगीं। उसके दिमांग पर बुरी तरह चोट लगी थी।

दूसरे छात्रों ने पांच से लेकर सात प्रकार की यातनायें भोगीं। सभी को कम से कम दो प्रकार की यातनायें तो दी ही गयी थीं।

छात्र चू चिन-यन की दो उंगलियां बुरी तरह घायल हो गयी थीं।

पर ज्यांग पे-चुंग नामक लड़का सब से अधिक यातनाओं का शिकार हुआ क्योंकि वह अपने आपको अभियुक्त बनाने के लिये किसी प्रकार का "जहर" खोजने में असफल रहा था। समाचार पत्र में लिखा था : 'ज्यांग पे-चुंग का बांया

बाजू बेकार हो गया था। उसकी कलाई की हड्डियां टूट गयीं। उसका दाहिना बाजू इतना शक्तिहीन हो गया कि वह उसे हिला भी नहीं सकता था। उसके दिमाग पर भी भारी चोट आई थी।

जो अध्यापक आघात पहुंचाने के उत्तरदायी थे उन्हें न्यायालय के सम्मुख पेश किया गया और सजा भी दी गयी। वांग मू पर दस अपराध लगाये गये जिसमें अपने से बड़े अधिकारियों को धोखा देना, बिना अधिकार प्राप्त किये कक्षाओं को भंग करके सरकारी नीति की अवहेलना करना, विद्यार्थियों को यातनायें देना और जनता पर बुरा प्रभाव न डालने के अपराध सम्मिलित थे। जहर देने के अपराध पर उन छात्रों को सजा दिला सकने से उसकी शान काफी कम हो गयी। अब उसे तीन साल कैद की सजा दी गयी और नौकरी से अलग कर दिया गया। श्री तांग को जिनके हाथ में विद्यार्थियों के अध्ययन का काम था तथा जिसने एक कसकर बांधे हुए छात्र को लात मारी थी और दूसरे अध्यापकों से उसे पिटवाया था, पदच्युत कर दिया गया। विभाग के कार्यवाहिक अध्यक्ष को भी नुकसान उठाना पड़ा क्योंकि उसने भी पीटने में सहायता दी थी। मुझे आशा है कि ज्यांग पे-चुंग की टूटी हुई कलाई अब ठीक हो रही होगी।

पर ऐसे मामलों को आखिर क्यों प्रकाशित किया जाता है? मेरे विचार से उन्हें प्रकाशित करने का एक कारण यह भी है कि कम्युनिस्ट यह मानते ह कि कभी कभी चीजें खुल जाती हैं और उन्हें छिपाना असम्भव होता है। आई-चांग एक बड़ा शहर है और यातायात का एक केन्द्र भी। नार्मल स्कूल में जो कुछ हुआ उसकी खबर तो फैल ही जाती चाहे वह प्रकाशित होती या नहीं। अतः शायद यही निश्चय किया गया कि इस मामले को सबके सामने रख दिया जाय और "विमति" कह कर छोटे अधिकारियों पर घटना का दोष थोप दिया जाय। वस्तुतः अधिकारियों ने तथ्यों को स्वीकार कर लिया था पर तथ्यों के जो मूलभूत कारण थे उन्हें स्वीकार नहीं किया गया। यह ढंग उन छोटे अधिकारियों को खला जिन्हें दोष अपने ऊपर लेना पड़ता था; पर माओ त्से-तुंग और उसके चारों ओर रहने वाले लोग गलती कर ही नहीं सकते थे।

जब सरकार ने हमारे पेता को भूतपूर्व शिक्षकों को १९५१ के अन्त में विचारधारा पुनर्रचना आन्दोलन में अपने विचारों को सुधारने के लिये वापस बुला लिया तब उन्हें यह शिक्षा मिली। यह आन्दोलन पीकिंग और तेनसिन

में सितम्बर में शुरू हुआ और अगले छः महीनों में समूचे चीन में फैल गया। चूंकि यहां केवल इस कहानी की रूपरेखा मात्र ही देने का स्थान है, मैं केवल वही बातें बताऊंगी जो कम्युनिस्ट समाचार पत्रों के अनुसार पेता में घटी थीं।

पहले पहले, यह आन्दोलन हुआ क्यों? क्या दूसरों की तरह ही हमारे प्रोफेसरों ने भी नये शासन की स्थापना में सहायता नहीं दी थी? अपने उदार या प्रगतिशील होने पर उन्हें हमेशा गर्व था। बहुतों ने तो मुक्ति से बरसों पहले ही पुराने राजनीतिक नेतृत्व को ठुकरा दिया था। हमारे न नेताओं ने यह खुले तौर पर कहा था कि नये राष्ट्र को बनाने में उनके ज्ञान और अनुभव की आवश्यकता है। अब क्या गड़बड़ हो गयी थी? वस्तुतः कम्युनिस्ट पत्रों ने उन्हें एक बड़े अपराध का दोषी ठहराया था कि जिन विचारों में वे विश्वास करते आये थे उनमें विश्वास करते रहने की और जो वे हमेशा पढ़ाते आये थे उसे ही पढ़ाते रहने की उनकी इच्छा कम हो गयी थी।

पर १९५१ तक यह असत्य सिद्ध हो गया। किसी भी चीनी यूनिवर्सिटी के अस्तित्व का हेतु बदल चुका था। विशुद्ध शिक्षा की अब आवश्यकता नहीं थी। अब चीनी यूनिवर्सिटियां जिस बात के लिये कायम थीं, उसको स्पष्ट शब्दों में १५ वीं अखिल चीनी छात्र प्रतिनिधि कांग्रेस के समय बता दिया गया था। इस कांग्रेस ने निश्चय किया कि चीन की सभी यूनिवर्सिटियों का यह उत्तरदायित्व है कि वे हर छात्र को "ऐसा ऊंचा कार्यकर्ता, ईमानदार, योग्य और तन्दुरुस्त बना दें जिसमें कम्युनिस्ट चेतना का स्तर अति उच्च हो।"*

इस काम को पूरा करने के लिये यूनीवर्सिटियों में स्पष्टतः प्रोफेसरों को अपने विचारों और अध्यापन में परिवर्तन करना पड़ा। पुराने विचार छोड़ने और नये विचार ग्रहण कर लेने में उनकी हिचकिचाहट से हमारे नेता क्रुद्ध हो उठे। जब बुद्धिजीवियों को सुधारने का आन्दोलन चल पड़ा तो शिक्षा उपमंत्री चिन चुन-जू ने बतलाया कि "गत दो वर्षों में अधिकांश प्रोफेसरों में जो परिवर्तन आया है उसका क्षेत्र सीमित है और वह मन्दगति से हो रहा है" इसी कारण यह आवश्यक हो गया। और चिन ने बतलाया कि यदि शिक्षकों ने अपने "निजी व्यक्तिवाद, वस्तुवाद और संकुचित दृष्टिकोण" को बनाये रखा तो फिर यूनिवर्सिटी में शिक्षा के विषय और विभागों का पुनर्गठन,

*२४ मार्च १९५२ के पीकिंग के 'पिपल्स डेली न्यूज' में उद्धरत

पाठ्यक्रम में सुधार, शिक्षण पद्धति में सुधार, इत्यादि बातों में सच्ची प्रगति नहीं की जा सकती।

चिन का यह वक्तव्य बुर्जुवा की मिथ्या पुरानी प्रजातंत्रवादी विचारधारा जिससे अभी तक बहुत से शिक्षक चिपके थे "उदारवाद" एवं "सुधारवाद" के तथाकथित अपराधों के विरुद्ध दूसरे हमलों के लिये एक देशव्यापी मोर्चा बनाने का संकेत था। हमारे पेता के अध्यक्ष डाक्टर मा सिन-चू ने अपने आप एक सप्ताह पहले ही ऐसे शिक्षकों पर दोष लगाना शुरू कर दिया था। पीकिंग के 'पीपल्स डेली न्यूज' के २३ अक्तूबर १९५१ के अंक में प्रकाशित एक लेख में उन्होंने उस बातावरण की आलोचना की जिसे वे हमारी यूनिवर्सिटी का "उदार और असंगठित वातावरण" कहते थे। फिर, दो सप्ताह बाद ६ नवम्बर को, पेता के कालेज आफ ला के डीन प्रोफेसर चिन त्यान शैन का पेता की "परम्परागत शिथिलता और "उदारवाद" तथा विचार और अध्ययन की स्वतंत्रता के अध्यापकीय दर्शन के प्रति प्रहार और भी करारा था। निस्संदेह, यद्यपि इन दो स्वतंत्रताओं को जीवित रहना ठीक था फिर भी अतीत काल में दुरुपयोग ही अधिक हुआ था।

अपने को क्षुद्रतम कहने और अपने पुराने स्कूल पर प्रहार करने में प्रोफेसर चिन अध्यक्ष मा से एक कदम आगे निकल गये। अपने एक लेख में डा० मा ने कम से कम पेता की शानदार क्रांतिकारी परम्परा तथा चीनी जनता के क्रान्तिकारी व्रत से अविभाज्य इतिहास" का उल्लेख तो किया था। उन्होंने लिखा था "पीकिंग यूनिवर्सिटी और चीनी क्रान्ति में जो निकट के सम्बन्ध रहे ऐसे संबंध चीनी यूनिवर्सिटी के इतिहास में ही नहीं बल्कि दूसरे देशों की यूनिवर्सिटियों में भी मुश्किल से मिलेंगे। यह पीकिंग यूनिवर्सिटी के लिये महानतम गौरव और गर्व की बात है।" और शायद उन्होंने ठीक ही लिखा है।

डीन चिन ने इसके उत्तर में कहा: "पेता की गौरवमय परम्परा से जनता सहजही धोखे में आ गई हैं। वास्तव में ४ मई के आन्दोलन के अतिरिक्त पेता और कौन सी बात पर गर्व कर सकती है?" मैं उन परिस्थितियों को

---

* "उच्च शिक्षा के सुधार की कुंजी" शीर्षक लेख जू-जी (अध्ययन) भाग ५ अंक १, दिनांक १ नवम्बर १९५१ में यह पत्रिका कम्युनिस्ट चीन का प्रमुख अधिकारिक "विचार"पत्रिका है।

समझती हूं जिनके वशीभूत होकर डीन चिन ने यह लिखा है। पर मेरे विचार में उस महान युनिवर्सिटी को इतने खुले रूप से त्यागते समय वे अवश्य ही भयभीत रहे होंगे, क्योंकि हम जानते हैं कि वे अभी तक पेता को प्रेम और आदर की दृष्टि से देखते हैं।

प्रोफेसरों के "शिथिल" और "उदारवादी" दृष्टिकोण और "व्यक्तिवाद" और "वस्तुवाद" जैसे दूसरे दोषों के लिये बाद में उन्हें दोषी ठहराया गया, जब पेता के छात्रों पर इस "बुर्जुवा विचारधारा के विनाशकारी परिणाम" को मिटाने के लिये विचार सुधार आन्दोलन चलाया गया। २४ मार्च १९५२ के 'पीपिल्स डेली न्यूज' में इन "विनाशकारी परिणामों" को इस अभियोग के अन्तर्गत प्रकाशित किया गया कि पेता के कुछ प्रोफेसरों ने राजनीति से अछूती शिक्षा" और "विशुद्ध पांडित्यवाद" की नीति का अनुसरण करने के प्रयास किये थे। प्राच्य भाषाओं के एक शिक्षक को इसलिये दोषी ठहराया गया कि उसने विद्यार्थियों से कहा था कि "यदि आप शिल्प में दक्ष हैं तो आपको राजनीति की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं।" कुछ अन्य प्रोफेसरों ने कहा था कि राजनीति तो गौण विषय है और इसके पीछे शिल्प की उपेक्षा नहीं करना चाहिये। इस प्रकार उन्होंने अपने छात्रों की "राजनीतिक चेतना' की उपेक्षा की थी। इसीलिये उन्होंने मकैनिकल इंजीनियरिंग विभाग के तृतीय-वर्ष के उस विद्यार्थी की बड़ी प्रशंसा की थी जो केवल इंजीनियरिंग के विषय में अपने सहपाठियों से कुछ अधिक जानता था पर राजनीति में निरा बुद्धू था।

इससे भी "अध्यापक उन क्षेत्रों की ओर कुटिल दृष्टि के देखते जिनका काम स्कूल की दूसरी गतिविधियों अर्थात् राजनीतिक मीटिंग में सक्रिय भाग लेने के कारण पिछड़ जाता था।" और कुछ उत्तेजित प्रोफेसर तो अपने अपराधों से मुक्ति प्राप्त करने के लिये अमेरिका-विरोधी कोरिया-सहायता आन्दोलन जैसी महत्वपूर्ण राजनीतिक गतिविधियों में हिस्सा लेने लगे। उदाहरण के लिये रसायन विभाग के अध्यक्ष ने कक्षा में कहा "राजनीतिक कार्यक्रम तो उन कार्यकर्ताओं के लिये हैं जो उत्पादन कार्य से मुक्त हैं और जो दक्ष राजनीतिज्ञ हैं।"

पेता के प्रोफेसरों पर, ग्रेजुएट होने के बाद सरकार द्वारा दिये गये काम बिना विरोध स्वीकार करने के लिये, छात्रों को प्रोत्साहित करने के सरकारी प्रयासों में भी, हस्तक्षेप करने के अभियोग लगाये गये थे। भौतिक विज्ञान

विभाग के एक छात्र को जब सैनिक प्रशिक्षण स्कूल में भरती होने के लिये कहा गया तो एक प्रोफेसर ने उससे कहा : "सभी सहमत हैं कि तुम गणित में अच्छे हो। इसलिए गणित का अध्ययन जारी रखना अच्छा होगा।" दूसरे अध्यापकों ने छात्रों से खुले तौर पर कहा कि "जो लोग पढ़ने में अच्छे हैं उन्हें सैनिक स्कूल में नहीं जाना चाहिए।" भौतिक विज्ञान विभाग के एक और साहसी प्रोफेसर ने एक छात्र से कहा : "यह कितना बुरा है ग्रेजुएट होने पर भी तुम्हें सरकार द्वारा दिया गया काम ही करना पड़ता है।"

चीन के प्रथम कोटि के सरकारी पत्र में प्रकाशित लेख से मैंने उपर्युक्त उद्धरण प्रस्तुत किये हैं। लेख में शिक्षकों को कुशाग्र बुद्धि छात्रों की शिक्षा के लिये अधिक समय न देने की चेतावती देने के बाद, अन्त में स्थापित्य-कला विभाग के एक प्रोफेसर के विरुद्ध उपदेश दिया गया था। उसने छात्रों से यूनिवर्सिटी के लिये एक दरवाजे का नमूना बनाने को कहा था। पर उसने कुछ डिजाइनों को इसलिए नापसन्द कर दिया कि "वे बहुत साधारण और अमली थे।" इसके स्थान पर उसने उन चित्रों की प्रशंसा की जिन्हें वह "कल्पना पूर्ण" समझता था। शायद उसका अभी तक विश्वास था कि शिल्पी बनने वाले नवयुवक के लिये कल्पना उपादेय थी। परन्तु 'पीपुल्स डेलीन्यूज' ऐसा नहीं समझता था। कल्पना के सम्बन्ध में अन्तिम वाक्य इस प्रकार था : "यह छात्रों को केवल लुभावनी मनमोहकता और अर्थ शून्यता के जीवन की ओर बहका कर ले जा सकता है।"

अभी तक मैंने यह नहीं बतलाया कि प्रोफेसरों के लिये हुआ विचार सुधार आन्दोलन कैसे चला। १९४९ के अन्तिम दिनों में यह आन्दोलन पीकिंग में शुरू हुआ। अब ऐसा लगता है कि पेता और शहर की सभी यूनिवर्सिटियां उन सिद्धान्तों के लिये शोधशाला के रूप में इस्तेमाल की गई थीं जिन्हें बाद में दूसरे स्कूलों पर भी लागू करना था। पेता जिगुआं, येनचिंग और पीकिंग की दूसरी यूनिवर्सिटियों के सभी प्रोफेसरों और अध्यापकों से अपेक्षित था कि वे इसमें हिस्सा लेंगे। सभी प्रोफेसर २९ सितम्बर १९५१ की दोपहर के समय प्रधानमंत्री चाऊ एन-लाई का वह भाषण सुनने के लिये एकत्रित हुये जिससे इस आन्दोलन का श्रीगणेश किया गया था। जिस लेख की मैं पहले चर्चा कर चुकी हूं उसमें अध्यक्ष मा लिखते हैं कि "प्रधानमंत्री पांच घंटे तक बोलते रहे। यद्यपि भाषण लम्बा था पर श्रोता जरा भी थके नहीं।"

फिर अगले चार महीने ३००० प्रोफेसर और शिक्षक उन कामों को पूरा करने में जुटे रहे जो उनके लिये निश्चित किये गये थे (नये चीन समाचार समिति की एक सूचना के अनुसार इस कार्यक्रम में भाग लेने वाले कालेज के शिक्षकों की संख्या १२ नवम्बर तक बढ़कर ६१८८ हो गई थी)। उनका सबसे पहला काम प्रधानमंत्री चाऊ के भाषण का अध्ययन करना था (जो समाचारपत्रों में कभी प्रकाशित नहीं हुआ) और "ध्येय, धारणा. सर्वहारा" इत्यादि समस्याओं का विश्लेषण करना था। निम्नांकित तीन चरणों में प्रोफेसरों से (यां विद्यार्थियों से जैसा कि वास्तव में वे अब थे) यह अपेक्षित था कि वे सामाजिक प्रश्नों और नीतियों पर सरकारी अधिकारियों के प्रतिवेदनों का अध्ययन करें और साथ ही मार्क्सवाद लेनिनवाद के आधारभूत विचार, माओ त्से-तुंग के चीनी क्रांति के सिद्धान्त और बुर्जुवा एवं मध्यवित वर्ग के मिथ्या-विचारों का भी अध्ययन करें।

इन प्रलेखों से शिक्षक कोई नई बात नहीं सीख सकते थे। आखिर उन्हें वही चीजों को पहले भी अनेक बार पढ़ना पड़ा था। पर अब उन पर बार बार विवाद करना पड़ता था, अपने साथियों के सामने उसको रटना पड़ता था और जब उनके साथी दुहराते तो उन्हें सुनना भी पड़ता था। पर यह तो आन्दोलन का पांचवा चरण था जो मेरे विचार में शिक्षकों में एक-रूपता लाने के अभिप्राय से रखा गया था। पांचवें चरण में "व्यक्तिगत विचारधारा का सामान्य सारांश" प्रस्तुत करना पड़ता था। व्यवहार में इसका अर्थ सिवाय "स्वालोचना" के परिचित सिद्धान्त के अलावा और कुछ नहीं था। इसका तात्पर्य प्रोफेसर को बाध्य करके निजी विश्वासों और आदर्शों की आलोचना करना और उन सभी चीजों को जिसमें उसका विश्वास था और जिसे पढ़ाने का उसने प्रयास किया था, त्यागने के लिये मजबूर करना और अपने साथियों और छात्रों के-सामने उसे लज्जित करना था। अपने उन दोस्तों के सामने जिन्हें स्वयं भी उसी लज्जा का सामना करना था, उसे यह स्वीकार करना पड़ता कि वह स्वार्थी, हठी, प्रतिक्रियावादियों का भक्त, भ्रष्ट, मजदूर वर्ग के प्रति घृणा करने वाला, पश्चिमी साम्राज्यवाद का पुजारी और महान सोवियत संघ के बारे में संशयशील रहा था। उसे स्वीकार करना पड़ता कि उसने अपने छात्रों के देश-प्रेम को कुचलने की कोशिशें की थीं, तथा उन्हें गंदी बुर्जुवा विचारधाराओं से विषाक्त किया था। फिर उसे "जनता के सामने झुकना" पड़ता था और दीनता प्रदर्शित करते हुये वचन देना पड़ता था कि वह

अब से प्रायश्चित्त करेगा और भक्तिभाव से पार्टी के नेतृत्व का अनुसरण करेगा। अधिकांश प्रोफेसरों को पार्टी के कार्यकताओं के सामने इस "स्वालोचना" को कम से कम दो बार करना पड़ता था, तब कहीं उसको मीटिंग से छुट्टी मिलती थी। इस तरह सबके सामने लज्जित होकर उन अध्यापकों ने, जिनके हम प्रशंसक थे, अपनी उस ईमानदारी को तिलांजलि दे दी जिसे उन्होंने अभी तक बनाये रखा था और जीवन भर जिसके लिये लड़े थे।

यह भाषा असंयत है पर पेता का कोई ग्रेजुएट जिसने कम्युनिस्ट प्रेस में १९५२ की बसन्त और गर्मियों के दिनों में प्रकाशित चीन के अत्यन्त सम्मानित शिक्षकों के आत्म पश्चाताप को पढ़ा है, इन विचारकों और विद्वानों के लिये, जिन्होंने पेता को महान बनाया था, उसी निस्सहाय करुणा का अनुभव अवश्य करेगा। पीकिंग से प्रकाशित १ जुलाई १९५२ के 'क्वांग मिंग' दैनिक में "कम्युनिस्ट पार्टी ने मुझे शिक्षित किया" शीर्षक कालेज आफ ला के डीन चिन त्याग-शैंग ने जो लिखा उसे पढ़िये। "दम्भ और अहमन्यता के अपराध" स्वीकार करते हुये उसने कहा कि "पार्टी के उसे शिक्षित करने के पूर्व मैंने बेशर्मी से अपने आपको जनता का शिक्षक और जन सरकार का एक श्रमिक सदस्य मान लिया था।" पर विचार सुधार ने उसे प्रकट कर दिया और उसके "दम्भ और अहमन्यता"—इन शब्दों को उसने मंत्रमुग्ध व्यक्ति की भांति तीन बार दुहराया था—ने उसे जनता से दूर कर दिया था और उसने "नौकरशाही के रोग" के कीटाणु पैदा कर दिये थे। पर जैसा उसने कहा—"अध्यक्ष माओ और कम्युनिस्ट पार्टी के आशीर्वाद अनन्त हैं।" उसका कहना है कि स्वालोचना के बाद उसके विचार शुद्ध निखर आये हैं।

"मुझे रोग मुक्त करने, मेरी आत्मा की रक्षा करने और मुझे जनता की सेवा कर सकने के योग्य शिक्षा देने के लिये पार्टी और अध्यक्ष माओ ही समस्त श्रेय के अधिकारी हैं। मैं अपने अन्दर सतत और पूरा सुधार करूंगा, मार्क्सवाद लेनिनवाद और माओत्से-तुंग के विचारों का अच्छी तरह अध्ययन करूंगा, अपने सम्पूर्ण हृदय से जनता की सेवा करूंगा और इस समय कालेज और विभागों के पुर्नगठन के काम को सफल बनाने का प्रयत्न करूंगा ताकि म पार्टी और अध्यक्ष माओ का कर्जा चुका सकूं।"

"चीन की शक्तिशाली, गौरवमयी और सही कम्युनिस्ट पार्टी चिरंजीवी हो।"

"हमारे महान् अध्यक्ष माओ चिरंजीवी हों।"

सम्मानित विद्वान और शिक्षाशास्त्री कम्युनिस्ट पार्टी के सम्मुख इतने विनीत क्यों हो गये ? इसकी थोड़ी बहुत सूचना के लिए २४ मार्च १९५२ के हांगको से प्रकाशित 'चांगचिंग' दैनिक देखिये। विचार सुधार में हिस्सा लेने वाले मध्यवर्ती दक्षिणी क्षेत्रों के शिक्षकों के लाभार्थ हूनान यूनिवर्सिटी के अध्यक्ष इस लेख में लिखते हैं कि "बुर्जुवा भावना के विरुद्ध दृढ़ संघर्ष के दौरान में "और तीन विरोधी" आन्दोलनों के दिनों पीकिंग में शिक्षकों पर क्या बीती।"

इस संघर्ष में पीकिंग में उन्होंने (शिक्षक छात्र, क्लर्क और मजदूर) राष्ट्रीय निर्माण में उन भयंकर रुकावटों का, जो प्रमुख अधिकारियों व शिक्षकों ने जनता के हिस्सों के बीच खड़ी की थीं, पर्दाफाश किया अतः बाध्य हो कर अधिकारी और शिक्षकों को अपने सम्मान को भूल कर स्वालोचना करनी पड़ी। कौलेज के अनेक अध्यक्ष डीन, विभाग प्रमुख, प्रोफेसर, लेक्चरों और उनके सहायक शिक्षक जनता के समक्ष अपनी नौकरशाही, गुटबन्दी, विभाग वाजी, स्वार्थ परता-पूर्ण आचरण या अमेरिकन पक्षीय भावनाओं की आलोचना करते हुये स्वालोचना करने लगे।

और अपनी सार्वजनिक परीक्षा में इन सम्मानित शिक्षकों पर क्या बीती ? जिन्होंने पूरी-पूरी और खुली आलोचना की उनको जनता ने स्वीकार कर लिया और जिन्होंने ऐसा नहीं किया उन्हें दा दो तीन-तीन बार स्वालोचना करनी पड़ी। इस पत्र ने बड़े आनन्द से आगे लिखा कि "कुछ प्रोफेसरों को पांच बार अपनी आलोचना करनी पड़ी।"

अब यह कहानी एक येनचिंग की लड़की से सुनिये जो १९५३ में भाग कर हांगकांग आयी थी। अब उसकी कोई यूनिवर्सिटी नहीं थी क्योंकि १९५२ में येनचिंग यूनीवर्सिटी का नाम समाप्त कर दिया गया और उसके स्टाफ और छात्रों को दूसरे स्कूल में भेज दिया गया। (विदेशी सहायता से चलने वाली अन्य यूनीवर्सिटियां, जैसे शंघाई में सेन्ट जोन्स और केन्टन में लिंगनन यूनीवर्सिटी, भी उन्हीं दिनों समाप्त कर दी गई)।

येनचिंग के अन्य छात्रों की भांति यह लड़की भी १९५१ की सर्दियों में 'तीन विरोधी' आन्दोलन में भेज दी गई। वास्तव में स्कूल के अधिकारियों ने सत्र की समाप्ति पर अन्तिम परीक्षाओं को स्थगित कर दिया ताकि "भ्रष्टाचार, अपव्यय और नौकरशाही" इन तीन अपकारों का पर्दाफाश करने के लिये चलाये गये आन्दोलन की और शिक्षक और छात्र अपना ध्यान केन्द्रित

कर सकें। स्कूल के क्लर्क और दूसरे छोटे मोटे कर्मचारियों की बारी पहले आयी। हरेक को इस आन्दोलन में हिस्सा लेना आवश्यक था। जिन पर गम्भीर आरोप नहीं थे उन्हें भी स्कूल की ईंटों को अपने स्नानागार बनाने में काम में लेना या गिरे हुये पेड़ को नहीं हटाना जैसे अपराधों को स्वीकार करना पड़ा।

आपको याद होगा कि इसी समय विचार-सुधार का आन्दोलन भी चल रहा ा जिससे "नैतिकता, अध्ययन और देश प्रेम का नया स्तर निर्माण हो सके। लब्ध-ख्याति और सम्मानित प्रोफेसरों पर सर्वप्रथम वार किया गया।

उचित भूमिका बनाने के लिये अधिकारियों ने "अमरीकी साम्राज्यवादी सांस्कृतिक आक्रमण" की एक प्रदर्शनी की जिसे दिखाने के लिये हर कक्षा को ले जाया गया। स्नातक छात्रों द्वारा लिखे गये लेख (थिसीस), प्रोफेसरों द्वारा लिखित पुस्तकें और विदेशी यूनीवर्सिटियों के लिखे गये अधिकारिक एवं निजी पत्र, यह प्रमाणित करने के लिये प्रदर्शित किये गये कि उन प्रलेखों के लेखक बुर्जुवा "विचारधारा" या "क्रान्ति विरोधी विचारों" के अपराधी थे। मार्ग दर्शकों ने छात्रों को प्रदर्शनी दिखाई और छड़ियों से उन प्रलेखों की ओर संकेत करते हुये अलग अलग प्रोफेसरों के दोषों के वारे में उत्तेजनात्मक भाषण दिये। इसके बाद कुछ अपराधी अध्यापकों को प्रदर्शनी दिखाने के लिये लाया गया और सबके सामने उनकी बेइज्जती की गई। प्रसिद्ध दार्शनिक, प्रोफेसर चांग तुंग-सन ने दस वर्ष पूर्व लिखा था: "यदि मुझे अधिनायकवाद और साम्यवाद में से एक चुनने के लिये कहा गया तो मैं उसे गोली से मारे जाने या फांसी पर लटकाये जाने के बीच चुनाव करने के समान अनुभव करूंगा। प्रदर्शनी के हाल में यह वाक्य मोटे-मोटे अक्षरों में कपड़े पर लिख कर टांगा हुआ था। प्रोफेसर चांग को उसके नीचे खड़ा होने पर मजबूर किया गया जिससे कि युवक सैना दल के कट्टर-पंथी सदस्य और उनके अनुयायी प्रोफेसर पर अपना गुस्सा व्यक्त कर सकें।

इसके बाद आम सभाएं की गई ताकि शिक्षक अपने पापों को जनता के सामने स्वीकार कर सकें। "सक्रिय छात्रों" द्वारा लगाये गये आरोपों को सुनने और अपराध की प्राथमिक स्वीकृति देने के लिये अपराधी को समस्त यूनीवर्सिटी की सभा के सामने उपस्थित होना पड़ता था। इसके बाद उन्हें तो छोटे छोटे कमरों में बन्द कर दिया जाता जिनमें एक बिस्तर, एक छोटी मेज, एक कुर्सी और लिखने के लिये काफी कागज होते थे; तथा युवक संघ के सदस्य

आगे होने वाली बड़ी सभाओं में उपस्थित रहने वाले छात्रों को "प्रमाण" बांटने के लिये छोटी-छोटी सभायें करते। दूसरी सार्वजनिक सभा के जब प्रोफेसर अपना दूसरा अपराध-स्वीकृति पत्र पढ़ देता तो ये विद्यार्थी इन नये अपराधों को सामने रख देते। और प्रोफेसर फिर तीसरी बार अपराध स्वीकृति पत्र लिखने के लिये लौट जाता और तब तक लिखता रहता जब तक उसके नवयुवक न्यायाधीशों को विश्वास न हो जाता कि उसने स्वयं की काफी किरकिरी कर ली है।

येनचिंग विश्वविद्यालय के सम्मानित अध्यक्ष डा० ल्यू ची-वी इस आंदोलन के बारे में अधिक चिन्तित नहीं थे। परन्तु उनके एक मित्र ने गुप्त रूपसे उन्हें बताया कि उन पर मुकदमा चलाने की तैयारियां की जा रही हैं। उन्होंने तुरन्त अपने क्लर्क को आफिस की अपनी सारी फाईलों को घर भेजने के लिये टेलीफ़ून किया पर मालूम हुआ कि युवक संघ के सदस्यों ने पहले ही उनके आफिस पर कब्जा कर लिया था। पर कम्युनिस्टों का हमेशा से उनके साथ आदर और सत्कार का व्यवहार रखने के कारण, जब मीटिंग के प्रारंभ में संघ के सदस्यों ने उदाहरण स्वरूप उनसे मंच पर बैठने के लिये आग्रह किया तो वे शान्त प्रतीत होते थे और यहां तक कि थोड़े से प्रमुदित भी। शायद उन्होंने सोचा था कि यह एक प्रकार का औपचारिक उत्सव है जिसकी अध्यक्षता के लिये उन्हें दिखावा करना पड़ रहा है। वे येनचिंग विश्व-विद्यालय के सभाभवन के मंच से इतनी भलीभांति परिचित थे कि उन्हें कल्पना भी न हो सकी कि यही उनका फांसी का तख्ता होने जा रहा था।

जब उनके बोलने की बारी आयी तो उन्होंने प्रफुल्लित होकर स्वीकार किया कि उन्होंने भी जनता के प्रति अपराध किये थे। उन्होंने कहा "मैंने अपने लड़के के विवाह में आफिस से दो गमले मंगाये थे और उन्हें लौटाना भूल गया इस तरह मैंने भी अपने निजी काम के लिये कुछ चीजें ले लीं जो जनता की थीं।" निस्सन्देह इससे विद्यार्थियों में आनन्द की लहर दौड़ गयी और यह डाक्टर ल्यू ने बहुत बुरी बात की।

मीटिंग को चलाने वाले संघ के सदस्यों ने उन्हें दोषी सिद्ध करने के लिये शीघ्र ही बहुत से यूनिवर्सिटी के प्रोफेसरों को, मंच पर भेज दिया जो डाक्टर ल्यू के मित्र या उनके संरक्षण में काम करने वाले थे। इन प्रवक्ताओं ने नाटकीय ढंग से उन येन-चिंग के स्नातकों की संख्या गिनायी जो गत वर्षों में अमेरिका चले गये थे या पुरानी सरकार में नौकर हो गये थे और फिर उस

संख्या की उन थोड़े से छात्रों से तुलना की जो कम्युनिस्टों में जा मिले थे। उन्होंने चिल्ला चिल्लाकर कहा कि यह अन्तर सिद्ध करता है कि डा० ल्यू ने अमेरिकन साम्राज्यवादियों के पालतू कुत्ते की तरह काम किया था, कि उन्होंने उन सभी छात्रों को "क्रान्ति-विरोधी मार्ग" पर भेज कर उनकी नैतिक और मानसिक "हत्या" की थी। उन्होंने कुछ दूसरे अभियोग भी लगाये जिनकी जानकारी डाक्टर ल्यू के मित्रों को ही हो सकती थी।

इन अभियोगों का असर डाक्टर ल्यू पर स्पष्ट था। वे चुपचाप बैठे थे, पीले पड़ गये थे और उनके चेहरे पर की मुस्कराहट लुप्त हो चुकी थी। वे किसी प्रत्याशित शास्त्र-विधि की उसी तरह अध्यक्षता कर रहे थे जैसे कोई सम्राट अपनी प्रजा की ओर से स्वर्ग के मन्दिर में बलि चढ़ा रहा हो, इस विश्वास को नष्ट करने के लिये नकली मित्रों द्वारा धोखे की आवश्यकता थी। अतः अध्यक्ष ल्यू छोटे निर्जन कमरों में से एक में अपना स्वीकृति पत्र लिखने के लिये चले गये।

उन्होंने प्रारम्भ में जो भी विरोध करने का प्रयास किया वह भी शीघ्र ही समाप्त हो गया। कम्युनिस्टों ने उसकी पुत्री ल्यूयाओ ह्यू को अपने पिता की निन्दा करने के लिये उकसाया। उन्होंने किस तरह उसे अपने पिता के विरुद्ध उकसाया यह मैं नहीं जानती। अफवाह ऐसी थी कि वह रक्षा का वचन, युवक संघ की सदस्यता और दूसरे प्रलोभनों के बदले में इस काम के लिये राजी हो गयी थी। जो कुछ भी इसे मिलना था मिला। पहले उसने अपने विभाग की बैठकों में पिता द्वारा जनता के प्रति किये गये अपराधों के बारे में बतलाया और बीच बीच में रोकर अपना भी विरोध प्रकट करती रही। दर्शकों पर इसका भारी प्रभाव पड़ने के कारण संघ के सदस्यों ने पिता-पुत्री का आमना सामना कराने के लिये एक बड़ी सभा बुलायी। पुत्री ने पिता की ओर देखा और उसे जनता का दुश्मन कहा और वे रो पड़े। इससे पहलें कि डाक्टर ल्यू का प्रायश्चित्त स्वीकार किया जाता उन्हें चार बड़ी बड़ी मीटिंग में अपने अपराधों को स्वीकार करना पड़ा। फिर उन्हें पदच्युत कर दिया गया और थोड़े दिन बाद डाक्टर ल्यू लुप्त हो गये। येनचिंग से आयी हुई जिस लड़की से मैं मिली थी वह नहीं जानती कि डा० ल्यू पर क्या गुजरी।

प्रोफेसरों का सुधार निर्विघ्न हो जाने के बाद संघ के सदस्यों ने छात्रों से कहा : "साथियो! आप लोग अपने प्रोफेसरों के विचारों में सुधार करने में आद्योपान्त और कठोर रहे थे। अब अपने बारे में क्या विचार हैं? क्या आप

भी खुलना नहीं चाहते ?" छात्रों के बारह बारह के गुट बना दिये गये और हर छात्र पर यह उत्तरदायित्व लाद दिया गया कि वे दूसरे छात्र को देखे कि उसने सब कुछ स्वीकार कर लिया है। इस तरह एक ही केन्द्र में शृङ्खलाबद्ध स्वीकार आन्दोलन जैसा खड़ा हो गया। संघ के सदस्यों ने मेरी मित्र और उसकी सहपाठिनों से कहा कि वे भी अपने मित्रों और सम्बन्धियों के उन अपराधों को लिख दें जो उन्होंने जनता के विरुद्ध किये थे। जब तक कि पूरा गुट सहमत न हो जाता हर स्वीकरण को पुनः लिखना पड़ता था।

यह आन्दोलन कई महिनों तक चलता रहा। छात्रों को एक दिन में तीन मीटिंग में जाना पड़ता—सुबह ८ बजे से दुपहर के १ बजे तक, फिर दुपहर के २ बजे से ६ बजे तक और रात के आठ बजे से बारह बजे तक। मेरी मित्र बीमार हो गयी और इसलिये उसे छुट्टी मांगनी पड़ी। पहले उनकी छुट्टी की प्रार्थना पर उसके गुट ने विचार किया; फिर उसे विभाग के छात्रों के अधिकारी छात्र के पास प्रार्थनापत्र भेजना पड़ा। इसके बाद उसे उसके विभाग के अध्यक्ष से आज्ञा मिली, फिर विभाग के गुट के छात्र नेता से आज्ञा मिली और अन्त में स्कूल के कार्यालय से आज्ञा मिल गयी। इस प्रकार अंत में उसे आज्ञा मिल गयी कि वह यूनिवर्सिटी के इलाके को तीन घंटे के लिये छोड़ सकती थी।

आन्दोलन चल रहा था यह किसी को भूलने नहीं दिया जाता था। यूनिवर्सिटी के इलाके में विभिन्न जगहों पर लगे लाउड स्पीकर मीटिंग में हो रहे दोषारोपण और अपराध स्वीकरण सुना रहे थे। जैसा कि मेरे छात्र मित्र ने बतलाया: बहुत से छात्रों ने आत्महत्या कर ली जबकि तीन छात्राओं को थकान या स्नायुविक दोष के रोगों की शिकार होकर अस्पताल में जाना पड़ा।

कुछ छात्रों ने कम्युनिस्टों के लिये मुसीबतें खड़ी कर दीं। 'तीन-विपक्षी' न्दोलन के अन्तिम दिनों में १९५२ की ढलती हुई बसन्त के समय कुछ सम्मानित अतिथि येनचिंग आये। ये थे जन स्वयंसेवक दल के सैनिक जो कोरिया में अमेरिकनों से लड़ते हुए घायल हो गये थे। इन युद्ध के नायकों को सर्वश्रेष्ठ भवनों में से एक में ठहराया गया और उन्हें घूमने फिरने की पूरी स्वतन्त्रता दे दी गयी। ये अधिकांश सैनिक देहातों से आये थे और खेत और सेना के अतिरिक्त शहर के जीवन के बारे में कुछ भी नहीं जानते थे। उनके कमरों में जो आधुनिक आराम की सामग्रियां थीं उनकी उन्होंने परवाह न की और न

ही पाखानों का इस्तेमाल किया जबकि उन्हें उन सबका प्रयोग करने के लिये कहा गया था।

परिणामस्वरूप मलमूत्र सभी जगहों पर मिलने लगा। लान पर, बगीचे में बैंचों पर और ऐसे ही दूसरे स्थानों पर। विदेशी भाषाओं और साहित्य विभाग का चियांग नामक एक छात्र अपनी एक मित्र के साथ एक रात को बगीचे में घूमते घूमते एक बैंच के पास रुक गया। जब उसकी मित्र बेंच पर बैठी तो उस पर पड़े हुए मलमूत्र से वह सन गयी।

इससे उसका प्रेमी इतना उद्विग्न हो गया कि उसने एक सरगर्म घोषणा लिखी जिसमें इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया गया कि यूनिवर्सिटी के इलाके में बहुत मलमूत्र फैला हुआ था। इस बारे में उसने तीन अनुमान प्रस्तुत किये। पहली सम्भावना थी कि यह कुत्तों ने किया होगा। परन्तु नहीं, उसने तर्क प्रस्तुत किया, कि यूनिवर्सिटी के इलाके में अब कुत्ते प्रायः नहीं थे। और यह भी असम्भव था कि कुत्तों की जो मौ ूदा संख्या थी वह यकायक ही पहले से अब अधिक मलमूत्र करने लगी थी। दूसरा—यह राष्ट्रवादी गुप्तचरों ने किया होगा पर लेखक ने फिर तर्क प्रस्तुत किया कि जनता के इन शत्रुओं ने मलमूत्र की बजाय बम छोड़े होते। तीसरी सम्भावना थी—यद्यपि उसे कहते हुए वह कुछ झिझका—कि यह अतिथियों ने की होगी।

चियांग ने लिखा कि किसी में भी यह साहस नहीं था कि उन अतिथियों पर इसका दोष दे, जिन्होंने जनता के लिये इतने कष्ट उठाये थे। पर मेजबानों को यह आशा थी कि अतिथि भविष्य में अधिक सावधानी बरतेंगे। इस घोषणा को चियांग ने रात को दीवार पर ऐसी जगह चिपका दिया जहां से हरेक उसे देख सकता था। शायद उसमें व्यंग और साहित्यक शैली के कारण लगभग एक सौ छात्रों ने उसके नीचे अपने हस्ताक्षर कर दिये।

जैसी कि आशा थी अतिथि उसे देखकर क्रोधित हो उठे और उनका बुरी तरह अपमान होने के कारण उसी समय जाने के लिये उद्यत हो गये। स्कूल के अधिकारी इस बात पर काफी ठंडे पड़ गये और घबड़ा कर काफी विनम्रता से उन लोगों से ठहरने के लिये प्रार्थना की। जिन छात्रों ने उस पोस्टर के नीचे हस्ताक्षर किये थे उन्हें और भी आद्योपान्त और कठोरता से विचार व सुधार करना पड़ेगा, ऐसी घोषणा की गयी। हरेक ने क्षमायाचना की और जब अतिथियों का मान रह गया तो उन्होंने कुछ दिन और रुकने की कृपा की।

एक और उदाहरण दूंगी । ८ जुलाई १९५२ के 'क्वान मिन' दैनिक में "सान फान आन्दोलन के प्रकाश में अपनी मरणासन्न बुर्जुवा विचारधारा की परीक्षा" शीर्षक से लो चांग पी का अपराध स्वीकरण प्रकाशित हुआ। डा० लो १९३४ से पेता में शिक्षक थे और अब चीनी विज्ञान अकादमी के भाषा विज्ञान और शब्द-शास्त्र परिषद के संचालक और अपने क्षेत्र में राष्ट्र के प्रमुख विद्वानों में से हैं । उन्होंने चुपचाप अपराध स्वीकार किया कि वे "नेतृत्व के दक्षिण पंथी मूर्खतापूर्ण रुख और भावनावाद" के शिकार हो गये थे । उन्होंने आगे कहा कि "मेरा ऊपर उठने के लिये उत्तेजित करने वाला—स्वार्थपरता-पूर्ण अहंभाव और आदेश देने के लिये मेरी हठी तानाशाही प्रेरणा, सामन्तवादी शासक-वर्गीय मृत्योन्मुखी मंचू परिवार में मेरे जन्म और मेरी बुर्जुवा शिक्षा और सामाजिक सम्बन्धों के परिणाम हैं ।

इसके बाद उनके अपराधों का विस्तृत वर्णन आता है ।

वे स्वीकार करते हैं कि उनकी पुस्तक 'भाषा और संस्कृति' प्रतिक्रियापरक और बुर्जुवा रचना थी । वे स्वीकार करते हैं कि "उन्होंने विदेशियों द्वारा आयोजित साहित्य और इतिहास संस्था की मीटिंग में हिस्सा लिया ।" वे स्वीकार करते हैं कि जब उनसे अमेरिका-विरोधी कोरिया सहायता आन्दोलन में सहायता देने के लिये कहा गया तो उन्होंने "शान्ति" शब्द के प्रति अति मोह के कारण मूर्खता से माओ त्से-तुंग के इन शब्दों को उदधृत किया था : "जब तक हम पर हमला नहीं किया जाय हम हमला नहीं करेंगे ।" वे यहां तक स्वीकार करते हैं कि उन्होंने कैथोलिक पादरियों की चीनी भाषा विज्ञान पर रचनाओं की प्रशंसा की, अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग किया और "अपने लेक्चरों में आने वाले विदेशियों का स्वागत किया ।"

इसके बाद उन्होंने "जनता से अलग व्यक्ति-वाद" स्वार्थ परता, हठ और अहमन्यता के अपराधों को स्वीकार किया । "मेरे सब से बड़े दोषों में कुछ हैं : स्वेच्छचारितापूर्ण धूर्तता, हठ, जनता में विश्वास का अभाव और जनता पर निर्भर रहने में हिचकिचाहट ।" फिर सारांश में वे कहते हैं। "मैं स्वयं से घृणा करता हूं और सुधार करने का मैंने निश्चय कर लिया है ।"

हमारे शिक्षक "जो कम्यूनिस्टों के शब्दों में, जनता के सामने इस तरह झुक गये थे वे ही व्यक्ति थे जो हमारी पीढ़ी को कम्युनिस्ट क्रान्ति द्वारा हड़प लिए जाने से बचाने में सहायक नेतृत्व प्रदान करने में असफल रहे थे ।

उन्होंने पुरानी सभ्यता पर आक्रमण किये और उसे अस्वीकार कर दिया पर आक्रमण और अस्वीकार करने के अतिरिक्त उन्होंने और कुछ नहीं किया। हमें उनके ज्ञान और बुद्धि पर भरोसा था और आज में यह समझती हूं कि उन्होंने ही हमें पतन के गर्त में डाला। परन्तु उनकी आत्मलांछना और जो दबाव उन पर डाला गया उसे देखने के बाद, अब उनके प्रति आक्रोश का अनुभव करना कठिन हो गया है और अब उनसे विरोध की मांग करना उचित न होगा।

जब से मैंने चीन छोड़ा है वहां की यूनिवर्सिटियों में क्या हुआ उस संबंध में प्राप्त सामग्री का बाह्य दिग्दर्शन ही मैंने कराया है। गत दो वर्षों में जो घटनाएं हुईं उनसे पुस्तक बन जायेगी पर वह एक ऐसी किताब होगी जो दूसरों कि कही हुई बातों पर आधारित होगी। उसमें तथ्य होंगे पर मेरे निजी अनुभव नहीं। इसके अलावा इस समय मैं पुस्तक प्रारम्भ नहीं समाप्त कर रही हूं। और अब जो प्रश्न शेष रहता है वह यह है कि हम उस विपत्ति के बारे में क्या कर सकते हैं जो हमारे ऊपर आ पड़ी है? इन शब्दों के लिखने के समय तक एक ऐसी भी पुस्तक प्रकाशित हो गई है।*

इसके लिये हमारे पास अभी तक कोई स्पष्ट या अंतिम उत्तर नहीं है। प्रश्न नेतृत्व का है। एक बात मैं जानती हूं कि चीन के नवयुवकों में परिपक्व नेतृत्व का अभाव है। हांगकांग में हम बहुत से पुराने कम्युनिस्ट-विरोधी नेताओं के पास गए। हम उनके अनुभव और बुद्धि के प्रति पूरा-पूरा सम्मान लेकर लौटे पर हमें उन्हें आपस के अपने निजी छोटे-छोटे मामलों में उलझे हुये देखकर निराशा हुई। हमें विश्वास है कि ऐसे बहुत थोड़े लोग हैं जो अपनी निजी महत्वाकांक्षाओं या अपने स्वतंत्र नेतृत्व के अतिरिक्त शत्रु से चीन की मुख्य भूमि वापिस लेने के बारे में सोचते हैं।

फारमोसा और वहां स्थित राष्ट्रवादी सरकार की स्थिति क्या हैं? कोई भी चीनी जो कम्युनिस्टों का अन्त चाहता है फारमोसा की सत्ता नजरअन्दाज नहीं कर सकता यद्यपि यहां कुछ ऐसे गुट भी हैं जिन्होंने यह चेष्टा की है। यह सही है कि पुराना गुस्सा और निराशा का अन्त दोनों ओर से जल्दी नहीं होता।

*इन घटनाओं के बारे में वस्तु-गत और पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिये, मैं दिसम्बर १९५३ में प्रकाशित "कम्युनिस्ट चीन में उच्च शिक्षा" नामक अनुसंधान की रिपोर्ट पढ़ने की सिफारिश करती हूं। यह रिपोर्ट यूनियन अनुसंधान परिषद ने प्रकाशित की है उसका पता है: यूनियन रिसर्च इन्सटीट्यूट, पो० आ० प्राईवेट बैग, के १ कौलून, हांगकांग।

स्वतंत्र नेता, जो सरकार में नहीं थे और जिन्होंने चीन का मुख्य भूमि के हाथ से निकल जाने के पूर्व सच्चाई से अच्छे परामर्श देने के प्रयास किये थे, अब सोचते हैं कि उनके परामर्श को नहीं सुना गया और परामर्श देने के प्रयास करने पर उन्हें संशय की दृष्टि से देखा जाने लगा था। ऐसे लोग दुबारा उसी तरह की पराजय मोल लेने में झिझकते हैं। दूसरी ओर जो लोग सरकार में हैं, और जो कम्युनिस्टों को आगे बढ़ने से रोकने का अथक परिश्रम कर रहे थे, सोचते हैं कि इन स्वतंत्र लोगों ने अपने कर्तव्य से मुंह मोड़ लिया या अलग हो कर नुकता चीनी करके सार्वजनिक प्रयत्न को चोट पहुंचाई।

हम अतीत की ओर नहीं जाना चाहते। उसके लिए अभी हम बच्चे हैं। हमारे विचार से कम्युनिस्ट शासन के विरुद्ध जो नेतृत्व प्रभावशाली होने जा रहा है उसे लोकतंत्र की दिशा में चलना चाहिए। उसे आलोचना करने की स्वतंत्रता का सम्मान करना चाहिये। पर आलोचना यदि सृजनात्मक है, ध्वंसात्मक नहीं तो उसे व्यवहारिक और सामाजिक होना चाहिए। अतीत की कोई भी समीक्षा पुरानी गलतियों को दुहराये जाने से बचने के लिए होनी चाहिए। आलोचना प्रसंग के अनुकूल होनी चाहिए। वह १९४६ या ४८ में क्या हुआ इस बारे में न हो कर १९५३ में और इसके बाद क्या होने वाला है इस संबंध में होनी चाहिए।

राष्ट्रवादी सरकार जिसके प्रति हम अपनी राज्य-भक्ति रखते हैं फारमोसा में तरक्की कर रही है। पर उसे और भी उन्नति करनी है। विशेषतौर पर मेरे विचार में सरकार को नवयुवकों पर प्रभाव डालने के लिए कोई अच्छा रास्ता खोजना है। क्योंकि वे नवयुवक ही थे जिन्होंने कम्युनिस्टों को सत्तारूढ़ होने में बल और शक्ति दी थी। मेरे जितनी और मुझ से छोटी आयु के लोग ही कम्युनिस्टों को चीन पर अपनी सत्ता बनाये रखने और उसका विस्तार करने में सहायता देने वाले अत्यन्त प्रभावशाली चाकर हैं। चार वर्षों में कम्युनिस्टों ने जिस राज्य को बनाया है उसे समाप्त करने में काफी समय लगेगा। पर मेरी पीढ़ी के नवयुवक उनके विरुद्ध संघर्ष में प्रमुख भूमिका अदा करेंगे।

मैं यहां हांगकांग में कुछ ऐसे लोगों से मिली हूं जो इस बात को मानते हैं। हमारे गुट के सदस्यों में से एक इतना सौभाग्यशाली है कि वह अपने परिवार के बड़ी आयु के सदस्यों के साथ रहता है। ये लोग शंघाई की मुक्ति से पहले ही, हांगकांग में आराम से रहने के लिये, काफी पैसा लेकर भाग आये थे। जब मैं अपने मित्र से मिलने गई तो वह उसी समय फुटबाल खेलकर घर लौटा था

और स्नान करने जा रहा था। जितनी देर मैं उसकी प्रतीक्षा करती रही उसके पिता मेरा सत्कार करते रहे। कुछ विनम्र और अनावश्यक प्रश्नों के बाद वह वास्तव में दिलचस्पी लेने लगे कि हम क्या कर रहे थे ? मैंने उन्हें कुछ बातें बतलाई जो मेरे विचार में चीन में होनी चाहिए थीं। हम उन पर बहस कर ही रहे थे कि इसी बीच, देर हो जाने के लिए क्षमा याचना करता हुआ, उनका पुत्र आ गया।

"ठीक है" उसके पिता ने उसे क्षमा करते हुए कहा, "तुम्हारी मित्र और मैं बातचीत कर रहे थे। वास्तव में तुम नवयुवक कुछ न कुछ करने के लिये कठिन परिश्रम कर रहे हो। ठीक है ? यह तो असल में हमारी पीढ़ी का उत्तरदायित्व होना चाहिये था। हमने चीन को खोया और उसे वापिस लेने का उत्तर दायित्व भी हमारा ही होना चाहिये। पर शायद तुम लोगों को ही अधिकतर काम करना पड़े।"

"हां" उसका पुत्र बोला "आपके प्रति पूर्ण आदर होते हुये भी मैं कहूंगा कि वृद्ध लोगों ने अपनी बहुत सी शक्ति और आशा करने की योग्यता खो दी है। पुरानी पीढ़ी के अधिकांश लोगों में साहस नहीं रहा है। सब से पहले उन्हें व्यवहारिक होना चाहिये।"

मुझे बीच में बोलने से रोक कर वह कहता गया "और उससे भी बुरी बात तो यह है पुराने लोग आसानी से सहयोग करने के लिये एकत्रित होने की और कुछ सफलता प्राप्त करने की क्षमता नहीं रखते। हरेक का अपना आत्म-सम्मान है, अपने शत्रु और मित्र हैं। उसे पराजय का बहुत भय है। उसमें पिछले अनुभव से जो अविश्वास उत्पन्न हो गया है उसके कारण उसे डर लगता है। वह नेता होने को तैयार है पर अनुयायी बनने को नहीं।"

मैंने संशोधन करने की कोशिश की "पर हमारे पास अनुभव तो नहीं हैं। और नेतृत्व ! हमारी तरह काम करने वाले थोड़े से लोग, कम्युनिस्टों के काम में बाधा तो डाल सकते ह पर उन्हें पराजित करने के लिए थोड़े से निष्कासित छात्रों की अपेक्षा और अधिक लोगों की आवश्यकता है।"

"अवश्य," मेरे मित्र के पिता बोले। "मैंने केवल यह कहा था कि इस काम में युवकों को कठोरतम काम अपने ऊपर लेना होगा। मुझे विश्वास है कि किसी दिन हम कम्युनिस्टों पराजित कर देंगे। पर ऐसे चीन का निर्माण करना जहां पहले जैसी बात फिर न हो, माओत्से-तुंग और उसकी सेना और पुलिस

को हरानें से भी कठिन होगा। इसमें बहुत समय लगेगा। म जानता हूं कि इस काम की समाप्ति तक मैं जीवित नहीं रहूंगा। यहां तक कि तुम युवक और युवतियां भी शायद जीवित रहो। तुम तो अधिक से अधिक उसे शुरू करा सकते हो।"

यह परामर्ष हतोत्साह करने वाला था यह वह भी समझ गये। वे कहते गये, "चीन का भविष्य वास्तव में तुम लोगों के हाथ में हैं। अच्छे काम में लग जाओ।" वह अपने पुत्र की ओर मुड़ गये और थोड़ा मजाक करते हुये बोले "और अगर तुम बुड्ढों के साथ सहयोग कर सकते हो तो अवश्य करो। इतने हठी, इतने अभिमानी न बनो। कुछ ऐसे बुड्ढे लोग हैं जो तुम्हारे साथ ईमानदानी का बर्ताव करेंगे। ठीक है, अभी तक ऐसे राजनीतिक भी हैं जो तुम्हारे ऊपर नियंत्रण रखकर जब तक सम्भव हो अपने आपको सब से ऊपर रखना चाहते हैं। पर मुझे विश्वास है कि अब राजनीतिज्ञ हमारे युवकों को पहले के समान, अपने राजनैतिक स्वार्थ साधन के लिये इस्तेमाल नहीं कर सकेंगे।"

उसके घर से बस के अड्डे तक जाते हुये मैं एक नये बनते हुये मकान के पास से गुजरी। मेरे पैरों पर कुछ मिट्टी आ गिरी और मैंने ऊपर की ओर देखा तो बांस की मचान पर खड़े दो मजदूर नये मकान के ढ़ांचे में गारा भर रहे थे। ज्यादातर मजदूर नीचे थे जो डलियों में मिट्टी ले जा रहे थे, रोड़ी तोड़ रहे थे या पलस्तर कर रहे थे। वे छोटे-छोटे पैन्ट और मोटे सूत की कमीजें पहने थे तथा मिट्टी और पसीने से सने हुये थे। उनके सांवले हाथों और नंगे पैरों की नसें साफ दिख रही थीं जो बहते हुये खून से काली थीं। बोझ लेकर जब ये आदमी सीढ़ियों पर चढ़ते तो "उंहूं" की अस्पष्ट आवाज निकलती।

किसी अन्य दिन मैं इस नये मकान को बिना देखे ही उसके पास से निकल गई होती। हांगकांग में बहुत से नये मकान बन रहे हैं पर इस समय मैं अपने साथियों तथा उस मकान के बारे में सोचने लगी जिसे हमें बनाना था तथा जिसके लिये कितनी अच्छी योजना और सहायता की आवश्यकता है। और जब वह बन जाय तो उसमें रहने का अवसर मिलना कितना कठिन है। पर इसे बनाने की चेष्टा के अतिरिक्त और कर भी क्या सकते थे।

कोने पर बस स्टाप, पीकिंग तथा पेता के उस छात्रावास से बहुत दूर था जहां हम अपने शहर को मुक्ति दिलाने वाले कम्युनिस्टों क। प्रताक्षा में चार साल पहले बै े थे। तब मेरे बहुत से मित्रों ने सोचा था कि नई इमारत तैयार

थी और हमारे अन्दर प्रवेश करने की ही देर थी । हांगकांग में निर्वासित होने पर अब हमें ज्ञान हुआ । पर यह ज्ञान काफी कीमत चुकाने के बाद हुआ । जिन पुराने लोगों को मैं जानती हूं और जो कम्युनिस्टों के आने से पहले ही चीन छोड़ आये थे निराश हो चुके हैं । वे अमेरिका या युरोप जाकर तब तक प्रतीक्षा करना चाहते हैं, जब तक कि यह सारी बला टल न जाए । हम अमेरिका या युरोप नहीं जाना चाहते ।हमारा भविष्य चीन में है और हम यथा संभव अपने भविष्य के नजदीक आना चाहते हैं । कम्युनिस्टों ने जो क्रान्ति का थी उससे हम भागे नहीं थे । वह कैसी थी यह देखने के लिए हम वहां रुके और हमने उसे जान लिया । हम जानते हैं कि हमारे साथ विश्वासघात हुआ । हमें ऐसे झूठे ध्येयवाद के चक्कर में फंसाया गया कि हम अपने आदर्श-वाद और आशाओं को पुनः प्राप्त करने की जल्दी आशा नहीं कर सकते पर हम एक दूसरी बात भी जानते हैं कि अब हमें दुबारा धोखा देना टेढ़ी खीर होगी ।